भा० दि० जैनसंघ ग्रन्थमालाका तीसरा पुष्प

राम-चरित

[भट्टारक सोमसेन विरचित रामपुराणका हिन्दी अनुवाद]

अनुवादक

पं० लालबहादुर शास्त्री

पमारी (आगरा) निवासी

प्रकाशक

मन्त्री साहित्य विभाग

भा० दि० जैनसंघ
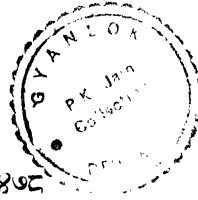
वि० सं० २००८] वीर निर्वाणाब्द २४७८ [ई० सं० १९५२

मूल्य चार रुपया

भा० दि० जैनसंघ-ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला का उद्देश्य—

प्राकृत, संस्कृत आदिमें निबद्ध दि० जैनागम, दर्शन, साहित्य, पुराण आदिका यथासम्भव हिन्दी अनुवाद सहित प्रकाशित करना

संचालक—

भा० दि० जैनसंघ

ग्रन्थाङ्क ३

प्राप्ति स्थान

मैनेजर, भा० दि० जैनसंघ

चौरासी, मथुरा

मुद्रक :— शिवनारायण उपाध्याय, बी० ए० नया संसार प्रेस, भदैनी, बनारस।

स्थापनाब्द] प्रति ११०० [वी० नि० सं० २४६८

भा० दि० जैनसंघके साहित्य विभागके सदस्योंकी नामावली

संरक्षक

८१२५) साहू शान्तिप्रसाद जी डालमियानगर

५०००) श्रीमन्त सर सेठ स्वरूपचन्द्र जी हुकुमचन्द जी इन्दौर

५०००) सेठ छदामीलाल जी फिरोजाबाद

५०००)*सेठ भगवानदास जी मथुरा

३००१) सेठ नानचन्द हीराचन्द जी गांधी उस्मानाबाद

सहायक

१००१) लाला श्यामलाल जी रईस फर्रुखाबाद

१००१) सेठ घनश्यामदास जी सरावगी लालगढ़

[रा० ब० सेठ चुन्नीलाल जीके सुपुत्र स्व० निहालचन्द जी की स्मृति में]

१००१) रा० ब० सेठ रतनलाल जी चाँदमल जी रांची

१०००) सकल दि० जैन पंचान नागपुर

१००१) रा० सा० लाला उल्फतराय जी देहली।

१००१) लाला महावीरप्रसाद जी [फर्म-महावीरप्रसाद एण्ड सन्स] देहली

१०००) लाला रतनलाल जी मादीपुरिया देहली

१००१) लाला जुगलकिशोर जी [फर्म धूमीमल धर्मदास] देहली

१००१) लाला रघुबीर सिंह जी जैना वाच्छ कम्पनी देहली

१०००) स्व० श्री मनोहरी देवी मातेश्वरी लाला बसन्तलाल फिरोजीलाल जी देहली

१०००) श्रीमती चन्द्रावती जी धर्मपत्नी साहू रामस्वरूप जी नजीबाबाद

१०००) बाबू कैलाशचन्द जी S. D. O. बम्बई

१०००) बा० प्रकाशचन्द जी खण्डेलवाल ग्लास वर्क्स सासनी

१०००) सेठ सुखानन्द शंकरलाल जी मुलतानवाले देहली

१००१) सेठ मगनमल जी हीरालाल जी पाटनी आगरा

१००१) सेठ सुदर्शनलाल जी जसवन्तनगर

१०००) लाला छीतरमल शंकरलाल जी मथुरा

१००१) सेठ गणेशीलाल आनन्दीलाल जी आगरा

---

* इस चिह्नवाली सहायताकी रकमका केवल चतुर्थांश प्राप्त हुआ है।

प्राक्कथन

रामका चरित भारतका सबसे अधिक लोक-प्रिय चरित है। इसको लेकर विपुल साहित्यका निर्माण हुआ है। हिन्दू, जैन और बौद्ध इन तीनों ही प्राचीन सम्प्रदायोंमें अपने-अपने ढंगसे रामका चरित लिखा गया है। प्रायः सीताके जन्मको लेकर राम-चरितकी दो धारायें पाई जाती हैं। एकके अनुसार सीता जनककी पुत्री थी और दूसरीके अनुसार सीता जनककी पोष्यपुत्री थी। विष्णुपुराणमें लिखा है कि जब जनकवंशके राजा सीरध्वज पुत्रलाभके लिये यज्ञ-भूमि जोत रहे थे, तब हलके अग्रभागसे सीताका जन्म हुआ। बौद्ध जातकके अनुसार सीता रामकी बहिन थी और रामने अपनी बहिन सीताके साथ ब्याह किया था।

जैन साहित्यमें भी राम-चरितके दो रूप मिलते हैं। पद्मचरित अथवा पद्मपुराणके अनुसार सीता जनककी पुत्री थी। किन्तु गुणभद्राचार्यके उत्तरपुराणके अनुसार सीता रावणकी पुत्री थी। पद्मचरित अथवा पद्मपुराणकी कथा तो प्रायः सभी जानते हैं, क्योंकि उसीका सर्वत्र प्रचार है। परन्तु उत्तर पुराणकी कथाका उतना प्रचार नहीं है। उसका संक्षिप्तसार[1] इस प्रकार है-

राज दशरथ काशी देशमें वाराणसीके राजा थे। रामकी माताका नाम सुबाला और लक्ष्मणकी माताका नाम केकयी था। भरत, शत्रुघ्न किसके गर्भमें आये थे यह स्पष्ट नहीं लिखा। सीता मन्दोदरीके गर्भसे उत्पन्न हुई थी, परन्तु भविष्य वक्ताओंके यह कहनेसे कि वह नाश-कारिणी हैं, रावणने उसे मंजूषामें रखवाकर मरीचिके द्वारा मिथिलामें भेजकर जमीनमें गड़वा दिया। दैवयोगसे हलकी नोकमें उलझ जानेसे वह राजा जनकको मिल गई और उन्होंने उसे अपनी पुत्रीके रूपमें पाल ली। इसके बाद जब वह ब्याहके योग्य हुई, तब जनकको चिन्ता हुई। उन्होंने एक वैदिक यज्ञ किया और उसकी रक्षाके लिये राम लक्ष्मणको आग्रहपूर्वक बुलवाया। फिर रामके साथ सीताको ब्याह दिया। यज्ञके समय रावणको आमंत्रण नहीं भेजा गया, इससे वह अत्यन्त क्रुद्ध हो गया और इसके बाद जब नारदके द्वारा उसने सीताके रूपकी अतिशय प्रशंसा सुनी तब वह उसको हर लानेकी सोचने लगा।

केकयीके हठ करने, रामको वन-वास देने आदिका इस कथामें कोई जिक्र नहीं है। पंचवटी, दण्डकवन, जटायु, सूर्पनखा, खरदूषण आदिके प्रसंगोंका भी अभाव है। बनारसके पासके ही 'चित्रकूट' नामक वनसे रावण सीताको हर ले जाता है और फिर उसके उद्धारके लिये लंकामें राम रावणका युद्ध होता है। रावणको मारकर राम दिग्विजय करते हुए लौटते हैं और फिर दोनों भाई बनारसमें राज्य करने लगते हैं। सीताके अपवादकी और उसके कारण उसे निर्वासित करनेकी भी चर्चा इसमें नहीं है। लक्ष्मण एक असाध्य रोगसे ग्रसित होकर मर जाते हैं और इससे रामको उद्वेग होता है। वे लक्ष्मणके पुत्र पृथ्वीसुन्दरको राजपदपर और सीताके पुत्र अजितंजयको युवराज पदपर अभिषिक्त करके अनेक राजाओं और अपनी सीता आदि रानियोंके

१—यह सार तथा कुछ अन्य बातें 'जैन साहित्य और इतिहास' नामक पुस्तकसे ली गई हैं। अतः हम उसके लेखक श्री नाथूराम जी प्रेमीके आभारी हैं। ले०

साथ जिनदीक्षा ले लेते हैं। इसमें सीताके आठ पुत्र बतलाये हैं पर उनमें लव-कुशका नाम नहीं है।

दिगम्बर सम्प्रदायमें यद्यपि पद्मपुराणमें वर्णित कथाका अधिक प्रचार है किन्तु उत्तर-पुराणमें वर्णित कथा भी एक दम उपेक्षित नहीं हुई है। महाकवि पुष्पदन्तने अपने उत्तरपुराणमें जो राम-चरित लिखा है वह गुणभद्रके उत्तरपुराणका ही अनुकरण है। पीछेके कवियोंने पद्मचरित अथवा उत्तरपुराणमें वर्णित रामकथाको संक्षिप्त या पल्लवित करके अपने-अपने ग्रन्थ लिखे हैं। ऐसे कवियोंमें एक भट्टारक सोमसेन भी हैं। उन्होंने 'रामपुराण' नामसे संस्कृतके अनुष्टुप श्लोकोंमें एक ग्रन्थ रचा है। उसीका हिन्दी अनुवाद 'रामचरित'के नामसे इस संस्करणमें मुद्रित है।

रामपुराण और पद्मपुराण

भट्टारक सोमसेनने रामपुराणका आरम्भ करते हुए पद्मचरितके रचयिता आचार्य रविषेण-को नमस्कार किया है और लिखा है कि उन्हींके प्रसादसे मैं रामपुराणको रचता हूँ। यथा—

रविषेणं महाचार्यं वन्दे शास्त्राब्धिपारगम्।
यत्प्रसादात् करोम्यत्र पुराणं रामसंज्ञकम्॥ ८॥

इससे स्पष्ट है कि रामपुराणमें पद्मचरितका ही सार है। ग्रन्थके अन्तमें तो उन्होंने इस बातको बिल्कुल स्पष्ट कर दिया है। ग्रन्थका उपसंहार करते हुए वे लिखते हैं—

कथामात्रं च पद्मस्य वर्तते वर्णनां विना।
अस्मिन् ग्रन्थे तु भो भव्याः शृण्वन्तु सावधानतः॥२४॥
रविषेणकृते ग्रन्थे कथा यावत् प्रवर्तते।
तावच्च सकलात्रापि वर्तते वर्णनां विना॥२५॥
विस्ताररुचिनः शिष्या ये सन्ति शुद्धमानसाः।
ते शृण्वन्तु पुराणं हि रविषेणस्य निर्मितम्॥ २६॥

अर्थात्—इस ग्रन्थमें रामचन्द्रकी कथा मात्र है। हे भव्य जीवों! सावधान होकर सुनो। रविषेण रचित ग्रन्थमें जितना कथा-भाग है, बिना किसी विशेष वर्णनके, पूरा कथा भाग इस ग्रन्थमें है। जो पाठक विस्तारसे उस कथाको जानना चाहते हों, वे रविषेणके पद्मपुराणको श्रवण करें।

इस तरह यद्यपि सोमसेनने अपने रामपुराणमें पद्मचरितकी कथाको ही संक्षिप्त किया है, किन्तु उन्होंने सीताका जन्म पद्मचरितके अनुसार न लिखकर उत्तरपुराणके अनुसार ही लिखा है अर्थात् रामपुराणके अनुसार सीता रावणकी पुत्री थी और मन्दोदरीके गर्भसे उत्पन्न हुई थी। जब वह गर्भमें थी तो मन्दोदरीको यह दोहला हुआ कि मैं अपने पतिको मार डालूँ। इससे रावणने उसे एक मंजूषामें बन्द करके मारीचसे कहा कि इसे कहीं दूर पृथ्वीपर फेंक आओ। मारीच मिथिलाके बाहर उस मंजूषाको रखकर लौट गया। प्रभात होनेपर वह मंजूषा एक किसानको मिली। किसानने राजा जनकको सौंप दी। उसमेंसे एक कन्या निकली। चूँकि हल-वाहकने उसे पृथ्वीसे पाया था, इसलिये उसका नाम सीता रक्खा गया।

रविषेणके पद्मचरितकी कथाको संक्षिप्त करके भी रामपुराणकारने क्यों सीताका जन्म उत्तरपुराणके अनुसार लिखा यह जिज्ञासा होना स्वाभाविक है। हो सकता है उन्हें इसमें अधिक रोचकता प्रतीत हुई हो।

रामपुराणका रचना-काल

भट्टारक सोमसेनने वराट देशके जित्वर नगरमें, पार्श्वनाथके मन्दिरमें रामपुराणकी रचना की थी, जैसा कि उन्होंने लिखा है—

बराटविषये रम्ये जित्वरे नगरे वरे।
मन्दिरे पार्श्वनाथस्य सिद्धो ग्रन्थो शुभे दिने ॥२७॥

किन्तु कब की, इसका उल्लेख नहीं किया। वे अपनेको मूलसंघ, पुष्करगच्छ और सेनगणके गुणभद्र सूरिका उत्तराधिकारी बतलाते हैं। यथा—

श्री मूलसंघे वरपुष्कराख्ये गच्छे सुजातो गुणभद्रसूरिः।
पट्टे च तस्यैव सुसोमसेनो भट्टारकोऽभूद्विदुषां शिरोमणिः ॥२३३॥

रामपुराणमें तेतीस अधिकार हैं और यह तेतीसवें अधिकारका अन्तिम श्लोक है।

भट्टारक सोमसेनका बनाया हुआ एक त्रिवर्णाचार नामक ग्रन्थ भी है, जो हिन्दी अनुवाद-के साथ प्रकाशित हो चुका है। उसके अन्तमें भी ग्रन्थकारने अपना परिचय उक्त शब्दोंमें ही दिया है। यथा—

श्रीमूलसंघे वरपुष्कराख्ये गच्छे सुजातो गुणभद्रसूरिः।
तस्यात्र पट्टे मुनिसोमसेनो भट्टारकोऽभूद् विदुषांवरेण्यः ॥२१३॥

अतः स्पष्ट है कि रामपुराण त्रिवर्णाचारके रचयिता भट्टारक सोमसेनकी ही कृति है। त्रिवर्णाचारमें उसका रचनाकाल वि० सं० १६६७ दिया है। अतः रामपुराणको भी उसीके लगभग-की रचना समझना चाहिये।

हिन्दी अनुवाद

रचना साधारण है, अतः प्रस्तुत संस्करणमें मूल न देकर केवल अनुवाद ही दिया है। हिन्दी अनुवाद भी अविकल ग्रन्थका नहीं है, प्रारम्भमें जो भोग-भूमि वगैरहका वर्णन है, वह छोड़ दिया गया है। इसे केवल चरितरूप दिया गया है। इसीसे नाममें परिवर्तन करके ग्रन्थका नाम राम-चरित रक्खा है। श्रीरामचन्द्रका पूरा चरित इसमें वर्णित है। जो पाठक पौराणिक वर्णनोंके प्रेमी नहीं हैं वे इसे प्रेमपूर्वक पढ़ेंगे, ऐसी आशा है।

अनुवादका कार्य पं० लालबहादुर जी शास्त्रीने किया था। किन्तु बीमार होकर बनारससे चले जानेके कारण वे अपने अनुवादको दुबारा नहीं देख सके। फिर भी अनुवाद अच्छा हुआ है और उसकी भाषा सरल और मुहावरेदार है। सभी स्त्री-पुरुष उसे सरलतासे समझ सकते हैं।

जयधवला कार्यालय
भदैनी, बनारस।

कैलाशचन्द्र शास्त्री

प्रकाशककी ओरसे

भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ अपने जन्मकालसे ही कार्यशील संस्था है। प्रारम्भमें इसका कार्य जैनधर्मपर किये जानेवाले आक्षेपोंका निराकरण करके जनतामें फैले हुए अज्ञानको दूर करना मात्र था। इसकेबाद इसी उद्देश्यको लक्ष्यमें रखकर एक प्रचार विभागकी स्थापना की गई। उसके प्रचारक भारतवर्षके विभिन्न प्रदेशोंमें पहुँचकर जनतामें फैले हुए अज्ञानको दूर करनेमें यथाशक्ति प्रयत्नशील हैं। तथा संघका मुखपत्र 'जैन संदेश' प्रति सप्ताह सर्वत्र पहुँचकर इस कर्तव्यमें योगदान देता है। मथुरा नगरीके बाहर चौरासी नामक तीर्थक्षेत्रपर संघका भवन स्थित है। इसमें संघका प्रधान कार्यालय तथा एक विशाल पुस्तकालय है। पुस्तकालयमें जैन तथा जैनतर साहित्यका अच्छा संग्रह है।

यतः इस संस्थाका प्रधान लक्ष्य जैनधर्मका प्रचार है। अतः इसके अन्तर्गत एक ट्रैक्ट-विभाग प्रारम्भसे ही चालू है, जिसमें समयोपयोगी ट्रैक्ट प्रकाशित होते हैं। सन् १९४१में प्रकाशन विभागको बढ़ानेका विचार हुआ और 'संघ-ग्रन्थमाला' तथा 'संघ पुस्तकमाला'के नामसे दो मालाएँ प्रारम्भ की गईं। संघ ग्रन्थमालाका आरम्भ सिद्धान्त ग्रन्थ श्री जयधवलजीके प्रकाशनसे हुआ। इसके दो खण्ड प्रकाशित हो चुके हैं। प्रस्तुत 'राम-चरित' ग्रन्थ इसी ग्रन्थमालाका तीसरा पुष्प है। इसमें पद्मपुराणका पूरा कथा भाग आ जाता है। जो पाठक-पाठिकाएँ संक्षेपमें रामका पूरा चरित जानना चाहते हैं उनके लिये यह ग्रन्थ बहुत उपयोगी है।

जैन सिद्धान्त भवन आरासे 'रामपुराण'की एक प्रति प्राप्त हुई थी, उसीसे यह अनुवाद किया गया है। अतः हम भवनके संचालकों तथा पुस्तकाध्यक्ष पं० नेमिचन्द्र जी ज्योतिषाचार्य के आभारी हैं।

काशीके गंगातटपर स्थित स्व० बा० छेदीलाल जीके जिनमन्दिरके नीचेके भागमें जयधवला कार्यालय स्थित है। उसीमें इस ग्रन्थका अनुवादादि कार्य हुआ है। अतः हम स्व० बाबू साके सुपुत्र धर्मप्रेमी बा० गणेसदास जी और उनके सुपुत्र बा० सालिगराम जी तथा बा० ऋषभचन्द्र जीके आभारी हैं।

नया संसार प्रेसके मालिक पं० शिवनारायण उपाध्याय और उनके कर्मचारियोंके भी हम आभारी हैं। अन्तमें हम संघके साहित्य विभागको आर्थिक सहायता देनेवाले उदार सज्जनोंको भी हार्दिक धन्यवाद देते हैं।

जयधवला कार्यालय
भदैनी, काशी।
फाल्गुन, २००८

कैलाशचन्द्र शास्त्री
मन्त्री—साहित्य विभाग
भा० दि० जैनसंघ

विषय-सूची

राम-चरित

—::※::—

१. उपोद्घात

जम्बूद्वीपके भरत क्षेत्रमें मगध देशके अन्तर्गत इन्द्र पुरीके समान एक राजगृही नगरी है। किसी समय इन्द्रके समान राजा श्रेणिक उस नगरीका राज्य करता था। राजाके चेलना नामकी रूपवती और गुणवती रानी थी, अनेक पुत्र-पौत्र थे। इन सबके साथ वह आनन्दसे समय बिताता था।

एक दिन सम्राट् श्रेणिक राजसिंहासनपर विराजे हुए थे कि वनमालीने उन्हें अनेक ऋतुओंके फल-फूल भेंट करते हुए कहा-'प्रभो ! विपुलाचल पर्वतपर संघ सहित भगवान महावीरका पदार्पण हुआ है'।

राजा यह समाचार सुनकर फूला नहीं समाया। शीघ्र सिंहासनसे नीचे उतरा और सात डग आगे जाकर भगवान महावीरको उसने परोक्ष नमस्कार किया। तथा प्रसन्नतासे गद्गद होकर अपने वस्त्राभूषण उतारकर वनमालीको दे दिए।

राजसभाको उसी समय समाप्त कर प्रजाकी बहुत बड़ी भीड़के साथ बड़े समारोहसे वह भगवानकी वन्दना करने चला और समवसरणमें पहुँचकर भक्तिभावसे भगवानकी पूजा स्तुति की। तथा मनुष्योंके कोठेमें बैठकर धर्मका उपदेश सुननेके लिए उसने चार ज्ञानके धारी गौतम गणधरसे हाथ जोड़कर इसप्रकार प्रार्थना की-

'स्वामिन् ! संदेह दूर करने और कर्मोंका बोझ हलका करनेके लिए मैं धर्मकथाके रूपमें श्री रामचन्द्र जीका जीवन चरित सुनना चाहता हूँ।

किन्हीं अज्ञानी पुरुषोंका कहना है कि रावण राक्षस था, मांस खाता था, स्वर्गके देव और दिग्पालों तक को उसने अपने कारागारमें डाल रक्खा था। भला कहाँ तो स्वर्गके महान शक्तिशाली देवता ! और कहाँ अल्पशक्तिका धारक मनुष्य रावण, इन दोनोंकी बराबरी कहाँ हो सकती है ? इसी प्रकार कुम्भकर्णके विषयमें कहा जाता है कि वह छः महीने बराबर सोया करता था और जब उठता था तो भूखसे पीड़ित होकर मोटे ताजे पूरे हाथीको एक ही बारमें निगल जाता था। सुग्रीव, नल, नील आदिके विषयमें कहते हैं कि वे मनुष्य नहीं थे बल्कि नख, पूँछवाले बन्दर ही थे। हनुमानको भी वे लोग बन्दर कहते हैं और कहते हैं कि वायु देवताके द्वारा बन्दरीके उदरसे वे पैदा हुए थे।

रावणकी शक्ति और महत्त्वको बताते हुए कहते हैं कि इन्द्र-देवता रावणके यहाँ गधोंकी रखवाली करते थे, यम रावणके घरका पानी भरा करता था, अग्निदेवता उसके यहाँ रसोई बनाया करते थे, वायु देवता घर और द्वारपर झाड़ देते थे, वरुण उसके हाथियोंकी

रखवाली करते थे और ब्रह्मा उसके यहाँ वेदोंका पाठ किया करते थे। इसी प्रकार और भी देवता उसके यहाँ अनेक प्रकारकी नौकरियाँ बजाते थे। इत्यादि अनेक विपरीत बातें रावणके विषयमें कही जाती हैं।

इस सन्देहको दूर करनेके लिए हे कृपालु नाथ! आप मुझे रामचन्द्र जीका पवित्र जीवन चरित्र कहें, जिसे सुनकर मेरे चित्तको शान्ति हो और मैं उस धर्मकथाको सुनकर पुण्यका भागी बनूँ'।

श्रेणिककी यह प्रार्थना सुनकर गणधर बोले, 'राजन! मैं तुम्हें रामचन्द्रका जीवन चरित्र कहता हूँ, ध्यान पूर्वक सुनो।

भगवान ऋषभ देवका चरित्र

इस अनन्त आकाशके मध्यमें कमरपर हाथ रख और दोनों पैर फैलाकर खड़े हुए मनुष्यके समान लोक है। उसके तीन भाग हैं-ऊर्ध्व लोक, मध्य लोक और पाताल लोक। मध्य लोकके ठीक बीचमें लवण समुद्रसे घिरा हुआ जम्बू द्वीप है। इस जम्बू द्वीपके बीचोबीच सुमेरु पर्वत है। उसके पूरब और पश्चिमकी ओर क्रमशः पूर्व विदेह और पश्चिम विदेह हैं। वहाँ चक्रवर्ती तीर्थङ्कर आदि सदा होते रहते हैं।

सुमेरुके दक्षिण और उत्तरकी ओर क्रमसे भरत और ऐरावत क्षेत्र हैं जहाँ बारी बारीसे छः काल होते हैं। उनके नाम–सुषमा सुषमा सुषमा, सुषमा दुषमा, दुषमा और अति दुषमा हैं। पहलेके तीन कालोंमें भोगभूमि रहती है। उस समय दस प्रकारके सुखदायक कल्प वृक्ष होते हैं जो मनुष्योंको भोजन वस्त्र मकान तथा नाना प्रकारकी आमोद प्रमोदकी चीजें इच्छानुसार देते हैं। उस समयके मनुष्य सरल परिणामी होते हैं, और युगल पुत्र-पुत्रीको जन्म देते ही मर जाते हैं। जवान होनेपर वह युगल पति पत्नीकी तरह रहने लगता है। उस समयके पशुओंमें भी पारस्परिक विरोध नहीं होता। पृथ्वी स्वच्छ निर्मल रहती है और निर्मल जलसे भरी हुई बावड़ियाँ जगह जगह दिखाई देती हैं।

जब तीसरा काल बीत कर चौथा काल आता है तो उस समय भोग भूमि समाप्त होकर कर्म भूमि प्रारम्भ होती है और उसकी व्यवस्था अपने अपने समयके कुलकर करते हैं।

इस भरत क्षेत्रमें जब तीसरे कालमें पल्यका आठवां भाग समय बाकी रहा तब कल्प वृक्ष मन्द पड़ गये। सहसा एक दिन शामको पूर्वमें पूर्ण चन्द्रमा और पश्चिममें सूर्य देखकर मनुष्य डर गये। उस समय प्रतिश्रुति नामके कुलकर थे। लोग डरके मारे उनके पास गये। कुलकरने उनसे कहा—आप लोग किसी प्रकारका भय न करें। आगे अब सदा प्रकाश देनेवाले कल्पवृक्ष नहीं रहेंगे। अतः प्रकाशका काम इन्हीं चन्द्र सूर्यसे चलेगा। इनसे कुछ नुकसान नहीं होगा। यह बात सुनकर सभी लोग निर्भय हुए।

इसके बाद दूसरे कुलकर सन्मति हुए। इनके समयमें आकाशमें तारे दिखाई देने लगे। अतः लोग अपना भय दूर करनेके लिए इनके पास पहुंचे। इन्होंने इनका भय दूर किया। उनके बाद क्षेमङ्कर नामके तीसरे कुलकर हुए। अब तक पशुओंमें क्रूरता नहीं थी। किन्तु इनके समयमें पशु मनुष्योंको मारने दौड़ने लगे। लोग अपने इस भयके दूर करनेका उपाय पूछने इनके पास गये। इन्होंने बताया कि सिंह व्याघ्र आदि पशुओंका विश्वास नहीं करना चाहिए। फिर चौथे क्षेमधर कुलकर हुए। उनके समयमें पशु अत्यन्त क्रूर होगये। उन्होंने लोगोंको इन पशुओंको लाठी वगैरहसे भगाना बताया। इनके बाद पाचवें सीमंकर नामके कुलकर हुए। इनके समयमें

कल्प वृक्ष थोड़े रह गये। तब इन्होंने कल्प वृक्षोंका बंटवारा करके उन्हें लोगोंमें बांट दिया। इसके बाद छठवें कुलकर सीमंधर हुए। इनके समयमें कल्पवृक्षोंकी सीमाको लेकर लोगोंमें झगड़ा होने लगा। तब इन्होंने कांटों वगैरहसे कल्पवृक्षोंकी सीमाका निशान बनाकर उस झगड़ेको दूर किया।

फिर विमल वाहन नामके सातवें कुलकर हुए। इन्होंने हाथी घोड़े आदि पशुओंपर सवारी करना बतलाया। इनके बाद आठवें कुलकर चक्षुष्मान हुए। इन्होंने मनुष्योंको सन्तानका पालन पोषण करना सिखाया। उस समय तक तो माता पिता सन्तानको जन्म देकर मर जाते थे किन्तु इनके समयमें सन्तानके उत्पन्न होनेके बाद भी माता पिताओंको जीवित देखकर लोग मनमें डरने लगे। तब इन्होंने लोगोंसे कहा —आप लोग डरें नहीं अब माता पिता सन्तानके बाद भी जीवित रहेंगे। इसके बाद यशस्वी नामके कुलकर हुए। इन्होंने लोगोंको बच्चेका नाम करण करना बतलाया। बादमें अभिचन्द्र नामके दसवें कुलकर हुए। इनके समयमें माता पिता बच्चोंको रोता देखकर घबड़ाते थे। इन्होंने बताया कि आप लोग बच्चोंके साथ खेलें, उन्हें बहलाकर उनका रोना बन्द करें।

इसके बाद चन्द्राभ नामके ग्यारहवें कुलकर हुए। इनके समयमें आकाशमें कुहरा आदि दिखाई देने लगा। तब उन्होंने बताया कि यह सब कालका प्रभाव है, सूर्यकी किरणोंसे वह नष्ट हो जाता है। इसके बाद बारहवें कुलकर हुए। इन्होंने नाव आदिके द्वारा नदियोंको पार करना बतलाया। इसके बाद प्रसेनजित नामके तेरहवें कुलकर हुए। इनके समयमें बालक जरायु सहित उत्पन्न होने लगे। इन्होंने बालक परसे जरायु हटानेका उपाय बताया।

इसके बाद अन्तिम कुलकर नाभिराय हुए। इनके समयमें पैदा हुए बच्चोंका नाभिनाल लम्बा होने लगा। इन्होंने उसका काटना बताया। भोगभूमिमें सूर्यका प्रकाश पृथ्वीपर न पड़नेके कारण वर्षा न होती थी। किन्तु नाभिरायके समयमें सघन मेघोंसे सुन्दर वर्षा होने लगी। फल-स्वरूप सभी धान पैदा होने लगे। नदी और समुद्र बन गये। पुत्र और पौत्र सहित लोग सुखसे रहने लगे।

पिता जैसे कुलकी व्यवस्था करता है वैसे ही ये कुलकर भी जनसमूहकी व्यवस्था करते हैं। इसीसे इन्हें कुलकर कहते हैं।

जब चतुर्थ काल प्रारम्भ हुआ तो इन्द्रने अयोध्या नामकी नगरी बनाई। नाभिराय उसके राजा कहलाये। मरु देवी उनकी पत्नी थी। दोनोंमें अत्यन्त स्नेह था। इन्द्रने यह जानकर कि नाभिराजाके यहाँ प्रथम तीर्थङ्कर अवतरित होंगे, छ महीने पहलेसे ही उनके घरपर रत्नोंकी वर्षा प्रारम्भ कर दी। प्रतिदिन गीत नृत्य आदि होने लगे। देवियाँ माताकी सेवा करने लगीं।

एक दिन मरु देवी सुन्दर कोमल शय्यापर सुखसे सोती थी। उसने रात्रिके पिछले पहर सोलह स्वप्न देखे, और अन्तमें मुखमें प्रवेश करते हुए बैलको देखा। जब प्रभात हुआ तो स्नान आदिसे निवृत्त होकर पतिके पास गई और विनय पूर्वक अपने स्वप्नोंका फल पूँछने लगी। 'नाथ! मैंने आज रातको हाथी, बैल, सिंह, लक्ष्मी, दो फूल मालाएँ, चाँद, सूर्य, दो मछलियाँ, दो कलश, तालाब, समुद्र, सुन्दर सिंहासन, स्वर्गका विमान, भवनवासी देवोंका भवन, रत्नोंका ढेर, और बिना धुएँकी आग ये सोलह स्वप्न देखे हैं। इनका क्या फल है? कृपाकर कहिये।'

नाभिराजाने कहा—देवि! सुनो, तुम्हारे स्वप्नोंका फल सुनाता हूं। सब स्वप्नोंका सार यह है कि तुम्हारे त्रिलोकी नाथ पुत्र होगा। राजाके इस तरह कहने पर मरु देवी प्रसन्न होकर अपने

मोहलोंमें चली गयी। बादमें किसी शुभ दिन भगवानका जीव सर्वार्थसिद्धि विमानसे च्युत हो कर माताके गर्भमें आया। उस समय इन्द्रादिकने गर्भ कल्याणक मनाया। नौ मास पूर्ण होनेपर भगवानका जन्म हुआ। भगवानका जन्म हुआ जानकर इन्द्र वहाँ आया और ऐरावत हाथीपर बैठकर बच्चेको गोदमें ले सब देवोंके साथ सुमेरु पर्वतके शिखरपर पहुंचा। वहाँ पांडुक शिलाके ऊपर, सिंहासनपर भगवानको विराजमानकर क्षीर समुद्रके जलसे भगवानका अभिषेक किया और बालकका नाम वृषभ घोषित किया। बादमें नाना आभूषणोंसे भगवानका शृङ्गार किया। अनेक सुन्दर स्तोत्रोंसे उनकी स्तुति की तथा हाथीपर चढ़कर पुनः अयोध्या लौट आया। इन्द्राणीने बच्चेको माताकी गोदमें दे दिया। इस तरह जन्म कल्याण मनाकर सब देव अपने अपने स्थानको चले गये।

माताने अपने उस सुन्दर और कोमल शरीरी बच्चेको गोदीमें देखकर बड़े कौतूहलपूर्ण चित्तसे उसका आलिंगन किया। नाभिराजाने बच्चेका मुख देखकर अपनेको अत्यन्त सौभाग्य-शाली समझा तथा अयोध्यामें खूब जन्मोत्सव मनाया। अंगूठेका अमृत पीते पीते भगवान युवा हुए। वस्त्र, भूषण भोजन आदि सब सामग्री इन्द्र ही उपस्थित करता था।

इन्द्रने बुद्धिमान कच्छ राजाकी पुत्री यशस्वती और महाकच्छ राजाकी पुत्री नन्दा, इन दोनों महारूपवती कन्याओंके साथ वृषभनाथका विवाह करा दिया। यशस्वतीसे परम सुन्दर भरतादिक निन्यानबे पुत्र हुए तथा ब्राह्मी नामकी एक कन्या हुई। तथा नन्दासे बाहुबली पुत्र एवं सुन्दरी नामकी पुत्री इस तरह अत्यन्त सुन्दर दो संताने हुई; वृषभनाथके सभी पुत्र शस्त्र शास्त्र आदि विद्याओं तथा कला और विज्ञान आदिमें पूर्ण पारंगत थे।

भगवानके समय सभी कल्पवृक्ष पूर्णतः नष्ट हो गये थे बिना ही जोते बोये सर्वत्र पकी हुई फसल खड़ी थी। लेकिन अन्न पकानेकी विधि न जानकर प्रजाजन दुखी हो दीनतासे नाभिराजाके पास आए और बोले–हे नाथ! कल्पवृक्ष तो सभी नष्ट हो गए। अब हमलोग भूखसे दुखी होकर आपकी शरणमें आए हैं। आप हमारी रक्षा करें। नाभिराजाने कहा– चलो हमलोग इसका उपाय ऋषभसे चलकर पूँछें।

सब लोग नाभिराजाके साथ ऋषभनाथके पास आए। भगवानने अपने पिताको देखकर उनका यथोचित आदर किया। सबने बड़ी विनयके साथ भगवानसे भोजन आदिका उपाय पूछा। भगवानने उन्हें नगरोंकी रचना खेत जोतना, वाणिज्य करना, पशु पालन करना, हथियार रखना, शिल्पी कर्म करना, लिखना तथा पाचन विधि आदि कर्म बतलाये।

भगवानसे यह सब जानकर प्रजा सुख पूर्वक अपने घर गई। और असि मसि कृषि आदि षट्कर्मोंसे अपनी आजीविका करने लगी। भगवानने पुर, ग्राम, खेट, कर्वट आदिकी रचनाके साथ साथ काशी, कोंकड़, कर्णाटक, वंग आदि अनेक देशोंका निर्माण किया, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, इन तीन वर्णोंकी स्थापना की। कच्छादि देशोंमें भूरक्षाके निमित्त राजा स्थापित किए। उग्रवंश, कुरुवंश, नाथ वंश और हरिवंश इस तरह इन चार वंशोंकी स्थापना की। इक्ष्वाकुवंशमें स्वयंको, कुरुवंशमें सोमप्रभको, हरिवंशमें हरिकान्तको, नाथवंशमें अकंपनको और उग्रवंशमें काश्यपको, इस तरह न्यायमार्गपर चलनेवाले इन सभी राजाओंको भगवानने परोपकारके लिए उक्त वंशोंमें स्थापित किया।

अयोध्याके वे स्वयं राजा बने, बनारसका राजा अकम्पनको बनाया, हस्तिनागपुरका राज्य सोमप्रभको दिया, चम्पा पुरीमें हरिकान्तको राजा बनाया तथा राजगृहीका राजा काश्यपको बनाया। और भरतादि सभी पुत्रोंको प्रजाका प्रतिपालक नियुक्त किया।

बुद्धिमान और व्यवहार कुशल कच्छ सुकच्छ आदि चार हजार राजाओंको भी यथा-योग्य प्रदेश दिये। इस तरह कर्मभूमिकी सारी व्यवस्था कर भगवान ऋषभ भोगोपभोगमें लीन हो गये। यहाँ तक कि उनकी आयुका बहुतसा समय यों ही निकल गया।

एक दिन भगवान राजसिंहासनपर बैठे हुए थे और नीलांजना नामकी एक अप्सरा उनके सामने नाच रही थी। एका एक उसकी मृत्यु हो गई। यह देखकर भगवानको वैराग्य हो गया। वे सोचने लगे कि इस असार संसार और इन विनाशीक सुखोंको धिक्कार है मैं इन सब नकली और नश्वर सुखोंको छोड़कर शिव सुखकी प्राप्ति के लिए अब एकान्तमें तप करूँगा। भगवान यह सोच ही रहे थे कि भक्तिसे भरे हुए लोकान्तिकदेव वहाँ आ गये, उन्होंने भी भगवानकी स्तुति करते हुए उनके वैराग्य भावोंको और भी सराहा और कहा—

"हे नाथ आप धन्य हैं। परोपकारके लिए इस प्रकार संसार नाशक तपका आचरण करनेको उद्यत हुए हैं।" लोकान्तिक देवतो इस तरह स्तुति कर स्वर्ग लौट गये और इन्द्र भगवानको विरक्त जानकर पालकी लेकर विनयसे उनके सामने आकर खड़ा हो गया।

भगवानने दीक्षाके पहले ही अपने भरतादि सौ पुत्रोंमें यथायोग्य साम्राज्यका बटवारा कर दिया था। अतः सबसे निवृत्त होकर वे तपोवन जानेके लिए पालकीमें बैठ गये और इन्द्र उस पालकीको कन्धेपर रखकर चल दिये।

भगवान तिलक वनमें जाकर उतर गये और "नमः सिद्धेभ्यः" कहकर उन्होंने दीक्षा ग्रहण करली। तमाम वस्त्र आभूषण उतार दिये, पंच मुष्टि केश लोंच किया और निःपरिग्रही बनकर मुनि हो गये। इन्द्रने उनके केश लेकर क्षीर समुद्रमें क्षेपण कर दिये। इस तरह दीक्षा महोत्सव मनाकर देव आदि सब अपने स्थान चले गये।

उनकी भक्तिसे अन्य चार हजार राजाओंने भी उनके अभिप्रायको बिना जाने ही नग्नता धारण कर ली। भगवान छः महीने तक कायोत्सर्ग धारण कर निश्चल खड़े रहे। तबतक वे राजा लोग परिषह आदिके कारण भ्रष्ट हो गये। ज्यों ही वे फलादिकसे पेट भरने लगे त्यों ही यह डरावनी आकाशवाणी हुई—

"आप लोग अब गृहस्थ नहीं रहे किन्तु योगी बन गए हैं। अतः यदि आप स्वच्छन्द विचरण करेंगे तो हम आपका वध कर देंगे"। राजा लोग यह सुनकर बड़े भयभीत हुए और पर-स्पर विचार करने लगे कि अगर भगवानको छोड़कर हम नगरको लौटते हैं तो राजा भरत हमें प्राण दण्ड देंगे अथवा क्रोधसे देश निकाला दे देंगे या स्वयं भगवान ही जब पुनः राजा होंगे तो हमें मारेंगे। इसलिए फल फूलादि सेवन करते हुए हमें यहीं रहना चाहिए।

इस प्रकार विचार करके सब जटा भस्म धारण कर मिथ्यादृष्टि बनकर वहीं बनमें रहने लगे। जब छ मास बीत गये तब एक दिन मध्याह्नके समय भगवानने सोचा—आहारके बिना बड़े बड़े धीर वीर राजा भी तपसे भ्रष्ट हो गये, उनकी न जाने क्या गति हुई होगी। अगर मुनि इसी प्रकार आहार नहीं करेंगे तो वे दूसरोंको कल्याणका मार्ग कैसे बता सकेंगे? कैसे धर्म और मोक्षकी प्रवृत्ति चलेगी? अतः परोपकार, मुक्ति और धर्मका कारण यह शरीर है इसकी रक्षा करना उचित है।

ऐसा सोचकर भगवान आहारके लिए निकले। उस समय लोग मुनिको आहार देनेकी विधि नहीं जानते थे। भगवान आहारके लिए गांव गांव जाते थे और लोग कन्या वस्त्र आदि लाकर उन्हें भेंट देनेका प्रयत्न करते थे। इस तरह जब छ मास बीत गये तो एक दिन बिहार

करते हुए भगवान हस्तिनागपुर आये। लोगोंने दौड़कर उनके पैर छुए और नाना प्रकारकी भेटें लाने लगे। कोई कोई कहता-प्रभो! चलिये मेरे घर स्नान भोजन कीजिये।

राज महलपर बैठे हुए श्रेयांसने भी भगवानको स्नेह भरी दृष्टिसे देखा। उन्हें तत्काल पूर्वभवका स्मरण हो आया कि जब मैं श्रीमतीका जीव था उस समय यह मेरे वज्रजंघ नामके पति थे। अब यह मुनि बन गये हैं और प्रासुक आहार लेते हैं। आज पुण्ययोगसे मेरे घर आये हैं अतः मैं इन्हें प्रसन्नतासे भक्ति पूर्वक आहार दूँगा।

राजा श्रेयांसने कुटुम्ब सहित आकर भक्ति पूर्वक भगवानकी प्रदक्षिणा दी और चरणोंको नमस्कार किया। तथा पाद प्रक्षालन कर आहारके लिए इक्षुके रससे भरे घड़े लाकर जगद्गुरु भगवानको आहार कराया। देवोंने हर्षित होकर श्रेयांसके यहाँ पंचाश्चर्यकी वृष्टि की। भरतने भी राजा श्रेयांसका आदर सत्कार कर साधुवाद प्रकट किया। बादमें भगवानने बनमें जाकर पक्षोपवास और मासोपवास आदि पूर्वक बहुत काल पर्यंत तप किया। अन्तमें शुक्लध्यानसे मोहनीय कर्मका विनाश हो जानेपर लोक अलोकका प्रकाशक केवल ज्ञान उत्पन्न हुआ। इन्द्रकी आज्ञासे कुबेरने सुन्दर परिकोटेमें बहुमूल्य रत्नोंका समवसरण बनाया। समवसरणके अन्दर सिंहासनपर बैठे हुए भगवानकी शोभाका बखान उस समय सिर्फ केवली भगवान ही कर सकते थे।

भगवानको केवल ज्ञान उत्पन्न हुआ जानकर इन्द्रगण सपरिवार शीघ्र ही भगवानकी वन्दनाको आये। भगवानके प्रथम गणधर वृषभसेन हुए तथा और भी महा-वैराग्यवान योगी मुनि हुए। उन सभी मुनियोंके यथा स्थान समवसरणमें बैठ जानेपर गणधरने भगवानसे प्रार्थना की। भगवान तत्त्वार्थका प्ररूपण करनेवाली गंभीर मधुर और सुन्दर वाणीमें बोले—

"इन तीनों लोकोंमें हित चाहने वाले जीवोंका सब प्रथम धर्म ही शरण है। धर्मसे ही महान सुख होता है। सुखके लिए सम्पूर्ण प्रयत्न धर्मकी ही अपेक्षा रखते हैं ऐसा समझ कर धर्मको अपनाना चाहिए।"

इस तरह देवाधिदेव भगवानने उत्तम धर्मका प्रतिपादन किया। जिसे सुनकर सभी देव और मनुष्य आनन्दित हुए। बहुतोंने उस समय सम्यग्दर्शन प्राप्त किया, बहुतोंने गृहस्थके व्रत धारण किये और बहुतोंने अपनी सामर्थ्यके अनुसार मुनिव्रत धारण किये। बादमें जब जानेको हुए तब सभी सुर असुरोंने भगवानको नमस्कार कर स्तुति की और धर्मसे भूषित हो अपने स्थान चले गये।

जिधर जानेका नियोग होता उस उस देशकी तरफ भगवान बिहार करते। और जहाँ उनका विहार होता। वहाँ सौ सौ योजन तक चारों तरफ सुकाल हो जाता।

उन्हीं दिनों राजा भरतको चक्रवर्ती पदकी प्राप्ति हुई। तमाम पृथ्वीको जीतकर उन्होंने उसे अपने अधीन किया। किन्तु बाहुबली, जो भगवानके तेजस्वी क्रांतिमान सौ पुत्रोंमेंसे अपना एक अलग स्थान रखते थे भरतके आधीन नहीं हुए। अतः वे भरतकी आज्ञा न मान कर युद्धके लिए तय्यार हो गये। दोनोंमें बड़ा भयंकर विनाशकारी युद्ध हुआ। दोनों पक्षके अनेक योद्धा मारे गए। जब देखा कि इससे अत्यधिक विनाश हो रहा है तो मन्त्रियोंने सोच समझकर इनके लिए दृष्टियुद्ध, मल्लयुद्ध, जलयुद्ध ये तीन युद्ध निश्चित किए और कहा जो इन तीनों युद्धोंमें पराजित न होगा वही विजयी समझा जायगा।

तीनों ही युद्धोंमें बाहुबली विजयी हुए और सम्राट् भरत पराजित हुए। तब क्रोधमें आकर भरतने बाहुबलीपर चक्र चलाया। वह भी व्यर्थ ही गया। भरत अपनी इस पराजयपर

बड़े लज्जित हुए। भरतको दुखी देकर पुरुषोत्तम बाहुबली विरक्त हो मुनि बन गए। और सालभर तक प्रतिमा योगसे मेरुकी तरह निश्चल खड़े रहे। श्यामादिक लताएँ उनके अंग पर चढ़ गई; इसप्रकारके कठोर तपश्चरणके बाद उन्होंने केवल ज्ञान प्राप्त किया और आयु कर्मके अन्तमें शेष कर्मोंको भी नष्ट कर निर्वाणको प्राप्त हुए। इस तरह इस अवसर्पिणीमें सबसे पहले बाहुबलीने मुक्तिका मार्ग खोला।

सम्राट् भरत भरतक्षेत्रके छहों खण्डोंका निष्कंटक राज्य करने लगे। एक दिन भरत यह सुनकर कि भगवान ऋषभ नाथका समवसरण कैलास पर्वतपर आया है, बड़े प्रसन्न हुए। अनेक प्रकारके सुस्वादु पकवानोंका भोजनकर जहाँ भगवान विराजे थे वहाँ गए। जाकर भगवानकी स्तुति की तथा नमस्कार कर मनुष्योंके कोठेमें बैठ गए। एवं धर्मका उपदेश सुनकर तृप्त हुए। भरतने सभामें बैठे हुए सभी मुनियोंसे कहा—आप लोग भोजनके लिए मेरे घर पधारें।

यह सुनकर वृषभसेन गणधर बोले—यतियोंको वह आहार जो उनके निमित्तसे बनाया गया है, लेना उचित नहीं है। यति दूसरेके घर प्रासुक आहार लेते हैं। मन बचन कायसे उद्दिष्ट अन्न उनके उपयुक्त नहीं माना गया। भगवान जिनेन्द्रकी आज्ञा है कि मुनियोंका आहार देहस्थितिके लिए होना चाहिए, चूँकि देहस्थिति जीवनके लिए है और जीवन धर्मके लिए है। तथा धर्मसे मुक्ति मिलती है और मुक्तिमें अत्यन्त सुख है। इस लिए देहकी रक्षा करते हुए धर्मका पालन करना चाहिए।

यह सुनकर चक्रवर्ती विचार करने लगे—यह मोक्षदाता जैन मार्गतो बड़ा कठिन है। मेरे घरमें विपुल द्रव्य है, यतिके सिवा उसे किसे दूँ, लेकिन यति अपने शरीरसे भी निस्पृह हैं। इस लिए कुछ दूसरा ही उपाय करना चाहिए। व्रती पुरुषोंको तीन धागोंसे (जनेऊसे) चिन्हित कर उन्हें ही पुण्यप्रद यथेष्ट दान दूँगा।

यह सोच उसने योग्य पुरुषों द्वारा शीघ्र ही श्रावक व्रतधारी सम्यग्दृष्टि पुरुषोंको आमन्त्रित किया। वे सब पुत्र स्त्री बन्धु वर्ग सहित वहाँ आये, लेकिन उनमेंसे कुछ धर्मात्मा हरित अंकुरोंको देखकर वहीं खड़े रहे और जो सम्यग्दर्शनसे रहित थे वे उन अंकुरोंके ऊपर होकर चले आए। उन्हें देखकर भरतने कहा कि आप लोग जैन मार्गके अनुयायी नहीं हैं। आपलोग जीवन सहित अंकुरोंको देखकर भी कैसे चले आए ? इस लिए जो लोग वहीं खड़े रह गये हैं, वे ही उत्तम श्रावक हैं। उन्हीं उत्तम श्रावकोंको मैं यह जनेऊ देकर ब्राह्मण बनाऊँगा, उन्हें ही दान दूँगा और उन्हीं महापुरुषोंको नमस्कार करूँगा।

इस तरह ब्राह्मणोंकी रचना कर भरतने उन्हें दान दिया तथा उनके ब्रह्मज्ञानी होनेके कारण भक्ति पूर्वक उनका पूजन किया।

एक दिन समवसरणमें भरत चक्रवर्तीने भगवान वृषभनाथसे पूछा—हे देव ! मैंने जो ब्राह्मणोंकी रचना की है वह अच्छा काम किया है या बुरा, इस सम्बन्धमें आप कुछ कहें। भगवानने कहा—सम्राट् ! तुमने यह ठीक नहीं किया आगे जाकर इनकी प्रवृत्ति ठीक नहीं रहेगी और ये हिंसा धर्मका पोषण करेंगे।

यह सुनकर भरत क्रोधसे उन सभीको मारनेके लिए उद्यत हुआ। तब वे ब्राह्मण भी उसके डरसे भगवानकी शरणमें पहुंचे। भगवानकी छत्र छायामें पहुंचकर उन्हें अभय दान मिला इसीसे वे कहते हैं कि हम ब्रह्माके मुखसे पैदा हुए हैं।

इसके बाद भगवान अनेक लोकोंको भवसागरसे पारकर कैलाश पर्वतसे निर्वाणको प्राप्त हुए। तत्पश्चात् राजा भरतने भी दीक्षा ग्रहण की और कर्मोंका विनाशकर मोक्ष चले गये।

२. वंशोत्पत्ति वर्णन

भगवान ऋषभदेवके निर्वाणके बाद इस भरत क्षेत्रमें चार वंशोंकी प्रवृत्ति हुई जिनके नाम इस प्रकार हैं–इक्ष्वाकु वंश, सोमवंश, हरिवंश तथा विद्याधरोंका वंश। उनमेंसे इक्ष्वाकु वंशमें सम्राट भरतके प्रथम पुत्र अर्ककीर्ति हुए जिनसे सूर्य वंश चला। अर्ककीर्तिके सितकीर्ति सितकीर्तिके बलांक हुए, बलांकसे सुबल, सुबलसे महाबल, महाबलसे अतिबल, अतिबलसे अमृत, अमृतसे सुभद्र, सुभद्रसे सागरभद्र, सागरभद्रसे सूर्य कान्त, सूर्य कान्तसे शशिकान्त और शशिकांतसे पवनवीर्य हुए। पवनसे अतिवीर्य, अतिवीर्यसे सुवीय, सुवीर्यसे उदित पराक्रम, उदित पराक्रमसे महेन्द्र विक्रम, महेन्द्र विक्रमसे सूर्यविक्रम, सूर्यविक्रमसे इन्द्रद्युम्न, इन्द्रद्युम्नसे महेन्द्रजीतसे महेन्द्र जीतसे प्रभु, प्रभुसे विभु, विभुसे अरिदमन, अरिदमनसे वृषभध्वज, वृषभध्वजसे गरुडांक, गरुडांकसे मृगाङ्क हुए।

इस प्रकार सूर्य वंशमें अनेक राजा हुए और अपने अपने उत्तराधिकारीको राज्यभार सौंपकर प्रव्रजित हुए। इसी प्रकार सोमवंशमें बाहुबली हुए, बाहुबलीसे सोमयश हुए। सोमयशसे महाबल तथा महाबलसे सुबल आदि बड़े बड़े राजा हुए जो मुनि बनकर निर्वाणको प्राप्त हुए।

तीसरे विद्याधर वंशमें राजा नमि विद्याधरके रत्नमाली हुआ। रत्नमालीसे रत्नवज्र,रत्नवज्रसे मणिरथ, मणिरथसे रत्नचित्र, रत्नचित्रसे वज्रजंघ, वज्रजंघसे चन्द्ररथ, चन्द्ररथसे वज्रसंघ, वज्रसंघसे वज्रसेन, वज्रसेनसे वज्रदंष्ट्र हुए। वज्रदंष्ट्र से वज्रध्वज, फिर वज्रायुध, फिर वज्र, फिर सुवज्र, फिर वज्रधर, फिर वज्राभ, फिर वज्रबाहु, फिर वज्रांक, फिर वज्रसुन्दर हुए। वज्र-सुन्दरके वज्रास्य, उनके वज्रपाणि, उनके वज्रभान, उनके वज्रवान, उनके विद्युन्मुख उनके सुवक्र, उनके विद्युद्दंष्ट, उनके विद्युद्वान, उनके विद्युदाभ, उनके विद्युतवेग, उनके वैद्युत इत्यादि क्रमसे अनेक राजा हुए।

उसी विद्याधर वंशमें यथा क्रमसे एक विद्युद्दढ़ नामका राजा भी हुआ जो विजयार्धकी दोनों श्रेणियोंका राजा था और रथनूपुरमें रहता था। उन्हीं दिनों जम्बूद्वीपमें विदेह क्षेत्रके अन्दर सीतोदा नदीके उत्तर तटपर सुगन्ध मालिनी देश की वीतशोका नामकी नगरीमें राजा वैजयन्त अपनी रानी सुन्दरीके साथ राज्य करता था। उसके संजयन्त और जयन्त नामके दो सुन्दर पुत्र हुए। एक दिन राजा स्वयंभू तीर्थंकरकी वन्दना करने गया और धर्म श्रवणकर दोनों पुत्रोंके साथ दीक्षित हो गया। तपके प्रभावसे घातिया कर्मोंका नाशकर उसने केवल ज्ञान प्राप्त किया। धरणेन्द्र आदि अनेक देव उनकी वन्दना करने आये। उस समय बालबुद्धि मुनि जयन्तने धरणेन्द्रकी विभूति देखकर निदान किया और आयुके अन्तमें मरकर तपश्चरणके प्रभावसे वह नागेन्द्र देव हुआ।

एक बार ज्ञानी संजयत मुनि तपश्चरण कर रहे थे और विद्युद्दढ़ विद्याधर विमानमें बैठकर कहीं जा रहा था। ज्योंही विमान मुनिके ऊपरसे निकला कि मुनिके प्रभावसे वह विमान वहीं आकाशमें रुक गया। विद्युद्दढ़ने नीचे मुनिको देखा तो उसका पूर्व बैर जाग्रत हो उठा। मुनिको उठाकर उसने पंचगिरि पर्वतपर रख दिया तथा अन्य विद्याधरोंसे कहा–'देखो, यह राक्षस तुम्हें खाने आया है तुम सब मिलकर इसे मारो'। यह सुनकर सभी विद्याधरोंने क्रोधित हो बाण, पत्थर आदिसे ध्यानस्थ मुनिराजको मारा। मुनि शुक्ल ध्यानके प्रभावसे तत्काल कर्मोंका नाशकर मोक्षको प्राप्त हुए। उधर धर्म प्रेमी नागेन्द्र आदि प्रमुख देव वहाँ आए। मुनिके शरीरपर उपसर्गोंके चिन्ह देखकर नागेन्द्रने उन सभी विद्याधरोंको बांध लिया। और ज्योंही वह उन्हें मारने चला कि डरके मारे वे सब बोले—मुनिको हमने नहीं किन्तु विद्युद्दढ़ने मारा है। नागेन्द्रने क्रुद्ध हो विद्युद्दढ़को समुद्रमें फेंक दिया। किन्तु समुद्रमें गिरनेसे पहले ही एक देवने उसे बीचमें

थाम लिया और कहा– हे नागेन्द्र ! तुम किस लिए इस पापीको मार रहे हो। इसने पूर्व भवकी शत्रुतासे ही मुनिको मारा है। संसारके कारण इस बैरको बढ़ाना उचित नहीं। इस तरह समझाकर देवने नागेन्द्रको शान्त किया। नागेन्द्रने उस देवसे इनके बैरका कारण पूछा।

देवने कहा—इस भरत क्षेत्रमें सिंहपुर नामका एक नगर है। उसमें सिंहसेन नामका राजा राज्य करता था। उसकी रानीका नाम रामदत्ता था। तथा श्री भूति नामका अत्यन्त पापी पाखण्डी उसका मन्त्री था। उस दुष्टने लोगोंमें अपनेको सत्यवादी प्रसिद्ध कर रक्खा था और जनेऊमें छुरी बांधकर सबसे यह कहता फिरता था कि अगर मेरे मुखसे कभी झूठ निकलेगा तो इस छुरीसे मैं अपनी जीभ काट लूँगा। उसको यह दृढ़ता देखकर लोग उसे सत्यघोष कहने लगे। राजाने भी उसे मन्त्रियोंमें प्रधान बना दिया।

एक बार ऐसा हुआ कि पद्मखण्डपुरके सेठ सुदत्त और सेठानी सुमित्राका पुत्र भद्रमित्र सिंहपुर आया, और अपने पांच बहुमूल्य रत्न स्वर्णकी सन्दूकड़ीमें बन्दकर सत्यवादी सत्यघोषके यहाँ रख गया। तथा धन कमाने रत्नद्वीप चला गया। धन उपार्जित कर जब वह लौट रहा था तो चोरोंने मार्गमें उसका सारा धन लूट लिया। किसी प्रकार उनके हाथ पैर जोड़ वहाँसे छुटकारा पाकर वह सिंहपुर आया। उसे आया हुआ जानकर सत्यघोषने सबसे यह कहना शुरू किया–देखो, आज रातको मैंने बुरा स्वप्न देखा है। किसीने आकर मुझसे यह कहा है कि मेरे पांच रत्न दो। न जाने यह स्वप्न मुझे क्या बुरा फल देगा। उस दुष्टने यह स्वप्न वृत्तान्त राजा आदिको भी सुना दिया।

सत्यघोष जब इस प्रकार लोगोंको अपना स्वप्न सुनाता फिर रहा था कि भद्रमित्रने उसके पास आकर अपना रत्नोंका पिटारा मांगा। सत्य घोषने उत्तरदिया– "अरे दरिद्र ! तेरा रत्नोंका पिटारा यहाँ कहाँ है ?"

भद्रमित्रने कहा—क्या आप भूल गए। जब मैं जहाजसे यात्रा करने जा रहा था तब आपको अपना रत्नोंका पिटारा सौंप गया था।

सत्यघोषने कहा—"कहाँका जहाज और कौनसा रत्नोंका पिटारा ? अरे पापी ! तू कहांसे मुझे दुखी करने आया है ? इस प्रकार कह कर गर्दन पकड़ उसे घरसे बाहर निकाल दिया। किन्तु वह हट पकड़ गया और पुनः अपने रत्न मांगने लगा। दूसरे लोग भी यह सब बातें सुनते रहे परन्तु किसीने इसपर ध्यान नहीं दिया। तब भद्रमित्र राजाके घरके पीछे इमलीके वृक्षपर चढ़ कर महीनों तक अपने रत्नोंके लिए चिल्लाता रहा। परन्तु उस पापी सत्यघोषके इस पापका राजाने कोई न्याय नहीं किया।

तब राजपत्नी रामदत्ताने एक दिन राजासे कहा–"देव ! यह हठी या पागल नहीं है। अवश्य ही इसके रत्न खो गए हैं। आप इसका न्याय करें। अन्यथा मैं करती हूँ"। ऐसा कह रानीने उसे राजाके पास बुलाया और बोली—"हे भद्र ! तुम्हारी क्या चीज खो गई है तुमने उसे किसे सौंपा था" ? उसने उत्तर दिया—"देवि ! मेरा पांच रत्नोंका पिटारा खो गया है। मैंने उसे और किसीको न देकर सत्यघोषके हाथमें ही सौंपा था"। तब रानीने कहा–अच्छा इस समय तुम जाओ, तुम्हारे रत्न मिल जायेंगे।

राजाकी आज्ञा लेकर रानीने श्रीभूति मन्त्रीके साथ एकान्तमें जुआ खेलना प्रारंभ किया और छलसे मन्त्रीकी अंगूठी जीत ली। इसके बाद निपुणमति नामकी धायको वह अंगूठी देकर कहा—जा यह अंगूठीकी निशानी दिखाकर तू मन्त्रीके घरसे रत्न लेआ। उसने जाकर मन्त्रीकी स्त्रीसे कहा—हे सुन्दरि ! काले वस्त्रोंसे ढका हुआ सुवर्ण रत्नोंका पिटारा तुम्हारे पतिने मंगाया है। लाकर इसी समय मुझे शीघ्र दो। वह बोली कि सोनेका पिटारा तेरे हाथ नहीं दूँगी।

अगर उन्हें काम है तो वे स्वयं ही आकर ले लेंगे। धायने यह बचन सुन, आकर रानीसे कहा। रानीने मन्त्रीका जनेऊ जीतकर फिर धायको दिया।

धाय जाकर बोली—हे मुग्धे ! मुझे शीघ्र ही पिटारा देदो। यह देखो, तुम्हारे विश्वासके लिये मन्त्री जीने अपना जनेऊ मेरे हाथों भेजा है। स्त्रीने जनेऊ देखकर रत्नोंका पिटारा दे दिया। राजाको वह पिटारा देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ और मन्त्रीको चुपचाप बुलाकर कहा—यदि तुम्हारे घरमें उस गरीबका रत्नोंका पिटारा हो तो देदो।

मंत्रीने कहा—वह पागल है इसी कारण मुझसे रत्न मांग रहा है। अगर मुझे उसके रत्नोंका पता भी हो तो मेरा सत्यानाश हो।

मन्त्रीकी यह बात सुनकर राजाने परीक्षाके लिए उन रत्नोंको अन्य बहुतसे रत्नोंमें मिलाकर भद्रमित्रको दिखाया। चतुर भद्रमित्रने परीक्षाकर अपने रत्नोंको उठा लिया। साथ ही वह पिटारा भी छांट लिया। राजाने मन्त्रीको पूर्ण अपराधी समझकर सभी सभासदोंसे पूछा—कि बताइये इस मन्त्रीको क्या दण्ड दिया जाय ? उन्होंने कहा—देव ! कड़े दंड तीन हैं। उनमेंसे पहले गोबरका भक्षण कराया जाय, यदि गोबर न खा सके तो पहलवानोंके मुक्के लगवाए जांय और बादमें काला मुंह कर गधेपर चढ़ाकर नगरसे बाहर निकाल दिया जाय। राजाने ऐसाही करना शुरू किया। मन्त्री जब गोबर न खा सका तो मल्लोंने मुक्के मारना प्रारंभ किया। मुक्कोंके प्रहारसे सत्यघोषकी मृत्यु हो गई और दुर्ध्यानके प्रभावसे मरकर वह राजाके खजानेमें राजधनकी रक्षा करने वाला सर्प हुआ।

राजाने सत्यघोषके स्थानपर धम्मिल्ल नामका न्यायवान सुयोग्य ब्राह्मण मन्त्री नियुक्त किया। तथा भद्रमित्रको जो धर्मात्मा था और प्रजाको सब तरह आराम देता था, प्रधान अमात्य बनाया। एक दिन वरधर्म मुनिके मुखसे दया गर्भित धर्मका व्याख्यान सुनकर भद्रमित्र जैन होगया और दान पूजादिमें तत्पर रहने लगा। भद्रमित्रकी माता अत्यंत लोभके कारण दान पूजादि छोड़ देनेसे बनमें व्याघ्री हुई। एक दिन भद्रमित्रको वनमें आया हुआ देखकर व्याघ्रीने पूर्व स्मरणसे उसे खा लिया। वह मरकर रामदत्ताके सिंहचन्द्र नामका पुत्र हुआ। दूसरा इसका छोटा भाई पूर्णचन्द्र नामका पुत्र हुआ। एक दिन इनके पिता सिंहसेनको उस सर्पने डस लिया। विषके भयंकर प्रभावसे मरकर वह राजा वनमें हाथी हुआ। क्रोधसे उसके पुत्र सिंहचन्द्रने विषवैद्यको बुलाकर यह सब वृत्तान्त कहा। विषवैद्यने दंडा हाथमें लेकर मन्त्र शक्तिसे सभी सांपोंको बुलाकर कठोरतासे कहा—जो सर्प निर्दोष हों वे अग्निमें प्रवेश कर अपने स्थान लौट जाँय अन्यथा मैं स्वयं ही अपराधीको खोजकर मार डालूंगा।

जो सर्प निर्दोष थे वे तो अग्निमें प्रवेशकर यथा स्थान चले गये। किन्तु जिसने राजाको काटा था वह अग्नि कुंडमें जलकर खाक होगया। मरकर वह उस कालक नामक वनमें, जहां राजाका जीव हाथी हुआ था, चमरी मृग हुआ। अपने स्वामीका मरण यादकर रामदत्ता आर्यिका होगई, सिंहचन्द्र मुनि होगया और पूर्णचन्द्र राज्य करने लगा। मुनिराज सिंहचन्द्र चारण ऋद्धि प्राप्तकर अवधिज्ञानी बनगए। एक दिन रामदत्ताने उनसे पूछा—

"हे स्वामिन् ! पूर्णचन्द्र कब धर्माचरण करेगा।" मुनिने कहा—माता ! पूर्णचन्द्रको प्रतिबुद्ध करनेके लिए तुम्हें एक वृत्तान्त सुनाता हूं—

"पिता सिंहसेनका जीव जो हाथी हुआ था, एक दिन मुझे देखकर मारने आया, तब मैंने आकाशसे उसे प्रतिबोधित किया। उस समय उसे जाति स्मरण हो गया और उसने जैन व्रत ग्रहण कर लिए। संयोगसे एक बार वह नदी किनारे कीचड़में फंस गया। इधर वह चमरी मृग मरकर कुक्कुट सर्प हुआ। उस पापीने हाथीको डस लिया। हाथी समाधि मरण

पूर्वक मरा और सहस्रार स्वर्गमें श्रीधर नामका देव हुआ। धम्मिल मन्त्री भी मरकर इस बनमें बन्दर हुआ। वह सत्य घोषका जीव जो सर्प हुआ था, इस बन्दर द्वारा मार डाला गया। तथा मरकर वह तीसरे नरक पहुंचा जहाँ अब तीव्र वेदना भोग रहा है। उस मरे हुए हाथीके दांत मोती आदिक एक व्याधने ले जाकर प्रसन्नतासे सेठके हाथपर रख दिये। सेठने उन्हें लेजाकर राजा पूर्णचन्द्रको दिया। राजाने भी उन दांतोंका सुन्दर पलंग बनवा लिया है। तथा मोतियोंका एक सुन्दर हार बनवाकर अपने वक्षस्थलपर पहर लिया है। माता! तुम यह सब वृत्तान्त जाकर पूर्णचन्द्रसे कह दो।"

इस तरह सिंह चन्द्रके कहनेपर आर्यिकाने जाकर पूर्णचन्द्रसे यह सब बातें कहीं। पूर्णचन्द्र पिताके समाचार सुनकर शोकाकुलित हुआ। उसने उन मोती और हाथी दांतके पलंगकी पूजा की तथा बादमें उनको जला दिया। वह स्वयं श्रावक हो गया। और मरनेके बाद स्वर्गमें देव हुआ। आर्यिका रामदत्ता शुक्र स्वर्गमें देव हुई और मुनिराज सिंहचन्द्र ऊर्ध्व ग्रैवेयकमें अहमिन्द्र हुए।

विजयार्द्धकी दक्षिण श्रेणीमें एक धरणीतिलक नामका नगर है। उसके राजाका नाम अतिवेग और रानीका नाम लक्षणा था। रामदत्ताका जीव पहले किये हुए निदानके फलसे उस लक्षणाके श्रीधरा नामकी रूप लावण्यवती पुत्री हुआ। अलकापुरके राजा सुदर्शनने श्रीधरासे विवाह किया। दोनोंमें परस्पर स्नेहकी वृद्धि हुई। पूर्णचन्द्रका जीव पूर्व कर्मके सम्बन्धसे श्रीधराके यशोधरा नामकी सुन्दर पुत्री हुई। और आदित्याभ नगरके राजा सूर्यावर्तके साथ विवाही गई। तथा सिंहसेनका जीव सहस्रार स्वर्गसे च्युत होकर यशोधराके रश्मिवेग नामका पुत्र हुआ।

राजा सूर्यावर्त मुनि चन्द्रसे दीक्षा लेकर मुनि हो गया। तथा श्रीधरा और यशोधरा दोनों (आर्यिका हो गईं। वह रश्मिवेग भी एक दिन सिद्धकूटकी बन्दना करते हुए मुनि हो गया और चारण ऋद्धि प्राप्तकर स्वर्णगिरि पर्वतकी गुफामें जाकर तप करने लगा। दोनों आर्यिकाएँ उनकी बन्दना करने गईं। उसी गुफामें सत्यघोषका जीव नरकसे निकलकर अजगर हुआ था। उसने रश्मिवेग मुनिको डस लिया। आर्यिकाओंने जाकर मुनिको समाधि मरण कराया।

संन्यास विधिसे मरण कर मुनि रश्मिवेग कापिष्ठ स्वर्गमें प्रभु नामका देव हुआ, और वे दोनों आर्यिकाएँ भी मरकर वहीं देव हुईं। अजगर भी मरकर चौथे नरक गया, और नाना प्रकारके दुःख उठाने लगा।

सिंहचन्द्रका जीव ग्रैवेयकसे च्युत होकर चक्रपुरके राजा अपराजित तथा उसकी रूपवती सुन्दरी पत्नी श्रीमतीके चक्रायुध नामका सुन्दर पुत्र हुआ। तथा श्रीधराका जीव पृथ्वीतिलकपुरके राजा अतिवेगके रत्नमाला नामकी पुत्री हुई। वज्रायुध राजाने उससे विधिपूर्वक विवाह किया। उन दोनोंके (रत्नमाला और वज्रायुधके) यशोधराका जीव रत्नायुध नामका पुत्र हुआ।

राजा अपराजित जिनेन्द्र प्रतिपादित धर्मको सुनकर, चक्रायुधको राज दे, स्वयं दीक्षित हो मुनि होगया। चक्रायुध भी समयानुसार पितासे दीक्षा लेकर मुनि बन गया, तथा केवल ज्ञान उपार्जनकर मुक्त हुआ।

वज्रायुध भी पुत्रको राज्य देकर मुनि बन गया। परन्तु मूढ़बुद्धि रत्नायुध भोगोंमें निमग्न रहने लगा। एक दिन वज्रायुध मुनि मनोहर उद्यानमें लोकानुप्रेक्षाका चिन्तन कर रहे थे कि राजाके मेघ विजय नामक हाथीने उसे सुना, तत्काल उसे जाति स्मरण होगया और नमस्कार कर वह उनके पास बैठ गया। मुनिके उपदेशसे उसने बिना छना जल पीना छोड़ दिया। अप्रासुक आहारका परित्याग कर दिया तथा रात्रिमें खाना, कुशील सेवन करना, वृक्षोंका उखाड़ना आदि सभी सावद्य कार्य छोड़ दिये। हाथीकी यह दशा देखकर राजाने वैद्यसे पूछा—हाथी किस व्याधिसे पीड़ित है। क्या उसे कोई कण्ठरोग है?

वैद्यने कहा–मुनि वज्रायुध इस बातको जानते हैं। राजा बनमें गया और बड़ी भक्तिसे मुनिराजसे पूछा–हे नाथ ! मेरा हाथी आहार नहीं करता। इसका क्या कारण है ?

मुनिने कहा–इसी भरत क्षेत्रमें अतिछत्र नामका नगर है। प्रीतिभद्र वहाँका राजा था और सुन्दरी उसकी रानी थी। उनके प्रीतिंकर नामका गुणी कलाविद् पुत्र हुआ। राजाके मन्त्रीका नाम चित्रमति और उसकी पत्नीका नाम कमला था। उनके विचित्र मति नामका चतुर पुत्र हुआ। विचित्रमति और प्रीतिंकरमें बड़ा स्नेह था। वे दोनों ही धर्मरुचि मुनिके पास मुनि बन गये। उन दोनोंको क्षीरस्रव[1] ऋद्धि प्राप्त हो गई। दोनों विहार करते हुए अयोध्याके निकट पहुंचे।

धर्मबुद्धि विचित्रमति मुनि अयोध्याके बाहर ध्यान करने लगे और प्रीतिंकर मुनि चर्याके लिए नगरमें गये। वे मुनि बुद्धिषेणा वेश्याके आँगनमें पहुंचे। वेश्याने कहा–"हे स्वामिन ! मैं आपको आहार देने योग्य नहीं हूं। पुनः वेश्याने नमस्कारकर पूछा–प्रभो ! किस पापसे यह जीव वेश्या बनता है और धनादि इकट्ठा करता है ? मुनिने कहा–हे पुत्रि ! सुन–यह सब अज्ञान तपका फल है। अतः तू मिथ्यात्व छोड़कर जिनेन्द्र प्रतिपादित धर्मका आचरण कर।

मुनिके उपदेशका निमित्त पाकर वेश्या जैन हो गई। मुनिने जाकर यह सब वृत्तान्त विचित्रमति मुनिसे कहा। विचित्रमति मुनि प्रीतिंकरके मुखसे यह समाचार सुनकर वासना पूर्ण अभिप्रायसे वेश्याके घर गये। विलासमयी उस वेश्याने मुनिको देखकर उनकी वंदना स्तुति और पूजा की तथा उन्हें कामसे विकारी समझकर इस तरह कहने लगी–हे मुनि ! मुझ उच्छिष्ट और पतित स्त्रीकी आप मनमें क्यों चाहना करते हैं ? जो मुनि विषयोंमें फंसे हैं वे नरक गये हैं।

इस प्रकार अनेक उपदेशों द्वारा समझाने पर भी वह पापी अपनी काम वासना नहीं रोक सका और वेश्यासे रतिकी प्रार्थना करने लगा। वेश्याने उसे घरसे निकाल दिया। वहाँसे वह राज-महल पहुँचा और उसने रसोइया बनकर मांसादि पकानेकी कलासे राजाको खुश कर लिया। धनके बलसे तब बुद्धिषेणा वेश्याको वशमें कर वह पापी इच्छानुसार उसके साथ आनन्द करने लगा। बादमें आर्तध्यानसे मरकर वह तुम्हारा यह हाथी हुआ है। त्रैलोक्य प्रज्ञप्तिका पाठ सुनकर उसे जाति स्मरण हो गया है। इसलिए दुःख पूर्वक प्रलाप करनेके कारण वह आहार वगैरह नहीं करता"। हाथीकी यह कथा सुनकर राजाको वैराग्य हो गया। रत्नमाला माताके साथ राजाने दीक्षा लेली, तपचरण किया, तथा मरकर अच्युत स्वर्गमें देव हुआ। रत्नचन्द्र और रत्नमाला सुखसे स्वर्गमें ही हैं।

सत्यघोषका जीव नरकसे पुनः निकला। निकलकर संसारमें भ्रमण करता हुआ छत्रकपुरमें दारुण नामक भीलके दारुण पुत्र हुआ। एक दिन उस दुष्टने वजायुध मुनिको देखकर उन्हें मार डाला। शुक्ल ध्यानके बलसे वे मुनि सर्वार्थसिद्धि गए। और वह दुष्ट भयंकर भील मरकर सातवें नरक पहुँचा।

धातकी खंडके पश्चिम विदेहमें गंधिल देशके अन्तर्गत एक अयोध्या नगरी है। वहाँका राजा अर्हद्दास और सुव्रता उसकी रानी थी। रत्नमालाका जीव उनके निर्भय नामका पुत्र हुआ। तथा इसी राजाकी दूसरी जिनदत्ता नामकी पटरानीसे रत्नायुधका जीव विभीषण नामका पुत्र हुआ। इन दोनों भाइयोंमें परस्पर अत्यन्त स्नेह था। शक्ति और सामर्थ्यसे दोनोंने बलभद्र और नारायण पद प्राप्त किए। विभीषण नारायण तो मरकर पापसे दूसरे नरक गया और बलभद्र निर्भयने दीक्षा लेली और तपकर लांतव स्वर्गमें शुभादित्य नामका मैं इन्द्र हुआ।

---

[1] इस ऋद्धिके प्रभावसे मुनि जिसके यहाँ आहार लेते हैं उसके यहाँका आहार दूध जैसे स्वादका हो जाता है।

नरकमें जाकर मैंने एक दिन विभीषण नारकीको अनेक सुन्दर धार्मिक वचनोंसे संबोधित किया। वह विभीषणका जीव ऐरावतक्षेत्रमें साकेत पुरके राजा श्रीवर्माके यहाँ नरकसे निकलकर धर्म नामका पुत्र हुआ। उसने अनंत मुनिके पास दीक्षा लेली और तपकर ब्रह्मस्वर्गमें उत्तम देव हुआ।

वज्रायुधका जीव जो अहमिन्द्र हुआ था वह सर्वार्थ सिद्धिसे च्युत होकर संजयंत हुआ। और धर्मका जीव ब्रह्म स्वर्गसे आकर उसका छोटा भाई तू जयंत मुनि हुआ। क्रमसे निदान दोषके कारण सम्यक्त्व नष्ट हो जानेसे तू महान विभूतिका धारक धरणेन्द्र हुआ।

वह भीलका जीव सातवें नरकसे निकलकर कुर्कुटक सांप होकर फिर तीसरे नरक गया। वहाँसे निकलकर अनेक कुयोनियोंमें भ्रमण करता हुआ इसी भरतक्षेत्रकी वेत्रवती नदीके किनारे मृगशृङ्ग नामक तपस्वी हुआ और तपके प्रभावसे विद्युद्दष्ट्रके विद्युद्दृढ़ नामका पुत्र हुआ।

अपने पूर्वभवके वैरके कारण ही इसने क्रोधसे संजयंत मुनिराजपर उपसर्ग किया था। संजयंत मुनि तो अब मोक्ष चले गए। अब इस बेचारेको मारनेसे क्या लाभ ? अतः नागेन्द्र ! तुम इस विद्याधरको क्षमाकर दो। नागेन्द्रने देवके कथनानुसार विद्युद्दृढ़को छोड़ दिया। साथ ही उसकी सारी विद्याएँ छेद दी और कहा कि अब ये विद्याएँ इसे कभी नहीं प्राप्त होंगी।

तब आदित्य प्रभ देवने कहा–"नागेन्द्र ! आप विवेकवान हैं। विद्याओंके बिना इसका जीना मरना एक जैसा ही है। तब धरणेन्द्रने दयालु होकर कहा कि जब तक यह संजयंत मुनिकी मूर्ति बनाकर नहीं पूजेगा तब तक इसे विद्या सिद्ध नहीं होगी। नागेन्द्रके वचन सुनकर देवने विद्याधरसे इसी प्रकार करनेको कहा। और बादमें अपने स्थान चला गया। धर्मात्मा नागेन्द्र भी अपनी जगह लौट गया।

राजा विद्युद्दृढ़ अपने पुत्रको राज्य देकर मुनि होगया। उस पुत्रका नाम दृढ़रथ था। दृढ़रथसे रथाश्व हुए, रथाश्वसे आयुधबाहन, आयुधवाहनसे अश्वध्वज, अश्वध्वजसे पद्मप्रभ. पद्मप्रभसे पद्ममाली, पद्ममालीसे पद्मरथ, पद्मरथसे सिंहयान, सिंहयानसे मृगवर्मा आदि अनेक विद्याधर राजा हुए।

वे सभी राजा अपने अपने पुत्रोंको राज्य देकर शक्त्यनुसार धर्माचरणकर यथायोग्य गतियोंमें गए। इस तरह हे श्रेणिक ! तुझसे धर्मात्मा विद्याधरोंका वंश कहा।

---

३. राक्षस वंशकी उत्पत्तिका वर्णन

इक्ष्वाकुवंशमें अयोध्याका राजा धरणीधर हुआ। उसकी शुभ लक्षणोंवाली पत्नी महादेवी थी। उन दोनोंके त्रिदशंजय नामका लक्ष्मीवान पुत्र हुआ, इन्दरा उसकी पत्नी हुई। इन्दराके जितशत्रु नामका पुत्र हुआ। पोदनापुरके राजा नन्दकी पुत्री विजयाके साथ कुमार जितशत्रुका विधि पूर्वक विवाह हुआ। त्रिदशंजय जितशत्रुको राज्य दे तपश्चरण कर कैलास पर्वतसे मुक्त हुए।

उन जितशत्रु और रानी विजयाके ऋषभनाथकी तरह ही अजितनाथ भगवानका जन्म हुआ। देव इन्द्रादिकोंने उनका सुमेरुपर अभिषेक किया। एक दिन उन भगवानने कमलके अन्दर मरे हुए भौंरेको देखा। इससे उन्हें वैराग्य हो गया।

पिता आदिसे आज्ञा लेकर भगवानने जिन दीक्षा ले ली। दस हजार अन्य राजा भी

उनके साथ दीक्षित हुए। षष्ठोवास करनेके बाद भगवान पारणाके लिए अयोध्या गए और ब्रह्मदत्तने भक्तिपूर्वक उन्हें आहार दिया। चौदह वर्ष तपश्चरण करनेके बाद उन्हें केवल ज्ञान हुआ। उनके समवसरणमें ८० गणधर थे।

जितशत्रुके छोटे भाई विजय सागर और रानी सुमंगलाके सगर नामका पुत्र हुआ। छः खण्डोंके राजा उसकी सेवा करते थे, नौ निधि और चौदह रत्नोंका वह अधिपति था। भरतके बाद यह दूसरा चक्रवर्ती था।

विजयार्द्धकी दक्षिण श्रेणीमें चन्द्रबाल पुर नामका एक नगर है। उसमें पूर्णचन्द्र नामका विद्याधर राजा रहता था। वहीं तिलकपत्र नगरमें एक दूसरा राजा सुलोचन था। उसके पुत्रका नाम सहस्राक्ष और पुत्रीका नाम उत्पलमति था।

बुद्धिमान राजा पूर्णचन्द्रने सुलोचनसे उसकी पुत्री उत्पलमतिकी याचना की। सुलोचनने जब देनेसे इन्कार कर दिया तो दोनोंमें घोर युद्ध हुआ। सुलोचन युद्धमें मारा गया। पिताका मरण सुनकर सहस्राक्ष डरसे अपनी बहिन उत्पलमतिको लेकर सगरके पास चला गया। पूर्णचन्द्र खाली हाथ अपने नगर लौट आया।

सहस्राक्षने अपनी बहिन उत्पलमतिका विवाह सगरके साथ कर दिया। सगरने भी संतुष्ट होकर सहस्राक्षको पूर्णचन्द्रके साथ युद्ध करनेके लिए बहुतसे विद्याधर सहायताके लिए दिये। उन सबने जाकर चारों तरफसे पूर्णचन्द्रका नगर घेर लिया।

दोनों तरफसे महान जनघातक युद्ध हुआ। युद्धमें पूर्णचन्द्र सहस्राक्षके हाथों मारा गया और पूर्णचन्द्रका पुत्र मेघवाहन डरसे अजितनाथ स्वामीके समवसरणमें भाग गया। सहस्राक्षने उसका पीछा किया किन्तु समवसरणमें जाकर भामंडलको देखकर शान्त हो गया।

मेघवाहनने सब वृतान्त सगरसे कहा और निवेदन किया कि इस युद्धमें मेरा कोई दोष नहीं है। सहस्राक्ष और मेघवाहन दोनों भगवानके चरणोंमें वैर रहित होकर बैठ गए। गणधरने उनके माता पिताका चरित्र भगवानसे पूछा।

भगवानने कहा—इसी भरतक्षेत्रके मरुत्पुर नामक नगरमें भावन नामका एक सेठ रहता था। उसकी स्त्रीका नाम चातकी था। उनके हरिदास नामका पुत्र हुआ। चार करोड़ निधियोंके अधिपति भावनने अपने पुत्रको तमाम सम्पदा सौंपकर जुआ आदि न खेलनेकी सलाह दी तथा स्वयं धन कमाने जहाजसे परदेश चला गया। इधर पुत्रने वेश्या, मांस, मदिरा और जुए आदिमें पिताकी दी हुई सारी संपत्ति नष्ट कर दी। जब इसके पास कुछ नहीं रहा तो वह धन चुरानेके लिए सुरंग लगाकर राजाके यहाँ पहुंचा।

वहाँसे बहुत सा द्रव्य चुराकर ले आया और वही सब काम करने लगा। भावन जब अचानक घर लौटा तो पुत्रको नहीं देखा। घरकी स्त्रियोंसे मालूम हुआ कि वह सुरंग लगाकर चोरी करने जाया करता है। सेठ तुरन्त उसी सुरंगके रास्ते पुत्रका पता लगाने चला। उधरसे हरिदास लौट रहा था और यह जानकर कि यह कोई मेरा शत्रु आ रहा है उसने चक्रसे पिताका बध कर डाला। बादमें जब उसे मालूम हुआ कि यह मेरे पिता हैं तो उसे अत्यन्त दुःख हुआ। पिताकी अन्त्येष्टि कर राजदण्डके भयसे शहर छोड़कर वह अन्यत्र भाग गया।

अनेक देशोंमें घूमता हुआ वह मर गया। पिता पुत्र दोनों ही क्रमसे कुत्ते, गीदड़, बिलाव, मच्छ, नौले भैंसे, बैल आदि हुए। तथा परस्पर एक दूसरेका घात कर मरते रहे और संसारमें भ्रमण करते रहे।

संयोगसे दोनों ही विदेह क्षेत्रकी पुष्कलावती नगरीमें उत्तर और अनुत्तर नामके मनुष्य

हुए। वहाँसे उग्र तपश्चरण करके शतार स्वर्गमें देव हुए, उनमेंसे भावनका जीव पूर्णचन्द्र हुआ और हरिदासका जीव सुलोचन हुआ।'

अपने अपने पिताओंके इस तरह भवांतर सुनकर दोनों शांतचित्त हो गए। बादमें चक्रवर्तीने भगवानसे इन दोनोंके भवांतर पूँछे। भगवानने कहा—इसी भरत क्षेत्रके पद्मपुर नामक नगरमें शंखिक नामका धनी ब्राह्मण रहता था। उसके शशी और आवली नामके दो धनवान शिष्य थे। इन दोनों शिष्योंमें परस्पर बड़ी मित्रता थी और अत्यंत स्नेहसे रहते थे। नीति कुशल ब्राह्मणने यह सोचकर कि इनसे मुझे किसी प्रकार हानि न पहुँचे उन दोनोंमें परस्पर फूट डलवा दी। एक दिन शशीने एक ग्वालेसे गाय खरीदी। उसका मूल्य लेने ज्योंही वह घर आ रहा था कि मार्गमें उसे वही गाय खरीदकर लाता हुआ आवली मिला। शशीने क्रोधसे आवलीको मार डाला। आवली मरकर म्लेच्छ हुआ और शशी भी समयानुसार मरकर बैल हुआ। पूर्व बैरके संबंधसे म्लेच्छने उसे मारकर खा लिया। वह म्लेच्छ तिर्यञ्च नरकादि गतियोंमें भ्रमण करता हुआ एकबार चूहा हुआ और शशी विलाव हुआ। बिलावने चूहेको मारकर खा लिया। पुनः भ्रमण कर वे दोनों काशीमें संभ्रम राजाकी दासीके कूट और कापटिक नामके भाई हुए। राजाने उन दोनोंको मंदिरके कामपर नियुक्त कर दिया। मन्दिरकी टहल चाकरी करते रहनेके कारण वे दोनों मरकर रूपानंद और स्वरूप नामके भूतोंके अधिपति हुए।

वहांकी आयु समाप्तकर शशि रजोवलीके कुलंधर नामका पुत्र हुआ और दूसरा आवली पुरोहितके यहाँ पुष्यभूति नामका पुत्र हुआ। धनके लिए दोनोंमें एक बार शत्रुता हो गई। कुलंधर पुष्यभूतिको मारनेको तय्यार हो गया। संयोगसे वृक्षके नीचे बैठे हुए किन्हीं मुनिसे धर्म श्रवणकर वह शांत हो गया। राजाने उसकी परीक्षाकर पुण्यके प्रभावसे उसे अपना सामन्त बना लिया।

पुष्यभूति कुलंधरको धर्मके प्रसादसे विभूतिमान देखकर जैन होगया और मरकर तीसरे स्वर्गमें देव हुआ। कुलंधर भी उसी तीसरे स्वर्गमें देव हुआ। वहाँसे दोनों चयकर पश्चिम विदेहमें अरिंजय देशकी जयावती नगरीमें राजा सहस्रशिरके अमरश्रुति और धनश्रुति नामके निजी दास हुए।

राजा उन दोनोंके साथ एक दिन वनमें गया। उन्होंने देखा कि जाति विरोधी जीव भी परस्पर प्रेमसे विचर रहे हैं। राजाको इससे बड़ा आश्चर्य हुआ। आगे जानेपर भगवान केवलीपर उसकी दृष्टि पड़ी। तीनोंने भगवानके पास दीक्षा लेली। राजा तो निर्वाणको प्राप्त हुआ और वे दोनों दास शतार नामके ११वें स्वर्गमें देव हुए। शशी वहाँसे चयकर यह मेघवाहन हुआ और आवलीका जीव सहस्राक्ष हुआ। इन दोनोंमें जो बैरका कारण था वह हम ऊपर बतला आए है।"

चक्रवर्तीने पूछा—'प्रभो! मेरा सहस्राक्षसे इतना अधिक स्नेह क्यों है? तब भगवानने कहा—

वह सांखिक ब्राह्मण पात्र दानके प्रभावसे देवकुरुमें उत्पन्न हुआ। वहाँसे सौधर्म स्वर्गमें पैदा हुआ। तथा बादमें चन्द्रपुर नगरके राजा हरिके धरानामकी पटरानीसे व्रतकीर्ति नामका पुत्र हुआ। और मुनि बनकर स्वर्ग गया। वहाँसे चयकर विदेह क्षेत्रकी नगरी रत्नसंचय पुरीमें राजा महाघोषकी रानी चन्द्राणीसे पयोबल नामका पुत्र हुआ। वह मुनि बनकर प्राणत स्वर्गमें पुनः देव हुआ। वहाँसे च्युत होकर भरतक्षेत्रमें पृथ्वीपुर नगरके राजा यशोधर एवं उसकी पत्नी जयाके जयकीर्ति नामका पुत्र हुआ। पिताके पास ही दीक्षा लेकर वह विजय नामके पंचोत्तर विमानमें अहमिन्द्र हुआ। वहाँसे च्युत होकर तू सगर चक्रवर्ती हुआ है। शांखिकके भवमें आवली तुझे प्यारा था अतः अब भी यह सहस्राक्ष तेरा प्रिय है"।

अजितनाथ भगवानके मुखसे इस प्रकार अपने और अपने पिताओंके भवान्तर सुनकर दोनोंको पूर्वभवका स्मरण हो गया। दोनोंने अनेक प्रकारसे भगवानकी स्तुति की जिसे सुनकर सगर चक्री तथा सुर असुर सभी संतुष्ट हुए। उस समय समवसरणमें मेघवाहनके काकाका जीव जो उसके पिता पूर्णचन्द्रके साथही युद्धमें मारा गया था तथा दोनों राक्षसोंके अधिपति भीम और सुभीम नामके व्यन्तर हुए थे, बैठे हुए थे। वे पूर्वभवके स्नेहसे मेघवाहनसे प्रसन्न होकर कहने लगे–इसी लवण समुद्रमें राक्षसोंका सातसौ योजन विस्तृत एक सुन्दर द्वीप है। उस द्वीपके मध्यमें नो योजन ऊँचा और पांचसौ योजन लंबा महा निधियोंसे युक्त एक त्रिकूटाचल नामका पर्वत है। उसकी तलहटीमें तीस योजन विस्तृत लंका नामकी नगरी शोभित है। वह नगरी हम तुझे देते हैं वहां जाकर तू निर्भय हो सुखसे रह।

यह कहकर वे उसे अपने साथ लंका ले गए और वहाँका उसे राजा बना दिया। साथ ही नए रत्नोंका एक सुन्दर हार भी समर्पित किया। इसके अतिरिक्त राक्षसी नामकी महाविद्या भी दी और कहा–यदि यहाँपर भी तुझे भय हो तो इस पर्वतकी भूमिके नीचे घरके ही समान एक सुसज्जित सुंदर नगर है। यह पाताल लंकाके नामसे विख्यात है। छः योजन इसका विस्तार है। तू वहाँ जाकर भी निर्भयतासे रह सकता है। इस तरह कह वे दोनों वहाँसे चले गए।

मेघवाहनको इस तरह विभूति संपन्न देखकर अनेक विद्याधर उसकी सेवा करनेके लिए वहाँ आकर बस गए। विजयार्द्धपर मेधवाहनके जो अन्य कुटुंबी जन थे वे भी आराम और सुविधाका ख्यालकर लंका आगए।

मेघवाहन अब अपने परिजनोंके साथ लंकामें निष्कंटक राज्य करने लगा। उसका विवाह किन्नर गीत नगरके राजा अतिमयूखकी पत्नी अनुमतिसे उत्पन्न सुप्रभा नामकी कन्यासे हुआ। उन दोनोंके महारक्ष नामका पुत्र हुआ। राक्षसके द्वारा यह वंश स्थापित किया गया था इसलिए राक्षस नामसे लोकमें प्रसिद्ध हुआ। इस वंशके लोग स्वयं राक्षस नहीं थे।

एक दिन अनेक विद्याधरोंके साथ मेघवाहन भगवान अजितनाथ तीर्थंकरकी भक्तिपूर्वक बंदना करनेके लिए आया। वहाँ भगवानके मुखसे चौबीस तीर्थकर, बारह चक्रवर्ती, नौ नारायण और नौ प्रति नारायणोंका चरित्र सुना। बादमें तमाम राज्यभार महारक्ष पुत्रको सोंपकर आप भगवान अजितनाथके पास अत्यंत विरक्त होकर दीक्षित हो गया। एक सौ दस अन्य विद्याधर भी उसके साथ मुनि हो गए। इधर महारक्ष राजाके रानी विमलासे देवरक्ष, उदधिरक्ष और सूर्यरक्ष नामके तीन पुत्र हुए। भगवान अजितनाथ अनेक देशोंमें विहार करते हुए सम्मेद शिखरसे निर्वाणको प्राप्त हुए।

सगर चक्रवर्तीके इन्द्राणीके समान रूप और लावण्यवती छयानवें हजार रानियाँ थीं। तथा रत्नस्तंभकी तरह कांतिमान् महान शक्तिशाली साठ हजार ६०००० पुत्र और नाती थे। एक दिन किन्हीं चतुर्मुख नामक मुनिराजको केवलज्ञान हुआ। सगरादि राजा तथा सुर असुर सभी वहाँ केवलीकी वन्दनाको आए। सगरके पूर्वजन्मका मित्र मणिचूलदेव भी वन्दना करने आया। वह सगरको देखकर हर्षसे बोला—

"मित्र! पूर्व जन्ममें हम तुम दोनों देव थे। वहाँ अपनी बहुतसी स्नेहकी बातें हुआ करती थी। उस समय तुमने मनुष्य भवमें दीक्षा लेनेका वायदा किया था। लेकिन यहाँ आकर तुम मोहमें फंस गए हो, अतः इस मोह जालको काटकर जिनेन्द्री दीक्षा ग्रहण करो।"

सगरको दीक्षासे विमुख देखकर मणिचूल चुप हो गया। और एक दिन ब्राह्मणका रूप रखकर अयोध्या आया।

सगरके पुत्रोंको देखकर मणिचूलने कहा–"जो स्वयं न कमाकर पिताके धनपर मौज उड़ाता है वह पुरुष अधम है। तुम क्षत्रिय पुत्र होकर भी पिता सगरके धनका उपभोग कर रहे हो"। यह सुनकर सगरके पुत्रोंको लज्जा आई।

एक दिन सभामें सब भाई पिताको हाथ जोड़ नमस्कारकर बोले–"तात! हमें कोई सेवाकार्य दीजिए ताकि हमारा यह समय ठीकसे व्यतीत हो। सगरने कहा–इस समय कौनसी ऐसी चीज मुझसे असाध्य है जिसे तुम सब साध्य करोगे? अतः जाओ आनन्दसे रहो।

पुत्रोंने फिर कहा–"नहीं! आप हमें कुछ सेवाकार्य अवश्य बताइए। पिताने कहा–यदि तुम चाहते ही हो तो जाओ कैलास पर्वतपर जाकर उसके चारो तरफ एक खाई खोदो।

पिताकी यह आज्ञा पाकर वे सभी कैलासपर गये। वहाँ अजितनाथ भगवानको नमस्कारकर खाई खोदने लगे। शीघ्र ही दण्डरत्नसे गंगाकी वज्रवेदिका फोड़कर उसका जल बहा लाए। इस तरह खाई तो खुद गई लेकिन उनके निकलनेका मार्ग रुद्ध हो गया। इतने में ही सगरको विरक्त करनेके लिए धर्मात्मा मणिचूल देव साँपका रूप बनाकर वहाँ आया और उन सभी पुत्रोंको डसकर मूर्छित कर दिया। उन पुत्रोंमेंसे सगरके दो नाती भीमरथ और भगीरथ पूर्व पुण्यसे बच गए। अपने पिता और चाचाओंकी मृत्युके दुःखसे वे अत्यन्त दुखी हुए। जब वे अयोध्यामें आए तो मन्त्रियोंने उन्हें समझा दिया कि तुम यह समाचार अपने बाबासे मत कहना। दोनों पुत्र आकर सभामें चक्रवर्तीके पास बैठ गए। पूछनेपर उन्होंने बतलाया कि अभी अन्य सब लोग वहाँ खाई खोद रहे हैं। सगर यह सुनकर प्रसन्न हुआ और मन्त्रियोंसे बोला– "पुत्रोंको भोजनके लिए खाना भिजवाना चाहिए। चक्रवर्तीकी आज्ञानुसार मन्त्रियोंने खाना भिजवा दिया।

इधर जब अनेक सामन्तोंके साथ चक्रवर्ती सभामें बैठे हुए थे तब मणिचूल देव ब्राह्मण बनकर कंधेपर पुत्रकी लाश रखे हुए आया, और सगरसे कहने लगा–प्रभो! आपका राज्य रहते हुए यह मेरा पुत्र यमराजने छीन लिया है। अतः आप उसे यमराजके हाथसे लाकर मुझे सौंप दें।

चक्रवर्तीने हंसकर कहा–"ब्राह्मण! तप क्यों नहीं करते? तप करके तुम यमराजका हननकर अपना पुत्र ला सकते हो। तपसे अधिक उपयुक्त पृथ्वीपर ऐसी कोई वस्तु नहीं है जो संसारका भय दूर कर सके। इसलिए घोर तपश्चरण कर संसारका भय ही दूर क्यों नहीं कर डालते?

ब्राह्मणने कहा–"सम्राट्! जैसा आप मुझसे कह रहे हैं वैसे आप स्वयं भी आचरण क्यों नहीं करते? आपके भी तो साठ हजार पुत्र इसी तरह यमके अतिथि हो चुके हैं।" पुत्रोंका मरण सुनकर सगर क्षणभरके लिए मूर्छित हो गया। जब मंत्रियोंने शीतलोपचारसे सचेत किया तो कहने लगा–'अरे! यह संसारकी विचित्रता देखो, इसका महत्त्व जलके बुलबुलेसे अधिक नहीं है। मैं इसे छोड़ अब मुक्तिपथकी साधना करूँगा। धीर वीर चक्रवर्ती अपना राज्य भगीरथ नातीको देकर भीम पौत्रके साथ दीक्षित हो गया तथा केवल ज्ञान उपार्जन कर इन्द्रादिकोंसे पूजित हो भीमके साथ ही निर्वाणको प्राप्त हुआ। इधर देवने सभी पुत्रोंको निर्विष कर दिया। मूर्छासे मुक्त होकर वे निद्रासे जागे हुए मनुष्यकी तरह उठे। पिताको दीक्षित सुनकर वे भी विरक्त हो दीक्षा ले गये तथा घोर तपश्चरण कर मुक्त हुए।

सगरका पोता भगीरथ राज्य करने लगा। एक दिन उसने श्रुत सागर मुनिसे पूछा–महाराज! मेरे बाबाके सभी पुत्र एक साथ मूर्छित हो गए और मैं बच गया। इसका क्या कारण था?

भगवान श्रुत सागरने कहा-'एक बार चारों प्रकारका संघ सम्मेद शिखरकी वन्दनाके लिए गया था। मार्गमें उन्हें अन्तिक ग्राम दिखाई दिया। उस गाँवकी जनता संघको देखकर भंड वचन कहती हुई हंसने लगी। उस समय एक कुम्हारने उन्हें मना किया और स्वयं जाकर संघकी स्तुति करने लगा।

एक दिन उसी गाँवके किसी आदमीने चोरी की। इस भारी अपराधके बदले राजाने सारे गाँवको घेरकर जलवा दिया। जिस दिन गाँव जलकर खाक हुआ था उस दिन कुम्हार किसी कामसे पहले ही बाहर चला गया था। समयानुसार कुम्भकार तो मरकर अत्यन्त धनिक वैश्य हुआ और वे सब गाँवके लोग आगसे मरकर कौड़ियां हुए। वहाँसे वह कुम्हार मरकर राजा हुआ तथा वे सभी लोग बार बार मरकर वही कौड़ियां होते रहे। एक दिन राजाके हाथीके पैरमें दबकर वे सब कौडियां मरीं और मरकर मनुष्य हो क्रमसे धर्मका साधनकर स्वर्गमें देव हुईं। राजा भी मुनि होकर देव हुआ। वहाँसे च्युत होकर तू भगीरथ हुआ और वे सब गाँववासी सगरके पुत्र हुए। भगीरथ अपने यह भवांतर सुनकर दीक्षा लेकर मोक्ष चला गया। इतना कह कर गणधर बोले—हे श्रेणिक! यह सगरकी कथा तुझसे कही, अब तू प्रकृत कथा सुन—

लंकामें वही मेघवाहनका पुत्र महारक्ष नामका जो राजा राज्य कर रहा था, एक दिन स्त्रियों सहित वह जलक्रीड़ा करने गया। वहाँ कमलके अंदर प्राणावरोधसे मरे हुए भौंरेको देखकर उसे वैराग्य हो गया। इतनेमें ही श्रुतसागर मुनि वहाँ आ निकले। उनसे धर्मकथा सुनकर राजाने पूछा-नाथ! मुझे मेरे पूर्वभव बतलाकर मेरा सन्देह दूर करें। मुनिराज बोले—

"इसी भरत क्षेत्रके पोदनापुर नगरमें हित नामका वणिकपुत्र रहता था। उसकी स्त्रीका नाम माधवी था। उनके प्रीति नामका पुत्र हुआ। उसी नगरमें उदय नामका धर्मात्मा राजा था। उसकी रानीका नाम अर्हश्री तथा पुत्रका नाम हेमरथ था। उसने एक दिन जिन मंदिरमें महान पूजा महोत्सव किया। उससे खूब जयघोष हुआ। इस जयनादसे सारा नगर गूंज उठा।

प्रीतिने घरपर बैठे हुए यह जयोच्चारण सुना तो खुशीके मारे नाच उठा। स्वयं भी जय-घोष करने लगा। आयुके अन्तमें जब वह मरा तो इस धार्मिक अनुमोदनाके प्रभावसे नंदनवनमें यक्ष हुआ। एक दिन पश्चिम विदेहके कांचनपुर नामक सुन्दर नगरमें कुछ दुष्ट पुरुष मुनियोंपर उपसर्ग करना चाहते थे कि यक्षने उन्हें रोका और मुनियोंकी रक्षा की। उस पुण्यके प्रभावसे आयुके अंतमें वहाँसे च्युत होकर वह विजयार्द्धके विद्युत्पुर नामक नगरमें विद्युत्प्रभके उदित नामका धर्मात्मा पुत्र हुआ। घोर तपश्चरणकर वह ऐशान स्वर्गमें उत्तम देव हुआ। वहाँसे तू महाराक्षस नामका विद्याधर हुआ है। धर्मके बिना अज्ञानमें ही तेरा यह समय चला गया। अब तेरी केवल आठ दिनकी आयु और रह गई है"।

यह सुनकर महारक्ष बड़ा बेकल हुआ। वह कहने लगा-हाय! अब क्या करूँ? आयु थोड़ी रहनेके कारण अब मैं तप भी तो नहीं कर सकता। इस तरह पश्चात्ताप करते हुए उसने देवरक्ष पुत्रको अपना राज्य सोंपा तथा सूर्यरक्षको युवराज बनाकर मुनिके समान विरक्त होकर धर्म-ध्यानमें तत्पर रहने लगा। तथा समाधि पूर्वक मरणकर स्वर्गमें देवोंसे पूजित देव हुआ।

किन्नरगीत नगरके विद्याधर श्रीधर और उसकी पत्नी विद्यासे उत्पन्न अरिंजया नामकी कन्यासे देवरक्षने विवाह किया। तथा सुरकांत विद्याधरकी पत्नी गांधारीसे उत्पन्न गंधर्वा नामकी कन्यासे युवराज सूर्यरक्षने विवाह किया। देवरक्षके सुन्दर दश पुत्र हुए तथा देवांगनाके समान रूपवती गुणवान छः कन्याएँ हुई। उतने ही सुन्दर पुत्र तथा उतनी ही रूपवती सुशील कन्याएं

सूर्यरक्षके हुई; उनका यश सर्वत्र फैल गया। उन पुत्रोंने अपने नामोंके साथ नगरोंके नाम जोड़-कर महान सुन्दर नगरोंकी रचना की। सन्ध्याकार, सुवेल, मनोल्हाद, मनोहर, हंसद्वीप, हरि-योधन, समुद्र, कांचन, अर्द्धस्वर्ग आदि नगर देवरक्षके पुत्रोंने बसाए। उसी प्रकार सूर्यरक्षके पुत्रोंने भी अनेक नगर बसाए।

कटावर्त, विकट, मेघ, उत्कृष्ट, स्फुट, दुर्ग्रह, तट, तोप, आवली आदि द्वीपोंमें वे सब राक्षसवंशी विद्याधर रहने लगे। सूर्यरक्षकी आज्ञासे अन्य द्वीपोंके विद्याधरोंने भी आकर वहाँ अपने घर बना लिए। यथा योग्य पुत्रोंको अपनी राज्य संपदा बाँटकर वे दोनों भाई देवरक्ष और सूर्यरक्ष श्रीधर मुनिके निकट विरक्त होकर मुनि होगए। तथा घोर तपश्चर्याकर शुक्लध्यानके बलसे अनंत सुख रूप मोक्ष स्थानको प्राप्त हुए।

भीम और सुभीम राक्षसोंके आशीर्वाद रूप पुण्यसे राजा मेघवाहनके बंशकी महान वृद्धि हुई। उसी वंशमें अनुक्रमसे विद्याधर महारक्ष और पत्नी मनोवेगासे एक राक्षस नामका पुत्र हुआ। उसकी रानीका नाम सुप्रभा था। उन दोनोंके सूर्य चन्द्रमाके समान दो पुत्र हुए, जिनमें पहलेका नाम सूर्यगति था और दूसरेका बृहत्कीर्ति था। उन्हें राज्य देकर राक्षस मुनि बनगया और तपश्चर्या करके उत्तम देव हुआ।

राजा सूर्यगतिकी मदनवेगा नामकी पटरानी हुई तथा बृहत्कीर्तिकी पुष्पलखा नामकी पट्ट-रानी हुई। सूर्यगतिके भीमप्रभ नामका पुत्र हुआ। उस भीमप्रभकी एकसे एक सुन्दर एक हजार स्त्रियां हुईं; और उनसे १०८ पुत्र हुए। उनसे राक्षसोंका राज्य दूर दूर तक फैल गया। बादमें भीमप्रभ दीक्षा लेकर निर्वाणको प्राप्त हुआ।

भीमप्रभका बड़ा पुत्र पुजार्ह हुआ। पूजार्हका पुत्र जितसूर्य हुआ। उसकी पत्नीका नाम सुप्रभा था। उन दोनोंसे सुग्रीव नामका पुत्र हुआ। सुग्रीवसे हरिग्रीव हुआ, हरिग्रीवसे श्रीग्रीव हुआ, श्रीग्रीवसे सुमुख आदि हुए। सुमुखसे सुव्यक्त, सुव्यक्तसे अमृतवेग, अमृतवेगसे भानुगति, भानुगतिसे चिंतागति, चिंतागतिसे इन्द्र, इन्द्रसे सुर, सुरसे मेघ, मेघसे सिंहदत्त, सिंहदत्तसे वज्रदंत, वज्रदंतसे इन्द्रजीत, इन्द्रजीतसे भानुवर्मा, भानुवर्मासे भानु, भानुसे सुरारि, सुरारिसे त्रिजटी, त्रिजटीसे भीम, भीमसे मोहन, मोहनसे उद्धारक, उद्धारकसे रवि, रविसे वज्रमध्य, वजमध्यसे प्रमोद, प्रमोदसे सिंह विक्रम, सिंह विक्रमसे चामुंड, चामुंडसे मारण, मारणसे भीष्म, भीष्मसे द्विपवाह, द्विपवाहसे अरिमर्दन, अरिमर्दनसे निर्वाणभक्ति, निर्वाणभक्तिसे उग्रश्री, उग्रश्रीसे अर्हद्भक्ति, अर्हद्भक्तिसे अनुत्तर, अनुत्तरसे गतभूम, गतभूमसे अनिल, अनिलसे चन्द्र, चन्द्रसे लंका, लंकासे शोक, शोकसे मयूरवाक, मयूरवाकसे महाबाहू, महाबाहूसे मनोरम, मनोरमसे सूर्यकांत, सूर्यकांतसे बृहद्रति, बृहद्रतिसे बृहत्कांत, बृहत्कांतसे अरित्रास, अरित्राससे चन्द्रावर्त, चन्द्रावर्तसे महारव, महारवसे मेघध्वान, मेघध्वानसे गृहक्षोभ, गृहक्षोभसे नक्षत्रदमन इत्यादि महानगुणोंसे विभूषित अनेक बड़े बड़े विद्याधर अपने अपने पुत्रोंको राज्यलक्ष्मी तथा धन संपदादि सौंपकर दीक्षा ले तपश्चर्याकर यथायोग्य गतियोंमें गए।

इस तरह बहुत सा समय बीत जानेपर लंका नगरमें राजा मेघप्रभ हुआ। उसकी रानीका नाम श्रीपद्मा था। उन दोनोंके कीर्तिधवल नामका गुणी पुत्र हुआ, वह स्वर्गमें इन्द्रकी तरह भोग भोगता था।

---

४. वानर वंशका वर्णन

अब वानर वंशियोंकी कुल परम्पराका वर्णन करते हैं—

विजयार्द्धकी दक्षिण श्रेणीमें मेघपुर नामका नगर है। वहाँका राजा अतीन्द्र और उसकी रानी श्रीमती थी। उनके श्रीकंठ नामका पुत्र तथा देवी नामकी सुन्दर कन्या हुई। वहीं रत्नपुर नगरमें एक दूसरा पुष्पोत्तर नामका राजा रहता था। उसके पद्मोत्तर नामका पुत्र हुआ।

एक बार पुष्पोत्तरने पद्मोत्तरके लिए श्री कंठसे उसकी बहिन माँगी। श्री कंठने भाग्यवश उसे देनेसे इन्कार कर दिया। और कुटुम्बीजनोंकी सलाहसे एक कीर्तिशुभ्र नामक राक्षस-वंशी विद्याधरके साथ उसे विवाह दिया। पुष्पोत्तरने जब यह सुना तो मनमें सोचा—"मेरा पुत्र न तो कुरूप ही था और न मुझमें ही कुछ कलंक था। फिर भी इस श्रीकंठने अपनी बहिन मेरे लड़केको नहीं दी"।

एक दिन राजा श्रीकंठ मंदिरमें जिनेन्द्र भगवानकी पूजा करके रत्नपुरके उद्यानसे होकर गुजर रहा था कि पुष्पोत्तरकी कन्या पद्मा वहाँ आनन्दसे गाना गाती हुई दिखाई दी। श्रीकंठ उसे देखकर कामसे व्याकुल होगया। वह कन्या भी श्रीकंठको देखकर मोहित हो गई। इस तरह दोनों एक दूसरेपर आसक्त होगए।

श्रीकंठने अपना विमान रोका और उस कन्याको वहांसे उठाकर ले भागा। पुष्पोत्तरने भी क्रोधसे उसका पीछा किया। पुष्पोत्तरको पीछा करते हुए देखकर चतुर श्रीकंठ लंकामें घुसकर अपने बहनोई कीर्तिशुभ्रकी शरणमें जा पहुँचा। कीर्तिशुभ्रने श्रीकंठको रक्षाका आश्वासन दिया तथा उसकी पत्नीने भाईके साथ खूब स्नेह प्रदर्शित किया। राजा श्रीकंठने कीर्तिशुभ्रसे कहा—आप पद्माकी चौकसी करें मैं शत्रुसे युद्ध करने जाता हूँ। कीर्तिशुभ्रने कहा; नहीं, आप आनन्दसे घर रहिए मैं युद्ध करने जाता हूँ।

इस तरह कहकर कीर्तिशुभ्र युद्धके लिए चला। मार्गमें ही बड़ी चतुराईसे उसने एक दूत पुष्पोत्तरके पास भेजा। दूतने जाकर कहा—राजन्! यह तो आप जानते ही हैं कि कन्यायें हर हालतमें दूसरेके घर देनी पड़ती हैं, फिर जिसमें खून खराबी हो ऐसे विरोधसे क्या लाभ? श्री कंठ भी तो कुलीन, सुन्दर धर्मात्मा और विद्वान है। इतनेमें ही पद्माकी दूती भी वहाँ आ पहुँची और कहने लगी—महाराज! पद्माने जो कहला भेजा है वह सुनिए—श्रीकंठ मुझे नहीं पकड़ लाये हैं। लेकिन मैं स्वयंही उनके साथ आई हूँ। इस लिए आप उनके साथ युद्ध न करें। स्त्रियोंका जन्म वैसे ही पराधीन होता है, उसपर वे एक पुरुषकी ही नियोगिनी रहती हैं। इस लिए श्रीकंठके सिवा और पुरुषके साथ मैं विवाह न करूँगी। पिता जन्मही तो दे सकता है कुछ भाग्य नहीं।" पुष्पोत्तर यह सुनकर अपने नगर लौट गया।

पद्मश्री और श्रीकंठका खूब धूमधामसे विवाह हुआ। कीर्तिशुभ्र और श्रीकंठ परस्पर बड़े स्नेहसे रहने लगे। एक दिन जब श्रीकंठ घर जानेकी बात सोचने लगा तो कीर्तिशुभ्रने स्नेहसे कहा—राजन् विजयार्द्ध पर्वतपर ही तुम्हारे शत्रु बसते हैं। इस लिए कुछ समय तक तुम यहीं मेरे साथ रहो।

इस समुद्रमें स्वर्गके समान संध्याकार, मनोल्हाद, और कांचनादिक अनेक नगर हैं। उनमेंसे आप जिसे चाहें उसे लेलें, लेकिन यहाँसे छोड़कर अन्यत्र न जाएँ। यदि वहां भी न जानेकी इच्छा हो तो यहाँसे उत्तरकी तरफ लवण समुद्रमें ३० योजन चलकर वानर द्वीप है। जिसमें हजारों सुन्दर अतर्द्वीप हैं तथा रत्नमयी भित्तीवाला ऊँचा किष्कु नामका पर्वत है। उसमें जाकर तुम आनन्दसे रहो और अपने कुटुम्ब आदिको भी वहीं बुलालो।

यह सुनकर श्रीकंठने प्रसन्नतासे कीर्तिशुभ्रसे कहा—"अच्छी बात है, अपनेप रिवारको लेकर आनंदसे मैं वहीं रहूँगा। तदनुसार चैत्रकृष्णा प्रतिपदाको मंगलोत्सव करनेके बाद श्रीकंठने सपरिवार बानर द्वीपकी तरफ प्रस्थान किया।

द्वीपकी भूमि अनेक वृक्षोंसे सुशोभित थी, पक्षी कलरव कर रहे थे, अनेक प्रकारके रत्नोंके ढेर लगे थे। ऐसा मालूम पड़ता था मानो भोगभूमि हो। सुन्दर मनुष्यकी आकृतिके पूंछोवाले बन्दर कभी खीजते कभी रीझते हुए अनेक तरहसे किलोले कर रहे थे। उन्हें देखकर श्रीकंठने अपने नौकरोंसे कहा—इन मनुष्याकार पशुओंको यहाँ तो लाओ? वे लोग उन्हें पकड़कर श्रीकंठके पास ले आए। श्रीकंठ उन बंदरोंके साथ जी बहलाने लगा। कभी वे बन्दर हंसते, तो कभी नाचते, कभी झगड़ते तो कभी रोते। कभी एक दूसरेकी जूंएँ ही देखने लगते। कभी संभोगकी चेष्टा करते तो कभी मलत्याग करते। कभी बच्चोंको पेट या पीठपर चिपकाकर भागते। कभी फल फूलादि ही खाने लगते। इस तरह उन बन्दरोंकी किलोलें देखकर श्रीकंठने अपने साथके लोगोंको मनोरंजनके लिए उन्हें पालनेकी आज्ञा देदी। श्रीकंठ उन बन्दरोंसे मनोरंजन करता हुआ किष्कु पर्वतपर पहुचा। वहाँ अच्छी भूमि देखकर उसने रहनेको नगर बसाया। नगरके चारों ओर खाई कोट दरवाजे आदि बनवाए। सुख और सुविधा देखकर वहां चारों वर्णकी अन्य प्रजा भी आकर बस गई। इस तरह श्रीकंठ पद्माके साथ राजा बनकर रहने लगा।

श्रीकंठके वज्रकंठ नामका पुत्र हुआ। एक बार श्रीकंठ महलकी छतपर बैठा हुआ था कि नंदीश्वर द्वीपकी ओर जाते हुए कुछ देवोंको उसने देखा। उन्हें देखकर वह स्वयं भी जानेको उत्सुक हुआ। उसने अनेक विद्याधरोंको साथ लिया और विमानोंमें बैठकर वह भक्तिसे प्रेरित हो देवताओंके साथ चला। जाते जाते वह ढाईद्वीपके अंतमें मानुषोत्तर पर्वतपर प्रकृतिके नियमानुसार रुक गया। मनमें सोचने लगा कि मैं नंदीश्वर द्वीपमें भगवानकी पूजा करने जा रहा था यहाँ मुझे किसने रोक लिया। नीचे देखा तो मानुषोत्तर पर्वत दिखाई दिया। तब उसे स्मरण आया कि मैं भगवानके मुखसे पहले यह सुन चुका हूँ कि इस मानुषोत्तर पर्वतसे आगे मनुष्योंका गमन नहीं है इसीलिए मैं इसके द्वारा रुक गया हूं। इस मनुष्य जन्मको धिक्कार है जिसमें इच्छानुसार गमनागमन भी नहीं हो सकता। अतः इस जंजालको छोड़कर अब आत्मकल्याण ही करूँगा। इस तरह सोचकर उसने पुत्र वज्रकंठको राज दिया और स्वयं मुनि बनकर स्वर्गमें इन्द्र हुआ।

एकबार यह इन्द्र नन्दीश्वर जा रहा था। इसे देखकर वज्रकंठ भी जानेको तैयार हुआ। इन्द्रने तब अपना वृत्तान्त उससे कहा और बतलाया कि मैं अपने पूर्व भवमें श्रीकंठ नामका तेरा पिता था। तपके प्रभावसे मैंने यह इन्द्रका पद पाया है। बेटा! तू भी यह सुख देनेवाला घोर तपश्चरण कर। इन्द्रसे यह सुनकर वज्रकंठने अपने पुत्र इन्द्रवज्रको राज्य दिया और स्वयं मुनि होगया।

इन्द्रवज्रसे शक्रमत् हुआ, शक्रमत्से मेरु हुआ, मेरुसे मन्दिर हुआ, मन्दिरसे पवनगति हुआ, पवनगतिसे रविप्रभ हुआ, रविप्रभसे अमरप्रभ विद्याधर हुआ। यह महान गुणवान था। अनेक विद्याधर इसकी सेवा करते थे।

एक दिन विद्याधर राजा त्रिकूटेशकी शुभ लक्षणोंवाली पुत्री गुणवतीको इसके साथ विवाह करनेके लिए लाए। उस विवाहोत्सवमें विद्याधरोंकी कन्याओंने वेदीपर पाँच रंगका मांडला बनाया। उसमें सबसे पहले रत्नोंके चूर्णसे बन्दरोंकी पंक्ति चित्रित की, इसके बाद और सब जंतुओंके शरीर क्रमसे चित्रित किए। वर बनकर जब अमरप्रभ राजा वहाँ आया तो

बन्दरोंके चित्र देखकर अत्यन्त क्रुद्ध हुआ और कहने लगा-मेरे विवाहोत्सवपर किस दुष्टने यह अमंगल सूचक कुरूप बन्दरोंके चित्र बनाए हैं। मैं अभी उसकी नाक काटकर दण्ड देता हूँ। यह सुनकर खास खास लोग वहाँ शीघ्र आए।

राजाकी क्रोधाग्नि देखकर पहले तो सब चुप हो सामने खड़े हो गये। फिर थोड़ी देरके बाद बड़ी नम्रतासे बोले—राजन्! हम आपसे एक पुरानी बात कहना चाहते हैं। अपने वंशमें प्रसिद्ध राजा श्रीकंठ हो गए हैं। उन्होंने ही सबसे पहले इस प्रथाको आनन्द मंगल कह कर चलाया था। इस लिए बड़े बूढ़ोंकी इस प्रथाके अनुसार ही आपके विवाहमें भी बन्दरोंके चित्र बनाए गए हैं"। यह सुनकर अमरप्रभ शान्त हुआ और कहने लगा-यदि ऐसा है तो मैं मस्तकके मुकुट तथा अन्य चीजोंमें बानरोंके चिह्न करवाता हूं। इस प्रकार कहकर उसने बन्दरोंका चिन्ह मुकुट, छत्र, पताका तथा दरवाजेके तोरण आदिपर खुदवाया। बादमें वह विजयार्द्धकी दोनों श्रेणियोंके राजाओंको जीतकर अपने घर आया।

अमरप्रभ और गुणवतीसे कपिकेतु नामका गुणवान् पुत्र हुआ। कपिकेतुकी पत्नीका नाम श्रीप्रभा था। उन दोनोंसे प्रतिबल नामका पुत्र हुआ। प्रतिबलसे विमल पुत्र हुआ। इस तरह अपने अपने पुत्रोंको राज्य देकर सब तपश्चरणकी ओर अग्रसर होते रहे।

ग्यारहवें तीर्थंकर भगवान श्रेयांसनाथ तथा बारहवें तीर्थंकर देवाधिदेव भगवान वासुपूज्यके अन्तरालमें अमरप्रभ विद्याधरने यह बन्दरोंका चिह्न प्रचलित किया। तबसे लेकर सभी विद्याधर इन वानर चिन्होंको आदर पूर्ण दृष्टिसे देखने लगे। अतः बन्दरोंकी ओर विशेष आदर भाव रखनेके कारण वे बन्दर कहलाए।

इसके बाद भगवान मुनिसुव्रतके समयमें वानर वंशियोंका शिरोमणि महोदधि नामका महान राजा हुआ। इसकी अत्यन्त सुन्दरी सौ रानियाँ हुई; तथा एक सौ आठ मनोहर पुत्र हुए। लंकामें उस समय विद्युत्केश नामका राजा राज्य करता था। उसमें और इस महोदधिमें अत्यन्त स्नेह हो गया। विद्युत्केश एक दिन लंकामें अनेक स्त्रियोंके साथ सरोवरमें जलक्रीड़ा कर रहा था। इतनेमें ही स्वभावसे चपल किसी दुष्ट बन्दरने श्रीचन्द्रा नामकी रानीके दोनों स्तन खरौंच लिए। घावकी पीड़ासे दुखी श्रीचन्द्राको रोते हुए देखकर राजाने उसपर हाथ फेरते हुए मीठे बचनोंसे उसे सान्त्वना दी। तथा अत्यन्त क्रोधमें आकर उस बन्दरके बाण खींचकर मारा। बन्दर वहीं पासमें विराजे हुए मुनिके पास जाकर गिरा। उसे मरता हुआ देखकर मुनिराजने पंच नमस्कार मन्त्र दिया।

वह शान्ति पूर्वक मरणकर महोदधि कुमार नामका देव हुआ। इधर विद्युत्केशने उसी क्रोधमें नौकरोंको आज्ञा दी-"जाओ इन सभी चञ्चल बन्दरोंको मार डालो। आज्ञा पाते ही नौकरोंने बन्दरोंको मारना प्रारम्भ किया। नगरके तथा वनके सभी बन्दर शस्त्रोंसे पीड़ित हो अत्यन्त डरसे फूत्कार करने लगे। महोदधि कुमार अपने अवधिज्ञानसे बन्दरोंको मारा जानकर निर्दोष पशुओंको मारने वाले उन नौकरोंको मारने आया। नौकर भागकर राजाकी शरण पहुंचे। देवने जाकर राजासे कहा-"रे दुष्ट अब तुझे ही मारता हूं।

विद्युत्केश डरते हुए बोला—"आप कौन हैं कहाँसे आये हैं? मुझे क्यों मारना चाहते हैं? देवने कहा—"रे भूप! तूने जिस निर्दोष बन्दरकी हत्या की थी वह मैं ही हूं जो महान देवता हुआ हूं। यह बिचार तिर्यञ्च पशु हैं। स्वभावसे ही चपल होते हैं। तू उन्हें मरवा रहा है इस लिए मैं तुझे मारूँगा।

राजा जब अत्यन्त भयभीत हुआ तो देवने कहा—"डर मत। यह सुनकर राजाने कहा—तो मुझे बताइए अब क्या करूँ?

देव राजाको हाथ पर रखकर मुनि के पास ले गया, दोनोंने भक्ति पूर्वक मुनि चरणोंकी वन्दना की। देव बोला–हे योगि राज ! आपके प्रसादसे मैं भवनवासियोंमें महोदधि कुमार नामका उत्तम देव हुआ हूं।

राजाने आश्चर्यसे मुनियोंकी ओर देखकर कहा—स्वामिन् ! मैं बड़ा भयभीत हूँ आज्ञा दें क्या करूँ ? मुनिने राजासे कहा—यहाँ पासमें ही चार ज्ञानके धारी हमारे गुरु विराजमान हैं। चलो उन्हींके पास हम लोग चलें। यही हम लोगोंका सनातन कर्तव्य है। पासमें आचार्यके उपस्थित रहनेपर भी जो मूर्ख अपनी शिष्यता भुलाकर स्वयं आचार्यपना करने लगता है वह आचार्य तो है ही नहीं, प्रत्युत उसकी शिष्यता भी जाती रहती है। वह अपने कर्तव्यसे च्युत कुमार्गगामी है। अपने आचारसे निंदित साधु सब तरफसे भ्रष्ट होता है।

उन मुनिके साथ वे सब देव विद्याधर धार्मिक उत्कण्ठापूर्ण चित्तसे उन चार ज्ञानधारी मुनिराजके पास गए। जाकर उनकी प्रदक्षिणा दी तथा विनय पूर्वक प्रणाम कर कुछ फासिलेसे बैठ गए। दोनोंने ही मुनिराजसे धर्मका उपदेश सुना, बादमें बड़े स्नेहसे अपनी जन्म जन्मान्तरकी कथा पूछी। मुनिराज बोले—

काशी देशमें श्रावस्ती नगरीके बाहर एकबार यशोदत्त नामके मुनि ध्यान लगाए बैठे हुए थे। अनेक कुलललनाएँ भक्तिसे वहाँ उनकी पूजा करनेके लिए आईं। उन स्त्रियोंके बीचमें मुनिको देखकर एक पापी व्याध उनकी निन्दा करने लगा तथा उन्हें मारनेको उद्यत हुआ। मुनिको भी यह देखकर पापोदयसे क्रोध हो आया। दोनोंने एक दूसरेको लाठी मुक्कों आदिकी मारसे घायल कर दिया। स्त्रियाँ उठकर अपने अपने घर चली आयीं।

मुनिने जो कुछ धर्मका उपार्जन किया था वह सब क्रोधसे खो दिया। अन्तमें मरकर वह ज्योतिष जातिका देव हुआ। वहाँसे च्युत होकर यह विद्याधरोंका राजा हुआ। और वह भील भी संसारमें परिभ्रमण करता हुआ इसी बनमें बन्दर हुआ। पूर्व वैरसे ही तेरी स्त्रीको उसने खटोंस खाया था और बदलेमें तैने उसे बाणसे मार दिया था। मरते समय पंच नमस्कार मन्त्रके सुननेके फलसे यह देव हुआ है। अब तुम्हें बैर नहीं करना चाहिए। संसारमें बार बार परिभ्रमण करनेसे तुम्हारे क्या हाथ लगेगा"।

बादमें वे सब मुनि विद्याधरादि भगवान मुनिसुव्रत नाथके समवसरणमें गए। और उन्हें नमस्कार कर वे मनुष्योंके कोठेमें बैठ गए। भगवानके मुखसे धर्मोपदेश सुनकर विद्युत्केश अपने पुत्रको राज्य दे मुनि होगया। दीक्षा ग्रहणके समय विद्युत्केशने शीघ्र ही एक दूत अपने मित्रके पास किष्कुपुर कुछ निवेदन करनेके लिए भेजा। दूत शीघ्र ही किष्कुपुर गया और वहाँके राजा महोदधिसे विनय पूर्वकउसने निवेदन किया—महाराज महोदधि ! विद्युत्केश नरेशने कहला भेजा है कि आप उनके पुत्र सुकेशकी देख रेख रक्खे क्योंकि वे दीक्षा ले रहे हैं।

दूतके मुखसे विद्युत्केशके वैराग्यका समाचार सुनकर राजाने बहुत समय तक दुख प्रकट किया। तथा बादमें बोला–मैं भी भगवान द्वारा बतलाई गई जिनदीक्षा ग्रहण करूँगा। रानियोने उसे बहुत लुभाया परन्तु वह उनकी बातोंमें नहीं आया। पुत्र प्रतिचन्द्रको अपना राज्य दे कठिन तपश्चरणकर राजा महादधि निर्वाणको प्राप्त हुआ।

प्रतिचन्द्रके जिनमती नामकी रानी हुई तथा किष्कंध और अंधक रूढ़ि नामके दो पुत्र हुए। प्रतिचन्द्रने किष्कंध पुत्रको राज्य दिया तथा छोटे अंधकरूढ़िको युवराज बनाया और स्वयं दीक्षा लेकर निर्वाण प्राप्त किया। किष्कुपुरमें वे दोनों कुमार राज्य करने लगे।

विजयार्द्धकी दक्षिण श्रेणीमें रथनूपुर नामका एक नगर है। उसमें अशनि वेग नामका एक पराक्रमी राजा था। उसके विजयसिंह नामका सुन्दर गुणवान पुत्र हुआ। उसी दक्षिण श्रेणीमें

एक आदित्यपुर नामका नगर है, उसके राजाका नाम विद्यामंदिर तथा रानीका नाम वेगवती था। उनके सुन्दर सरस्वतीके समान श्रीमाला नामकी पुत्री हुई। राजाने उसका स्वयंवर समारोह किया। राजा विजयसिंह आदिक अच्छे अच्छे राजा वहाँ आए। किष्कंध और अंधक रूढ़ि कुमार भी पहुंचे। सबके बैठनेके लिए अनेक प्रकारके सुवर्ण रत्नमयी ऊँचे आसन बनवाए गए। उन आसनोंपर हार ध्वजा आदिसे विभूषित होकर सब राजा अपने अपने समुदायके साथ यथा-क्रमसे बैठ गए।

उन सबके बीचमें मंगल गाजे बाजे गीत नृत्यादिकके साथ वह सुन्दर कन्या लाकर खड़ी कर दी गई। सुमंगला नामकी धाय हाथमें सुवर्णकी छड़ी लेकर राजाओंकी ओर संकेत करती हुई उनका इस तरह परिचय कराने लगी—

हे सुंदरि ! देख, यह रथनूपुर राजाके पुत्र विजयसिंह है। अत्यंत सुन्दर और गुणवान हैं। तू चाहती हो तो इनके गलेमें वरमाला डाल दे। पुत्रीकी उधर इच्छा न देख धाय दूसरा वर दिखाने लगी। पुत्री ! यह नभस्तिलक पुरके राजा चन्द्रकुंडलके पुत्र हैं। इनका नाम मार्तण्ड कुण्डल है। तेरी इच्छा हो तो इन्हें वर। कन्याने उसकी अधिक आयु देखकर उधरसे मुंह फेर लिया। तब धाय दूसरे योग्य वरका परिचय कराने लगी। बेटी ! यह रत्नपुरके स्वामी विद्याङ्ग और रानी लक्ष्मीके सुन्दर पुत्र विद्यासमुद्घात हैं। यह अधिष्ठितपुरके राजा बज्रायुधके महान पुत्र विजयसिंह हैं शास्त्रोंके मर्मज्ञ हैं। इस तरह उन सभी विद्या ऐश्वर्यवान राजाओंका परिचय कराकर धाय चुप हो गई।

श्री मालाने विद्याधरोंको छोड़कर किष्कंधके गलेमें वरमाला डाल दी। भिक्षुकोंने जय जयकार शब्द उच्चारण किया। खूब बाजे बजे, गीत नृत्य मंगलादिक किए गए। किष्कंधके गलेमें वरमाला देखकर स्वयंवरमें आए हुए राजा लोग चिढ़ गए और एक दूसरेका मुंह ताकने लगे। सबके चेहरे काले पड़ गए। वे अभिमानसे पूछने लगे-' कौन है, किसके गलेमें माला डाली गई ?

विजयसिंहने जब इन वानर चिन्ह संयुक्त किष्कंध और अंधकरूढ़िको श्रीमालाके साथ बैठे देखा। तो क्रोधमें आकर कहने लगा-"तुम दोनों कुरूप बंदर यहाँ कैसे आए" ?

यह सुनकर उनके पक्षके वानर वंशियोंने क्रुद्ध हो स्वाभिमान पूर्वक कहा—तुम जैसे वृक्षोंका मर्दन करनेके लिए हम बंदर यहां आए हैं। इस बातसे विजयसिंहके पक्षके लोग अत्यंत क्रुद्ध हुए। वानर भी उधर क्रुद्ध होकर लड़नेको तय्यार होगए। दोनों पक्षोंमें घमासान होने लगा वानरोंने कुर्सियोंके पाए उखाड़कर, वृक्ष उपाड़कर, पर्वतोंके पाषाण उठाकर उन अन्यायी राजाओंको खूब मारा। युद्धमें हाथी हाथियोंसे भिड़गए, रथ रथोंसे भिड़ गए, घोड़े घोड़ोंसे लड़ पड़े, पदाति पदातियोंसे भिड़े, इस तरह महाभयंकर युद्ध हुआ।

राक्षस सुकेश युद्धके समाचार सुनकर चतुरंग सेनाके साथ किष्कंध और अंधकरूढ़िके पक्षमें लड़ने आया। राक्षसों और वानरोंने उन राजाओंका खूब संहार किया। शत्रु पक्षके प्रहारोंसे जब विजयसिंहकी सेना भागने लगी तब विजयसिंह स्वयं युद्ध करनेको तय्यार हुआ। अंधकरूढ़िने विजयसिंहका धनुष काट डाला। विजयसिंह ज्योंही दूसरा धनुष उठाने लगा कि अंधकरूढ़िने उसका मस्तक उड़ा दिया। यह देखकर बचे खुचे सब राजा अपने अपने प्राण लेकर भाग गए। सुकेश किष्कंध और अंधक अपनी राजधानी लौट गए।

पुत्रका मरण सुनकर अशनिवेगको मूर्च्छा आगई। चंदनादि उपचारोंसे सचेत होकर वह क्रोधाग्निसे भड़क उठा। यह सोचकर कि आज उन सभी पापी राक्षसों और बन्दरोंको मार

डालूंगा। चतुरंग सेना लेकर वह युद्धके लिए निकला। शत्रु अशनिवेगने किष्कुपुरको जाकर घेर लिया। यह सुनकर बानर और राक्षस युद्ध करनेके लिए निकले। बानर और राक्षस राजाओंने अशनिवेगकी सेनाको पुनः मार भगाया। यह देखकर स्वयं अशनिवेग युद्धके लिए उद्यत हुआ।

अंधक और अशनिवेगमें महान घोर युद्ध हुआ, शस्त्रोंकी चोटसे अनेक योद्धा मारे गये। अशनिवेगका महान बलवान पुत्र विद्युत्वाहन किष्कंधके साथ युद्ध करने लगा। किष्कंधने भिण्डमाल शक्तिसे विद्युत्वाहनका शरीर भेद दिया। इससे वह मूर्छित होगया लेकिन पुनः सचेत होकर युद्ध करने लगा। विद्युतवाहनने दंडके द्वारा किष्कंधका वक्षस्थल भेद दिया। किष्कंध मूर्च्छित हो गया। अतः सुकेश उसे उठाकर किष्कुपुर ले गया।

उसी समय अशनिवेगने अंधक युवराजको मार दिया। अंधकके मरते ही बानरों और राक्षसोंकी सेना तितर-बितर हो गयी। होशमें आ जानेके बाद किष्कंधने पूछा–मेरा भाई अंधक मुझे यहाँ क्यों नहीं दिखायी देता। उसके न होनेसे यह भयंकर शत्रु अशनिवेग अभी यों ही जीवित खड़ा है। सुकेशने तब अंधककी मृत्युके समाचार उससे कहे। जिन्हें सुनकर वह मोह-बुद्धिसे व्याकुल हो शोक करने लगा। भाईके मोहके कारण जब वह बहुत विलाप करने लगा तब सुकेशादिने इस तरह समझा कर प्रतिबुद्ध किया–किष्कंध! शोक करनेसे क्या अब तुम्हारा भाई फिर लौट आयगा? इसलिए यह शोक तो छोड़ो और अब बचे-खुचोंके जीवनकी चिन्ता करो। यह अशनिवेग बड़ा दुष्ट है शीघ्र ही सबको मार डालेगा, इसलिए उठो पाताल लंकाको चलें।

श्रीमालाने भी अनेक युक्तियोंसे इसे समझाया और कहा—नाथ! उठिए। राक्षस-राजा सुकेशने जहाँ सुझाया है वहाँ चलें। इस तरह किष्कंधको कुछ बोध हुआ।

सुकेशने कहा–किष्कंध! पाताल लंकाका स्थान बड़ा सुन्दर और सुरक्षित है। कुछ समय तक वहीं स्नेहसे रहेंगे। यों कह चुकनेके बाद बानर और राक्षस अपने-अपने वर्गोंके साथ किष्कुपुरसे निकले और पाताल लंकाकी ओर चले। विद्युद्वाह अत्यन्त वैरके कारण उनका पीछा करने लगा। लेकिन उसके बुद्धिमान पिता अशनिवेगने उसे रोक दिया। बानर और राक्षस दोनों ही पाताल लंका पहुंचे। वहाँ निडर हो सुख-दुख पूर्वक रहने लगे। अशनिवेग निर्घात नामक राजाको लंकाकी गद्दीपर बैठाकर स्वयं अपने नगर रथनूपुर लौट गया।

एकदिन मेघ समूहको विलीन होते देखकर अशनिवेगने विरक्त हो सहस्रार पुत्रको राज्य दिया और स्वयं चन्द्रकीर्ति मुनिके पास धर्मका उपदेश सुनकर विद्युद्वाह पुत्रके साथ उत्तम मुनि हो गया।

किष्कंध राजा शत्रुके वैराग्यका समाचार सुनकर रानी श्रीमाला सहित सुमेरु पर्वतपर जिन बिम्बोंकी वन्दनाके लिए गया। वहाँसे लौटते समय मार्गमें दक्षिण समुद्रके किनारे, देवकुरू भोगभूमिकी तरह विशाल कर्णतट नामकी सुन्दर अटवी देखी। श्रीमालासे कहने लगा–"देवि यह सुन्दर अटवी तो देखो। यहीं रहनेको मेरा जी करता है। पाताल लंकामें तो रहते रहते जी ऊब गया है। इस पर्वतको लांघकर जानेमें अब हृदय असमर्थ है। अतः विद्याधरोंसे दुर्गम इसी अटवीमें अपना घर बनाना चाहिए।

ऐसा सोचकर वह आकाशसे नीचे उतरा और वहाँ किष्कंध नामका नगर बसाया। अपने भाइयों सहित वह सुखसे वहाँ रहने लगा। वहीं उसकी रानी श्रीमालासे दो पुत्र हुए। बड़ेका नाम सूर्यरज और छोटेका नाम यक्षरज था। तथा कमलके समान कोमल सूर्यपद्मा नामकी लड़की हुई। सयानी होनेपर इसका विवाह विजयार्द्ध पर्वतपर मेघपुर नगरके राजा मेरु और मघोनीके पुत्र मृगारिदमनके साथ हुआ। बड़े महोत्सवके साथ सूर्यपद्मा कुमारके साथ विदा हुई।

लौटते समय कुमारने अपनी नव विवाहिता पत्नीके साथ कर्ण पर्वतपर पड़ाव किया और वहाँ कर्णकुण्डल नामका नगर बसाया। पाताल लंकाके अधिपति सुकेशकी रानी इन्द्राणीसे महान पराक्रमी तीन पुत्र हुए। जिनमें बड़ा माली, मझला तथा छोटा सुमाली और माल्यवान था। तीनों ही विद्वान और गुणी थे। सभी विद्याएँ सिद्ध हो जानेसे उनमें महान बल हो जानेके कारण वे उद्धत चेष्टाएँ किया करते और माता पिता उन्हें बड़े प्रयत्नोंके बाद रोक पाते। उनकी चेष्टाओंसे डर कर सुकेशने उन्हें समझाया कि यदि उन्हें खेलने जाना हो तो किष्किंधा नगर चले जाँय, किन्तु बालसुलभ चपलतासे दक्षिण समुद्रके किनारे न जाँय।

पुत्रोंने प्रणामकर माता-पितासे इसका कारण पूछा तो उन्होंने बतानेसे इंकार कर दिया। लेकिन जब उन्होंने अधिक आग्रह किया तो सुकेशने कहा—उस समुद्रके किनारे एक लंकानगरी है जो कुल परम्परासे है तो हमारी, किन्तु अशनिवेगने बहुत पहलेसे वहाँ निर्घात नामके किसी दुष्ट विद्याधरको इसका शासक नियुक्त कर रक्खा है। तभीसे हमें वह प्राणोंसे प्यारी-अपनी मातृभूमि छोड़ देनी पड़ी है। उस पापी निर्घातने हर एक देशमें कुछ गुप्तचर रख छोड़े हैं जो सदा हमारी गतिविधि देखते रहते हैं। जहाँ तहाँ उस पापीने हमें मारनेके लिए यन्त्रतन्त्रादि बिछा रक्खे हैं। तुम्हें आकाशमें खेलता हुआ देख कर उसने वहाँ विद्यासे शूल गाढ़ रक्खे हैं।

यह वृत्तान्त सुनकर पिताके दुःखसे मालीकी आँखोंमें आँसू आ गये। उसने एक लम्बी साँस ली और कहने लगा—पिता! अबतक आपने हमसे यह समाचार क्यों नहीं कहे थे? हमारी कुल क्रमसे आयी हुई लंकाका कौन मूर्ख उपभोग कर सकता है? अपनी लंका ले लेनेके बाद ही मैं अपने सिरपर राजमुकुट रक्खूँगा।' इस प्रकार प्रतिज्ञाकर पिताको नमस्कार करके माली वहाँसे चला गया और सेना लेकर लंकापर चढ़ गया। अमंगलके डरसे माता-पिताने उसे नहीं रोका। राक्षसोंकी सारी सेना युद्धके मैदानमें जाकर इकट्ठी हो गयी।

शत्रुओंका आगमन सुनकर निर्घात चतुरङ्ग सेना सहित बड़े गर्वसे लंकासे निकला। दोनों ओरकी सेनाओंमें हाथी घोड़े रथ पियादोंके पारस्परिक घात-प्रतिघातसे महा घनघोर युद्ध होने लगा। निर्घात और माली बड़ी देरतक युद्ध करते रहे। आखिर मालीने वज्रसे निर्घातका हृदय बेध दिया। निर्घातके मरते ही सारे विद्याधर विजयार्द्ध पर्वतपर अपने अपने स्थानको भाग गये। राक्षसोंने परिवार सहित लंकामें प्रवेश किया। माली तथा माल्यवान तीनों ही वहाँ सुखसे राज्य करने लगे। हेमपुरके विद्याधर राजा हेमकी रानी भोगवतीसे उत्पन्न चन्द्रवती नामकी पुत्रीसे बड़े भारी उत्सवके साथ मालीका विवाह हुआ।

सुमालीने प्रीतिकूटपुरके राजाकी पत्नी प्रीतिकाकी पुत्री प्रीतिमतीसे विवाह किया। तथा माल्यवानने कनकाभपुरके महाराजा कनककी रानी कनकश्रीसे उत्पन्न कनकावली नामकी पुत्रीसे विवाह किया।

विजयार्द्धके सिवा और सब विद्याधर राजाओंको उन्होंने वशमें कर लिया। इस तरह लंकामें राक्षसवंशी सुखसम्पदासे परिपूर्ण महान् शक्तिशाली हो गये। सुकेश और किष्कंध दोनों राजा अपने अपने पुत्रोंको राज्य दे धरमुनिके पास दीक्षित हो गये। उन्होंने बारह प्रकारके घोर तपका आचरणकर अनन्त सुखका समुद्र निर्वाण प्राप्त किया।

५ रावणका लंकामें प्रवेश

विजयार्द्धके रथनूपुर नगरमें सहस्रार नामका राजा राज्य करता था। मानससुन्दरी नामकी उसकी रानी थी। एक दिन राजाने अपनी उस गर्भिणी रानीसे अत्यन्त स्नेहसे पूछा—देवी! मुझे बताओ तुम इतनी दुर्बल क्यों हो गयी हो?

रानीने कहा—नाथ ! जबसे मुझे गर्भ रहा है तभीसे प्रतिदिन इन्द्रकी तरह क्रीड़ा करनेके लिये मेरा जी चाहता है। राजाने यह सुनकर उसी प्रकार रानी की इच्छा पूर्ति की। परस्पर इन्द्र इन्द्राणी बनकर वे दोनों हाथीपर सवार होकर जहां तहां विहार करते। देवोंकी तरह विमानमें बैठकर आकाशकी सैर करते। जब नौ महीने पूर्ण हुए तो रानीको एक सुन्दर पुत्र पैदा हुआ।

चूँकि गर्भके समय माताको इन्द्र जैसी क्रीड़ा करनेका चाव पैदा हुआ था इसलिए माता पिताने उसका नाम इन्द्र रक्खा। पुत्र धीरे धीरे जवान हुआ। उसके लिए रथ नूपुर नगरमें वैजयंत नामका इन्द्र जैसा एक सुन्दर महल तैयार कराया गया। लंबे दांतोंवाले एक श्वेत हाथीको ऐरावत हाथी बनाया गया तथा उसके अस्त्रका नाम वज्र रक्खा गया। बाकी और सब ठाट बाट भी स्वर्गके समान ही किए गये।

विजयार्द्धकी दोनों श्रेणियों पर थोड़े समयमें उसने अधिकार कर लिया। उसके अनेक रानियां और नाट्य शालाएं थीं सुधर्मा नामकी सभा थी, तीन अप्सराएं थीं तथा तिलोत्तमा और उर्वशी नामकी अत्यन्त सुंदर दो गणिकाएं थीं। हिरण्यकेशी उसका सेनापति था, सभी विद्याधर देव कहलाते थे तथा हाहा हूहू नामके नारद थे, बृहस्पति नामका मंत्री था। सारांश यह है कि जो इन्द्रके होता है वह सब इसके था। इस तरह इंद्र बहुत बड़ी विभूतिके साथ राज्य करने लगा। अपने इस पुत्रको देख कर राजा सहस्रार फूला नहीं समाता था।

इधर ये सब ठाट थे उधर लंकामें स्वाभिमानी बलवान राजा माली विजयार्द्धकी दोनों श्रेणियोंको जीतनेके लिए उद्यत हुआ। हाथी, घोड़ा, रथ हंस, गधा भैंसा भेड़िया, हिरण, चीता, मोर, अष्टापद, विमान आदि अनेक सवारियों द्वारा अभिमानी माली अपने भाइयोंके साथ विजयार्द्धकी ओर चला। मालीके साथ सूर्यरज और यक्षरज भी वानर वंशी राजाओंके साथ निकले। इस तरह वानर और राक्षस सभीने सेना सहित प्रस्थान किया।

चलते समय अपशकुनोंको देख नीतिज्ञ सुमालीने मालीसे कहा—भाई ! हमें अब यहीं रुक जाना चाहिये या यहांसे लंका लौट चलना चाहिये। आगे चलनेको तो पैर नहीं पड़ते। क्योंकि ये अपशकुन हमें अनिष्टकी ओर संकेत कर रहे हैं। मालीने उत्तर दिया—हम बड़ी सेना लेकर शत्रुसे युद्ध करने निकले हैं अब भला कैसे लौट चलें। होनहार तो होकर ही रहती है। कर्मोंका फल अन्यथा नहीं होता। इस तरह सबको समझा बुझा कर बलवान मालीने कूच कर दिया। सबने मिलकर विघ्नशांतिके लिए भगवानकी पूजा आदि की। बादमें शीघ्र ही निकल कर विजयार्द्ध पर्वत की ओर चले।

वहां पहुंच कर जिन राजाओंने आज्ञा नहीं मानी उन्हें पकड़ लिया। उनके गांव लूट लिये और क्रोधमें आकर उन्हें जला दिया। तब दुखी होकर प्रजाने राजा इंद्रसे पुकार की। प्रभो ! राक्षस और वानर वंशी राजा हमें बहुत कष्ट दे रहे हैं। यह सुनकर इन्द्रने क्रुद्ध होकर कहा—जिन बन्दरों और राक्षसोंको मैं पहले ही मारना चाहता था आज वे स्वयं ही मरने आगये हैं। अब वे यहां से बचकर कहां जायेंगे ?

उसने तुरन्त रणभेरी बजवायी और तय्यार होकर चतुरंग सेना सहित मैदानमें आ डटा उसके पक्षके अन्य सुभट भी रथ, घोड़े, हाथी, ऊँट, सिंह, मेढ़े, भैंस, भेड़िया आदि की विभिन्न सवारियोंमें बैठ कर युद्धके मैदान में आगये। दोनों सेनाओंमें महान युद्ध हुआ, परस्परकी चोटोंसे असंख्य योद्धा मारे गये।

विद्युद्वान् और चंडवेग नामके देवताओंने वानर वंशियोंको ज्योंही पीछे हटाया कि किष्कंध के पुत्र सूर्यरज और यक्षरजने आगे आकर देवताओंको पराङ्मुख किया। वानरों (सूर्यरज यक्षरज) का बल देखकर इन्द्रके लोकपाल लड़ने आए। उन्होंने। अनेक शस्त्रोंसे

उन देव नामधारी राजाओंको जर्जरित कर दिया। अपने पक्षको दबता देखकर शत्रुओंको भयंकर इन्द्र स्वयं युद्धके लिए आया। मालीने इन्द्रके मस्तक पर वज्रका प्रहार किया। इंद्रने उसे रोककर अत्यन्त क्रोधसे चक्र फेंककर मारा। इससे मालीका रत्न मुकुटसे देदीप्यमान मस्तक कट कर जमीनपर जापड़ा।

भाईका मरण देखकर नीतिचतुर सुमाली सेनासहित रणसे भाग गया। सोम नामके लोकपालने शत्रुओंका पीछा किया। उसे पीछे आता हुआ देखकर सुमालीने उसके वक्षस्थल पर वज्रका प्रहार किया। देवता (देवजातिके विद्याधर) जब तक उसकी मूर्च्छा दूर करने लगे तब तक राक्षस और बानर कुटुम्ब सहित पाताल लंका पहुंच गये।

सोम नामका लोकपाल लंका और किष्किन्धापर अधिकार कर हर्षित हो शीघ्र इन्द्रके पास लौट आया। राज्यके सभी कांटोंको हटाकर चतुरङ्ग सेना सहित इन्द्रने बड़ी विभूतिके साथ रथनूपुरमें प्रवेश किया। विजयार्द्ध रूपी स्वर्गमें वह इन्द्रकी तरह राज्य करने लगा। अब राजा श्रेणिक ! तू लोकपालोंकी उत्पत्ति सुन —

राजा मकरध्वज और उसकी पत्नी अदितीसे सोमपुत्र हुआ। उसे इन्द्रने ज्योतिपुर नगर में पूर्व दिशाका लोकपाल नियुक्त किया। मेघरथकी पत्नी वरुणासे वरुण नामका पुत्र हुआ। इंद्रने उसे धनपुर नगरमें पश्चिम दिशाका लोकपाल नियुक्त किया। सूर्य राजा और कनकावली रानीसे कुबेर नामका पुत्र हुआ। उसे काँचनपुरमें उत्तर दिशाका लोकपाल बनाया। राजा कालाग्नि और रानी श्रीप्रभासे यमकी तरह ही यम नामका पुत्र हुआ। उसे किष्कुनगरमें दक्षिण दिशाका लोकपाल बनाया। असुर पुर नगरके निवासियोंको असुर जातिका देव बनाया। यक्षगीतपुरमें यक्ष और किन्नरपुरमें किन्नरों की स्थापना की। इसी प्रकार गंधर्व नगरमें गंधर्व, ज्योतिषपुरमें ज्योतिष तथा यथा योग्य नगरोंमें ग्रहोंकी स्थापना की।

कौतुक मंगल नगरमें व्योम विन्दु राजाकी रानी नंदवतीसे कौशिकी और कैकसी नाम की दो कन्याएं हुई। कौशिकीका विवाह यक्षपुरके राजा विश्रवणके साथ हुआ। उनके वैश्रवण नाम का शुभ लक्षणों वाला पुत्र हुआ। इसे पांचवाँ लोकपाल बनाकर लंकामें शासक नियुक्त कर दिया।

विजयार्द्धको उसने स्वर्ग संज्ञा दी। स्वयं इन्द्र बना। विद्याधरोंको देव कहकर पुकारा। इस तरह सब स्वर्ग जैसी रचना कर डाली।

इधर तो इन्द्र अपनी व्यवस्थाओंमें लगा था। उधर सुमालीके प्रीतिमती रानीसे रत्नश्रव नामका गुणी व दयालु पुत्र हुआ। एक दिन वह धर्मात्मा भूत, पिचाशादिसे भरे हुए भयंकर पुष्पांतक वनमें विद्या सिद्ध करने गया। जब तक यह विद्या सिद्ध करे, तबतक के लिए राजा व्योमविन्दुने अपनी कैकसी पुत्री, जिसका विवाह भगवानके उपदेशानुसार रत्नश्रवके साथ ही होना था, इसकी सेवाके लिए पुष्पांतक वनमें नियुक्त कर दी। वह भी प्रसन्नता पूर्वक अनेक उपचारोंसे उसकी सेवा करने लगी।

रत्नश्रवाको मानस्तंभिनी नामकी विद्या सिद्ध होगयी। उस विद्याके प्रभावसे उसने उसी महान वनके अन्दर पुष्पांतक नामका नगर बसाया। बादमें अपने सामने खड़ी हुई कैकसीको देखकर रत्नश्रवाने पूछा—बाले ! तू किसकी पुत्री है ? और यहाँ किसलिए आयी है ? उसने कहा—मैं राजा व्योमबिन्दुकी पुत्री हूं। आपके साथ विवाह करनेके लिए पिताने मुझे यहाँ रख छोड़ा है।

यह सुनकर रत्नश्रवाने केकसीके साथ विवाह कर लिया। दोनों बड़े स्नेहसे रहने लगे। रत्नश्रवाके परिवारके सबलोग यहीं आ गये। इस तरह कुटुम्ब सहित आनन्दसे रहने पर भी रत्नश्रवाको लंकाकी चिन्ता रात दिन सताती थी। एकदिन जब वह गुणवती रानी केकसी सुखसे

कोमल सेजपर सो रही थी कि उसने तीन स्वप्न देखे। प्रातःकाल वादित्रों की ध्वनि सुनकर रानी उठी और स्नानादिकर पतिके सामने आयी। आधे सिंहासन पर बैठकर राजासे बोली—नाथ! आज रात्रिके पिछले पहरमें मैंने तीन सुन्दर स्वप्न देखे हैं। पहले तो क्रोधसे उद्धत महान सिंह देखा। उसके बाद उगता हुआ सूर्य देखा। आखिरमें समस्त कलाओंसे परिपूर्ण चन्द्रमा देखा। इसके बाद मेरी आँख खुल गयी। इन तीनों स्वप्नोंका कल्याणकारी सुखदायक फल मुझे आप कहें। राजाने कहा—देवि तुम्हारे तीन पुत्र होंगे। एकतो उनमें महायोद्धा तथा पाप कर्ममें समर्थ होगा और दो कुटुम्बको सुख देने वाले पुण्यपुरुष होंगे। यह सुनकर कैकसी हर्षित हो महलोंमें चली गयी। बाद में दोनोंने बड़े उत्साहसे जिनेन्द्र भगवानकी पूजा की।

गर्भमें प्रथम ही जब रावण आया तो रानी अहंकारसे भर गयी। बात बात में सिंहनीकी तरह दहाड़ने लगी, डरती तो वह किसीसे भी नहीं थी। जब नौ महीने पूर्ण हुए तो रानीने सुन्दर पुत्रको जन्म दिया। उस समय शत्रुओंके घरमें महान भयंकर उत्पात हुए। सभी राक्षसवंशियोंने मिलकर महान जन्मोत्सव मनाया तथा उस रूपवान सुन्दर पुत्रको देखकर सब संतुष्ट हुए।

एक दिन खेलता हुआ वह बालक यक्षों द्वारा प्रदत्त उस हारके पास पहुंच गया जिसकी हजारों देवता रक्षा करते थे। उसे उसने बातकी बातमें हाथसे पकड़ लिया। बालकका यह पराक्रम देखकर राक्षसवंशके योद्धा परस्परमें विचार करने लगे कि हमारा गया हुआ राज्य यह अवश्य पुनः लेलेगा। उस हारमें लगे हुए नौ रत्नोंमें इसके नौमुख और दिखायी दिये अतः राक्षस-वंशियोंने उसका नाम दशमुख रख दिया। कुछ दिन बाद भानुकर्ण नामका दूसरा पुत्र हुआ। बादमें पूर्ण चन्द्रमाके समान चंद्रनखा नामकी पुत्री हुई। फिर विभीषण नामका तीसरा पुत्र हुआ। पृथ्वीपर इनकी शुभ क्रीड़ाएँ बड़ी भली मालूम देती थीं।

एक दिन केकसी अपने पुत्रोंके साथ महलपर बैठी हुई थी कि पुष्पांतक विमानमें बड़े ठाठसे जाते हुए चतुरङ्ग सेना सहित, अपनी बहिन के पुत्र कुबेरको उसने देखा। उसे देखकर अत्यन्त शोकसे केकसी रोने लगी। तब विभीषणने पूछा—माँ! तू क्यों रोती है? क्या किसी दुष्टने तुझे कोई कष्ट दिया है अथवा किसीने कुछ कह दिया है। मैं उसका हाथ पैर काट डालूँगा।

माता बोली—"बेटा! मुझे किसीने कोई कष्ट नहीं दिया है। परन्तु मेरे रोनेका कुछ और ही कारण है। पुत्रके आग्रहसे केकसीने कहा—लंका नामकी सुन्दर नगरी पीढ़ियोंसे हमारी चली आयी है। किन्तु कुबेरने उसपर अपना कब्जा कर लिया है।

विभीषणने फिर पूछा—माँ यह कुबेर कौन है? केकसी कहने लगी—यह मेरी बहन का पुत्र है। विजयार्द्ध पवतके राजा इन्द्रने मालीको मारकर लंकामें इसे नियुक्त कर दिया है। बेटा! इसी चिन्तासे तेरे पिता दुर्बल हो गये हैं। और मैं भी इसीलिए शोकसे यहाँ रात दिन रोती रहती हूं। अभी जब वह आकाश मार्गसे गया तो उसे देखकर मुझे रुलाई आ गयी। अब न जाने यह लंका हमारे अधिकारमें कब आयेगी और कब तेरे पिताको उसे देखकर चैन मिलेगा?

विभीषण बोला—माता! इनके इन्द्र, कुबेर बन जानेसे क्या होता है। मैं क्या समझूँ कि कौन इन्द्र है? कहाँ का कुबेर है, कुछ ही दिनोंमें मैं इनका घमण्ड दूर करूँगा। अधिक क्या कहूं तू शीघ्र ही इन शत्रुओंकी मौत देखेगी।

इसके बाद वे तीनों भाई माता-पिताकी आज्ञा लेकर भीम नामके बनमें विद्या सिद्ध करने गये। एक अंधेरी गुफामें वे अलग अलग जाकर बैठ गये। तथा सिद्धोंको नमस्कार कर अष्टाक्षरी विद्याका ध्यान प्रारम्भ किया।

दशाननको शीघ्र ही अष्टाक्षरी नामकी महा सामर्थ्यवान विद्या सिद्ध हो गयी जो इच्छानुसार वर देती थी। बादमें उन्होंने षोडषाक्षरी विद्या सिद्ध करना प्रारम्भ किया। यह देखकर गुफामें रहनेवाले अनावृत नामके यक्षने कुपित हो उन कुमारोंपर भयंकर उपसर्ग करना शुरू कर दिया। चीता, सिंह, भेड़िया, सर्प आदि सभी कुछ उसने इन कुमारोंको दिखलाये। तो भी उन महात्माओंने ध्यान नहीं छोड़ा। उस यक्षकी दुष्ट स्त्रियोंने भी अनेक काम-चेष्टाएँ प्रदर्शित कीं। फिर भी इन महापुरुषोंने ध्यान विघटित नहीं किया। प्रत्युत उसी समय ध्यान करते हुए दशाननको एक हजार विद्याएँ सिद्ध हो गयां। वे हाथ जोड़कर भक्तिसे दशाननके सामने खड़ी हो गयीं और कहने लगीं—"प्रभो! आज्ञा दीजिये आपका क्या काम है?

श्रेणिक! दशाननके पुण्यका प्रभाव तो देखो थोड़े ही समयमें उसे सम्पूर्ण विद्याएँ सिद्ध हो गयीं। मैं तुझे अब उन विद्याओंके नाम सुनाता हूं उनके नाम परसे ही उनकी शक्तिका तुझे पता लग जायगा। अतः सावधान होकर सुन नभसंचारिणी, कामदायनी, कामगामिनी, दुर्निवारा, जगत्कन्या, प्रज्ञप्ति, भावरूपिणी, अणिमा, लघिमा, क्षोभ्या, मनस्तंभन कारिणी संवाहिनी, सुरध्वंसी, कुमारी, बधकारिणी, सुविधाना, तमोरूपा, दहनी, विपुलोदरी; शुभप्रदा, रजोरूपा, दिनरात्रि-विधायिनी, वज्रोदरी, समाकृष्टि, अदर्शनी, अजरा-अमरा, अनलस्तंभिनी, तोयस्तंभिनी, गिरदारिणी, अवलोकिनी, अरिध्वंसी, घोरा, धीरा, भुजंगिनी, वारुणी, भुवनावध्या दारुणा, मदनाशिनी, भास्करी, भयसम्भूति, ऐशानी, विजया, जया, बन्धनी, मोचनी, वाराही, कुटिलाकृति, चित्तोद्भवकरी, शान्ति, कौबेरी, वशकारिणी, योगेश्वरी, बलोच्छेदी, चण्डाभीति, प्रकंपिनी, इत्यादि महाविद्याएँ पूर्व पुण्यसे थोड़े ही दिनोंमें दशानन (रावण) को प्राप्त हुईं। सर्वाहा, रतिसंवृद्धि, जम्भनी, आकाशगामिनी, तथा निद्राणी यह पाँच विद्याएँ भानुकर्णको सिद्ध हुईं। सिद्धार्था, शत्रुदमनी, निर्व्याघाता, आकाशगामिनी, यह चार विद्याएँ स्त्रीकी तरह विभीषणको प्राप्त हुईं।

इस तरह शोभाशाली वे तीनों भाई विद्याओंके अधिपति बन गये। बादमें अनावृत यक्षने भी उन्हें विद्याएँ सिद्ध हुई देखकर सुन्दर आभूषण प्रदानकर उनका महान् विभूतिसे सत्कार किया। दशाननने वहाँ मेरु शिखरके समान ऊँचा अनेक महल मकानोंवाला स्वयंप्रभ नामका नगर बसाया। उस नगरमें जिन मन्दिरोंकी रचना की, उनके झरोखोंमें अनेक प्रकारके मोती जड़वाये तथा रत्न और सोनेके खम्भे बनवाए। उन गगनचुम्बी प्रासादोंमें विद्याबलके सहारे अपने भाइयोंके साथ वह सुखसे रहने लगा।

अनावृत यक्षने सन्तुष्ट होकर दशाननसे कहा—मैं जम्बूद्वीपका मालिक हूं। यहाँ सदा तेरी देखभाल रक्खूँगा। तू निडर होकर इस द्वीपमें चाहे जहाँ घूम। यदि कोई काम आ पड़े तो मुझे स्मरण करना। तू और तेरे भाई सभी चिरजीवी हों, सुख सम्पदाएँ बढ़ें। इस तरह आशीर्वाद देकर वह अपने स्थान चला गया।

दशाननको विद्याएँ सिद्ध हुई सुनकर सुमाली, माल्यवान, सूर्यरज, यक्षरज, रत्नश्रवा आदि बानर तथा राक्षसवंशी विद्याधर अपनी अपनी स्त्रियों सहित पुत्रस्नेहसे उसे देखनेके लिए निकले। और भी सम्बन्धीजन विमान, घोड़े, हाथी आदिकी सवारियोंपर अपने अपने देशसे स्वयंप्रभ नगर आ।

उन कुमारोंने भक्तिपूर्वक पितृजनोंके चरणोंको नमस्कार किया। पितृजनोंने भी उनके शरीरपर बहुत समय तक हाथ फेरा तथा 'चिरञ्जीवी रहो, फलो फूलो' इस प्रकार आशीर्वाद दिया। बादमें सभी राक्षस और बानर वंशियोंने उन्हें बारी बारी छातीसे लगाया। इसके बाद मातापिताने उन्हें बड़ी नम्रतासे स्नानादि कराया तथा आनन्दसे सबने मिलकर खाना खाया।

कुटुम्बीजनोंने कहा—बेटा ! तुम लोगोंने बड़ा परिश्रम किया। उन्होंने उत्तर दिया-आपके प्रसादसे वह परिश्रम सफल हो गया।

मालीको यादकर सुमाली रोने लगे। तब दशाननने कहा—बाबा, आप दुःख न करें। पृथ्वीपर आपके जितने शत्रु हैं उन सबका अभिमान चूरकर दूँगा तभी मैं अपनेको आपका वंशज कहूंगा। यह सुनकर कुटुम्बियोंने कहा—तू हमारे कुलका भूषण पैदा हुआ है, तू चिरंजीव हो, सुखी रह। इस तरह बानर और राक्षसवंशी परम सन्तुष्ट हो सुखसे सम्पदाओं सहित निर्भय रहने लगे।

इसी नगरके बाहर चन्द्रप्रभ जिनालय था। एक दिन दशानन चन्द्रनखा बहिनके साथ वहाँ गया। षष्ठोपवास धारणकर चन्द्रहास खड्गकी सिद्धि की। तथा सुमेरुकी वन्दनाके लिए चला। इसी बीचमें हे श्रेणिक ! अब दूसरी कथा सुन—

विजयार्द्धकी दक्षिण श्रेणीमें असुर संगीत नामका नगर है। उसमें राजा मय अपनी रानी हेमवतीके साथ राज्य करता था। उनके मन्दोदरी नामकी पुत्री हुई। अपनी इस अत्यन्त सुन्दर, भाग्यशालिनी जवान पुत्रीको देखकर राजा मय उसके विवाहके लिए चिन्तातुर हुआ। अपने मन्त्रिवर्गसे सलाहकर हितैषी मयने पुत्रीका विवाह रावणके साथ कर देनेका संकल्प किया। वह मन्त्रियोंके साथ विमानमें बैठकर पत्नी और पुत्रीको लेकर स्वयंप्रभ नगर चला। नगर नया ही बना था, मार्ग मालूम नहीं था। अतः पूछ पूछ कर धीरे धीरे नगरकी ओर बढ़ने लगा।

बनमें चन्द्रप्रभ जिनालय दिखाई दिया। मय ज्योंही उसके अन्दर घुसा कि भीतर चन्द्रनखा (रावणकी बहिन) को देखा। उससे पूछा—बेटी, तू किसकी पुत्री है, अकेली और नगरके बाहर यहाँ क्यों बैठी हुई है ? मयका आदर सन्मानकर चन्द्रनखा लजाकर बोली—राजन् ! मैं राक्षस वंशकी कन्या हूं। राजा रत्नश्रवाकी लड़की तथा दशाननकी बहिन हूं। मेरा भाई सुमेरु पर्वतपर जिनबिम्बोंके दर्शन करने गया है। उस महापुरुषने यहाँ षष्ठोपवास धारणकर चन्द्रहास खड्गका साधन किया था। अब वह शीघ्र आता ही होगा।

इस तरह उन दोनोंमें मधुर बातचीत हो ही रही थी कि तेजस्वी दशानन वहाँ आ पहुँचा। उसे आया देखकर मय शीघ्र उठकर खड़ा हो गया। बादमें यथायोग्य विनयाचारके बाद दोनों अपने अपने स्थानपर बैठ गये। मारीच, वज्रमध्य, वज्रनेत्र, नभस्तडित, उग्रनक्र, मरुद्रक्र, मेधावी, सारण, शुक्र इत्यादि मयके साथके मन्त्री भी योग्य विनयाचारके बाद वहीं बैठ गये। बादमें सबने स्नानकर भगवानकी पूजा की। पुनः अपने स्थानपर आकर बैठ गये।

दशाननने पूछा—आप कौन हैं, कहाँसे पधारे हैं ? तब मारीच कहने लगा—महाराज ! सुनिए—दक्षिण श्रेणीमें असुरसंगीत नामका नगर है। यह वहाँके महान राजा दैत्योंके अधिपति हैं। आपके गुणोंसे आकर्षित होकर यहाँ आये हैं। मयने कहा—महाराजके दर्शनोंसे मेरा जन्म सफल हो गया। दशाननने उत्तर दिया—मैं भी आपके दर्शनोंसे कृतार्थ हुआ। धन्य है आप जैसे महानुभाव मेरे यहाँ पधारे हैं।

इस तरह पारस्परिक संभाषणसे दोनोंको बड़ी प्रसन्नता हुई। दशाननने मयसे विजयार्द्धके समाचार पूछे। मय इन्द्रादिके समाचार कह ही रह रहे थे कि दशाननने सामने खड़ी हुई कन्याको देखा। क्या यह रोहिणी है, अथवा इन्द्राणी है या पद्मावती है या रेणुका है। इस तरह वह मन्दोदरीको देखकर आश्चर्य करने लगा

दशाननकी यह मनोदशा भांपकर राजा मयने कहा—महाराज, यह मेरी पुत्री है। आप इसे स्वीकार करें। दशानन यह सुनकर प्रसन्न हुआ। शीघ्र ही उसने इस कन्यासे विवाह कर लिया

तथा कुटुम्ब परिवारके साथ महान उत्सव मनाया। बादमें शीघ्रही सब स्वयंप्रभ नगर गये। मय भी स्वयंप्रभ नगरमें ही बस गया।

धीरे धीरे पतिके गुणोंसे आकर्षित हुई मन्दोदरी हजारों रानियोंकी महारानी बन गयी। दशानन इच्छित देशोंमें विहार कर मन्दोदरीके साथ भोग-विलास करने लगा। वह अपने एक शरीरके अनेकों शरीर बना लेता और सभी रानियोंके साथ भोग-विलास करता था।

एक दिन वह वीर दशाशन मेघगिरि पर्वत पर गया। वहां उसने कमलोंसे सुशोभित जलसे लबालब भरी हुई एक बावड़ी देखी। उसमें जलक्रीड़ा करती हुई अत्यन्त सुंदरी हजारों कन्याओंको देखा। सहसा उसे देखकर वे कन्याएँ क्रीड़ा छोड़ खड़ी होगयी। दशाननने उन्हें अपनी ओरसे निर्भय किया और स्वयंभी उनके साथ क्रीड़ा करने लगा। उन कन्याओंमें रूपवंश आदिसे विभूषित राजा सर्वरूप और रानी सर्वश्रीकी पुत्री पद्मश्री, राजाबुध और रानी सुवेगाकी पुत्री अशोकलता तथा राजा कनक और रानी संध्याकी पुत्री विद्युत्प्रभा प्रमुख थीं। क्रीड़ा करते हुए दशाननने शीघ्रही उन सबको मोहित कर लिया तथा गन्धर्व विधिसे सबके साथ ब्याह कर लिया।

इस विवाहके समाचार कंचुकीने जाकर कन्याओंके माता पितासे कहे। इन समाचारों-को सुनकर राजा कनक और राजा बुधके साथ अन्य सभी राजा रोषमें आकर चतुरङ्ग सेना सहित चले। उनको अपने ऊपर आते देख कर दशानन भी क्रोधसे भर गया। विद्यासे सेना बनायी और लड़नेको तैय्यार हुआ। दोनों सेनाओंमें बड़ा भयंकर युद्ध हुआ। दशाननने उन सबको नागपाशसे बांध लिया। बादमें उन कन्याओंने उन्हें छुड़वाया. वे प्रसन्न हुए तथा दशाननके साथ अपनी कन्याओंका विवाह उन्होंने कर दिया। वहां तीन दिन ठहर कर उन कन्याओंके साथ दशाननने अनेक प्रकार भोग विलास किये। बादमें मंदोदरीके स्नेहसे वह स्वयं-प्रभ नगर आगया।

इसके बाद कुंभपुरके राजा महोदर और रानी सुरूपाक्षीकी तडिन्माला नामकी पुत्रीके साथ भानुकर्णने विधिपूर्वक विवाह किया। कुंभपुरमें रहनेके कारण इसका नाम कुंभकर्ण पड़ गया। न वह छः महीने सोता था और न वह मांसादि ही खाता था। मिथ्यादृष्टि अनाड़ियोंने स्वयंही यह सब बातें गढ़ ली हैं।

विजयार्द्धकी दक्षिण श्रेणीमें ज्योतिपुर नगरके राजा मयका प्रगाढ़ मित्र विशुद्ध कमल और उसकी रानी नंदनमालाकी श्रेष्ठ पुत्री राजीवसरसीका विवाह विभीषणके साथ कर दिया गया। मन्दोदरीके गर्भसे इन्द्रजित पैदा हुआ। कुछ काल बीत जाने पर दूसरा मेघवाहन नामका पुत्र पैदा हुआ।

एक दिन कुंभकर्णने कुबेरकी प्रजा लूट ली, बहुतसे धन धान्य वस्त्र उसके छीन लिये। कुंभकर्णकी यह सब चेष्टाएँ देखकर वैश्रवण (कुबेर) ने क्रोधित हो बड़े गर्वसे सुमालीके पास दूत भेजा। यह वाक्यालंकार नामका दूत द्वारपालसे पूछकर दरवाजेके अन्दर घुसा और राजाको नमस्कार कर दशाननके सामने सुमालीसे इस प्रकार बोला—महाराज! कुबेरने आपसे जो कहला भेजा है उसे चित्त देकर सुनो। आप विद्वान हैं, कुलीन हैं, लोकाचार समझते हैं, बड़े हैं। अकार्यसे डरते हैं और नीति मार्गके उपदेशक हैं। जहाँ इस प्रकार आप जैसे महापुरुष रहते हैं वहाँ इन बाल चपल उद्दण्ड अपने नातियोंको रोकना भी आपको उचित है?

पहले मालीके बधसे तुम्हारे कुलकी कुशल नहीं रही थी। भला इस तरह कौन पुनः अपनेही हाथों अपने कुलका निर्मूल विनाश करनेकी बात सोचेगा। मेरे या इन्द्रके क्रोधित

होने पर फिर तुम्हारा कोई रक्षक नहीं है. तुम उसी तरह शीघ्र नष्ट हो जाओगे जिस तरह हवासे पानीके बुलबुले नष्ट हो जाते हैं। यह सुनकर दशानन क्षुब्ध हो गया। वह कहने लगा—कौन कुबेर है तथा यह इन्द्र कहलानेवाला कौन है जिसने हमारी कुल क्रमसे आयी हुई लंका नगरी दबा रक्खी है? इस प्रकार कह कुत्तेकी तरह दूतको वहांसे निकाल दिया।

दूतने वैश्रवणसे जाकर सारी हालत ज्योंकी त्यों निवेदन कर दी। सुनकर वैश्रवणने अहंकारसे रणभेरी बजवा दी। वैश्रवण दक्ष योद्धाओंको लेकर चतुरङ्ग सेनाके साथ घरसे बाहर युद्ध करने निकला। दशानन भी शत्रुका आगमन सुनकर राक्षसवंशी वानरवंशी योद्धा तथा राजा एवं उनके मंत्रियोंके साथ निकला। गुंज नामके पर्वतपर दोनों सेनाओंकी मुठभेड़ हुई। यक्ष जातिके विद्याधरोंद्वारा अपनी सेनाको दबी देखकर दशानन युद्ध करनेको तय्यार हुआ। दशाननसे घायल होकर उन सभी राजाओंके पैर उखड़ गए। यह देखकर कुबेर स्वयं युद्ध करने आया। कुछ समय तक युद्ध करके जब उसने दशाननका पराक्रम देखा तो कहने लगा—"राजा दशानन! सुनो मैं तुम्हारी मौसीका लड़का हूँ. सगे संबंधके कारण बंधुओंके साथ इस समय युद्ध करना उचित नहीं। क्या तुम्हें नहीं मालूम यह जीवन आँखोंके पलक मारनेके समान (अस्थिर) है. जिससे अपने स्वार्थके लिये तुम यह पापकर्म कर रहे हो। तब दशाननने दया न दिखलाते हुये हँसकर कहा—कुबेर! यह धर्म सुननेका समय नहीं है। बहुत क्यों बकते हो? या तो तलवारकी राहपर आजाओ या मेरे पैरोंपर पड़ो। इसके सिवाय और तीसरी गति नहीं है। इसके उत्तरमें वैश्रवणने दशाननसे कहा—मालूम पड़ता है सचमुच ही तेरी थोड़ी आयु रह गई। इसीलिये यों तू क्रूरतासे बोल रहा है। यह कह कुबेरने दशाननका धनुष तोड़ दिया। उत्तरमें दशाननने कुबेरके वक्षस्थलपर वज्रदण्डका प्रहार किया। इस प्रहारसे कुबेर मूर्च्छित हो गया. तब अनुचर उसे यक्षपुर उठा ले गये। कुबेरको गया देखकर उस पक्षके अन्य राजा भी भाग खड़े हुये।

दशानन भी विजय प्राप्तकर स्वयंप्रभ नगर लौट गया। वानर और राक्षसवंशी विद्याधरोंने उस समय खूब जयघोष किया। वैश्रवणका शरीर वैद्योंके उपचारसे पुनः स्वस्थ हो गया। अपना पुनर्जन्म मानकर उसे संसारसे विरक्ति हो गयी। सम्पूर्ण परिग्रह छोड़कर उस धीरवीरने दीक्षाग्रहण कर ली और कठोर तपश्चरणकर निर्वाणको प्राप्त हुआ।

दशाननने अनेक शृङ्गारकी सामग्रियोंसे परिपूर्ण कुबेरके पुष्पक विमानको अपने अधिकारमें कर लिया। उस विमानमें बैठकर अपने भाइयोंके साथ वह पूर्व पुण्यके प्रभावसे दक्षिण दिशाको जीतनेके लिये चला। सम्पूर्ण दक्षिण दिशाको वशमें कर वन, पर्वत, समुद्र सहित पृथ्वीकी शोभा देखते हुये वहाँसे दूसरी जगह उसने विहार किया। मार्गमें गगनचुम्बी जिन मन्दिरोंको देखकर दशाननने बाबा सुमालीसे पूँछा—प्रभो! यह बतलावें यह जिन मन्दिर किसने बनवाये हैं? तब 'नमः सिद्धेभ्यः' कहकर सुमाली कहने लगा—

हरिषेण चक्रवर्तीने भक्तिपूर्वक इन मन्दिरोंका निर्माण कराया था। वे हरिषेण कौन थे उनका क्या चरित्र है यह सब तुम सुनो। कम्पिल नगरमें राजा सिंहध्वज रहता था, उसकी रानीका नाम वप्रा था। उन दोनोंके हरिषेण नामका पुत्र हुआ। एक बार नन्दीश्वर पर्वमें भक्तिपूर्वक अष्टान्हिका महोत्सव मनानेके लिये रानी वप्राने जैन रथयात्रा निकलवानी चाही। राजाकी अन्य धर्मावलम्बिनी दूसरी रानी महालक्ष्मी थी। उसका कहना था कि चाहे कुछ हो पहले मेरा रथ निकलेगा। यह सुनकर रोती हुई वप्रासे हरिषेण बोला—हे माता! किस लिये तू घबड़ायी हुई रोती है? माता बोली, बेटा! मैंने सुना है कि महालक्ष्मी वैरकर मेरा रथ निकलनेसे पहले अपना रथ निकलवाना चाहती है। पुत्र! इसी दुखसे मैं रो रही हूँ। यदि मेरा

रथ पहले निकलेगा तो मैं भोजन करूँगी अन्यथा अपने प्राण दे दूँगी। यह सुनकर हरिषेण भी चिन्तासे व्याकुल हो गया। वह घरसे निकल गया और एक भयङ्कर बनमें पहुँचा। वहाँ मूलफलादि खाकर दुःखसे इधर उधर घूमने लगा।

चम्पापुरमें महाबलवान राजा शतमन्यु रहता था। उसके नागवती रानी थी और उनके जन्मेजय नामका पुत्र था। तथा रूप और लावण्यवती मदनावती नामकी पुत्री थी। जन्मेजयको राज्य देकर वह पार्था शतमन्यु तापसी हो गया और बनमें रहने लगा।

इधर रत्नपुरके राजाने मदनावलीकी याचना की। जब जन्मेजयने अपनी बहिन देनेसे इन्कार कर दिया तो उसने चम्पापुरको घेर लिया। जन्मेजय जबतक युद्धमें लगा रहा तबतक पहलेसे तय्यार की हुई सुरंगमें होकर नागवती अपनी कन्या मदनावलीके साथ दूर निकल गयी तथा शतमन्युके आश्रममें पहुंचकर पुत्री सहित वहीं रहने लगी। हरिषेण भी इधर-उधर घूमता हुआ वहाँ आकर रहने लगा। उसे देखकर मदनावली मोहित हो गयी। उसे विकार सहित देखकर नागवती कहने लगी—'बेटी, यह क्या करती हो महामुनिके वचन तो याद कर? अवधि ज्ञानधारी मुनिराजने पहले यह कहा था कि तू चक्रवर्तीकी पटरानी होगी।' लेकिन माताके मना करनेपर भी जब इसने अपनी चेष्टायें नहीं छोड़ीं तो मूढ़ तापसियोंने हरिषेणको अपने यहाँसे निकाल दिया। कुँअर मदनावलीसे क्रुद्ध हो वहाँसे निकल गया। नदी, बन, नगर आदि में उसे कहीं भी अच्छा नहीं लगता था। उसने मनमें यह विचार किया कि जिस दिन मैं इस स्त्री रत्नको पालूंगा उसी दिनसे स्थान २ पर जिन मन्दिरोंका निर्माण कराऊँगा। बहुतसे स्थानोंमें घूमता हुआ वह सिन्धुनदपुर पहुँचा। वहाँ इसे देखकर नगरकी स्त्रियाँ मोहित हो गयीं। इतनेमें ही एक अञ्जनगिरिके समान मद झरता हुआ हाथी बड़े वेगसे इन स्त्रियोंके सम्मुख आया। डरकर वे स्त्रियाँ और किसीकी शरण न पाकर, प्राणोंकी रक्षाके लिये हरिषेणकी शरणमें गयीं। तब दयायुक्त होकर हरिषेणने सोचा—'मैं इन स्त्रियोंके प्राणोंकी रक्षा अवश्य करूंगा। उस समय तो दयासे मैंने उन तापसियोंको क्षमाकर दिया था। लेकिन यह हाथी तो महान दुष्ट है इसे अवश्य शक्तिपूर्वक रोकूँगा।' यह सोचकर हरिषेणने पीलवानसे कहा—'रे पीलवान! सुन, तू इस मदोन्मत्त हाथीको दूसरे मार्गसे ले जा।

पीलवानने उत्तर दिया—तुम्हारे सिवा इस दुष्ट हाथीको और कौन चला सकता है? इसलिये तुम्हीं चलाओ। यह सुनकर हरिषेणने उन स्त्रियोंको तो वहीं खड़ा कर दिया और स्वयं कमर कसकर हाथीके निकट पहुँच गया। चारों तरफसे चोटें पहुँचाकर कुमारने उस मदोन्मत्त हाथीको क्षणभरमें मदरहित कर दिया और उसके ऊपर बैठ गया। हाथीके साथ बालक्रीड़ायें करता हुआ जब वह महाबली नगरके अन्दर आया तो उसे सभी स्त्रियाँ झरोखोंमें से देखने लगीं। नगरके राजा सिन्धुनदने मुनि वाक्योंके निश्चयानुसार अपनी रूपवती कन्या सौ-का विवाह हरिषेणके साथ कर दिया।

एक दिन वह स्त्रियोंके बीच सो रहा था। सोते हुये ही उसने स्वप्नमें मदनावलीका स्मरण किया। उसी समय एक विद्याधर कन्याकी कोई वेगवती नामकी सखी कुमारको हरकर ले गयी। जब आकाशमें आँख खुली तो अपनेको हरा हुआ देखकर कुँअर बोला—"पापिनी! मुझे किस लिये हरकर ले जा रही है?" यह कह कुमारने क्रोधसे उसे मारनेके लिये अपनी वज्रमयी मुट्ठी बाँधी। उसे कुपित देख डरकर वह प्रसन्नतासे बोली—आकाशमें मुझे मारनेके लिये यह मूर्खों जैसा प्रयत्न आप क्यों करते हैं? आपका यह प्रयत्न वैसा ही है जैसे कोई मूर्ख पेड़के ऊपर बैठकर उसे मूलसे काट डालना चाहता हो। सुनो-सूर्योदयपुरमें एक शक्रधर नामका राजा है उसकी पत्नीका नाम धारी और पुत्रीका नाम जयचन्द्रा है। वह पुरुषोंसे द्वेष करती और

पिताके वचनोंको नहीं मानती तथा जिस पुरुषको देखती उसीको वह पापिनी मार डालती। मैंने जिस जिसका भी चित्रपट लिखकर उसे दिखाया सारे भरतक्षेत्रमें उसे एक भी रुचिकर नहीं हुआ। तब मैंने यहाँपर आपका चित्र खींचकर उसे दिखाया। अत्यन्त अनुरागपूर्वक उस चित्रसे मोहित हो वह कहने लगी यदि इसके साथ मेरा सम्बन्ध नहीं हो सका तो मर जाऊँगी। किन्तु किसी अधम पुरुषके साथ शादी नहीं करूँगी। उसका यह महान प्रण देख कर तथा उसके गुणोंसे आकर्षित हो मैंने उसके सामने यह कठिन प्रतिज्ञा की—"सखि! यदि मैं तेरे उस हृदय चोरको नहीं ले आऊँगी तो भयंकर लपटें निकलती हुयी अग्निमें प्रवेश करूँगी।"

यह प्रतिज्ञा करके महान पुण्यसे मैं तुम्हारे पास आयी हूं। अब तुम्हारे प्रसादसे प्रतिज्ञाको पूर्ण करूँगी। इतना कह वह कुमारको लिये हुये सूर्योदयपुर पहुंची। राजा तथा कन्याको खबर पहुंचायी गयी कि कुमार आगये हैं। दोनोंका विवाह कर दिया गया। कुटुम्बी जनोंने आश्चर्यसे उनका अभिनन्दन किया। इस अपमानसे तिरस्कृत होकर कन्यासे सम्बन्ध करनेके इच्छुक गंगाधर और महीधर नामके विद्याधर यह सोचकर कि इस कन्याने हमें छोड़कर भूमिगोचरी पुरुषके साथ विवाह किया है बड़े क्रोधित हुये तथा बहुतसी सेनाके साथ युद्ध करनेको तैयार हो गये।

तब सहृदय शक्रधरने हरिषेणसे कहा—जामाता! आप यहीं रहें मैं पुत्र सुचापके साथ युद्ध करने जाता हूँ। तुम्हारे विवाहके कारण हमारे शत्रु क्रोधसे उद्धत हो रहे हैं। इसपर हरिषेणने मुस्करा कर जवाब दिया—जो दूसरोंके कार्योंमें लगा रहता है वह भला अपने ही कार्योंमें उदासीन कैसे रह सकता है। इसलिये हे तात! मुझपर अनुग्रह करें तथा युद्धकी आज्ञा प्रदान करें। मुझ जैसा योद्धा प्राप्तकर आप भला क्यों युद्ध करने जाते हैं?

श्वसुरने अमंगलके डरसे हरिषेणको बहुत रोकना चाहा परन्तु वह नहीं रुका और अनेक अस्त्रोंसे परिपूर्ण रथपर सवार होकर युद्ध करनेके लिये चल दिया। उस रथमें वायुके समान शीघ्र दौड़ने वाले घोड़े जुते हुये थे और एक चतुर सारथि उसे चलाता था।

बहुतसे विद्याधर भी शत्रुके हृदयको दहलाने वाला कोलाहल करते हुए घोड़े और हाथियोंपर चढ़कर हरिषेणके पीछे पीछे चले। इन शूरवीरोंने अत्यन्त घोर युद्ध किया। जब शक्रधरकी सेनाके पैर उखड़ने लगे तो हरिषेण स्वयं युद्धके लिये उठा। जिस ओर वह अपना रथ ले जाता उस ओर घोड़ा, हाथी, मनुष्य, रथ आदि कोई नहीं ठहरता। उसके छोड़े हुये बाणोंसे घायल होकर शत्रुकी सेना गिरती पड़ती हुयी भाग खड़ी हुयी।

कुछ लोग काँपते हुये अत्यन्त भयभीत हो कहने लगे—गंगाधर महीधरने यह बहुत बुरा किया। युद्धमें सूर्यके समान यह कोई महान पुरुष है जो किरणोंकी तरह एक साथ अपने बाणोंको सभी दिशाओंमें फेंक रहा है।

अपनी सेनाका विनाश देखकर गंगाधर महीधर डरके मारे कहीं भाग गये। पुण्योदयसे उसी समय हरिषेणके घर रत्न पैदा हुये और हरिषेण महान प्रतापशाली दसवाँ चक्रवर्ती हुआ। चक्रवर्तीकी लक्ष्मी पाकर भी हरिषेण बिना मदनावलीके आपको तृणके समान समझता था। बारह योजन तक फैली हुई सेनाको साथ ले, शत्रुओंको वश करता हुआ हरिषेण तपस्वियोंके वनके निकट पहुँचा। तपस्वी उसके आगमनके समाचार सुनकर डरसे फल हाथमें लेकर उसे भेंट करने आये तथा अनेक आशीर्वाद देकर उसका अभिनन्दन किया। शतमन्युके पुत्र बुद्धिमान जन्मेजय तथा नागवतीने सन्तुष्ट होकर मदनावलीका विवाह इसके साथ कर दिया। विधिपूर्वक इन दोनोंका विवाह हुआ। मदनावलीको पाकर हरिषेणको अपने पुनर्जन्मके समान हर्ष हुआ।

बादमें चक्रवर्तीकी विभूति सहित बत्तीस हजार मुकुट बद्ध राजाओंके साथ वह अपनी कंपिला नगरीमें आया। बड़ी विनयसे हाथ जोड़कर माताके चरणोंको नमस्कार किया। पुत्रकी विभूति संपन्न देखकर उसकी माता वप्रा हर्षसे गद्‌गद् हो फूली नहीं समायी। हरिषेणने कंपिला-नगरीमें सूर्यके समान शोभायमान पहले अपनी मांका रथ निकलवाया। इस तरह माँकी मनोकामना पूरी की। मुनि और श्रावकोंको खूब आनन्द हुआ। बहुतसे लोग जैन धर्ममें दीक्षित हो गये।'

हे दशानन! यह ऊँचे २ अनेक शोभा संपन्न जैन मंदिर उसी हरिषेण द्वारा पृथ्वी, पर्वत, नदीतट, पुर, गाँव आदिमें स्थान २ पर बनवाये गये हैं। उस महामना हरिषेणने चिर-काल तक राज्य किया। बादमें दीक्षाले, कठोर तपस्या कर निर्वाणको प्राप्त किया।

हरिषेणका चरित सुनकर दशाननको बड़ा आश्चर्य हुआ। भगवानको नमस्कार कर वहाँसे उसने पुनः प्रस्थान किया। दशाननकी सेना सम्मेद शिखर पर्वतके पास पहुँची। रातभर वहाँ गाना-बजाना हुआ। वहाँ अचानक एक अच्छे लक्षणोंवाला ऊँचा हाथी, अन्य हाथियों और घोड़ोंको त्रास देता हुआ आया। विद्याधर उसे देख, भयभीत हो भाग गए। किन्तु हर्षसे दशाननको सन्तोष हुआ। वह अपने विमानसे बाहर आया, शरीरको चुस्त किया तथा संसारको गुंजा देने वाला महान शंखनाद किया। शंखनाद सुनकर हाथीका मद ढीला हुआ। वह डरने लगा। दशाननने शीघ्र जाकर उसे पकड़ लिया। उस हाथीपर चढ़कर वह महाबली दशानन अपने कटकमें आया और बड़ा प्रसन्न हुआ। विद्याधरोंने उस हाथीका बड़ा सम्मान किया तथा सब राजाओंने उसका नाम त्रैलोक्य मंडन रख दिया।

सबने धर्म कथादि कहकर सुखसे रात्रि व्यतीत की। प्रातःकाल दैनिक क्रियाओंसे निवृत्त होकर सब सभामें बैठे हुए थे, कि इतनेमें ही किसी दूतने आकर दशाननसे कहा—"महाराज आज दस दिन हुए, सूयरज और यक्षरज दोनों भाई अपनी कुल परंपरासे आयी हुयी किष्कु-नगरीको लेनेकी इच्छासे पाताल लंकासे गए थे। आपके भरोसे उन्होंने जाकर वह वानरद्वीप लूट लिया। यह समाचार पाकर यम आया और उसने भयंकर युद्ध किया।

उसने वानरवंशी वीरोंका थोड़ीसी देरमें खूब ध्वंस किया। उनके रक्तकी धारा बहने लगी और घायल होकर बहुतसे मारे गए। तब बुद्धिमान यक्षरज स्वयं युद्ध करने लगा। उसे भी यमने पकड़ लिया। बादमें सूयरज युद्ध करने उठा। यमने उसपर भी प्रहार किया। बाण लगनेसे उसे मूर्च्छा आ गयी। तब उसके अनुचर उसे अपनी छावनीमें उठा ले गए। वानर-वंशी घायल होकर वहाँसे मेखला वनमें आगये हैं। महा बलवान पापी यम भी उनमेंसे बहुतों-को जीता ही पकड़कर किष्कुपुर ले गया है।

वहाँ किष्कु नगरीके उद्यानमें उसने वैतरणी, शूल, यन्त्रादि सभी बना रक्खे हैं। उन्हीं शूल आदि यन्त्रोंसे वह वानरवंशियोंको कष्ट दे रहा है। मैं वानर और राक्षसवंशियोंका सेवक हूं। घावोंसे जर्जरित होकर भाग आया हूँ। राजा दशानन! मैं आपकी शरण आया हूँ अतः अब मेरी रक्षा करें। उसकी बात सुनकर दशाननने उसके घावोंकी मरहम पट्टी की और चारों प्रकारकी सेनाके साथ वह धीर वीर दशानन क्रोधित हो वहाँसे चलकर किष्कुपुर पहुँचा। जो जीवित योद्धा उन शूलोंपर फेंक दिए गए थे दशाननने दयाकर उन सबको उसी समय मुक्त कर दिया।

यह सुनकर मारोप नामका बलवान सेनापति चतुरङ्ग सेना सहित लड़ाईके मैदानमें आया। यमके समान इस सेनापतिको क्षणभरमें ही विभीषणने परास्त कर दिया। उसकी परा-जयके समाचार पाकर पापी यम स्वयं युद्ध करने आया। आते ही यमने थोड़ी ही देरमें

विभीषणको युद्धसे परान्मुख कर दिया। यह देखकर दशानन स्वयं युद्ध करनेको तैय्यार हुआ। दशाननके बाणोंसे सेनापति सारोप मारा गया। सारोपके मरते ही यमकी घबड़ाई हुई सारी सेनाका दशाननने खूब विध्वंस किया। यह देखकर यम भी डरके मारे अपने बंधु बांधव सहित प्राण लेकर किष्कुनगरीसे रथनूपुर भागा और जाकर इन्द्रसे कहा कि महाराज! दशानन बड़ा बलवान है मैं तो उसके आगेसे भाग आया हूँ।

यह सुनकर इन्द्र क्रोधित हो युद्ध करनेको तैय्यार हुआ। तब अवसरको समझने वाले मन्त्रियोंने इन्द्रको रोका। अपने दामाद इन्द्रके कहनेसे यम भी उसी असुरसंगीतपुरमें रहने लगा और इन्द्र पुनः भोगोंमें मग्न हो गया। अपनी बहुतसी रानियोंमें अतृप्त होकर भोग भोगते हुए वह यह भी भूल गया कि मेरा शत्रु पनप रहा है।

उधर बुद्धिमान बड़े भाई दशाननने वंश परंपराके स्नेहके कारण छोटे भाई यक्षरजको किष्कुपुरका राज्य दिया तथा किष्किन्धापुर छीनकर राजा सूर्यरजको दे दिया। अपनी वंश परंपरासे आए हुए नगरोंको पाकर दोनों भाई सुख सागरमें निमग्न होकर भी अपने कर्तव्यका पालन करते हुए रहने लगे। जो वानरवंशी इधर उधर बस गए थे सब वहीं आ गए तथा दशाननकी सहायता पाकर सब सुखसे रहने लगे। दशानन अपने बन्धु बान्धवोंके साथ लंकामें आया. फिर सब लोग अपने २ घर चले गए. कोई स्वयंप्रभ नगर चले गये कोई पुष्पांतक नगर चले गये और कोई प्रसन्नतासे लंकामें रहने लगे।

६. रावणका दिग्विजय

राजा सूर्यरज और उसकी रानी चन्द्रमालिनीसे बाली नामका परम धार्मिक पुत्र हुआ। यह बाली अपनी सामर्थ्यसे क्षणभरमें ढाई द्वीपकी प्रदक्षिणा देकर किष्किन्धा नगर लौट आता था। अनुक्रमसे उसके सुग्रीव नामका छोटा भाई हुआ। उसके बाद क्रमसे श्रीप्रभा नामकी कन्या हुई। उधर किष्कुपुरमें राजा यक्षरज और उसकी रानी हरिकांतासे नल नील नामके दो पुत्र हुए। धर्मात्मा राजा सूर्यरज बालिको राज्य दे आप स्वय पिहिताश्रव मुनिके पास मुनि हो गया। बालि ध्रुवा नामकी पटरानी तथा अन्य सेवा करनेवाली रानियोंके साथ आनन्द पूर्वक सुखसे रहने लगा।

एक दिनकी बात है। दशानन रत्नपुरके राजा प्रवरकी शुभ लक्षणोंवाली पुत्रीको विवाहनेके लिए गया था कि इधर लंकामें उसकी सुन्दर बहन चन्द्रनखाको राजा खरदूषणने देखकर हर लिया। कुंभकर्ण और विभीषण उसे छुड़ा नहीं सके। तब तक दशानन आ गया। उसने आकर सारी कथा सुनी। मार्गकी थकावट होते हुए भी वह युद्धके लिए चला। तब मन्दोदरी पैर पकड़कर कहने लगी—

अलंकारपुरमें चन्द्रोदर नामका राजा था। उसकी अनुराधा नामकी रानी एकबार गर्भिणी हुई। विजयार्द्ध पर्वतपर राजा मेघप्रभके पुत्र खरदूषणने चन्द्रोदरको मार डाला। तथा धनके गर्वसे अलंकारपुरपर अधिकार कर लिया। उसकी पत्नी अनुराधा दुखी होकर रत्नाभ पर्वतपर गयी। वहाँ उसने विराधित नामके धर्मात्मा पुत्रको जन्म दिया। कुंअर विराधितका भीलोंद्वारा पालन पोषण हुआ और अब वह स्थान भ्रष्ट हो अकेला विद्या साधन करता फिरता है। विराधितके पिताको मारनेवाले उसी खरदूषणने चन्द्रनखाका अपहरण किया है। अतः नाथ! यह अच्छा ही हुआ, कन्याओंके लिए मार्ग ही यह है कि वे परस्पर ली दी जावें। यह खरदूषण

चौदह हजार विद्याधरोंका राजा है। अनेक विद्यायें इसे सिद्ध हैं, अनेक भोगोपभोग साधनोंसे परिपूर्ण है, सुन्दर है, सुखी है तथा बलवान है। आप दोनोंके युद्धमें यह भी सन्देह ही है कि किसकी विजय हो। दूसरे हरण-दोषके कारण कन्याको दूसरा कोई बरेगा भी नहीं। तीसरे यह खरदूषण और किसी युद्धमें आपकी सहायता करेगा।' इस तरह अनेक प्रकारसे मन्दोदरीने दशाननको समझाया।

दशाननने उत्तर दिया—प्रिये! युद्धसे तो मैं नहीं डरता, किन्तु तुम्हारे कहनेसे और शेष कारणोंसे मैं रुका जाता हूं। इसके बाद बालिको अपनेसे विमुख जानकर दशाननने मति-सागर नामका दूत उसके पास भेजा। दूत वहाँ शीघ्र पहुँचा और कहने लगा—"बालि नरेश! सुनिये, बुद्धिमान दशाननने मित्रताके नाते यह आज्ञा कहला भेजी है कि चिर कालसे हम दोनोंमें प्रेम चला आ रहा है। अतः तुम आकर मेरे चरणोंमें नमस्कार करो। अपनी बहिन श्री प्रभा मुझे दे दो और मेरे राज्यमें सुखसे रहो।" यह बात सुनकर महाबलवान बालिको क्रोध आ गया। वह बोला—यह कौन दशानन है? कैसा राक्षस वंश है? इस तरह कहता हुआ वह ज्योंही दूतको मारने उठा त्योंही वह दूत वहाँसे चला गया।

दूतने शीघ्र जाकर दशाननसे सब बातें कहीं। इसपर दशानन चतुरङ्ग सेना लेकर युद्धके लिये चला। दशाननका आगमन सुनकर बालि भी युद्धके लिये निकला। किन्तु सागरबुद्धि आदि मन्त्रियोंने उसे रोक लिया और कहा—"महाराज जिसमें व्यर्थ जीवोंका बध हो ऐसे पापसे क्या लाभ? दशाननके साथ हमारा पीढ़ियोंसे प्रेम चला आया है। यदि उस बलवानके साथ आपका युद्ध होगा तो उसमें बहुतसे बलवान योद्धा भी मारे जायेंगे।' यह सुनकर बालिको वैराग्य हो गया। सुग्रीवको राजलक्ष्मी सौंपकर वह स्वयं गगनचन्द्र मुनिराजके पास मुनि हो गया। बालिमुनि घोर तपश्चरण करते हुये श्रुतकेवली हो गये। उन धर्मात्मा मुनिराजने अनेक देशोंमें भ्रमण किया।

सुग्रीवने अपनी बहिन श्रीप्रभा दशाननको दे दी और उसकी अनुमतिसे वंशपरम्परासे आये हुये अपने राज्यका संचालन करने लगा। पृथ्वीपर विद्याधरोंकी जितनी सुन्दर कन्यायें थीं उन सभीसे दशाननने विवाह किया। नित्यलोकपुरमें नित्यलोक राजा और उसकी रानी श्रीदेवीसे रत्नावली नामकी पुत्री हुई। उस कन्याको विवाहकर दशानन एकबार लंका जा रहा था कि मार्गमें अपने विमानको एकाएक रुका हुआ देखकर उसने कहा—मारीच! जाकर देखो तो मेरा विमान किसने रोका है?

दशाननके इस प्रकार कहनेपर मारीच नीचे गया तो देखा कि कैलाश पर्वतपर कोई मोक्षाभिलाषी मुनिराज खड़े हैं। उन्हें देखकर मारीच बोला—'महाराज! देखिये, यह दिगम्बर मुनिराज कैसे योगी, ध्यानी और मौनी हैं, इन्हींके माहात्म्यसे आपका विमान आकाशमें रुक गया है।" तब दशानन बोला—देखूं कौनसे मुनिराज हैं? इस तरह कहकर वह विमानसे उतर वहाँ आया जहाँ बालि मुनिराज खड़े हुये थे। उन्हें देखकर और जानकर कि यह मेरा शत्रु है वह दुष्ट बड़ा क्रुद्ध हुआ और गालियाँ देने लगा—रे मुनि! यह तेरा कहाँका ध्यान है जो इस तरह तू क्रोधसे भर रहा है। मुनि होनेपर भी तूने मेरे साथ वैर नहीं छोड़ा। तू बड़ा पापी और पाखण्डी है। अभी तेरा निग्रह करता हूं। रे दुष्ट! तुझे अभी कैलाश सहित समुद्रमें फेंकता हूं।'

इस तरह कह उस पातकीने विद्याके बलसे इन्द्रका रूप बनाया और पर्वतको भेदकर पाताल-में घुस गया। वहाँ उसने एक लाख हाथोंसे पर्वत उठाना प्रारम्भ किया तो महाभयङ्कर कल २ शब्द हुआ। हिरण, सिंह, हाथी सब भयभीत हो गये। लता वृक्ष सब टूट गये, जलोंके झरने भग्न हो गये। देवताओंसे पूजित जिन मन्दिर हिल उठे, अनेक पक्षी मर गये, देवता भी दूर

भाग गये। तब मुनिराजने अवधि ज्ञानसे जाना कि यह सब कार्यवाही दशाननकी है। वे मनमें सोचने लगे कि इस पापीने मनमें क्या सोचा है। भरतने यहाँ बहुतसे ऊँचे २ जिन मन्दिर बनवाये हैं वे सब नष्ट हो जायेंगे। अतः पुण्योपार्जनके कारणभूत उन मन्दिरोंकी मैं रक्षा करूँगा।

इस तरह सोचकर मुनिराजने पैरके अँगूठेसे पर्वतको दबाया। उसके भारके बोझसे दशानन भी दबने लगा। उसके पीठ, कमर, गर्दन, जाँघ, घुटने, हाथ, बाहें आदि सब भिच गये, शरीर बिल्कुल कछुएकी तरह सुकड़ गया। कष्टसे वह इतना रोया कि जगतमें उस रोनेके कारण ही बादमें वह रावण नामसे विख्यात हुआ। उसके रोनेका शब्द सुनकर उसकी रानियाँ घबड़ायी हुई आयीं और उन महान ध्यानी मुनिराजके चरणोंमें गिरकर कहने लगीं—हे नाथ! आज हमें पतिकी भिक्षा दीजिये। तब मुनिने दयाकर अपना अँगूठा ढीला किया।

उस समय आकाशसे देवताओंने पंचाश्चर्यकी वृष्टि की। रावणने भी आकर मुनि-चरणोंको भक्तिपूर्वक नमस्कारकर अनेक स्तोत्रोंसे उनकी स्तुति की, क्षमा माँगी और पुनः २ चरणोंको नमस्कार किया। तथा लज्जित होकर मुनिके पाससे चैत्यालयमें गया। अपनी चन्द्रहास तलवारको वहीं पृथ्वीपर पटककर स्त्रियों सहित भगवानकी पूजा की। भुजाओंमेंसे नसकी तातें निकालीं उनकी वीणा बनाकर बजाने लगा तथा अनेक गुणावलियोंसे परिपूर्ण भगवानका स्तुति पाठ करने लगा। इस तरह धर्मतीर्थके प्रवर्त्तक तीर्थकरोंकी रावणने स्तुति की तथा उसकी रानियोंने नृत्य किया।

इस स्तुतिपाठसे धरणेन्द्रका आसन कम्पायमान हुआ। अवधि ज्ञानसे उसका कारण जानकर गीत सुननेकी इच्छासे वह जिन चैत्यालयोंमें आया। भगवानकी पूजा की तथा गीत सुनकर अत्यन्त सन्तुष्ट हुआ और रावणसे कहने लगा—तेरी जिनेन्द्र भक्ति धन्य है। तेरे गीतोंसे सन्तुष्ट होकर मैं पृथ्वीसे निकलकर आया हूं। तू कोई वर माँग। तेरी इच्छानुसार ही मैं उसे दूँगा। रावणने उत्तर दिया—नागेन्द्र! भगवानके स्तोत्रसे बढ़कर और क्या चीज तुम्हारे पास देनेको है जो तुमसे माँगूं।

धरणेन्द्रने कहा—राजन तुम ठीक कहते हो। मुक्ति प्रदान करनेवाले स्तोत्रसे स्वर्गका मिलना कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। तो भी मेरे दर्शन निष्फल न हों इसलिये मैं तुम्हें शक्ति प्रदान करूँगा। तुम्हें उसे ग्रहण करना चाहिये। इस शक्तिबाणको देखकर देव और दानव तक पराजित हो जाते हैं तब बेचारे दीन मनुष्योंकी तो बात ही क्या है?

इस प्रकार कहकर धरणेन्द्रने वह बाण रावणको सौंपा तथा भगवानको नमस्कारकर और बालिमुनिकी स्तुतिकर अपने स्थान गया। रावण कैलाशपर एक महीने तक रहा। मुनि-चरणोंकी वन्दना की और उनसे प्रायश्चित्त ग्रहण किया। वहाँसे परवार सहित चतुरङ्गसेना लेकर लङ्का आया और सुखसे रहने लगा। बाली मुनिने शुक्लध्यानसे कर्मरूपी बनको भस्मकर निर्मल मुक्तिपद प्राप्त किया।

ज्योतिपुर नगरमें वह्निशिख नामका राजा और उसकी ह्रीदेवी नामकी रानीसे सुतारा नामकी पुत्री थी। चक्रपुरके राजा चक्रांक और उसकी रानी अनुमतिके पुत्र साहसगतिने सुताराकी याचना की। इधर सुग्रीवने भी सुताराको बार २ माँगा। राजा वह्निशिखने किन्हीं निमित्त ज्ञानीसे पूँछा तो उन्होंने कहा—राजन! साहस गति अल्पजीवी है किन्तु सुग्रीवकी आयु बहुत है। अमृतके समान मुनि वचनोंको सुनकर वह्निशिखने अपनी पुत्रीका विवाह सुग्रीवके साथ कर दिया। क्रमानुसार सुग्रीवके विद्वान और गुणवान अंग तथा अंगद नामके दो सुन्दर पुत्र हुए। लेकिन धिक्कार है इस कामुकताको कि निर्लज्ज साहस गति अब भी सुतारा-

को पानेकी आशा करता था। वह सोचता था कि किस तरह आनन्द देने वाली उस स्त्रीको प्राप्त करूँ। उसके साथ खूब भोग विलासकर कब सुखी होऊँ। इस तरह सोचता हुआ वह इधर उधर भटकता फिरता था। आखिर रूप बदल देने वाली सुमुखी विद्याका उसे स्मरण हो आया। दुखी आदमी जैसे किसी प्यारे मित्रकी याद करता है उस तरह हिमवानकी किसी दुर्गम गुफामें जाकर वह विद्याकी आराधना करने लगा।

इसी बीचमें रावण दिग्विजय करने निकला। वन पर्वतादिसे विभूषित पृथ्वीकी शोभा देखता हुआ वह सब ओर घूमा। उन विभिन्न द्वीपोंमें रहने वाले विद्याधर राजाओंको जीतकर उन्हें पुनः उनका राज्य सौंप दिया। सिंहके समान विद्याधरोंको वशमें कर लेनेपर भी रावण उनसे पुत्रकी तरह स्नेह करता था। महान पुरुष सचमुच झुकने मात्रसे ही संतुष्ट हो जाते हैं। राक्षस वंश और वानर वंशमें जितने भी महान उद्धत विद्याधर राजा थे उन सबको उसने अपने वशमें कर लिया। संध्याकार, सुवेल, हेमापूर्ण, सुयोधन, हंसद्वीप, परिह्लाद आदि द्वीपोंके राजा भेंट लेकर उसके पास गये और उसे नमस्कार किया। रावणने उन्हें मधुर वचनोंसे संतुष्ट किया। उनकी संपत्ति उन्हींके पास रहने दी। जो विद्याधर राजा बड़े २ दुर्गोंमें रहते थे उन्होंने भी सुन्दर भेंट आदि लेकर रावणके चरणोंको नमस्कार किया।

इसके बाद रावण विद्याधर इन्द्रको जीतनेके लिये उद्यत हुआ। बहन और बहनोयीके स्नेहसे वह उनके नगरकी ओर चला और वहीं पास ही जाकर ठहर गया। बहन चन्द्रनखा बड़ी उत्सुकतासे अपने प्यारे भाईका आगमन सुनकर कुछ रात्रि शेष रहते स्नेह पूर्वक सोते हुये खरदूषणको जगाया। खरदूषणने अलंकारोदयपुरसे निकलकर अत्यन्त प्रेम और समारोहसे रावणका स्वागत किया। रावणने भी अपनी छोटी बहिनके स्नेहसे बहनोईका खूब आदर किया। सगे सम्बन्धियोंके स्नेहसे बढ़कर भला और कौन सा स्नेह हो सकता है।

खरदूषणने विद्याधरके प्रभावसे इच्छानुसार रूप बना लेने वाले अपने चौदह हजार विद्याधर रावणको दिखाये। अपने गुणोंसे सभी शूरवीरोंके चित्तको आकर्षित करने वाले शूरवीर खरदूषणको रावणने सेनामें सेनापतिका पद देकर अपने बराबरका बनाया तथा हिडंब, हैहिडंब, हिंब, विकट, त्रिजट, हय, माकोट, सुजट, टंक, किष्किन्धाका राजा इत्यादि विद्याधरोंके साथ एवं एक हजार अन्य विद्याधरोंको लेकर हजार देवोंसे रक्षित अपने चक्ररत्नको आगे कर, रावण पुष्पक विमानमें बैठकर चला। रावणके साथ इन्द्रजीत, मेघनाद, कुंभकरण, विभीषण तथा खरदूषण आदि राजा भी क्रीड़ा करते हुये चले। वे क्रमसे विंध्याचल पर्वत पर पहुँच वहाँसे नर्मदा के तट पर आये। संध्या हो जानेके कारण सेनाने वहीं पड़ाव किया।

सुखसे वहाँ धर्मकथादि करते हुये तीन पहर रात व्यतीत की। जब सुबह हुआ तब सभी लोग स्त्रियों सहित नदीमें क्रीड़ा करने लगे। रावणने वहीं नदीके किनारों की बालू में चबूतरा बनवाकर जिनेन्द्र भगवानकी अत्यन्त भक्तिसे पूजाकी। उधर माहिष्मती नगरीका परम धार्मिक राजा सहस्त्ररश्मि नदीपर आया हुआ था। वह भी जिधर रावण पूजा कर रहा था उसके ऊपरकी तरफ नर्मदाका जल बाँधकर उसमें अनेक स्त्रियोंके साथ क्रीड़ा करता था। जब क्रीड़ा कर चुका तो उसने नदीका बाँध छोड़ दिया। पानीके पूरसे रावणकी पूजामें विघ्न हुआ। उसने तुरन्त ही प्रतिमा उठाली और क्रोधसे बोला—यह क्या है ? लोग दौड़े और लौटकर कहा—"स्वामिन कोई बड़ा आदमी स्त्रियोंके साथ क्रीड़ा कर रहा है। दूर खड़े हुए लोग तलवार हाथमें लेकर उसका पहरा दे रहे हैं। वह अत्यन्त सुन्दर है, गुणवान है, इन्द्र जैसा मालूम पड़ता है। उसीने खेलते हुये यह पानीका बाँध छोड़ दिया है।

यह सुनकर रावण क्रोधसे गरजा। राजाओंको आज्ञा दी कि उस दुष्टको शीघ्र पकड़ो। आज्ञा देकर वहीं नर्मदाके किनारे रत्न और सोनेके फूलोंसे प्रतिमाका पूजन किया। विद्याधर

राजा आशिकाकी तरह रावणकी आज्ञा सिरपर धारणकर शीघ्र ही मित्रोंके साथ तय्यार होकर युद्धको चले। उन्हें आता हुआ देखकर सहस्ररश्मि बड़ा क्षुब्ध हुआ। स्त्रियोंसे कहा—डरो मत और स्वतः पानीसे बाहर आया। दोनों सेनाओंमें घोर युद्ध हुआ। सहस्ररश्मिने रावणकी सेनाको दबाया।

सेनाके दबनेका समाचार सुनकर रावण स्वयं युद्धके लिये चला। रावण और सहस्ररश्मिका प्राणिविनाशक घनघोर युद्ध हुआ। सहस्ररश्मिने क्रोधसे रावणके मस्तकपर प्रहार किया। रावणने उसे रोककर सहस्ररश्मिको अपने बाणोंसे बेध दिया। सहस्ररश्मि मूर्च्छित हो पृथ्वीपर गिरा। रावणने तुरन्त ही उछलकर उसे नागपाशसे बाँध लिया। भाग्यका खेल तो देखो कि सहस्ररश्मि अपनी ही सेनाके लोगों द्वारा उठाकर लाया गया।

सहस्ररश्मिके पिता बाहुरथ चारण ऋद्धिके धारक महातपस्वी योगिराज थे। उन्होंने अपने पुत्रके बन्धनके समाचार सुने तो रावणके पास उसकी मुक्तिके लिये आये। रावणने उन्हें देखकर उनके चरणोंकी बंदना की और बैठनेको आसन दिया। मुनिराज उसपर बैठ गये। रावणने उनकी पूजा की और बोला—हे मुनिराज! आपका इधर कैसे पदार्पण हुआ?

मुनिराजने कहा—तुम्हें धर्मवृद्धि देने आया हूं। तुम तीन खण्डके अधिपति तथा जैन-धर्मकी प्रभावना करने वाले हो, मुनियोंका भक्त भी तुम जैसा कोई अन्य नहीं है। इस प्रकारके बचनोंसे उसे सन्तुष्टकर पुनः मुनिराज बोले—क्षत्रिय पुरुष शत्रुकी पराजय मात्रसे ही संतुष्ट हो जाते हैं। अतः सहस्रकिरण मेरा पुत्र है उसे तुम बन्धनसे मुक्त कर दो। अजानकारीमें काम करनेवाले पुरुषपर कोई रोष नहीं करता।

रावणने कहा—मैं विद्याधर राजा इन्द्रको जीतनेके लिये निकला था। यदि भूमि-गोचरियोंसे डर जाता तो वहाँ कैसे जाता। इसलिये मैंने आपके पुत्रको पकड़ा था। अब गुरुके वचनोंसे उसे छोड़े देता हूं। यह कह मन्त्रियोंसे परामर्शकर रावणने सहस्ररश्मिको छोड़ दिया और बन्धुभावसे उसे अपने साथ लाया। वह आकर पिताके चरणोंको नमस्कार कर उनके समीप ही पृथ्वीपर बैठ गया। रावण द्वारा भाई चारा प्रकट करनेपर भी सहस्ररश्मिने पिताके पास ही दिगम्बरी दीक्षा ले ली।

दीक्षा लेते समय उसने अयोध्यामें अपने अनरण्य मित्रके पास सब समाचार निवेदन करनेके लिये दूत भेजा। दूतने जाकर राजा अनरण्यसे कहा कि सहस्ररश्मिने रावणका प्रसङ्ग पाकर दीक्षा ले ली है। यह सुनकर राजा अनरण्यको थोड़ी देरतक तो शोक हुआ। बादमें सावधान हो दशरथ पुत्रको राज्य दे स्वयं भी मुनि हो गया। इस तरह रावणने जिन २ राजाओं-को पृथ्वीपर अभिमानी सुना उन सभीको उसने नम्रीभूत किया। पराजित राजाओंका उसने सन्मान किया। उन सभीके साथ सुभौम चक्रवर्तीकी तरह वह विस्तृत पृथ्वी मण्डलपर घूमा। दिग्विजयमें विभिन्न देशोंके राजा उनके साथ सम्मिलित थे, उनकी अनेक प्रकारकी आकृतियाँ थी, वेषभूषायें भी अलग अलग थीं, भाषा भी सबकी एक नहीं थीं। अपनी अनेक प्रकारकी सवारियोंपर वे आरूढ़ थे।

मार्गमें उसने चैत्यालयोंका जीर्णोद्धार कराया, देवाधिदेव जिनेन्द्र देवके नये मन्दिरोंका निर्माण कराया। जैन-धर्मके द्वेषी मनुष्योंका निग्रह किया, अभागे दयनीय दरिद्र-प्राणियोंको धनसे परिपूर्ण किया। सम्यग्दृष्टि जीवोंका वात्सल्य भावोंसे आदर किया, दिगम्बर मुनिराजोंकी बन्दना की। इस तरह पुण्योदयसे विहार करता हुआ रावण सूर्यकी तरह अपने दुःसह प्रतापको फैलाता हुआ उत्तर दिशाकी ओर बढ़ा।

क्रमसे बढ़ता हुआ रावण राजपुर नामक सुन्दर नगरमें पहुँचा, जहाँ अन्धविश्वासी राजा

मरुन्मुख यज्ञ कर रहा था। रावणने उसके पास अपना दूत भेजा और अपने आगमनकी सूचना दी। दूत वहाँसे लौटकर आया और रावणसे बोला—"महाराज ! मरुन्मुख सभामें बैठा हुआ यज्ञ कर रहा है।" यह सुनकर रावणने पूछा—मारीच ! यह यज्ञ क्या चीज है ? तब मारीच कहने लगा—महाराज सुनिये ! इस यज्ञकी सारी कथा आपको बताता हूं। महाकाल नामक असुरने यह यज्ञ चलाया है।

भरतक्षेत्रमें चारणद्वन्द नामके नगरका राजा सुयोधन था। आतिथ्या नामकी उसकी रानी थी। उन दोनोंके सुलसा नामकी पुत्री हुई। उसके स्वयम्वरके लिये दूत भेजकर आर्यखण्डके सभी राजाओंको बड़े विनययुक्त वचनोंसे राजाने आमन्त्रित किया। दूतने अयोध्यामें जाकर राजा सगरको भी निमन्त्रण दिया। सगर भी निमन्त्रण पाकर चलनेको तैयार हुआ। चलते समय उसने अपने सिरमें सफेद बाल देखा। "मैं वृद्ध हुआ, जाकर क्या करूँगा" ऐसा सोचकर वह घरपर ही रह गया। उस समय उसकी मन्दोदरी नामकी दासीने कहा कि सफेद बाल तो लक्ष्मीका समागम बतलाते हैं। इतनेमें विश्वभूति नामका मन्त्री बोला—महाराज कुछ भी हो अनेक उपाय करके सुलसाको मैं आपकी रानी बनाऊँगा।

यह सुनकर सगर राजा मन्त्रियोंके साथ सुलसाकी इच्छासे चारणद्वन्द नगर आया। विश्वभूतिने एक सामुद्रिक शास्त्र, जिसमें मनुष्यके शुभाशुभ लक्षणोंका फल लिखा रहता है बनाया और उसे चुपचाप पृथ्वीमें गाड़ दिया। वह शास्त्र राजा सुयोधनके आदमियोंको मिला। विश्वभूतिने वह शास्त्र सुलसाके सामने पढ़ा। शास्त्र सुनकर सगरकी दासी मन्दोदरीने सुलसासे कहा—बेटी सुन, "राजा सगरमें ये सब लक्षण मौजूद हैं इसलिये तू सुखसे रहनेके लिये सगरके साथ विवाह कर।" किन्तु सुलसाकी माँ ने कहा—'पुत्रि ! तू मेरी बात सुन। सुरम्य देशमें पोदनापुर नगर है वहाँका राजा सोमवंशमें उत्पन्न मेरा भाई तृणपिंगल है। उसकी सर्वयशा रानीसे उत्पन्न मधुपिंगल नामका पुत्र है। वह सब लक्षणोंसे परिपूर्ण नवयुवक है। सुखसे रहनेके लिये उस श्रीसम्पन्न कुमारके साथ तू विवाह कर। सगर बुड्ढेके साथ तुझे क्या सुख मिलेगा ? दूसरे, उसके रानियाँ भी बहुत हैं उनके साथ तेरा झगड़ा होता रहेगा।

सुलसाकी माँ आतिथ्याकी बातें सुनकर मन्दोदरी दासी एकान्तमें कन्यासे बोली—बेटी ! जितने भी संसारमें अशुभ लक्षण हैं वे सब मधुपिंगलमें मौजूद हैं। अतः अब यह तेरी इच्छा है कि तू उस दुष्टके साथ विवाह कर या न कर। अगर तू मेरी बात नहीं मानती तो विश्वभूतिसे पूँछ ले। सुलसाने विश्वभूतिसे पूँछा तो उसने भी वही कहा। स्वयंवरमें सुलसाने राजा सगरको ही बरा। पहरेदारोंने मधुपिंगलको धक्का देकर वहाँसे निकाल दिया। मधुपिंगल मानभङ्गसे दुखित हो मुनिराज हरिषेणके पास जाकर विरक्त हो गया।

सगर सुलसाको अपने अयोध्या नगर ले आया और उसके साथ भोग-विलास करने लगा। इधर मधुपिंगल मुनि पक्षोपवास, मासोपवास करते हुए चम्पापुरमें आये और नगरके बाहर उद्यानमें ठहर गये। एकदिन मधुपिंगल चर्या (आहार) के लिये निकले। उनके पैरके तलवोंको देखकर किसी सामुद्रिक शास्त्रके जाननेवालेने कहा—यह मनुष्य तो राजा होना चाहिये भिक्षा कैसे माँगता है ?" तब किसीने कहा यह आदमी भिक्षु नहीं है। किन्तु सुलसाके लिये सगरके मन्त्रीने झूठा शास्त्र बनाया था और उसकी वजहसे यह सुलसाके स्वयंवरसे निकाल दिया गया था। उसीसे यह विरक्त हो तपस्वी बन गया है और सगर सुलसाके साथ अपने नगरमें आनन्द कर रहा है।

मधुपिंगलने यह सुना तो उस मूर्खने निदान किया—"जब मैं तपके फलसे देव होऊँगा तो सगरको निःसन्तान करूँगा।" ऐसा निदानकर मधुपिंगल मरा और व्यन्तर देवोंमें महा-

कालासुर नामका सामर्थ्यवान देव हुआ। उसने विभंगज्ञान (कुअवधिज्ञान) से सगरकी सारी चेष्टायें जान ली। "राजा सगरको मारकर उसके वंशको भी नष्ट कर डालूँगा।" इस तरह कहता हुआ वह जंगलमें घूमने लगा। अब आगेका वृत्तान्त सुनिये—

भारतवर्षमें धवलदेशके अन्तर्गत सुवस्तिकावती नामकी नगरी है। वहाँ हरिवंश कुलमें उत्पन्न विश्वावसु नामका राजा था और उसकी श्रीमती नामकी रानी थी। उन दोनोंके वसु नामका पुत्र हुआ। वसु क्षीरकदंब नामक गुरुके पास पढ़ने लगा। क्षीरकदंबकी पत्नीका नाम स्वस्तिमती था और पुत्रका नाम पर्वत था। तथा जैनधर्मकी प्रभावना करनेवाला नारद नामका एक पोष्य पुत्र भी था। वसु, पर्वत और नारद तीनों ही उपाध्यायके पास पढ़कर महान् पारङ्गत हो गये।

एक दिन उपाध्याय क्षीरकदंब शिष्योंके साथ दर्भ लेनेके लिये जंगलमें गये। वहाँ श्रुतधर मुनिको देखकर अपने तीनों शिष्योंके साथ उन्हें नमस्कार कर बैठ गये। गुरुसे पूछा— "महाराज मेरे इन तीन शिष्योंमेंसे किसकी क्या गति होगी ?" मुनिराजने कहा—"इनमें वसु तो पापसे नरक जायगा, दूसरे पर्वतकी भी पापसे नरकगति होगी। तीसरा नारद राज्यका परित्यागकर तप करता हुआ धर्मके प्रभावसे सर्वार्थसिद्धि जायगा। यह सुनकर क्षीरकदंब उन शिष्योंके साथ नगर लौट आया। दोनों शिष्योंके नरक गमनकी बात सुनकर वह सदा दुखी रहने लगा।

राजा विश्वबसुने राज्यभार वसुको सौंपकर स्वयं संयम ग्रहण कर लिया। राजा वसु राज्य करने लगा। एक दिन राजा वसु बनमें गया वहाँ आकाशमें स्थित पक्षियोंको देखकर बाण छोड़ा। आकाशमें स्फटिकका एक स्तम्भ था जो अदृश्य था। उस स्तम्भसे टकराकर बाण नीचे पृथ्वीपर आ गिरा। बाणके साथ ही शिला भी पृथ्वीपर आ गिरी। उस बाणसे टकरानेके कारण मालूम हुआ कि वह स्फटिक मणिकी शिला है। पृथ्वीपर उसे गिरी हुई देखकर वसुने बड़े कौतुकसे उसका स्पर्श किया। वसु उस शिलाको अपने घर ले आया और उसका सिंहासन बनाकर उसके ऊपर बैठने लगा।

आकाशके समान उस स्फटिकके सिंहासनपर जब राजा वसु बैठता था तब उसके इस कपटको कोई नहीं समझ पाता था। "सत्यवादी राजा वसु आकाशमें अधर रहते हैं" इस प्रकार लोग उसके बड़प्पनका बखान किया करते थे।

एक दिन नारद और पर्वत लकड़ी लानेके लिये मार्गमें जा रहे थे कि बनमें नदीका जल पीकर जाने वाले मोरोंका रास्ता पहचानकर नारदने पर्वतसे कहा—"एक मोर और सात मोरनी जल पीकर बनमें अभी गये हैं"। आगे देखा तो वही मोरोंका झुण्ड दिखायी दिया। बादमें मार्ग चलते हुये कुछ चिह्न देखकर नारदने फिर पर्वतसे कहा—"आगे जो हथिनी गयी है वह बाईं आँखसे कानी है तथा उसपर सफेद वस्त्र पहने हुए एक गर्भिणी स्त्री सवार है, जिसके पेटमें पुरुष बालक है। आगे चलकर देखा तो वही बात निकली।

पर्वत लज्जित होकर माताके पास गया और बोला—"पिताने प्रेमसे एकान्तमें नारदको ही सब पढ़ाया है।" यह सुनकर माताको भी अत्यन्त रंज हुआ। वह पतिसे कहने लगी। "आपने अपने पुत्र पर्वतको तो नहीं पढ़ाया किन्तु प्रेमसे नारदको ही पढ़ाया है।"

क्षीरकदंबने पूछा—प्रिये ! बताओ तो सही क्या बात हुई ! तब उसने नारदकी कही हुई बनमें मोर आदिकी सारी बातें कह सुनायी। क्षीरकदंबने नारदसे पूछा कि कहो बनमें तुमने क्या देखा ? नारद कहने लगा—"तात ! सुनिये, मोर बनमें जल पीकर पूँछ भींग जानेके डरसे उल्टे पैरों लौटा था और मोरनियोंको पूँछ न होनेसे उसके भींगनेका भय नहीं था अतः मैंने

समझा कि उसमें एक मोर बाकी मोरनी हैं। जमीनपर पड़े हुये मूत्रके छींटोंसे मैंने जाना कि वह पीछे भागसे किया हुआ है। बादमें देखा कि दाहिनी तरफके वृक्ष टूटे हुये हैं अतः मैंने समझा कि वह बायीं आँखसे हीन एक आँखवाली हथिनी है। उसके ऊपर बैठी हुई सवारी मार्गके श्रमसे थककर बार बार उतरी थी तथा दायें हाथके सहारेसे उठकर हथिनी पर बैठी थी। इससे मालूम हुआ कि हथिनी पर बैठी हुई सवारी स्त्री है और वह गर्भिणी है तथा गर्भमें पुरुष बालक है। काँटोंमें उलझे हुये वस्त्रसे मालूम हुआ कि उसके सफेद वस्त्र हैं। यह सब बातें मैंने अपने ही ज्ञानसे जानी हैं।

नारदकी यह बात सुनकर क्षीरकदंबने अपनी पत्नीसे कहा—"नारद कितना विचारक है उसकी चतुरता तो देखो।" पत्नी यह सुनकर प्रसन्न हुई। एक दिन क्षीरकदंबने नारद और पर्वतकी परीक्षाके लिये उनके हाथमें चूर्णके दो बकरे बनाकर दिये और कहा—"देखो बच्चो! इन दोनों बकरोंके कान एकान्तमें काटकर यहाँ ले आओ। पर्वतने जाकर एकान्तमें उसके कान काट दिये और दोनों कान लाकर पिताके हाथमें रख दिये। यह देखकर पिताने सोचा मेरा पुत्र बड़ा पापी है। नारद भी एकान्तमें गया और सोचने लगा—गुरुने मुझे एकान्तमें कान छेदनेको कहा है। लेकिन सब जगह तारे, देव, वृक्ष अपनी आत्मा, पक्षी, व्यन्तर, चाँद, सूर्य सभी तो देख रहे हैं, एकान्त कहीं है ही नहीं। यह सोचकर गुरुके पास लौट आया और कहने लगा। देव! मुझे तो कहीं भी एकान्त स्थान नहीं मिला जहाँ मैं यह हिंसा करूँ। उस समय गुरुने समझा कि निःसन्देह यह भव्यपुरुष है। मेरा पुत्र ही नरकगामी है अतः उस पापीको छोड़ दूँगा। यह सोच पूर्व स्नेहके कारण राजा वसुके हाथ अपने पुत्र और पत्नीको सौंपकर तथा अपना स्थान नारदको देकर क्षीरकदम्ब स्वयं गुरुके पास मुनि हो गये और अन्तमें समाधिमरण धारणकर स्वर्गको प्राप्त हुये। इधर नारद और पर्वत दोनों सुखसे माताके साथ रहने लगे।

एक दिन नारदने सभामें प्रसन्नतासे व्याख्यान देते हुये कहा—"अजैर्होतव्यम्" का अर्थ है तीन वर्ष पुराने जौसे हवन करना चाहिये। लेकिन पर्वत कहने लगा—नहीं, पिताने अजका अर्थ बकरा बतलाया है। सभीके सामने दोनोंमें खूब वाद-विवाद हुआ। तब दोनोंने प्रतिज्ञा की कि वसु राजा इसका साक्षी है। देखें, वह इसका अर्थ बकरा करता है या धान्य करता है। हम दोनोंमें जो झूठा होगा उसकी जीभ काट ली जायगी। इस तरह निश्चय कर वे सब घर चले गये।

पर्वतका उतरा हुआ चेहरा देखकर स्वस्तिमती माताने इसका कारण उससे पूछा। पर्वतने माताको सारा वृत्तान्त कह सुनाया। माताने कहा—बेटा! तैंने झूठ बोला, मैंने पहले तेरे पिताके मुखसे सुना था कि अज तीन वर्ष पुराने धान्योंको कहते हैं, इसलिये वसु अब तेरी जीभ काट लेगा। जीभ छिदनेपर तेरी मृत्यु ही हो जायगी। विना पति-पुत्रके फिर मैं क्या करूँगी।' यह कह माता चिन्तातुर हो उठी। बादमें उसे स्मरण आया कि वसुने मुझे पहले एक वर दिया था। इस समय उसके माँगनेसे मेरा कल्याण होगा। वह शीघ्र ही वसुके पास गयी। वसुने पूछा—माँ किस लिये आई हो? पर्वतकी माताने अपने पुत्रकी सारी बातें कह सुनायीं, तथा बोली—राजन्! आप सभी लोगोंके पिता हैं। राजा लोग सदा सच बोलते हैं और धर्मका सेवन करते हैं। गुरुने जब तुम्हारी ताड़ना की थी उस समय तुमने मुझे एक वर दिया था। लेकिन उस समय वर्जित कार्य समझकर मैंने उसे ग्रहण नहीं किया था। अब इस समय वह मेरा वर आप मुझे प्रदान करें और मेरे पुत्रकी रक्षा करें।

राजा वसुने उत्तर दिया—माता जो तुम्हारे पुत्रने कहा है मैं उसे ही सब लोगोंके सामने

सत्य बतलाऊँगा। पर्वतकी माँ सती स्वस्तिमती अपने घर आ गयी और राजा वसु सोचने लगा कि मेरे पापका कारण आ लगा। दूसरे दिन प्रातःकाल नारद और पर्वत राजा वसुके पास गये। साथमें उनके बहुतसी कौतुक प्रिय जनता भी चली। नारद बोला—महाराज! गुरुने "अजैर्होतव्यं" का जो अर्थ बतलाया था वह आप सत्य २ कहिये, क्योंकि राजा लोग संसारमें सच बोलने वाले धर्मात्मा होते हैं।' राजाने उत्तर दिया—जो पर्वतने अर्थ किया है वही गुरुने बतलाया था। यही अर्थ मैंने उस समय गुरुसे सुना था। यह कहते ही वसुका सिंहासन पृथ्वीमें घुसा। लोग कहने लगे—वसुका सिंहासन पृथ्वीमें घुस रहा है। आकाशके समान स्फटिकके सिंहासन पर राजाके बैठने की बात किसीको मालूम न थी। अतः नारद कहने लगा—हे वसु! झूठ बोलनेके प्रभावसे ही तेरा यह सिंहासन जमीनमें घुसा जा रहा है। अतः अब भी तू सच बोल दे तो ठीक है? मोह और अभिमानसे भरे हुए राजा वसुने वही बात दुहराई और बादमें सिंहासन सहित पृथ्वीमें धस गया।

हिंसाधर्मको प्रवर्तन करनेसे घोर पापी वह राजा वसु अत्यंत वेदनासे परिपूर्ण महातमः प्रभा नामकी सातवीं पृथ्वी (नरक) में पहुँचा। सभी लोगोंने वसुके झूठ बचनोंको धिक्कारा तथा धर्ममार्गका उपदेश देनेके कारण नारदका आदर किया। पापका उपदेश करनेके कारण पापी पर्वतको देशसे निकाल दिया। बनमें घूमते हुये उसे उसी महाकालासुर (मधु-पिंगलका जीव) ने देखा। उसने पूछा—"पर्वत! कैसे घूम रहे हो।" पर्वतने सारी घटना उसको कह सुनाई। कालासुरने कहा—तैने अजका अर्थ बकरा ठीक बतलाया था। यदि तू मेरा कहा करे तो इस विषयमें मैं तेरी मदद करूँगा। तेरे पिता और मेरे पिता पहले दोनों एक जगह पढ़े थे। उन्हें भी गुरुने अजका अर्थ बकरा ही बतलाया था। अयोध्यामें चलकर तू शत्रुका विनाश कर। वहाँ राजा सगरके सामने यज्ञशास्त्रका व्याख्यान करना। जीवहिंसाके विषयमें जो कुछ भी तू सच या झूठ कहेगा वह सब मैं वहाँ प्रत्यक्ष करके दिखाऊँगा।

असुरके वचन सुनकर पर्वतने हिंसा धर्मका प्रकाश करनेवाले मन्त्रोंकी रचना करके उन्हें वेदोंमें मिला दिया और इस तरह अनेक वेद मन्त्रोंको रचकर तथा ब्राह्मणोचित क्रियाओंको करता हुआ सगर राजाकी सभामें पहुँचा।

महाकालासुरके शत्रु सगरको मन्त्रोंसे मोहितकर पापी पर्वत बोला—"राजन्! तुम सुख देनेवाली यज्ञकी विधिको करो। इससे तुम्हें मैं स्वर्गसुख दिलाऊँगा। यह बकरे आदि जीव यज्ञके लिये ही ब्रह्माने पैदा किये हैं। जो मनुष्य यज्ञ करते हैं वे मरकर स्वर्ग जाते हैं। किन्तु अपने पत्नी पुत्र सहित जो अग्निकुण्ड (हवन कुण्ड) में गिरते हैं वे सशरीर ही स्वर्ग जाते हैं। पर्वतके वचन सुनकर सगरने पापी मन्त्रियोंके साथ यज्ञ करनेके लिये बकरे आदि इकट्ठे किये। विविध देशोंके ब्राह्मण वहाँ आये। गाते बजाते नाचते हुये अनेक तरहसे वेदोंका पाठ करने लगे। राजाने बहुत बड़ा सुन्दर मण्डप बनवाया और यज्ञ प्रारम्भ कर दिया। इधर राजा सगर और पर्वतने साठ हजार ६०००० पशुओंको उस अग्निकुण्डमें होम दिया। उधर महाकालासुरने उनको पालकीमें बैठाकर क्रीड़ा करते हुये स्वर्ग जाते हुये दिखलाया। पशुओंको स्वर्ग जाते हुये देखकर सगरने अपनी पटरानियोंको भी बड़े प्रेमसे कुण्डमें होम दिया। तथा अपनी स्त्री सुलसाको भी उसने अग्निकुण्डमें झोंक दिया और उसके वियोगसे दुखी होकर अपने घर आया।

प्रातःकाल जाते ही सगरने यतिवर नामक मुनिसे पूछा—"प्रभो! मेरी पत्नी घोड़े हिरणादि मरकर कहाँ गये हैं।" मुनिने कहा—'खोटे ध्यानसे मरनेके कारण तुम्हारी स्त्रियाँ यथायोग्य नरकोंमें गयी हैं तथा मृग आदि कुगतियोंमें गये हैं। सातवें दिन तू भी ऊपर बिजली गिर

जानेसे मर जायगा और बहुत प्राणियोंका वध करनेके कारण सातवें नरक जायगा। राजा सगरने मुनिका यह कथन ब्राह्मणोंसे कहा। इसपर ब्राह्मणोंने कहा वह नङ्गा क्या समझे। राजाके चित्तमें सन्देह हुआ जानकर महाकालासुरने सुलसाको पालकीमें बैठे हुये दिखलाया। सगरने पुनः यज्ञ किया और सातवें दिन बिजली गिरनेसे मरकर सातवें नरक गया।

महाकालासुरने मन्त्रियोंको भी यह दिखाया कि सगरादि राजा अपनी रानियों सहित स्वर्ग जा रहे हैं। अतः विश्वभूति आदि मन्त्री भी यज्ञमें मरकर दुःखोंके स्थान नरकमें पहुँचे। सगरको इस प्रकार जड़मूलसे निःसन्तान करनेके लिये कालासुरने यज्ञोंमें हिंसाका प्रचार किया।"

इस तरह मारीचके वचन सुनकर विद्वान रावण राजा मरुन्मुखके लिये दस दिन तक वहीं ठहर गया। उधर यज्ञ करने वाले राजा मरुन्मुखने देश-विदेशसे अनेक ब्राह्मणोंको बुलाया। यज्ञके लिये बहुत बड़ा सुन्दर मण्डप बनवाया। बहुतसी जनता इकट्ठी हुई। आये हुये ब्राह्मणोंमेंसे वेदपारंगत संवर्तक नामक ब्राह्मणको शास्त्रार्थ करनेके लिये राजाने मण्डपके मुखद्वार पर बैठा दिया। पृथ्वीके चारों ओरसे आये हुये ब्राह्मणोंने वेद ध्वनिसे तमाम दिशायें गुञ्जा दीं।

भूख प्याससे पीडित बकरे, घोड़े, हिरण आदि यज्ञमें बध करनेके लिये वधस्थानपर लाये गये। इसी बीचमें आकाश मार्गसे जाते हुये नारद नीचे पशुओंको देखकर शीघ्र पृथ्वी पर उतरे। वहाँ कुतूहलसे नारदने किसीसे पूछा—यह क्या है? उसने कहा राजा यज्ञ विधान कर रहा है।

यह सुनकर नारद संवर्तक ब्राह्मणके पास गया और जाकर पूछा—यह पाप क्यों प्रारम्भ किया है? यज्ञमें पशुओंका जीवन नष्ट किया जाता है, जीवन नष्ट करनेसे पाप होता है और पापसे दुःखकी परम्परा चलती है। विद्वानोंका गुरु संवर्तक यह सुन क्रोधित हो बोला—"मूढ़! क्या कहता है यज्ञ तो स्वर्गका कारण है। यज्ञके विना स्वर्ग कहाँ, और स्वर्गके विना सुख कहाँ। इसलिये यज्ञ करनेसे अवश्य ही स्वर्ग मिलता है।"

नारद बोला—यज्ञ तो महा पापका कारण है। इससे महान् दुःखका स्थान नरक मिलता है। यह सुनकर वे ब्राह्मण क्रुद्ध हो गये और गदा लाठी और मुक्कोंसे नारदको मारने आये। नारदने भी लातों और मुक्कोंसे ब्राह्मणोंको मारा। बादमें उन ब्राह्मणोंने मिलकर नारदको बाँध लिया। इसी बीचमें राजा रावणका दूत आ गया। उसने नारदको ब्राह्मणों द्वारा बँधा हुआ देखा। जाकर रावणसे कहा कि दया कर नारदको बन्धन आदिकसे छुड़ाइये। रावणने तब शीघ्र ही अन्य राजाओंको भेजा और कहा उस दुरात्मा पापी मरुन्मुखको शीघ्र पकड़कर ले आओ। उन्होंने जाकर हवन कुण्डोंको फोड़ डाला, सभी पशुओंको छोड़ दिया, उनके बदले ब्राह्मणोंको रस्सीसे बाँधकर खम्भोंसे बाँध दिया। सारा नगर लूट लिया प्रजाको खूब पीड़ा पहुँचाई, राजा मरुन्मुखको भी कुटुम्ब सहित बाँध लिया। इसी बीचमें महाराज रावण भी वहाँ आये। नारदने उन्हें सुखदायक आशीर्वाद दिया और कहा—"दयालु रावण! कृपाकर इन पीड़ित ब्राह्मणोंको कारागारके बंधनसे छुड़ाइये। सुभौम चक्रवर्तीने इक्कीसवार इन ब्राह्मणों-का पृथ्वीपरसे विनाश किया था तो भी यह नष्ट नहीं हुये। तो क्या अब यह नष्ट हो जायेंगे? अतः इन्हें छोड़ देना चाहिये। यह नष्ट होंगे तो स्वयं ही होंगे। नारदके बचन सुनकर रावणने उन दीन ब्राह्मणोंको छोड़ दिया। वे भी रावणको नमस्कार कर अपने २ स्थान चले गये। बादमें वेचारा मरुन्मुख भी छोड़दिया गया। डरसे उसने रावणके दोनों चरणोंको मस्तकसे लगाया और अपनी हेमप्रभ नामकी कन्या रावणसे विवाह दी। इस तरह उन दोनोंमें स्नेह हो गया।

श्रेणिकने पूछा—भगवान्! यह महान ऋषि नारद कौन हैं? तब गौतम कहने लगे—श्रेणिक नारदकी कथा सुन। एक ब्रह्मरुचि नामका ब्राह्मण था और उसकी कूर्मी नामकी ब्राह्मणी थी।

दोनों सन्यास वेषसे मठके अन्दर जंगलमें रहते थे। एकवार कूर्मी गर्भवती हुयी। उसी जगह संयोगसे दिगम्बर मुनि आ पहुंचे। मार्गकी थकावट दूर करनेके लिये वे मुनि वहीं मठके पास बैठ गये। ब्रह्मरुचि भी मुनि चरणोंको नमस्कार कर उनके पास बैठ गया। गर्भिणी कूर्मी भी आकर वहीं वैठ गयी। उसे देखकर एक मुनि बोले—ब्राह्मण! यह गर्भिणी स्त्री कौन है? ब्राह्मणने कहा—"यह मेरी पत्नी है।" तब मुनि बोले—तू सन्यासका वेष लिये हुये है तुझे स्त्री रखना उचित नहीं।

मूढ़ लोग नहीं समझते कि मुनियोंका और गृहस्थोंका क्या मार्ग है। गृहस्थ तो स्त्री रखते हैं परन्तु मुनि स्त्री नहीं रखते। यदि गृहस्थ और योगी इन दोनोंके ही स्त्री रहें तो बताओ योगी और गृहस्थोंमें अन्तर ही क्या रहा? इस प्रकार जब ब्रह्मरुचिको समझाया तो वह विरक्त होकर उत्तम मुनि हो गया। गर्भवती कूर्मी ब्राह्मणी भी सम्यग्दृष्टि होगयी। किन्तु अपनेको दीक्षाके अयोग्य समझकर चित्तमें बड़ी व्याकुल हुई। पूरे दिन होनेपर उसने शुभ लक्षणों वाले पुत्रको जन्म दिया। वह मनमें सोचने लगी कि मुनिका कहा हुआ झूठ नहीं होता। अतः यह बालक महाभाग्यशाली होगा। तब क्यों न इसे इसके भाग्यपर छोड़कर मैं अपना आत्महित करूँ? यह सोच सोलहवें दिन बालकको निर्जन बनके किसी सुन्दर स्थानपर रखकर आप तपस्विनी हो गयी। बालक विना रोये हुये चुपचाप पड़ा था कि पुण्योदयसे आकाशमें जाते हुये जृम्भक नामक देवने उसे देखा। दयायुक्त हो उसे उठाकर घर ले गया। उसका पालन-पोषण किया। अनेक शास्त्रोंका उसको रहस्य सहित अध्ययन कराया।

बालकने विद्वान् बनकर आकाशगामिनी विद्या सिद्ध की और पूर्ण यौवनको प्राप्त होनेपर अणुव्रत धारण किये। एक बार उसने चिन्होंसे माताको पहचान लिया और उसके स्नेहसे निर्ग्रंथ गुरुके पास क्षुल्लकके व्रत ले लिये। साथ ही जटायें रख लीं और मुकुट पहनने लगा। इस तरह न गृहस्थ ही रहा न मुनि ही बना। वह हास विलासका प्रेमी था, अत्यन्त वाचाल था, कलह देखनेका इच्छुक और सङ्गीतका शौकीन था। तथा सब जगह उसका प्रभाव था। सभी राजघरानोंमें उसका आदर होता था। ब्रह्मचारी तथा व्रतोंमें दृढ़ था। आकाश और पृथ्वीपर सर्वत्र घूमता था। बड़ा कुतूहलप्रेमी था, देवोंने उसका पालन किया था तथा देवोंके समान उसकी क्रीड़ायें थीं इसलिये वह देवर्षि कहलाता था। इतना कहकर गौतम स्वामी बोले—श्रेणिक! प्रसङ्ग पाकर तुझसे नारदकी कथा कही। अब आगेकी कथा सुन—

इस प्रकार अनेक देशोंमें जो बड़े २ राजा थे वे सभी अभिमानी रावणने वशमें किये। उन राजाओंने स्नेह तथा भयसे कन्या, घोड़े, वस्त्र, हाथी तथा बहुतसे रत्न आदि रावणको दिये। बहुत बड़ी सेना लेकर अत्यन्त वैभवसे युक्त रावण अनेक वृक्ष और मैदानोंको देखता हुआ विहार करता था और मार्गमें जो याचक मिलते उनको दान देता था। लवण समुद्रके किनारेपर जो देव और मनुष्य रहते थे उन सभीको उसने लीलामात्रसे वशमें कर लिया। सिन्धु नदीके तथा गङ्गाके पास रहनेवाले एवं इन दोनोंके बीच रहनेवाले मनुष्यों और देवताओंको भी उसने वशमें किया। इस तरह आर्यखण्डको विजयकर उसने म्लेच्छ खण्डको जीता, फिर विजयार्द्धको विजय करनेके लिये गङ्गाके तटपर पहुँचा। गङ्गामें लहरें उठ रही थीं। कच्छमच्छ क्रीड़ा करते थे। कमल खिले हुये थे। इस शोभाको देख रावण वहीं ठहर गया। वहाँ हाथी, घोड़े और पयादोंको पीनेके लिये निर्मल जल मौजूद था और खानेको ढेरों धान्य और घास मौजूद थी। सभी भूमिगोचरी और विद्याधर वहाँ सुखी थे। प्रतिदिन वे कैलाश पर्वतपर भगवानकी पूजा करने जाते थे।

७ त्रिखण्डको जीतकर रावणका लंकामें प्रवेश

राजा मरुतकी हेमप्रभा नामकी जो कन्या रावणसे विवाही थी, एक वर्ष बाद उसके कृतचित्रा नामकी कन्या उत्पन्न हुई। वह इतनी सुन्दर थी कि जो उसे देखता था वह चित्रकी तरह देखता रह जाता था। धीरे धीरे वह कन्या सयानी हो गई। राजाने उसे सयानी देख मन्त्रियोंसे कहा कि मुझे विजयार्द्धके स्वामी राजा इन्द्रसे युद्ध करना है। उसमें न जाने क्या हो ? अतः मैं उसके पहले ही इस कन्या का विवाह कर देना चाहता हूँ। रावण यह कह ही रहा था कि मथुरा नगरीका राजा हरिवाहन अपने पुत्र मधुके साथ वहाँ आ निकला। मधुका देखकर रावणने मारीचसे पूछा—"यह किसका पुत्र है ?" मारीचने कहा—हरिवंश कुलमें उत्पन्न राजा हरिवाहनका यह मधु नामका यह पुत्र है। इन्द्र इसकी सेवा करता है। त्रिशूल रत्नका अधिपति है, अत्यन्त सुन्दर तथा गुणवान है। रावणने यह सुनकर बड़ी धूमधामसे आदर सत्कारपूर्वक अपनी कन्याका उसके साथ विवाह कर दिया।

श्रेणिकने पूछा—स्वामिन् ! यह त्रिशूल रत्न मधुको कहाँसे मिला ? गौतमने त्रिशूलरत्नकी कथा इस तरह कहना प्रारम्भ की। धातकी खण्डके ऐरावत क्षेत्रमें शतद्वार नामका नगर है। उसमें एक सुमित्र नामका धर्मात्मा तथा धनाढ्य वैश्य रहता था। उसके प्रभव नामका एक निर्धन ब्राह्मण मित्र था। नगरका राजा निःसन्तान था। जब वह मरा तो लोगोंने सुमित्रको राजगद्दीपर बैठाया। सुमित्रने प्रभवको मित्र स्नेहसे अपने बराबरका राज्याधिकारी बना लिया।

एक बार जंगलमें सुमित्रको कोई दुष्ट घोड़ा हर ले गया। वहाँ द्वरदद्ंष्ट्र नामके भीलने इसे देखा। वह भील सुमित्रको अपनी झोंपड़ी पर ले आया और सौगन्ध दिलाकर अपनी कन्या उसे विवाह दी। साक्षात् वनश्रीकी तरह उस वनमाला नामकी कन्याको पाकर सुमित्र वहाँ एक महीने तक रहा। बादमें वह भीलकी सलाहसे पत्नीको लेकर बहुत सी भील सेनाके साथ अपने शतद्वार नगरकी ओर चला। उसका मित्र प्रभव उसे खोजने जंगलमें आया हुआ था उसने कामकी पताकाके समान वधूके साथ सुमित्रको देखा। पापकर्मके उदयसे हेयाहेयको भुलाकर अविवेकी प्रभवने मित्रपत्नीके प्रति मनमें पाप सोचा। सुमित्रने पूछा—कहो मित्र ! खिन्न कैसे हो ? प्रभवने उसकी पत्नीको देखकर जो काम वेदना उत्पन्न हुई थी उसे अपनी खिन्नताका कारण बताया। यह सुनकर कि मेरी पत्नीके निमित्तसे ही मेरा प्राणोपम मित्र दुखी है उसने अपनी पत्नी प्रभवके पास भेज दी। साथ ही प्रभवका घर मालूम कर चुपचाप एक झरोखेके पास यह देखनेके लिये बैठ गया कि देखे यह इसके साथ कैसा व्यवहार करती है। उसने मनमें यह सोच लिया था कि यदि मेरी स्त्री मेरे मित्रके अनुकूल नहीं होगी तो अवश्य उसे मार डालूँगा और अगर यह उसके कहे अनुसार ही उसकी इच्छापूर्तिमें सहायक होगी तो हजार गाँवोंसे उसका सत्कार करूँगा।

रात्रिके समय जब तारे जगमगा रहे थे, वनमाला बड़ी उत्सुकतासे प्रभवके पास गयी। प्रभवने उसे सामने ही स्वच्छ आसनपर बिठाया और बड़े आदरके साथ पूँछा—भद्रे ! तुम कौन हो ? प्रारम्भसे लेकर विवाह तक का उसका परिचय पाकर प्रभव उदासीन हो मनमें सोचने लगा—"हाय, मैंने मित्रकी पत्नीको अनुचित कार्यके लिये मांगा। मुझ अविवेकीको धिक्कार है। आत्मघात किये बिना मैं इस पापसे नहीं छूटूँगा। अथवा अब कलंक युक्त जीवनसे भी क्या लाभ है ?" ऐसा सोच प्रभवने अपना सिर काटनेकी इच्छासे चमचमाती हुयी तलवार म्यानसे निकाली। ज्यों ही वह उसे गलेके पास ले गया कि सुमित्रने तुरन्त ही उछलकर उसे रोक लिया तथा

छातीसे लगाकर कहा—मित्र ! क्या तुम्हें आत्महत्याका पाप नहीं मालूम ? जो इस तरह अवैध तरीकेसे अपने शरीरका घात करते हैं वे चिरकाल तक कच्चे गर्भपातोंका दुःख उठाते हैं। ऐसा कहकर सुमित्रने प्रभवके हाथसे तलवार लेली तथा मनोहर वचनोंसे उसे सन्तुष्ट करता हुआ बोला—मित्र ! परस्परके गुणोंसे बँधी हुयी हमारी तुम्हारी इस मित्रताका अवश्य अन्त होगा। यह संसार असार है, इसमें यह जीव अपने २ कर्मोंसे विभिन्न गतियोंमें दुःख सुख उठाया करते हैं यहाँ कौन किसका मित्र है ?

दूसरे दिन धर्मात्मा सुमित्र मुनि होगया और आयु पूर्णकर ईशान स्वर्गमें इन्द्र हुआ। वहाँसे चयकर इसी जम्बूद्वीपके अन्तर्गत मथुरा नगरीके राजा हरिवाहन तथा रानी माधवीके मधुनामका सुन्दर पुत्र हुआ, जो हरिवंशरूपी आकाशमें चन्द्रमाके समान सुशोभित होता था। तथा मिथ्यादृष्टि प्रभव मरकर कुगतियोंमें दुःख उठाता हुआ राजा विश्वावसु और रानी ज्योतिष्मती-के शिखिश्रुति नामका पुत्र हुआ। और मुनि बनकर निदान पूर्वक तपके प्रभावसे असुरोंका अधिपति चमर नामका देव हुआ। वहाँ अवधि ज्ञानसे अपने पूर्वभवोंको स्मरणकर अपने मित्र सुमित्रके निर्मल गुणोंको याद करने लगा। मित्रके स्मरणने चमरेन्द्रका हृदय दुःखसे छिन्न भिन्न कर दिया। वह मनमें सोचने लगा—"वह महान गुणवान भद्रपरिणामी सुमित्र मेरा प्रगाढ़ मित्र था। प्रत्येक कार्यमें मेरा सहायक रहता था। अब वह मधु हुआ है मैं उसकी रक्षा करूँगा।" इस तरह मनमें सोचकर वह गुणवान युवराज मधुके पास आया और उसे देखकर अत्यन्त विनयके साथ रत्नोंसे उसका सत्कार किया तथा सहस्रान्तिक नामका त्रिशूल रत्न भेंटमें दिया। अस्त्र तथा विद्याओंका अधिपति युवराज मधु त्रिशूलरत्न पाकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ। इतना कहकर गौतम गणधर बोले—हे श्रेणिक ! प्रसङ्गानुसार यह पुण्यका कारण मधुका चरित्र तुम्हें सुनाया है, अब तुम प्रकृत कथा सुनो।

रावणको दिग्विजय करते हुये अठारह वर्षका लम्बा समय भी मालूम नहीं दिया। इसी बीचमें रावणको विजयार्ध पर्वत जीतनेकी इच्छा हुयी। तुरन्त कूंचका डंका बजवाया गया। इधर इन्द्रने दुर्लंघ्यपुरके राजा नलकूबरको विजयार्धके मार्गमें उसकी रक्षाके लिये नियुक्त कर रक्खा था। अतः नलकूबरने जब रावणका आगमन सुना तो सब समाचार निवेदन करनेके लिये दूतको पत्र देकर स्नेहसे इन्द्रके पास भेजा। इन्द्र उस समय सुमेरु पर्वतपर वन्दनाको जा रहा था। दूतने देखते ही साथका पत्र इन्द्रको दिया। इन्द्रने पत्रसे सब समाचार अवगतकर दूतसे कहा—"जब तक मैं सुमेरुकी वन्दना करके लौटूँ तबतक तुम जाकर शत्रुका मार्ग रोकना।" यह कहकर इन्द्र तो सुमेरुकी तरफ चला गया और दूतने अपने नगरमें आकर सब समाचार नलकूबरसे कहे। इसके बाद नलकूबरने नगरके चारों ओर सौ योजन ऊँचा तथा क्रूर जीवोंसे भयङ्कर एक मायामयी विशाल कोट बनवाया। रावणने शत्रुनगरको समीप जानकर उसपर कब्जा करनेके लिये सेनाके साथ प्रहस्त सेनापतिको भेजा। सेनापति उस शालको देखकर रावणके पास लौटा और बोला—देव ! नलकूबरने एक बहुत बड़ा कोट बनाया है। वह सौ योजन ऊँचा है तथा सिंह व्याघ्रादिसे अत्यन्त भयङ्कर है। हम उसे जीतनेमें असमर्थ हैं। न जाने अब क्या होगा। यह सुनकर रावणको चिन्ता हुयी। हे श्रेणिक ! उस समय पुण्योदयसे वहाँ जो कारण बना वह तू सुन—

नलकूबरकी रम्भा नामकी पत्नी रावणके रूपकी प्रशंसा सुनकर उसपर मोहित हो गयी। उसने चित्रला नामकी सखीसे अपने मनकी सब बातें कहीं। सखीने कहा—"देवि ! मैं शीघ्र ही तेरा मनोरथ पूरा करूँगी।" यह कह वह तुरन्त ही रावणके पास कैलाश पर्वतपर जहाँ वह मन्त्रियोंके साथ सभामें बैठा हुआ कोटकी विजय करनेका उपाय सोच रहा था, गई और

जाकर रावणसे बोली—"महाराज ! मैं नलकूबरकी पत्नीकी प्रियसखी हूँ। तुम्हारे दर्शनके लिये तथा कुछ अपने कामके लिये भी आयी हूँ।" इतना कहनेके बाद उसने रावणको एकान्तमें ले जाकर रम्भाकी सारी चेष्टायें विस्तार पूर्वक कह सुनाईं और कहा—आपका नाम रावण है, आप अत्यन्त उदार हैं। अतः कामसे पीड़ित रम्भाको रतिदान दीजिये और भोगकर उसकी संतुष्टि कीजिये। यह सुनकर रावणने कहा—"मैं परस्त्रीसे कभी समागम नहीं करता हूँ। यह बड़ा निन्द्यकर्म है तथा पापका साधन है।" इसके बाद रावणने अपने भाई विभीषणसे इस विषयमें पूछा और दूती द्वारा कही हुयी रम्भाकी चेष्टायें आदि सब बातें बतायी। विभीषणने कहा—इस समय आपको असत्य बोलकर भी दूतीकी सब बातें अंगीकार कर लेना चाहिये। इसके बदलेमें वह (रम्भा) तुम्हें कोटके विजयका उपाय बता देगी। रावणने विभीषणकी सलाह मानकर दूतीका खूब सन्मान किया और कहा कि मैं रम्भाके साथ अवश्य मिलूँगा। लेकिन जंगलमें मिलनेसे आनन्द नहीं आयेगा इसलिये अच्छा तो यही है कि जब मैं दुर्लंध्य नगर पहुंच जाऊँ तब उससे मिलूँ।

रावणकी यह बात सुनकर चित्रमालाने रम्भासे जाकर सब बातें कहीं। कामासक्त रम्भाने तुरन्त शालिका नामकी विद्या रावणको भिजवा दी। रावणके पास विद्याके जाते ही वह मायामयी कोट विलीन हो गया। रावणकी सेना दुर्लंध्यपुरपर चढ़ आयी और युद्धमें नलकूबरको पकड़ लिया। इस तरह नगरपर कब्जा करके रावण वहीं रहने लगा। रम्भा जब रावणके पास गयी तो रावणने पूछा—"देवि ! तुम क्यों ऐसी अभिलाषा करती हो ? पर पुरुषका सेवन करना महापापका कारण है। इसलिये तुम अपने पति नलकूबरपर ही दृष्टि रक्खो।" इतना कहकर रावणने रम्भाके पति नलकूबरको छोड़ दिया और कहा—"देवि ! जाओ तुम अपने पतिके साथ सहवास करो'। रम्भा यह सुनकर लजा गयी और अपने पतिमें ही आसक्त रहने लगी। पति पत्नीमें पहलेसे भी अधिक अनुराग हो गया।

इन्द्रने जब सुना कि रावण बिल्कुल निकट ही आ गया है तो युद्धके लिये चलनेको तैयार हुआ। पहले वह मन्त्रणा करने पिताके पास गया और विनय सहित बोला—"पिता जी ! अपना शत्रु राक्षस रावण बिल्कुल समीप ही आ गया है। अतः बताइये इस समय क्या करना चाहिये। यह जब छोटा था मैं तभी इसे मारना चाहता था। किन्तु उस समय आपने मुझे रोक दिया था। अब तो वह बलवान हो गया है।" पिता सहस्रारने मन्त्रियोंके साथ बैठे हुये इन्द्रसे कहा—पुत्र ! रावणके साथ इस समय सन्धि करना ही ठीक है। अतः बेटी रूपिणीका विवाह रावणके साथ करदो और चक्रवर्ती रावणके साथ स्नेह पैदाकर सुख पूर्वक राज्यका पालन करो। यह रावण भरत क्षेत्रका नया अर्द्धचक्री राजा हुआ है। इसलिये उसके साथ युद्ध करना ठीक नहीं है।"

यह सुनकर इन्द्र कुपित होकर बोला—"पिता ! यह आपने क्या कहा ? मैं दीन बनूँ और अपनी पुत्री उस दुश्मनको देदूँ ?" इतना कहकर इन्द्र वहाँसे उठकर सभास्थलमें आया और देवोंको बुलानेके लिये शीघ्र रणभेरी बजवायी। सभी देव और लोकपाल बड़े गर्वसे आकर इकट्ठे हुये। उन सभीके वीरत्वकी सराहना करता हुआ इन्द्र उनसे बोला—"वीरो ! तुम्हारे रहते हुये आज देवता वंशका क्षय हो रहा है और बड़े २ वीर लज्जासे अपने प्राण छोड़ रहे हैं।"

यह सुनकर रण करनेको तय्यार वीर सुभट देवता गण अपने २ घर गए, जाकर स्त्री पुत्रादिकोंसे युद्धकी आज्ञा ली, सबको क्षमा करा कराया तथा जीवनकी आशा छोड़कर हथियारोंसे सुसज्जित हो, घरसे युद्ध करने निकले। उनके साथ वायुकी तरह शीघ्रगामी शुभ लक्षणोंवाले पहाड़ी घोड़े, शस्त्र सज्जित रथ तथा अनेक प्रकारके विमान थे। रणवाद्य करने वाला पयादोंका समूह था। एवं सबसे आगे चलने वाले ऊँट, व्याघ्र और बैलोंके सवार थे। इस तरह इन्द्र

चतुरङ्ग सेना लेकर युद्ध करने चला। दोनों सेनाओंमें युद्ध प्रारंभ हुआ। देवोंके प्रहारसे राक्षस-सेना दशों दिशाओंमें भागने लगी। अपनी सेनाको कमजोर देखकर राक्षस पक्षके राजा वज्रवेग, प्रहस्त, हस्त, मारीच आदि उठे। उन्होंने देवोंकी सेनाको तितर बितर कर दिया। सेनाका भंग देखकर मेघमाली, तडित्पिङ्ग, ज्वलिताक्ष, अरिसंज्वर, रोचक, चंदन आदि देवता पक्षके योद्धा बड़ी भारी सेना लेकर लड़ने आए। उन्होंने तीक्ष्ण बाणोंसे राक्षस सेनाको जर्जरित कर दिया तथा घेरेमें लेकर कोल्हूकी तरह पीसना शुरु किया। राक्षससेना इससे व्याकुल होने लगी।

वानर वंशके शिरोमणि महेन्द्र सेनके पुत्र प्रश्नकीर्तिने जब राक्षस सेनाका इस प्रकार विनाश देखा तो युद्ध करने उठा और अकेले ही देवताओंकी सेनाको मार भगाया। युद्धमें सब ओर वानरवंशी छा गए जिन्हें देखकर देवता गण हाहाकार करने लगे। समूचे विजयार्द्धपर डरसे आतंक छागया। तब देवता पक्षके अन्य राजागण हथियार ले युद्धके लिये आए। उन्होंने युद्ध-चतुर वानर वंशियोंको भी व्याकुल कर दिया। इतनेमें ही माल्यवानका सुपुत्र महान योद्धा श्रीमाली देवताओंपर चढ़ आया। आते ही उसने देवताओंको पीछे हटा दिया। यह देखकर शिखी, केसरी, दंडाभ, कनक प्रवर आदि युद्धनिपुण इन्द्र पक्षके योद्धा श्रीमालीपर टूटकर आये। आते ही श्रीमालीने क्रोधसे कमलकी तरह उनके सिर काट २ कर पृथ्वी पर बिछा दिये।

देव सेनाका इस तरह विध्वंस देखकर इंद्रका पुत्र जयंत यमकी तरह युद्ध करने उठा। श्रीमाली और जयंतका परस्पर युद्ध होने लगा। वानर वंशी और राक्षस वंशी देवताओंसे भिड़ गये। श्रीमालीने जयंतके मस्तकपर दंडका प्रहार किया। दंडकी चोटसे जयंत मूर्छित हो गया। चंदनादि उपचारसे होशमें आकर वह पुनः युद्ध करने लगा और श्रीमालीपर भिंडमालका प्रहार किया। तेजस्वी श्रीमाली मूर्छित हो पृथ्वीपर गिर पड़ा। जब होशमें आया तो पुनः जयंतके साथ भयंकरतासे युद्ध करने लगा। जयंतने अबकी बार श्रीमालीके वक्षःस्थलपर वज्रका प्रहार किया। वज्रकी चोट खाकर श्रीमाली निष्प्राण होकर भूमिपर गिर पड़ा। श्रीमालीके मरते ही राक्षस सेनामें भगदड़ मच गई। उधर जयंतकी सेनामें जय जयकार होने लगा। राक्षस सेनाको पराजित देखकर इंद्रजीत स्वयं अत्यंत क्रोधसे जयंतके सन्मुख आया। दोनोंमें परस्पर घोर युद्ध हुआ। शूरवीर इन्द्रजीतने बाणोंसे जयंतके शरीरको भेद दिया। पुत्रका खूनसे लथपथ शरीर देखकर इंद्र क्रोधसे स्वयं युद्ध करने मैदानमें आया। इन्द्रको आया हुआ देखकर रावण भी युद्धके मैदानमें उतर पड़ा। दोनोंमें अत्यंत घातक युद्ध हुआ। रावणकी तरफसे कुंभकर्ण, विभीषण, खरदूषण, मारीच, इन्द्रजीत, मेघवाहन, मय, हस्त, प्रहस्त आदि बड़े २ सैनिक युद्ध करते थे। उधर इंद्रकी तरफसे भी श्रीचन्द्र, रत्नचन्द्र, सिंहमुख, व्याघ्रमुख, गजवाहन, रुद्र आदि प्रमुख सैनिक लड़ रहे थे। रावण माली और श्रीमालीका मरण याद कर अत्यंत क्रोधसे युद्ध करने लगा। हाथी हाथीसे, घोड़े घोड़ोंसे, रथ रथसे, पयादे पयादोंसे, विद्याधर विद्याधरोंसे, भूमिगोचरी भूमिगोचरियोंसे भिड़ गये। पृथ्वी और आकाशमें प्राणिविनाशक घोर युद्ध होने लगा। रणभेरियोंसे युद्धभूमि गूँज उठी। योद्धाओंमें कोई घायल होकर गिर गये, कोई बाणोंसे बिंध गये, अनेकों मर गये, किन्हींके दाँत टूट गये, बहुतोंके हाथ कट गये, कोई लँगड़े हो गये, किन्हींकी नाक जाती रहीं, किन्हींके कान कट गये। बहुतोंके सिर कट गये केवल धड़मात्र रह गया तो भी वे शूरवीर हाथमें तलवार लिये हुये लड़ रहे थे। लाठी और घूसोंके प्रहारसे एक दूसरेको मारते थे। योद्धा लोग भाला, तलवार, त्रिसूल, चक्र वज्र गदादिके द्वारा दूसरोंको मारते थे, तथा स्वयं भी उसी प्रकार मरते थे।

स्वामीकी भक्तिके कारण अपनी मृत्युकी परवाह न कर वे लोग बड़े क्रोधसे युद्धमें लड़ रहे थे। उनमें कोई तो मरते समय शुभ ध्यानके कारण स्वर्गमें जाते थे, कोई खोटे परिणामोंसे

नरक जाते थे। कोई समभावोंसे मनुष्य गतिमें जाते थे। आखिरकार कुंभकर्णादि राक्षस-वंशियोंने लोकपालोंको नागफाससे बाँध लिया और पकड़कर अपनी सेनामें ले आये। इधर इन्द्र और रावणका अत्यन्त भीषण युद्ध हुआ। रक्तसे पृथ्वी भर गयी तथा आकाश धूमिल हो गया। हथियारोंकी विद्युत् जैसी चमकसे दिशायें अग्निमयसी प्रतीत होने लगीं। मनुष्य पशु आदिके आघातसे पृथ्वीमें जो गड्ढे हो गये थे वे घोड़ोंके खुरोंसे पृथ्वीके छिल जानेके कारण पुनः भर गये। आकाशमें खड़े हुये देवगण इनका युद्ध देखकर प्रसन्न हो रहे थे। दोनों बड़े रोषसे एक दूसरेको शस्त्रोंसे छेदते थे तथा इस प्रकार बाणोंसे पूर देते थे कि आकाशमें उससे सूर्य तक दिखायी नहीं देता था।

इस तरह पच्चीस दिन तक इन्द्र और रावणका शस्त्रोंसे युद्ध हुआ। इसके बाद २६ वें दिनसे उनमें विद्याबलसे युद्ध होने लगा। रावणने पूर्वपुण्यके प्रभावसे अपनी विद्याओं द्वारा इन्द्रकी सम्पूर्ण विद्यायें छेद डालीं। बदलेमें इन्द्रने भी रण कौशलसे उस महान युद्धमें रावणकी विद्यायें व्यर्थ कर दीं। तब रावणने हाथीसे उछलकर राजा इन्द्रको पकड़ लिया। इन्द्रके पकड़े जानेपर उसकी सेना इधर उधर भाग गयी और रावणकी सेनामें जय जयकार होने लगा। रावणने विजयार्द्धकी दोनों श्रेणियोंको जीता तथा सम्पूर्ण राजाओंको जीतकर सारी पृथ्वी अपने आधीन की। इस तरह तीव्र पुण्यसे तीन खण्डोंको जीतकर रावण चतुरंग सेना सहित लंकाको लौटा। इन्द्र, सोम, यम आदिको नागपाशमें बाँधकर गाजे बाजेके साथ उसने लंकामें प्रवेश किया तथा उन सभी इन्द्रादिकोंको दुःसह कारागारमें बन्द कर बन्धु-बान्धवोंके साथ पुण्योदयसे राज्य करने लगा।

इन्द्रको रावणद्वारा बन्दी बना लेनेपर रथनूपुरकी प्रजाको अत्यन्त दुःख हुआ। वे सब लोग राजमहल आये और इन्द्रके पिता राजा सहस्रारको नमस्कार कर प्रार्थना की कि— "महाराज! राजा इन्द्रको कारागारसे छुड़ाइये।" उनकी प्रार्थना सुनकर सहस्रार मन्त्रियोंके साथ बड़ी नम्रतासे लंकामें रावणके पास आया और रावणने भी मिष्ट वचनोंसे उदारतापूर्वक उसका सन्मान किया। सहस्रार रावणसे कहने लगा—महाराज, आपने इन्द्रको जीत लिया। अब उसे मेरे कहनेसे छोड़ दीजिये।"

रावणने हँसकर कहा—"इन्द्र जब मेरा दास बनकर गाँवके गदहोंकी रखवाली करेगा तब मैं उसे छोड़ दूँगा। इसके अतिरिक्त वायु मेरे यहाँ झाड़ दे, यम पानी भरे, कुबेर मेरे हारकी रक्षा करे, अग्नि रसोयी बनावे तथा सब देवगण घड़ोंमें पानीभर लंकाके बाजारमें छिड़काव करें तभी मैं इन्द्रादिकोंको छोड़ूँगा, अन्यथा नहीं।

देवोंसे जब यह कहा गया तो बेचारे लज्जासे नीचेकी ओर देखने लगे। सहस्रारने कहा— "महाराज! हम आपके आधीन हैं। आप जैसा कहेंगे वैसा ही करेंगे।" यह सुनकर रावणने सन्तुष्ट हो उन सभीको कारागारसे मुक्त कर दिया तथा स्नान भोजनादि कराकर इन्द्रसे कहा कि आजसे तुम मेरे चौथे भाई हो। तुम यहीं लङ्कामें सुखसे रहो और राज्यका सञ्चालन करो। तुम्हारे स्नेहसे मैं रथनूपुर चला जाऊँगा। सहस्रारने कहा—"महाराज, आप कहते हैं सो ठीक है किन्तु जन्मभूमि सभीको प्यारी होती है।" इस तरह कहकर उसने रावणकी खूब प्रशंसा की। तब राक्षस वंशियोंसे क्षमा माँगकर सब देव अपने नगरमें आगये। इन्द्रने लोकपालोंके साथ बड़े गाजे बाजेसे रथनूपुरमें प्रवेश किया। पहलेकी तरह पुनः राज्य भी पा लिया परन्तु मानभङ्गसे अपने जीवनको तुच्छ समझने लगा।

वह एक खम्भेके ऊपर घर बनाकर उसमें बैठ गया तथा एकान्तमें वैराग्य भावनाका इस प्रकार

चिन्तवन करने लगा—इस विनाशीक राज्यको धिक्कार है, पापके बीज इस शरीरको धिक्कार है अतः इनको छोड़कर अब मैं आत्माका साधन करूँगा।

इन्द्र इस प्रकार सोच ही रहा था कि निर्वाणसागर नामके मुनि उस एक खम्भेवाले घरमें जिन प्रतिमाओंकी वन्दनाके लिये पधारे। उन्हें देखकर इन्द्र ठीक आसनसे बैठ गया। दयालु मुनिराज जिन बिम्बको नमस्कारकर वहीं बैठ गये। वैराग्यमें तत्पर इन्द्रने विनयसे मस्तक झुकाकर भक्तिपूर्वक गुरुके चरणोंको नमस्कार किया, उनकी स्तुति की तथा बड़े स्नेहसे सामने बैठकर गुरु मुखसे धर्मश्रवण किया एवं अपने भवांतर पूछे। मुनिराज कहने लगे—

"शिखापद नगरमें एक कुलक्षया नामकी वैश्यपुत्री थी। बचपनमें ही उसके माता-पिता मर गये। वह रोगोंसे पीड़ित रहती और जूठा खाकर अपना पेट भरती थी। मरते समय एक मुहूर्त पहले उसने संन्यास धारण किया। मरकर वह उस नगरमें क्षीरधारा नामकी कुटुम्बिनी (जातिविशेष) हुई। वहाँसे भी मरी तो मणिपुर नगरमें गोमुख और उसकी स्त्री धारिणीके सहस्रभाग नामका कुटुम्बी पुत्र हुआ। उसने सम्यक्त्व ग्रहणकर अणुव्रतोंका पालन किया और अन्तमें समाधिमरण धारणकर शुक्र नामके स्वर्गमें उत्तम देव हुआ। वहाँसे च्युत होकर पूर्व विदेहमें स्थित रत्नसञ्चय नामक नगरमें मणि नामके मन्त्री और उसकी स्त्री गुणवतीके सामन्तवर्द्धन नामका पुत्र हुआ। वहाँ दीक्षा ले शरीर छोड़कर ग्रैवेयकोंमें अहमिंद्र हुआ। अहमिन्द्रोंके सुख भोगकर वहाँसे च्युत हो राजा सहस्रार और उसकी रानी हृदय सुन्दरीके तू पुत्र हुआ। चूंकि तू अहमिन्द्रका पद भोगकर आया था अतः (उसी संस्कारवश) तू यहाँ भी बहुत बड़ी विभूतिका भोग करने वाला इन्द्र बनकर रहा। अब पुण्य क्षीण हो जानेपर स्वभावतः चञ्चला तेरी लक्ष्मी जाती रही। अतः पुनः पापाश्रवका कारण यह दुःख तू क्यों कर रहा है। रावणने युद्धक्षेत्रमें जो तेरा मानभङ्ग किया है उसका कारण मैं तुझे बतलाता हूं तू सावधान होकर सुन—

अरिञ्जयपुरमें विद्याधरोंका राजा अग्निवेग था। उसकी रानी वेगवतीके उदरसे अहिल्या नामकी पुत्री हुई। बड़ी होनेपर जब उसका स्वयम्बर हुआ तो उसमें बहुतसे राजा लोग बुलाये गये। तू भी वहाँ कन्याकी आसक्तिसे पहुंचा तथा चन्द्रावर्तपुरका राजा नन्दमाल भी वहाँ आया। पूर्व पुण्यसे कन्याने उसीके गलेमें वरमाला डाल दी और वह उसे लेकर अपने नगर आ गया। तबसे तू नन्दमालके साथ बैर करने लगा। अतः वह तेरे डरसे तथा वैराग्यके भी कारण मुनि हो गया। एक दिन जब वह रथावर्त पर्वतपर ध्यान कर रहा था तूने उसे देखा और पूर्व वैरके कारण नरकादि देनेवाले बुरे बचन कहे—"अहिल्यासे भोग-विलास छोड़कर अब तू मुनि कैसे बन गया?" इस तरह कहकर तूने मुनिराजको रस्सी लेकर वृक्षके तनेसे बाँध दिया। मुनिराजके भाई कल्याण नामके दूसरे मुनि वहीं पास ही ध्यान कर रहे थे। उन्होंने तेरा यह कार्य देखकर ध्यान छोड़ तुझे शाप दिया—"रे पापी, तैने किस लिये इन मुनिको बाँधा है। जा इस पापसे तू निःसन्तान रहेगा।" इस तरह शाप देकर उन्होंने मुनिको बन्धन मुक्त कर दिया। वहींपर पासमें खड़ी हुई सम्यग्दृष्टिनी तथा साधु सेविका तेरी स्त्रीने मुनिराजको नमस्कारकर उन्हें संबुद्ध किया। मुनिराज उसके सम्बोधनसे शान्त हुये। अगर वह साध्वी उन्हें शान्त न करती तो मुनिराजकी कोपाग्निका उस समय बुझना अशक्य था। ज्ञान और साधुजनका तिरस्कार करनेवाले लोग तिर्यञ्च तथा नरक गतिमें दुख उठाते हैं। अपने उसी पापके फलसे तुझे रावणसे यह अपमान मिला।'

यह सुनकर इन्द्रको वैराग्य हो गया। बड़े पुत्रको राज्य दे लोकपाल तथा अन्य पुत्रोंके साथ इन्हीं निर्वाण सागर मुनिके पास इन्द्रने दीक्षा ले ली। तथा घोर तपश्चरणकर शुक्ल ध्यानके प्रभावसे केवल ज्ञान पा मोक्षपद प्राप्त किया। लोकपालोंने भी दुर्धर तपश्चरणकर सम्पूर्ण

कर्मोंका विनाशकर शुभ ध्यानसे मोक्ष प्राप्त किया। ठीक है धर्मके फलसे मनुष्य राजा, चक्रवर्ती, इन्द्र, धरणेन्द्र, गणधर, तीर्थङ्कर यहाँ तक कि सिद्ध पदको प्राप्त करता है।
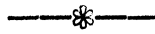
८ अंजना और पवनंजयका समागम

एक दिन रावणने बन्धुबान्धवों सहित सुमेरु पर्वतपर जिनेन्द्र प्रतिमाओंकी बन्दना की तथा लौटते हुए विभक्त पर्वतपर एकत्र बहुतसा जन समूह देखा। रावणने मारीचसे इस भीड़का कारण पूछा। मारीचने बतलाया कि इस सुवर्ण पर्वतपर अनन्तवीर्य मुनिको आज ही केवलज्ञान हुआ है। उनकी बन्दनाके लिये इन्द्र मनुष्य पशु देवता आदि अपनी २ स्त्रियोंके साथ बड़े आनन्दसे आये हैं।

यह सुनकर सम्यग्दृष्टि रावण आकाशसे उतरकर बड़ी प्रसन्नता पूर्वक भगवानकी बन्दना करने आया। इन्द्रादि देवतागण अपने स्थानोंपर बैठे हुये पहलेसे ही हाथ जोड़कर भगवानकी स्तुति करते थे। रावणने भी जाकर भक्तिभावसे भगवानकी पूजा बन्दना की और विद्याधरोंके साथ अपने यथायोग्य स्थानपर बैठ गया।

मनुष्य तिर्यञ्च जब भगवानकी स्तुति कर चुके तो एक शिष्यने भगवानसे पूछा—"प्रभो! सभी लोग धर्म और अधर्मका फल और मुक्तिके कारणोंको जानना चाहते हैं। वह सब आप ही बतला सकते हैं अतः उनका व्याख्यान कीजिये।"

भगवान् श्रेष्ठ शुद्ध गम्भीर तथा परिमित अक्षरोंवाली हितरूप प्रियवाणीमें बोले—यह जीव संसारी और मुक्तके भेदसे दो प्रकारका है। संसारी जीवोंके नरक, तिर्यञ्च, मनुष्य और देव यह चार भेद हैं। इनमेंसे मनुष्य ही व्रत पालते हैं। एकदेश व्रत पशुओंके भी होते हैं किन्तु देव और नारकियोंके व्रत नहीं होते। तिर्यञ्च, मनुष्य और देव जल, इक्षुरस, घी, दूध, और दहीसे भगवान्का अभिषेक करके जिनेन्द्र भगवानकी पूजा करते हैं। जल चन्दनादिक आठ द्रव्योंसे भक्ति पूर्वक भगवानकी पूजा करनेसे स्वर्गकी सम्पदायें मिलती हैं। मुनि और श्रावकोंके भेदसे व्रत दो प्रकारके होते हैं। मुनियोंके व्रत महाव्रत कहलाते हैं और श्रावकोंके अणुव्रत कहलाते हैं। अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, ये पाँच महाव्रत, पाँच समिति तथा तीन गुप्ति यह तेरह प्रकार मुनियोंका चारित्र है। निर्मल सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान, और सम्यग्चारित्र साक्षात् मोक्षके कारण हैं। मोक्षमें अतीन्द्रिय अलौकिक परम सुख होता है। तथा नरक गति तिर्यञ्च गति और मनुष्योंमें अत्यन्त दुःख होता है। किन्तु यह मूर्ख प्राणी दुःखको ही सुख मानकर भोगोंमें लिप्त रहता है तथा सम्यक्त्वरत्नको न पाकर पाँच प्रकारके मिथ्यात्वमें फँसकर पञ्च परावर्तनरूप संसारमें भ्रमण करता है। अतः मिथ्यात्वको छोड़कर सम्यक्त्वको धारण करना चाहिये तथा स्वर्ग मोक्षके सुखोंके लिये व्रतोंका परिपालन करना चाहिये।'

इस तरह भगवान अनन्तवीर्यने समीचीन तत्वका व्याख्यान किया, जिसे सुनकर सभी प्राणी सन्तुष्ट हुये। तथा जो अल्प संसारी थे उन्होंने महाव्रत धारण कर लिये। किसीने अणुव्रत ले लिये और कोई २ सम्यक्त्वी बन गये।

उस समय एक आदमीने रावणसे कहा कि तुम भी इस समय स्वर्ग सुख देने वाले गृहस्थोंके अणुव्रत धारण करो। रावणने कहा—"मेरा मन सदा पापी रहता है इसलिये मैं

कोई व्रत नहीं ले सकता। फिर भी मैं एक नियम लेना चाहता हूँ कि जो स्त्री मुझे नहीं चाहेगी मैं उसके साथ बलात्कार नहीं करूँगा।"

रावणने यह सोचकर कि ऐसी कौनसी स्त्री है जो मुझे न चाहेगी उक्त व्रत ग्रहण करनेका निश्चय किया। इसके बाद मनमें यह ठानकर कि परस्त्री यदि इन्द्राणी जैसी रूपवती भी होगी तब भी उसकी इच्छाके बिना मैं उसे ग्रहण नहीं करूँगा, अपना संकल्प गुरुपर प्रकट किया। गुरूने भी रावणकी इच्छानुसार ही उसे व्रत दिया। साधुसेवामें तत्पर कुंभकर्ण और विभीषणने भी गृहस्थके व्रत अङ्गीकार किये। हनुमान आदिकने भी भगवान अनंतवीर्यके पास अपनी शक्तिके अनुसार व्रत ग्रहण किये। बादमें लोग भगवानको नमस्कारकर अपने २ घर चले गये। रावण भी भाइयों सहित लंका चला गया।

हनुमानका नाम सुनकर श्रेणिकने पूछा—"प्रभो! यह हनुमान कौन है। गौतम गणधरने हनुमानकी कथा इस प्रकार कहना प्रारम्भ किया—

विजयार्द्धकी दक्षिण श्रेणीमें आदित्यपुर नामका नगर है। वहाँके राजा प्रह्लाद व रानी केतुमतीके पुण्यात्मा पवनकुमार नामका पुत्र था। वह जब बड़ा हुआ तो प्रह्लादको उसके विवाहकी चिन्ता हुयी। श्रेणिक! इधर इसी सम्बन्धमें एक दूसरी कथा भी तू सुन। भरतक्षेत्रकी सीमा पर समुद्रके पास आग्नेयकोणमें दन्ती नामके पर्वतपर महेन्द्रपुर नामका नगर था। उसके राजाका नाम महेन्द्र तथा रानीका नाम मनोवेगा था। उनके अरिंदम आदिक सौ पुत्र थे तथा अत्यन्त सुन्दरी अञ्जना नामकी एक पुत्री थी। पिताने कन्याको जवान देखकर मन्त्रियोंको बुलाया और उनसे पूछा कि कन्याका विवाह किसके साथ करना चाहिये। उनमेंसे अमरसागर नामक मन्त्रीने कहा कि रावण अर्द्धचक्री है कन्या उसे प्रदान करना चाहिये। अगर उसे देनेकी इच्छा न हो तो इन्द्रजीत और मेघनाद भी ठीक हैं। समर्थ पुरुषोंके साथ सम्बन्ध करनेसे मनुष्यका आदर होता है। अगर उन्हें भी देना न चाहें तो फिर स्वयम्बर ठीक है। कन्या अपनी इच्छाके अनुकूल किसी सुन्दर वरको चुन लेगी।

अमर सागरकी यह मन्त्रणा सुनकर बुद्धिमान सुमति मन्त्री बोला—रावण तो वृद्ध है और उसके स्त्रियं भी बहुत हैं। इन्द्रजीत या मेघनाथको कन्या देनेसे श्रीषेणके पुत्रोंकी तरह उन दोनोंमें लड़ाई होगी। स्वयंवर करनेमें भी वही हालत होगी जैसी अकंपनकी पुत्री सुलोचनाके स्वयंवर मण्डपमें हुई थी। इसलिये विजयार्द्धकी दक्षिण श्रेणीके कनकपुरके राजा कनकप्रभ तथा उनकी रानी सुमनाके पुत्र विधुत्प्रभको कन्या देना चाहिये।

सुमति मन्त्रीके इस उत्तरको सुनकर संदेहपारग मन्त्री बोला—विधुत्प्रभ सुन्दर तो है परन्तु भोगोंमें निस्पृह है। अठारह वर्षमें वह जिन दीक्षा ले लेगा तथा घोर तपश्चरण कर मोक्ष जायगा। मैंने रत्नद्वीपमें यह बात विद्युत्प्रभके पिताके पूछनेपर मुनिराजके मुखसे सुनी थी। अतः उसे देनेपर कन्या शोभा रहित निराश्रय हो जायगी। इसलिये प्रह्लादके पुत्रको कन्या देना ठीक होगा। वहाँ तुम्हारी पुत्री सुखसे रहेगी।

यह सुनकर राजाने वायुकुमारको ही पुत्री देनेका संकल्पकर मन्त्रियोंको सत्कारपूर्वक विदा किया। इसी बीचमें सुन्दर वसन्त ऋतुका आगमन हुआ। देवतागण जिनेद्र भगवानका अष्टाह्निक महोत्सव मनानेके लिये नंदीश्वर द्वीप गये तथा समस्त विद्याधर राजा उक्त पर्व मनानेके लिये कैलाश पर्वतपर गये। राजा महेन्द्र भी अपने कुटुम्ब सहित भगवानकी पाप-विनाशनी पूजा करने कैलाश पर्वतपर गया। वहत्तर जिन चैत्योंको नमस्कार कर उनकी पूजा की। बादमें बंधुओं सहित एक स्वच्छ शिलापर बैठ गया। प्रह्लाद भी वहाँ भगवानकी वन्दनाके लिये आया

और भगवानकी पूजाकर उसी शिलापर बैठने गया। प्रह्लादके निकट आते ही महेन्द्र प्रसन्नतासे उठ खड़ा हुआ। दोनों बड़े स्नेहसे आपसमें मिले तथा एक दूसरेका कुशल क्षेम पूछकर हर्षित हो उसी शिलापर रत्न कम्बल बिछाकर बैठ गये।

राजा महेन्द्रने प्रह्लादसे कहा—मेरी एक सुन्दर कन्या है उसके विवाहकी समस्या हल नहीं हो रही है। यह तो आप जानते ही हैं कि जिसको पुत्री जैसी शल्य लगी हुयी है उसको सुख कहाँ है ? इसलिये मुझको प्रतिदिन यही चिन्ता रहती है कि मैं कन्या किसे दूँ ? क्या करूँ ? मैंने अपनी सुन्दर कन्याका विवाह आपके रूपवान् पुत्रके साथ करनेका विचार किया है। पुण्योदयसे आप भी यहाँ आ गये हैं अतः अब मुझे किसी प्रकारकी चिन्ता नहीं हैं।

यह सुन प्रह्लादने कहा कि मैं भी अपने सुयोग्य पुत्रकी शादी आपकी लड़कीके साथ करना चाहता हूँ। इस तरह बातचीतकर दोनोंने उसी समय सुपारी चिट्ठी दान दक्षिणा आदिसे वाग्दानकी विधि पूर्ण की तथा गृहस्थाचार्यसे विवाहका मूहूर्त सुधवाकर और तीसरे दिन विवाहकी तिथि निश्चित करके दोनों अपने २ घर चले गये।

दोनों ओरसे विवाहकी तय्यारी होने लगी। इसी बीचमें लोगोंके मुखसे अञ्जनाके रूप और यौवनकी प्रशंसा सुनकर पवनकुमार कामसे पीड़ित हो गया। यहाँतक कि कामकी दसों दशायें उसे सताने लगीं। पहली दशामें वह विषयातुर हुआ, दूसरीमें उसे (अञ्जना) देखनेकी इच्छा हुई, तीसरीमें वह दीर्घ निःश्वास लेने लगा, चौथीमें ज्वर हो गया, पाँचवींमें सुगन्धित पदार्थोंमें अरुचि रहने लगी, छठीमें भोजन विषकी तरह प्रतीत होने लगा, सातवींमें उसकी (अञ्जनाकी) कथावार्तामें ही आसक्त रहने लगा, आठवींमें उन्मत्तकी तरह रहने लगा, नवमींमें मूर्च्छा आ गयी और दसवींमें अत्यन्त दुखी रहने लगा। धीर-वीर होनेपर भी पवनकुमारका मन अञ्जनाको देखनेके लिये इतना आतुर था कि उसे कहीं भी अच्छा नहीं लगता था।

उसको इस प्रकार सुस्त तथा चिन्तासे व्याकुल देखकर उसके मित्र प्रहस्तने उससे इस उद्वेगका कारण पूछा। पवनकुमारने कहा—मित्र ! तुम्हारे सामने शर्मकी क्या बात है। मैं रूप और लावण्यसे पूर्ण कुमारी अञ्जनाको देखना चाहता हूं।" प्रहस्तने कहा—'आजसे तीसरे दिन तुम्हारा विवाह ही हो रहा है अतः उस समय तुम स्वयं ही अञ्जनाको देखोगे।' पवनजयने कहा—'तीन दिन निकलेंगे तबतक तो मैं मर ही जाऊँगा।' प्रहस्तने कहा—अगर यह बात है तो आज रातको ही मैं तुम्हें उसे दिखाने ले चलूँगा। इस समय तुम शान्त रहो। इस तरह दोनों मित्रोंके वार्तालाप करते २ उपकारी मित्रकी तरह सूर्य अस्त हो गया।

जब चलनेका समय हुआ तो पवनकुमार बड़े उत्साहसे बोला—"मित्र ! उठो, अञ्जनाको देखने चलें।" दोनों मित्र उठकर आकाश मार्गसे चले और शीघ्र ही महेन्द्रपुर नगरमें अञ्जनाके घर पहुंचे। वहाँ सातवीं मंजिलपर झरोखेके पास बैठकर उन्होंने चन्द्रमुखी अञ्जनाको देखा कि वह रूप और सौन्दर्यकी राशि है, उसके स्तन कलशके समान उन्नत है, रङ्ग स्वर्ण जैसा है, कला और विज्ञानमें पारङ्गत है, सोलह शृङ्गार किये हुये है तथा अत्यन्त मनोज्ञ हैं। उसे देखकर पवनकुमारको मनमें सन्तोष हुआ। उसी समय वसन्तमाला नामकी सखी अञ्जनासे आकर कहने लगी—पुत्री, तू धन्य है कि तुझे धर्मात्मा, विद्वान, रूपवान तथा गुणी पवनकुमार जैसा श्रेष्ठ वर मिला है, उसकी गोदमें जाकर तू खूब आनन्द करना।' यह सुनकर अञ्जना अनुरागपूर्ण चित्तसे लज्जित हो नीचे देखने लगी। इतनेमें ही मिश्रकेशी नामकी दूसरी सखी वसन्तमालासे बोली—'वसन्तमाला, तुमने अञ्जनासे यह क्या कहा ? पुण्यवान तो यह तब होती जब इसे विद्युत्प्रभ जैसा वर मिलता। वह सुन्दर, विद्यावान तथा पति बननेके योग्य

सम्पूर्ण गुणोंसे युक्त है। एक घड़ी भर भी उसके साथ यह भोग भोगती तो अच्छा था। उसके बाहुपाशमें यह सोनेमें रत्नकी तरह शोभित होती। विद्युत्प्रभ और पवनकुमारमें उतना ही महान अन्तर है जितना मेरु और सरसोंमें तथा समुद्र और गोखुरसे हुये गड्ढेमें है।"

इन दोनों सखियोंकी बातोंको वीर पवनकुमार झरोखेमें बैठा सुन रहा था। मिश्रकेशीके इन निष्ठुर वाक्योंको सुनकर वह क्रोधसे बाण खींचकर अञ्जनाको मारनेके लिये उठा और कहने लगा—इस परपुरुषरत दुष्टाको मैं अभी मारता हूं। इसका प्रेमी विद्युत्प्रभ आवे और इसे अपने पराक्रमसे बचा ले। इसका मुझसे स्नेह नहीं है, विद्युत्प्रभसे है अतः इस पापिनीको अब अवश्य ही मार डालूँगा।' यह देखकर प्रहस्तने मित्रको हाथसे पकड़ लिया और कहा—स्त्रीका वध महापापका कारण और नरक पहुंचाने वाला है। चलो उठो, अपने घर चलें। इस तरह बात-चीत करते हुए वे दोनों अञ्जनाके साथ वैर बाँधकर वहाँसे चले आये। जाते-आते हुये उनको किसीने नहीं देखा।

घर आकर विरक्त हो पवनकुमार सोचने लगा—"पर पुरुषमें रत रहने वाली इस स्त्री-पर्यायको धिक्कार है। पापकी खान ये स्त्रियाँ कुपित हो माता पिता गुरु भाई आदिको भी मार देती हैं और पर पुरुषमें आसक्त रहती हैं।" इस तरह सोचते २ सुबह हो गया। वह क्रोधसे अपने मित्रसे बोला-प्रहस्त सेना तय्यार करो अञ्जनाके नगरपर चढ़ायी करूँगा।' यह सुनकर मित्रने रणभेरी बजवायी। भेरीका शब्द सुनकर सैनिक विद्याधर इकट्ठे हो गये। पवनकुमार उनके साथ महेन्द्रपुरकी ओर चला। नगरके समीप पहुंचकर पुनः रणभेरी बजवायी। उसे सुनकर महेन्द्रपुरमें कोलाहल मच गया। राजा महेन्द्र भी "क्या हुआ क्या हुआ" कहकर पूछने लगा। इतनेमें ही एक मनुष्यने आकर पवनकुमारके आक्रमणकी खबर दी। यह सुनकर अञ्जना मनमें सोचने लगी—"अरे! इस मिश्रकेशीने मेरे लिये यह क्या अनर्थ पैदा कर दिया। इसके दुष्ट बचन सुनकर ही मेरा पति क्रोधित हुआ है। इस वैरिनने ही यह वैरका कारण पैदा किया है। धर्मबुद्धिसे मेरा पति जब शान्त होगा तभी मैं भोजन करूँगी अन्यथा मेरे उपवासकी प्रतिज्ञा है।"

इधर राजामहेन्द्रने नगरकी रक्षाका काम अपने सैनिकोंको सौंपकर शीघ्र ही एक दूत प्रह्लादके पास भेजा। दूतके मुखसे सब समाचार सुनकर प्रह्लाद शीघ्र ही वहाँ आया। और अपने पुत्रसे कहने लगा—पुत्र! आखिर इस शत्रुताका कारण क्या है? किसने तुम्हें यह प्रेरणा दी है? शांत रहो अब दया करो।" इत्यादि बचनोंसे पिताने पवनकुमारको बहुत समझाया। महेन्द्रने आकर कुमारके दोनों पैर पकड़ लिये। कुमारने भी इनके गौरवकी रक्षाके लिये उनका कहना मान लिया और मनमें कहा कि विवाह करनेके बाद उस दुष्टाको मैं जन्म-भरके लिये छोड़ दूँगा जिससे दूसरेके साथ भी वह विवाह न कर सके और सदा पुरुषके सहयोग सुखको तरसती रहे। उसने अपना यह इरादा अपने मित्रसे भी कह दिया। मित्रने उसके इस निर्णयकी प्रशंसा की और कहा कि मैंने भी यही सोचा था।

पतिको युद्धसे निवृत्त देखकर अंजनाको खुशी हुई। समयानुसार उन दोनोंके विवाहका कार्य चालू हुआ। अंजनाका कोमल हाथ भी कुमारको आग जैसा प्रतीत हुआ। विवाहका मांगलिक कार्य जब विधि-विधानपूर्वक संपन्न हो गया तो दोनों पक्षोंमें खूब हर्ष-ध्वनि हुयी। अनेक वृक्ष लता फल फूलोंसे शोभायमान उस वनमें वे एक महीने तक बड़े आनन्दसे रहे। परस्पर एक दूसरेका सम्मान किया। बादमें मिष्ट भाषण करते हुये एक दूसरेके वियोगसे कुछ दुखी हो वहाँसे अपने २ स्थानको विदा हो गये।

घर आकर पवन कुमारने अंजनाको राजमहलके एक एकान्त स्थानमें रख दिया। वह

उससे न बात करता था न उसे देखता था। पति वियोगके दुःखसे अंजना रातको भी नींद न लेकर रोती ही रहती। 'पवन पवन' कहकर उसकी याद करती। हाथपर गाल टेककर दीर्घ निःश्वासें लेती। यहाँ तक कि उसने स्नान पान लेपन आदि भी छोड़ दिया। दुःखके मारे भोजनके समय भोजन भी नहीं करती थी। "पतिने मुझे बिना अपराधके ही छोड़ दिया है यह कह अत्यन्त विलाप करती थी। उसके विलापको सुनकर घरके सभी लोग दुखी होते, मनमें सोचते कि अञ्जनाने कौनसा ऐसा पाप पूर्व जन्ममें किया है कि पवनकुमार उससे स्नेह पूर्वक बात भी नहीं करता। अथवा यह पवनकुमारके ही भोगान्तरायका फल है कि वह संसारके सुखदायक भोगोंके होते हुये भी उन्हें नहीं भोग सकता। इस तरह प्रह्लादकी तरफके लोग कार्यको असाध्य देखकर अत्यन्त चिन्तातुर हो उठे।

इतनेमें ही रावणका अभिमानी तथा महान बली वरुणके साथ विरोध हो गया। रावणने वरुणके पास दूत भेजा। दूतने वरुणसे कहा—"वरुण, विद्याधरोंके अधिपति श्रीमान् रावणने तुमको यह कहला भेजा है कि या तो तुम उन्हे जाकर प्रणाम करो या फिर युद्धके लिये तय्यार हो जाओ।"

स्वभावसे ही गम्भीर वरुणने हँसकर कहा—दूत, यह रावण कौन है ? क्या करता है ? जाकर कहदो कि मैं वह इन्द्र नहीं हूँ जिसकी संसार बुराई करता था। न मैं वैश्रवण हूं, न सहस्ररश्मि, मरुत अथवा यम हूं जो रावणसे दब जाऊँगा। उसे देवाधिष्ठित रत्नोंका अभिमान है तो रहे। वह उन्हें लेकर आवे। उसका सारा अहङ्कार चूर कर दूँगा। और तू जो यहाँ इस प्रकार बोल रहा है उससे मालूम पड़ता है कि तेरी मृत्यु भी निकट आ गई है।

दूतने जाकर रावणसे वरुणकी सारी बातें कह सुनाई। रावण अत्यन्त क्रोधसे समुद्र समान सेना लेकर वरुणके नगरपर चढ़ आया और प्रतिज्ञा की कि इसे देवोपनीत शस्त्रोंके बिना ही या तो भगा दूँगा या मृत्युमुखमें पहुंचा दूँगा। रावणका आगमन सुनकर वरुणके पुत्र राजीव पुण्डरीकादिक बड़े क्रोधसे सुसज्जित हो युद्धके लिये निकले। दोनों सेनाओंमें घोर युद्ध हुआ। परस्परके आघातसे एक दूसरेके शस्त्र छिन्न भिन्न होकर गिर पड़े। हाथी हाथियोंसे, घोड़े घोड़ोंसे रथ रथोंसे भिड़ पड़े। बड़े २ सुभट लाल २ आखेंकर होठ डसते तथा गम्भीर गर्जना करते हुये एक दूसरेसे जूझ पड़े। बड़ी देर तक संग्राम करनेके बाद रावणकी सेनाने वरुणकी सेनाको कुछ पीछे ढकेल दिया। सेनाको पीछे हटते देख वरुण क्रोधसे भयंकर प्रलय कालकी अग्निके समान लड़ती हुयी राक्षस सेनापर टूटकर आया। वरुणके वेगको दुर्निवार देखकर रावण अपनी सेनाको पीठ पीछेकर वरुणके सन्मुख लड़नेको उद्यत हुआ। इधर शत्रुका विनाश करने वाले वरुणके पुत्र भी पितासे प्रेरणा पाकर पुनः युद्ध करने लगे। रावणने क्रोधसे भोंहें टेढ़ीकर जब तक धनुष उठाया तब तक वरुणके पुत्रोंने खरदूषणको जो बिना किसी खेदके बहुत देरसे युद्ध कर रहा था, पकड़ लिया। खरदूषणके पकड़े जानेपर रावणको चिन्ता हुयी। उसने विचारा—"इस समय युद्ध करना ठीक नहीं है। युद्ध जारी रहनेपर खरदूषणका मरण सम्भव है अतः इस समय युद्धको बन्द कर देना ही उचित है।"

इसके बाद रावणने अपने बुद्धिमान मन्त्रियोंसे सलाहकर अपने आधीन राजाओंके पास दूर देशोंमें दूत भेजे और पत्र लिखकर उनसे यह कहला भेजा कि वे अपनी सम्पूर्ण सेना सहित शीघ्र युद्धमें शामिल होवें। रावणका एक दूत प्रह्लादके पास भी पहुंचा। प्रह्लादने स्वामीभक्तिके कारण दूतका यथोचित आदर किया और पूछा—"रावण कुशलक्षेमसे हैं ?" दूतने "हाँ सब कुशल क्षेम है" कहकर विनय सहित पत्र प्रह्लादके सन्मुख रख दिया। प्रह्लादने वह पत्र स्वयं उठाकर शिरसे लगाया और उसे इस प्रकार पढ़ने लगा—"श्रीमान्

महाराज रावण प्रह्लादको यह सूचना देते हैं कि वे सेना सहित वरुणको जीतने जा रहे हैं। अतः जिस प्रकार और विद्याधरोंने युद्धमें सहयोग दिया है उसी प्रकार राजभक्तिके नाते तुम भी आकर इस युद्धमें सहयोग करो।" पत्र पढ़कर प्रह्लादने उसे पवनकुमारको भी पढ़नेके लिये दिया। और मन्त्रियोंसे सलाहकर स्वयं युद्धमें जानेकी तैयारी करने लगा।

पिताको युद्धमें जाते देख पवनकुमार हाथ जोड़ घुटने टेककर बोला—तात, मेरे रहते हुये आपका युद्ध करने जाना ठीक नहीं। पिताके पुत्रको पालनेका अर्थ यही है कि पुत्र पिताकी परिचर्या करे। अतः अगर इस समय मैं आपकी सेवा नहीं करता हूँ तो इसका अर्थ यह है कि मैं आपके हुआ ही नहीं। इसलिये युद्ध करनेकी आप मुझे ही आज्ञा प्रदान करें।' पुत्रकी यह बातें सुनकर पिताने कहा—"बेटा तू अभी बालक है, युद्धके घाव तुझे झेलने नहीं पड़े हैं। अतः तू ठहर। मैं ही युद्ध करने जाता हूँ।" पिताके वचन सुनकर पवनकुमार सुमेरु तटके समान वक्षस्थल फुलाकर बड़े तेजसे बोला—पिता, मेरी शक्तिकी परीक्षा यही है कि मैं आपका पुत्र हूँ। संसारको जलानेमें चिनगारीकी शक्तिकी परीक्षा भी क्या की जाती है? आपकी आज्ञा और आशीर्वादसे मैं इन्द्रको भी पराजित कर सकता हूँ।'

इस तरह कह और प्रणाम कर तेजस्वी पवनकुमारने वहाँसे उठकर स्नान भोजनादि किया। बड़ी विनय सहित बड़े जनोंका आशीर्वाद ग्रहण किया, मंगलाचार हुये तथा भावपूर्वक सिद्धोंको नमस्कार कर माता पितासे आज्ञा लेने गया। माता पिताने अमंगलके डरसे आँसू बीचमें ही रोककर पुत्रको आशीर्वाद दिया तथा उसका मस्तक चूमा। इसके बाद अन्य सभी बन्धु बान्धवोंका अभिवादनकर तथा अपनेसे छोटे परिजनोंको सान्त्वना देकर वहाँसे विदा हुआ। चलते समय स्वभावतः कुमारका दाहिना पाँव पहले उठा तथा दाहिनी भुजा फड़कने लगी। सामने ही पत्तोंसे ढके पानीसे भरे हुये कलश देखे तथा ज्यों ही घरसे निकले कि द्वारपर खम्भेके सहारे खड़ी हुयी रोती अञ्जनाको देखा।

पान छोड़ देनेके कारण उसके ओठ सफेद हो रहे थे। वह उस समय ऐसी मालूम पड़ती थी मानो उसी खम्भेमें उकेरी गयी पुतली है। अञ्जनाको देखते ही कुमारने अपनी दृष्टि हटाली तथा अत्यन्त क्रोधसे बोला—"दुरीक्षणे, चल हट यहाँसे दूर हो। तेरा देखना भी मुझे उल्काके समान सह्य नहीं है। बड़े कुलकी लड़की होकर तेरी यह ढीठता कि तू मना करने पर भी निर्लज्ज होकर सामने खड़ी है।" कुमारके यह अतिक्रूर बचन भी अञ्जनाको पति स्नेहके कारण ऐसे प्रिय लगे जैसे बहुत देरके प्यासेको अमृत लगता है। अञ्जना हाथ जोड़ चरणोंकी ओर दृष्टिकर बड़ी कठिनता पूर्वक अवरुद्ध कण्ठसे बोली—"नाथ! आपके द्वारा परित्याग कर दिये जाने पर भी अब तक तो मैं आपको देखकर जीती थी किन्तु अब आप जब दूर जा रहे हैं तब आपके वचनरूपी अमृतके आस्वादन बिना मैं कैसे जिन्दा रहूंगी? आपने चलते समय घरके पशु पक्षियों तकसे भी बड़े स्नेहसे बात चीत की किन्तु मुझे, जो आपके बिना दुखी है और आपमें ही अनुरक्त है, आपने किसी औरके द्वारा भी कुछ नहीं कहलवाया। नाथ, जब आपने मुझे छोड़ दिया है तब संसारमें मेरा कोई शरण नहीं है, अथवा मृत्यु ही मुझे शरण है।"

यह सुनकर पवन क्रोधपूर्वक बोला—'जा मरजा।' पतिके यह बचन सुनकर अञ्जना दुखी हो पृथ्वीपर गिर पड़ी। निर्दयी कुमार तुरन्त ही सामन्तोंके साथ हाथीपर सवार होकर बहुत बड़ी सेना लेकर युद्धके लिये चल दिया। पहले ही दिन मानसरोवरके तटपर पड़ाव डाला। वहीं विद्यासे एक मायामयी महल बनाया और उसके सातवें खनपर बैठकर तालाबमें पक्षियोंकी क्रीड़ा देखने लगा। संध्या समय कामसे व्याकुल एक चकवीको तालाबके किनारे देखकर कुमारने मित्रसे उसकी व्याकुलताका कारण पूछा। मित्रने कहा—"रात्रिमें पतिसे इसका वियोग हो गया है

इसीलिये यह व्याकुल हो रही है।" यह सुनकर कुमार कहने लगा—रात्रभरके वियोगसे जब यह चकवी इतना रुदन कर रही है तब अञ्जनाको तो मुझ पापीने बाईस वर्षसे छोड़ रक्खा है। उसको न जाने कितना दुख हो रहा होगा। निश्चयसे मुझमें अनुरक्त रहनेके कारण ही वह अब तक प्राणधारण किये हुये हैं। अगर वह मेरे वियोगसे मरगई तो इसका पाप मुझपर होगा। अतः हे मित्र! अब मैं उसके पास जाऊँगा और उससे क्षमा माँगनेके बाद ही युद्ध करने जाऊँगा।"

प्रहस्तने कहा—अब तुम लौटकर जाओगे तो हँसी होगी। लोग कहेंगे कि युद्धसे डरकर बीचमें ही चला आया है। पवनकुमार बोला—तो मित्र! अब तुम्हीं बताओ क्या करना चाहिये? क्योंकि उसके विरहसे मैं इतना दुखी हूँ कि अब निश्चयसे बच न सकूँगा। प्रहस्तने कहा—अच्छा इस समय ठहर जाओ। रातको तुम्हें सुमेरुकी बन्दनाके बहाने अञ्जनाके पास ले चलूँगा।

इतनेमें ही रात हो गयी। उद्धार नामके सेनापतिको सेनाका भार सौंपकर और यह कह-कर कि हम लोग मेरुकी बन्दनाको जा रहे हैं, वे दोनों मित्र पुष्पमालादि लेकर वहाँसे चले और शीघ्र ही अंजनाके महलपर आये। पवनकुमारको द्वारपर खड़ाकर प्रहस्त महलके भीतर गया। दीपकके धुंधले प्रकाशमें प्रहस्तको देखकर अंजना डरसे बोली—"कौन है! कौन है!!" प्रहस्तने अंजनाको अपना नाम बताते हुये नमस्कार किया और पवनकुमारके आगमनके सुखदायक समाचार कहे। पतिका आगमन सुनकर अंजना बोली–"भाई! तुम क्यों हँसी करते हो? दैव ही मुझपर हंस रहा है यही बहुत है। मुझ अभागिनीके घरमें वे कैसे आ सकते हैं? तुम तो यह अनहोनी सी बात कह रहे हो।" प्रहस्त बोला—सुन्दरी! दुःख मत करो। सचमुच तुम्हारे स्नेहसे पवनकुमार आये हैं। अब तुम सदा सुखी रहोगी। यह सुनकर अंजना प्रसन्न होकर बोली—आपके बचन सत्य हैं तो मैं आज प्राणनाथका दर्शन करूँगी। मेरा तो जो कुछ शुभ है वह पवनकुमारके प्रसादसे ही है। यह कहकर अंजना रोती हुई स्नेहसे ज्यों ही उठी कि सामनेसे पवनकुमार आते हुये दिखाई दिये। स्वप्नके समान उन्हें देखकर अंजना उनके पैरोंपर गिर पड़ी। पवनंजयने अपने कोमल हाथोंसे अंजनाके दोनों हाथ पकड़कर उसे ऊपर उठाया और हँसते हुये उसके साथ शयनागारमें चले गये। अंजनाकी सखी बसंतमाला पवनको नमस्कारकर तथा उससे बातचीत कर दूसरे कमरेमें चली गयी। प्रहस्त भी इधर उधर हो गया।

पवनको चुप देखकर अंजना बोली—नाथ, जो कुछ हुआ सो हुआ। उसमें आपका कुछ दोष नहीं था। सब मेरे ही कर्मोंका दोष था। अब आप पिछली बातें याद न कर आनन्दसे शयन करें। यह सुनकर पवन अंजनाके पैर छूनेको उद्यत हुआ। अंजनाने बीचमें ही रोककर पवन-को पुनः बैठा लिया। इसके बाद दोनों में खूब प्रेमालिगन हुआ। काम क्रीड़ा करते हुये प्रभात हो गया। तब मित्रने पवनको जगाया और कहा—चलो अब रणको चलें। वहाँसे लौट कर पुनः पत्नीके साथ निश्चिन्त होकर आनंदसे रहना। पवनकुमार अंजनासे पूँछकर चलने-को तैयार हुआ। अंजना हाथ जोड़कर कहने लगी—नाथ! मैं अभी ऋतुमती हो चुकी हूं, इसलिये मुझे गर्भ अवश्य रह जायगा और आप मुझसे अब तक बोलते नहीं थे। इसलिये मेरा अपवाद होना सम्भव है। अतः आप यह बात अपने माता पितासे अवश्य कह जांय, क्योंकि ऐसी बातोंमें दूरदशिता रखना ही श्रेयस्कर है। पवनंजय बोले—"देवि! पहले तो मैं तुमसे बिना मिले ही माता पितासे विदा हो गया था। अब तुमसे मिलनेके समाचार कहनेके लिये मैं उनके पास जाऊँ तो इसमें मुझे लज्जा आती है। दूसरे मेरी इस प्रकारकी दुतरफी चेष्टा देखकर लोग मेरी हँसी उड़ायेंगे। इसलिये जब तक तुम्हारा गर्भ प्रकट नहीं होता तब तक मैं शीघ्र ही लौट-

कर आता हूं। तुम किसी प्रकारकी चिन्ता न करना। इस बीचमें तुम्हारा किसी प्रकार अपवाद न हो, इसके लिये मैं अपने नामकी यह अँगूठी तुम्हें दिये जाता हूँ, इससे तुम्हारा कल्याण होगा।

इस तरह अँगूठी दे तथा अंजनाको पुनः २ धैर्य बँधाकर पवनकुमारने वसन्तमालासे कहा कि तुम अपनी सखीकी खूब सेवा करना। उसने चलते समय अंजनाको छातीसे लगाया, उसका मुँह चूमा तथा उससे पूछकर शीघ्र ही मित्रके साथ घरसे निकल चला।
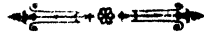
९. हनुमानका जन्म

कुछ दिनोंके बाद अंजनाको गर्भ प्रकट हुआ। उसकी सास केतुमतीने अंजनासे गर्भका कारण पूछा तो अंजनाने विनयपूर्वक पतिके लौटकर आनेकी पिछली सारी बातें कह सुनाई। यह सुनकर केतुमती क्रोधसे बोली—"भ्रष्टे! मेरा लड़का तेरे पास कहांसे आया! वह तो तुझसे बोलता तक नहीं है।" अंजनाने तब पतिके नामकी मुद्रिका दिखाते हुए कहा—"देखो! यह तुम्हारे पुत्रकी अंगूठी है?" केतुमतीने कहा—"धूर्ते! पुत्रकी अंगूठी तूने चुरा ली है या मन्त्र शक्तिसे अपने पास बुला ली है।" अंजना बोली—"आपको सन्देह है तो बसंतमालासे पूछ लें।" केतुमतीने कहा—"वह तेरी कुटनी है।" इतना कहकर उसने क्रूर नामके नौकरको आवाज दी और कहा—अंजनाको विमानमें बिठलाकर महेन्द्रपुरके पास उद्यानमें छोड़ आओ। देखो, यह बात कोई जानने न पाए।

आज्ञा पातेही क्रूर विमान ले आया और अंजनासे बोला देवि, इसमें आप शीघ्र बैठ जायें क्योंकि रानी केतुमतीने सूर्यास्तसे पहलेही आपको सखी सहित महेन्द्रपुर छोड़ आनेको कहा है। अंजना सासकी आज्ञा स्वीकार कर सखी सहित दुखी होकर विमानमें बैठ गई। क्रूर उन्हें महेन्द्रपुरके उद्यानमें ले गया और यह कहते हुए कि देवि, राजाज्ञासे ही मुझ पापीने आपको यह दुख दिया है, उन्हें विमानसे उतार कर लौट आया।

अंजना शोकाकुलित होकर कर्मोंकी विचित्रताको याद करती हुई विलाप करने लगी। वसन्तमालाने उसे धैर्य बंधाया और कहा कि सुबह होने पर पिताके घर चल कर हम सुखसे रहेंगे। सखीके बचनोंसे कुछ सांत्वना पाकर अंजना अपने नीचे घास बिछाकर लेट गई। लेकिन रात भर नींद न आयी। बसंतमालाने थकावट दूर करनेके लिये उसके हाथ पैर दबाये। सांत्वनाभरे वचन कहे। आखिर बड़े दुःख और शोकसे अंजनाने जैसे-तैसे रात बिताई।

प्रभात हुआ अंजनाके दीर्घ और उष्ण निःश्वासोंसे घास और पत्तोंका बिछौना झुलस गया। अंजना उस बिछौनेंसे उठी और अनेक प्रकारकी शंकाओंसे व्याकुल होती हुई पिताके घरकी ओर चली। सखी बसंतमाला छायाकी तरह उसके पीछे २ चल रही थी। धीरे २ पिताका घर आ पहुँचा। लोगोंने अंजनाको देखा। दुःखके कारण उसकी सूरत ही बदल गई थी। अतः ज्योंहीं वह घरमें घुसने लगी कि द्वारपालने उसे कोई और समझकर रोक दिया। तब बसंतमालाने द्वारपालसे सारा वृतान्त कहा। द्वारपाल, जिसका नाम शिलावट था, द्वार पर किसी औरको खड़ाकर राजाके पास गया और नमस्कार करके बड़ी विनयसे पुत्रीके आगमनके सारे समाचार कहे। राजाने यह समाचार सुनते ही पासमें ही बैठे हुए अपने प्रसन्नकीर्ति नामक पुत्रसे कहा—'जाओ बड़ी धूमधामके साथ अंजनाको नगरमें ले आओ, सम्पूर्ण नगरकी शोभा करो,

सवारियां तय्यार करो। मैं स्वयं भी उसके स्वागतके लिये चलूंगा।' द्वारपालने तब वास्तविक परिस्थिति सामने रक्खी। राजाको पुत्रीका यह लज्जाजनक कार्य सुनते ही क्रोध उमड़ आया। प्रसन्नको तत्काल आज्ञा दी कि इस पापिनीको शीघ्र नगरसे निकाल आओ। इसका चरित्र सुनकर मानों मेरे कानोंपर वज्रका प्रहार हुआ है। राजाकी यह कठोर आज्ञा सुनकर उनका स्नेही महोत्साह नामका सामंत बोला—"आप अपनी पुत्रीके प्रति ऐसा व्यवहार न करें। बसंतमालाने द्वारपालसे जो कुछ कहा है उससे तो वह घृणाकी पात्र साबित नहीं होती। उसकी सास केतुमती क्रूर और कानोंकी कच्ची है। मालूम होता है उसने विना विचारे इस निरपराधिनीको छोड़ दिया है। सास और पतिके द्वारा तिरस्कृत होकर वह पिताकी शरणमें आई है और अब पिताभी उसे छोड़ रहा है तो वह बेचारी कहां जायगी।"

किन्तु सामंतके बहुत कुछ कहनेपर भी राजाके मनको एक न लगी। राजा बोला-मैंने यह बात पहले ही सुन रक्खी थी कि पवनकुमारने इसे छोड़ दिया है। अतः निश्चित ही इसका शील दूषित है। इस लिए अब दूसरा भी अगर कोई इसे सहारा देगा तो मैं उसे मरवा डालूंगा ऐसा मैंने निश्चय कर लिया है। इस प्रकार क्रोधित होकर राजाने अत्यंत दुखी अंजना और उसकी सखीको चुपचाप घरसे बाहर निकाल दिया।

वहांसे निकलकर अंजना अपने जिन कुटुंबियोंके घर गई उन सभीने राजाकी आज्ञा सुनकर अपने २ किवाड़ बन्द कर लिये। जब क्रुद्ध होकर पिता ही निरादर करता हो तो उसके आज्ञानुवर्ती अन्य लोगोंसे सम्मानकी क्या आशा की जा सकती है। ऐसा मनमें सोचकर सब जगहसे निराश हो रोती हुयी अंजना सखीसे बोली:—मा! हमारे दुर्भाग्यसे यहांके सभी लोगोंका हृदय पत्थरका हो गया है। अतः यहां फिरनेसे क्या लाभ? चलो वनमें ही चलें वहीं जैसा कुछ होगा करेंगे। अपमानके दुखसे तो मरना ही अच्छा है।

इस तरह कह कर वह सखीके साथ बनको चली। दुखी अंजना उस समय ऐसी मालूम पड़ती थी मानों सिंहसे भयभीत हिरनी हो। मार्ग चलनेसे थक कर वह रोती हुई एक शिला-पर बैठ गई तथा अत्यंत शोकसे बाएं हाथपर मुंह रखकर विलाप करने लगी:—माता! तू मुझे जंगलमें छोड़कर कैसे निश्चिन्त हो गई। हाय पिता! तुम निर्दयी बनकर अब मेरी रक्षा नहीं करते! हाय भाई! तैंने तो मुझे बड़ी प्रसन्नतासे बचपनमें खिलाया था। हाय! पिता प्रल्हाद तुम भी मुझे जंगलमें छोड़कर किस प्रकार सुखसे रह रहे हो। हाय! सासु केतुमती! तुम्हें मुझपर दया क्यों नहीं आती? हे नाथ! मुझे छोड़कर तुम रावणके पास कैसे चले गये? हे जगत्‌के स्वामी जिनेन्द्र प्रभु! क्या कर्म मुझे इसी तरह दुख देते रहेंगे? हे गुरु सब जीवोंके रक्षक! मेरी रक्षा करो। इस तरह बहुत प्रकारसे अंजनाने विलाप किया। अंजना जैसे २ विलाप करती बसंतमाला भी वैसे २ शोकाकुलित होकर रुदन करती। उनके विलापसे पर्वत भी मेघके समान प्रतिध्वनि करने लगे जिसे सुनकर हिंसक जानवर तथा मृगादिक भी रोने लगे।

तब सखीने अंजनाको छातीसे चिपटाया और कहा—पुत्री! रो मत, इससे गर्भको पीड़ा होगी। चल उठ, किसी पहाड़की गुफामें चलें। यहां व्याघ्रादि हिंसक जीव हमको खा डालेंगे।

अंजनाने पानीसे मुंह धोया तथा सुख दुखकी बातें करती हुई सखीके साथ धीरे २ चली। यद्यपि सखी अंजनाको लेकर आकाशमार्गसे जा सकती थी लेकिन अंजनाके गर्भवती होनेके कारण वह उसके साथ २ पैदल ही पैदल गई। मार्गमें अंजनाको अनेक नदी पर्वत लाँघने पड़े, डाभके काटों परसे चलना पड़ा। कहीं काटोंमें वस्त्र उलझ जाता तो उसको छुड़ाती, कभी लताओंको पकड़ ऊबड़ खाबड़ भूमिको पार करती, पत्तोंकी खरखराहट होती तो भयसे कांप जाती। जंगलमें जगह २ सिंह व्याघ्रादि हिंसक जानवरोंके शब्द हो रहे थे। जब थक जाती तो

किसी शिला पर बैठ जाती और उठती तो बार २ सखीका हाथ पकड़ कर उठती। वसंतमाला उसे बार २ दिलासा देती हुई हिंसक जंतुओंसे निरापद स्थानको लेजा रही थी।

धीरे २ वे पर्वतके उपर एक गुफामें पहुंचीं। बसंतमालाने अंजनाको द्वारपर ही खड़ा कर ज्योंही भीतर घुसकर देखा तो एक मुनिराजको शिलापर ध्यानमें बैठे हुए पाया। मुनिको देखकर अंजना और उसकी सखी दोनोंको बड़ा संतोष हुआ। दोनोंने अन्दर जाकर मुनिराजको नमस्कार किया। बदलेमें मुनिराजने उन्हें "धर्मवृद्धि" कहकर आशीर्वाद दिया। अंजना विपत्ति-में कुटंबीजनकी तरह मुनिराजको पाकर उनके सामने रोने लगी तथा अपना पहलेका सारा दुख कह सुनाया।

मुनिराजने कहा—'बेटी! दुःख मत कर। जीवोंको सुख दुख उनके शुभ अशुभ कर्मसे होता है। तेरा पुत्र अत्यंत सुखी और लोकपूज्य होगा तथा पूर्व पुण्यसे पतिका भी तुझसे शीघ्र मिलन होगा।' मुनिके यह वाक्य सुनकर अंजनाने उनसे अपने पूर्वभव पूंछे। मुनिने कहा:—

इसी भरत क्षेत्रके मंदर नामके नगरमें प्रियनंदी नामका सेठ रहता था। उसकी पत्नीका नाम जाया था। उनके अत्यंत गुणी धर्मात्मा दमयंत नामका पुत्र था। एक दिन बनमें क्रीड़ा करते हुए उसने एक मुनिराजको देखा। उन्हें नमस्कारकर वह उनके सामने बैठ गया। मुनिसे उसने सम्यक्त्व और व्रत धारण किये। घर आकर उसने एक दिन मुनिराजको दान दिया तथा आयुके अन्तमें शुभध्यानसे मरणकर सौधर्म स्वर्गमें देव हुआ। समीचीन व्रतोंके प्रभावसे भला क्या नहीं होता?

वहाँसे च्युत होकर वह मृगाङ्क नगरमें राजा हरिचन्द्र और रानी प्रिय लक्ष्मीके सिंहचन्द्र नामका पुत्र हुआ। वहाँ भी उसने दान दिया और आयुके अन्तमें मरकर पुनः देव हुआ। वहाँ-से चयकर विजयार्द्धपर अरुण नामके नगरमें राजा सुकण्ठ और रानी हेमोदरीके सिंहवाहन नामका सुन्दर गुणवान पुत्र हुआ। एक दिन भगवान विमलनाथके समवसरणमें उसे वैराग्य उत्पन्न हो गया। अपने घनवाहन नाम पुत्रको राज्य सौंपकर उसने लक्ष्मीतिलक नामक मुनि-राजके पास दीक्षा लेली। बादमें समाधि पूर्वक मरण कर वह सातवें स्वर्गमें उत्तम देव हुआ। वहाँसे चयकर अपने अतिरिक्त पुण्यसे वह सुखका भाजन इस अंजनाके गर्भमें आया है। पुत्री, अब तू अपने दुःख और विरहका कारण सुन—

हेमोदरी नामकी तू ही सुकंठकी पत्नी थी तथा उसकी दूसरी स्त्री लक्ष्मी नामकी तेरी एक सौत थी। वह सदा भगवानकी पूजा उपासना किया करती थी। तैने अत्यन्त द्वेष और अभिमानसे उसके घरसे एक दिन भगवानकी प्रतिमा चुराकर अन्यत्र रख दी। लक्ष्मीने घरमें प्रतिमा न देखकर आहार पानी छोड़ दिया और धर्म ध्यान पूर्वक रहने लगी। इतनेमें ही संयमश्री नामकी किसी महान आर्यिकाका पदार्पण हुआ। लक्ष्मीको प्रतिमाकी चोरीसे दुखी देखकर संयमश्री धर्मसम्बन्धी इस उपसर्गको दूर करनेके लिये तुरन्त हेमोदरीके पास गयी। आर्यिकाको देखकर हेमोदरीने बड़ी भक्तिसे उसे नमस्कार किया तथा नम्रता पूर्वक बैठनेको उत्तम आसन दिया। आर्यिकाने हेमोदरीसे कहा—बेटी! पूर्व पुण्यके प्रभावसे तैने सुकंठ राजा जैसा पति पाया है। साथ ही तुझे सिंहवाहनसा पुत्र एवं धन, रूप, यौवन आदि सभी कुछ मिले हैं। अतः तू इस भवमें भी धर्म कर. पाप बुद्धि छोड़ दे। मूढ़तावश तैने जो प्रतिमा छुपा दी है वह दे दे। देवप्रतिमाके साथ ऐसी चेष्टा नहीं करना चाहिये। इस पापसे निश्चित तू नरक जायगी, क्योंकि जिनेन्द्र प्रतिमाको छुपाना उचित नहीं है। जिनवाणी, जिन बिंब और उन दोनोंसे सम्बन्ध रखने वाले द्रव्यका जो हँसीमें भी अपहरण करता है वह नरकमें जाता है।"

आर्यिकाके मुखसे यह उपदेश सुनकर हेमोदरी मनमें भयभीत हो गयी। उसने तुरन्त

जिनप्रतिमा लाकर आर्यिकाको सौंप दी। प्रायश्चित्त स्वरूप प्रोषधादि व्रत लिये, प्रतिष्ठादि महोत्सव करके भगवानकी पूजा की और लक्ष्मी देवीके साथ प्रेमसे रहने लगी। आर्यिका इस तरह दोनों-को राजीकर अपने स्थान पर चली गयी और हेमोदरी धर्माचरणकर आयुके अन्तमें शरीर छोड़ पुण्योदयसे अनेक भोग ऐश्वर्य वाले स्वर्गमें जाकर पैदा हुयी। वहाँसे चयकर तू अंजना हुयी है। बाईस घड़ी तक तैने प्रतिमाको छुपाकर रक्खा था इसी पापके कारण बाईस वर्ष तक तेरा पतिसे वियोग हुआ।

इस प्रकार उन दोनोंको समझा बुझाकर मुनि वहाँसे अन्यत्र चले गये। अंजना सखीके साथ पतिके मिलनकी आशासे उसी गुफामें ठहरगयी। सखी विद्याके प्रभावसे खीर भात पकवान घृत आदि छहों रसोंका भोजन लाकर उसकी इच्छा पूर्ण करती थी।

एक दिन महा अंधेरी डरावनी रातमें गुफाके द्वारपर भयङ्कर दुष्ट सिंह आया। उसकी दहाड़से मृग हाथी आदि जानवर भयभीत हो गये। पक्षियोंने भी डरके मारे चहचहाना बन्द कर दिया। अंजना भी सिंहका आगमन सुन डर गयी और इस सङ्कटके न टलने तक आहार पानी छोड़कर ध्यान और स्तुति करने लगी। उस समय वसंतमाला आकाशमें विमान लिये खड़ी थी और अञ्जनाके लिये रुदन कर रही थी। तब गुहामें रहने वाला मणिचूल नामका गन्धर्व देव अंजनाको भयभीत देखकर बोला—इसकी मैं रक्षा करूँगा। इतना कहकर उसने अष्टापदका रूप बनाया और सिंहसे लड़नेको तय्यार हुआ। उन दोनोंमें महा युद्ध हुआ अन्तमें अष्टापदसे घायल होकर सिंह भाग गया। तब वसंतमाला अंजनाके पास गयी और कुशल वार्ता पूँछकर सन्तुष्ट हुई। सिंहसे कैसे छुटकारा हुआ इस सम्बन्धमें दोनोंमें बहुत देर तक वार्ता होती रही। उधर कुछ दूरपर गंधर्व देव अपनी देवियों सहित बड़े ही मधुर कण्ठसे भगवान मुनिसुव्रत नाथका स्तुति गान करने लगे। देवोंका यह संगीत सुनकर वसंत माला कहने लगी—सखी! देखो कोई पुण्यात्मा भगवानके गीत गा रहा है। तुम्हारे शीलके प्रभावसे जिस धर्मात्माने सिंहका भय दूर किया था वही मालूम होता है। इस तरह दोनोंको बात करते हुये सुबह हो गया। सखी बड़ी विनयसे अंजनाकी सेवा करती, उसे भोजन आदि तय्यार करके देती। इस तरह समय बीतते हुये अंजनाको गर्भका दुःख मालूम नहीं दिया। दोनोंने मुनिसुव्रतनाथकी एक प्रतिमा बनाकर रक्खी थी उसकी वनके फूल फलोंसे पूजा करतीं। इस प्रकार अपनी सखी और गंधर्व देवसे रक्षा पाकर अंजनाको समय जाते हुये मालूम नहीं दिया।

नौ मास पूर्ण होनेपर रात्रिके पिछले पहरमें प्रभात समय अंजनाको प्रसवकी पीड़ा हुयी। वह सखीसे बोली कि मेरे उदरमें पीड़ा हो रही है। सखीने कहा कि तेरे प्रसवका समय आ गया है। इतना कहकर बसंतमालाने कोमल पत्तोंकी शय्या बनायी। अंजनाने उसपर सूर्य-के समान पुत्रको जन्म दिया। जंगलके आस-पासकी वनस्पतियोंपर फल फूल आ गये। बालकके तेजसे गुफामें सर्वत्र प्रकाश हो गया। अंजना पुत्रका मुख देखकर बड़ी प्रसन्न हुई, बोली—हा पुत्र! मैं बड़ी अभागिनी हूं। इस निर्जन वनमें तेरा जन्मोत्सव कैसे मनाऊँ। यहाँ न मेरे पास धन है न कोई कुटुम्बीजन है। धन जनहीन मैं अकेली क्या कर सकती हूं। किन्तु प्राणियों-को सब वस्तुओंसे अधिक दीर्घ जीवनकी इच्छा रहती है अतः तू चिरंजीव हो। सखीने कहा—देवी! यह तुम्हारा पुत्र दीर्घजीवी होगा साथ ही यह धर्मात्मा तेरे सारे दुःखोंको दूर कर देगा।

इतने में ही वसन्तमालाने आकाशमें किसी विद्याधरका विमान देखकर अंजनाको बताया। अंजना उसे देखकर डरते हुये बोली—कोई शत्रु क्रोधसे मेरे पुत्रको मारने तो नहीं आ रहा है। अथवा संभव है कोई कुटुम्बीजन मुझे खोजनेके लिये आया हो। सखी! न जाने मेरे कर्मोदयसे इस पुत्रका क्या होगा।

अंजनाका यह विलाप सुनकर विद्याधरने कुटुम्ब सहित विमानको नीचे उतारा। गुफा-के द्वारपर विमान रोककर स्वयं स्त्रियों सहित धीरे २ अनेक आशंका करते हुये वह गुफामें घुसा। स्त्रियों सहित विद्याधरको आया देखकर बसंतमालाने बैठनेको सुन्दर आसन दिया। नौकरने वह आसन बिछा दिया। विद्याधर क्षणभर चुप बैठनेके बाद बड़ी गम्भीर वाणीमें विनयपूर्वक वसन्तमालासे पूछने लगा—"मर्यादाशील यह देवी किसकी पत्नी और किसकी पुत्री है? इसका क्या नाम है? इस वनमें कैसे आई? क्या किसीने इसको बुरा-भला कहा है।" वसन्तमालाने कहा—"राजन्! सुनिये, मैं इसका सब हाल बताती हूं। यह राजा महेन्द्रकी पुत्री अञ्जना है तथा प्रह्लादके पुत्र पवनकुमारकी पत्नी है। पूर्व कर्मोदयसे इसे पतिने बहुत दिनोंसे छोड़ दिया था। किन्तु जब वे रावणकी ओरसे युद्ध करने गये तो अचानक इस अञ्जनासे मिलकर गये। उस समय इसके गर्भ रह गया। किन्तु इसकी सास केतुमतीने इसे गर्भवती देखा तो घरसे बाहर निकाल दिया। यह पिताके घर आयी किन्तु वहाँ भी इसे सहारा न मिला। तब मैं इसे यहाँ पर्वतपर ले आई। यहाँ मुनिने इसे धर्मोपदेश दिया। उनके चले जानेके बाद सिंहसे यह जैसे तैसे बची।" यह सुनकर विद्याधर बोला—यह अञ्जना तो मेरी भानेज है। बहुत दिनसे न देखनेके कारण मैं इसे पहचान न सका था। मेरे पिताका नाम चित्रभानु और माताका नाम सुन्दर मालिनी है तथा मेरा नाम प्रतिसूर्य है। मैं हनूरुह द्वीपका रहने वाला हूँ। मेरी बहन मनोवेगाकी यह पुत्री है। बचपनमें जब इसे देखा था तबसे अब इसका रूप बदल गया है अतः मैं पहचान न सका था।" इसके बाद प्रतिसूर्यने रोते हुये अञ्जनाको उसके बचपनकी सब बातें सुनायीं। अञ्जनाने अपना पूर्ववृत्तान्त सुनकर पहचाना कि यह मेरा मामा है। वह उसके कण्ठसे लगकर बहुत देर तक रोती रही मानों आँसुओंके साथ उसका दुख भी निकल गया। अपना बन्धु मिल जानेपर सबकी यही दशा होती है।

उन दोनोंको स्नेहसे रोते हुये देखकर वसन्तमाला भी जोर २ से रोने लगी। इन सबको रोते देख रानी भी आँसू न रोक सकी। फिर तो अन्य रानियाँ भी रोने लगी। उन सबके रोनेसे गुफा गूँज उठी, मानों पर्वत भी झरनोंरूपी आँसुओंसे रो रहा है। रोनेकी आवाजसे सारा जंगल शब्दायमान हो उठा। पक्षी भी घबड़ाकर दयासे चीख उठे। तब प्रतिसूर्यने अञ्जनाको धैर्य बँधाया तथा जल देकर मुँह धुलवाया और अपना भी मुँह धोया। धीरे-धीरे उनका कोलाहल शान्त हुआ मानों इन दोनोंकी बातें सुननेके लिये ही जङ्गल स्तब्ध हो गया है। दुःखका वेग कम हो जानेके बाद दोनोंने घरकी कुशलवार्ता पूछी। बादमें अञ्जनाने अपनी सभी मामियोंसे बारी २ से बातचीत की। ठीक ही है गुणी पुरुष वनमें भी अपना कर्तव्य पूरा करनेसे नहीं चूकते। वार्तालापके अनन्तर अञ्जनाने मामासे बालकके ग्रहचक्र पूछे। तब प्रतिसूर्यके साथ आये हुए ज्योतिर्गर्भ नामके ज्योतिषीने बालकके जन्मसमयके लग्न निकालकर इस प्रकार फल बतलाया—बालकका जन्म चैत्रकृष्ण अष्टमीको रात्रिके पिछले पहर श्रवण-नक्षत्रमें हुआ है। अतः वह भोगी सुखी तथा पराक्रमी होगा। यह सुनकर अञ्जना और उसके मामा वगैरह सभीको सन्तोष हुआ। इस तरह बालकके गृहचक्र मालूम कर प्रतिसूर्यने अञ्जनासे कहा—बेटी! चलो, शीघ्र विमानमें बैठो, हनूरुह द्वीप चलकर बालकका जन्मोत्सव मनायेंगे। इस तरह कहनेपर अञ्जनाने बालकको गोदमें ले भगवानको नमस्कार किया। तथा जहाँ वह ठहरी थी उस स्थानके अधिपति देवसे पुनः २ क्षमा माँगकर रत्ननिर्मित विमानमें बैठी और बालक, वसन्तमाला तथा अन्य परिजनोंके साथ वहाँसे चली।

मोतियोंकी माला तथा नाना प्रकारकी शिल्पकलासे सज्जित विमान इन सबको लेकर आकाश मार्गसे जा रहा था कि बालकने मोतियोंकी मालाको पकड़नेके लिये ज्योंही हाथ पैर मारे त्योंही वह माताकी गोदसे भुलकता हुआ विमानसे नीचे गिर पड़ा। उल्कापातकी तरह बालकको गिरता

हुआ देखकर अञ्जना अन्य परिजनोंके साथ चिल्ला उठी। हाय २ करते हुये सब लोग बालकको देखनेके लिये नीचे उतरे, तो देखा कि पुत्र जिस शिलापर गिरा है भयानक शब्दके साथ उसके हजारों टुकड़े हो गये हैं और बालक आनन्दसे उस शिलापर पड़ा हुआ प्रसन्न मुखसे अँगूठा चूस रहा है। तथा अपने दोनों हाथ पैरोंको ऊपर उठाकर चला रहा है। अञ्जनाने अपने उस निर्दोष पुत्रको बड़े आश्चर्यसे गोदमें उठाया, शिर चूमा तथा छातीसे लगाया।

प्रतिसूर्य भी बच्चेको देखकर बोला—देखो कैसा आश्चर्य है कि इसने वज्रकी तरह शिलाको चूर्ण कर दिया है? जब बचपनमें ही इसमें देवोंसे अधिक शक्ति है तब जवानीका तो कहना ही क्या होगा? निश्चयसे यह चरम शरीरी है। तब प्रतिसूर्यने रानियों सहित बालककी तीन प्रदक्षिणा दी तथा हाथ जोड़ सिर नवाकर उसे नमस्कार किया। प्रतिसूर्यकी स्त्री मुसकानके साथ बालककी ओर अपने नेत्रोंकी प्रभा बखेरती हुई (बालकको देखती हुई) ऐसी मालूम पड़ती थी मानो श्वेत और नील कमलोंसे बालककी पूजा कर रही है।

प्रतिसूर्यने बालक और अञ्जनाको विमानमें बैठाया तथा ध्वजा, तोरण आदिसे विभूषित अपने नगरकी ओर चला। नगर निवासियोंने मांगलिक द्रव्योंसे राजाका स्वागत किया। गाजे-बाजेके साथ प्रतिसूर्यने नगरमें प्रवेश किया। विद्याधरोंने पुत्रका जन्मोत्सव इस प्रकार मनाया जिस प्रकार देवतागण इन्द्रका जन्मोत्सव मनाते हैं। चूंकि बालकका जन्म पर्वतपर हुआ था और विमानसे गिरकर उसने पर्वतको चूर्णकर दिया था इसलिए अंजना और प्रतिसूर्यने उसका नाम श्रीशैल रक्खा। तथा हनूरुह द्वीपमें बालकका जन्मोत्सव हुआ था अतः उसका नाम "हनुमान" प्रसिद्ध हुआ। अपनी शारीरिक चेष्टाओंसे पुरवासी लोगोंको प्रसन्न करता हुआ वह सुन्दर बालक देव कुमारोंकी तरह नगरमें क्रीड़ा करने लगा। हे श्रेणिक! यह तुझे श्रीशैलके जन्मका वर्णन कहा। अब तू पवनकुमारका वृत्तान्त सुन—

पवनकुमार रावणके आदेशानुसार पवनकी तरह शीघ्र ही रावणके पास गया और अनेक प्रकारसे वरुणके साथ युद्ध किया। बहुत देर तक लड़ते रहनेके कारण वरुण थक गया था अतः पवनने उसे पकड़ लिया और खरदूषणको छोड़ देनेके लिए कहा। वरुणने खरदूषणको छोड़ दिया और रावणसे संधि कर ली। पवन कुमार रावणसे विदा लेकर अंजनाको याद करता हुआ सामन्तों सहित अपने नगरकी ओर चला। अपने स्वागतमें ध्वजा तोरण आदि मांगलिक द्रव्योंसे सजाए हुए नगरमें उसने ज्योंही प्रवेश किया कि निवासियोंने सन्मुख आकर उसका स्वागत किया। घरकी तरफ जाते हुए कुमारको देखनेके लिए नगरकी स्त्रियां अपने २ काम छोड़ कर झरोखोंमें आ बैठी। कुमार जब अपने महलके द्वारपर पहुंचा तो भेंट आदि देकर परिजनोंने खूब सन्मान किया, प्रशंसा सूचक शब्द कहे। कुमारने गुरुजनों (माता पिता आदि) को नमस्कार किया तथा अन्य लोगोंने कुमारको नमस्कार किया। बादमें वहां थोड़ी देर ठहरकर कुमार बड़ी उत्सुकतासे मित्रके साथ अंजनाके महलपर चढ़ा। किन्तु महलको सूना देखकर कुमारका मन प्राणरहित शरीरकी तरह म्लान हो गया। मित्रसे बोला—अंजनाके बिना मुझे यह घर जंगलकी तरह प्रतीत हो रहा है अथवा आकाशकी तरह शून्य मालूम दे रहा है। अतः तुम शीघ्र ही पता लगाओ कि अंजना कहाँ है? प्रहस्तने घरके लोगोंसे पूछकर अंजनाके दुःखभरे समाचार ज्योंके त्यों पवनको कह सुनाये। पवन उसी समय मित्रके साथ चुपचाप महेन्द्र नगरकी ओर चल पड़ा। नगरके निकट पहुंचते ही अंजनाको मिली हुई समझकर पवन प्रहस्तसे कहने लगा। मित्र! देखो, यह नगर जिसमें अंजना रह रही है कैसा सुन्दर है? इस तरह अपने अभिन्नहृदय मित्रसे वार्तालाप करता हुआ कुमार महेन्द्र नगर आया। लोगोंसे कुमारका आगमन सुनकर राजा महेन्द्र अर्घादि उपचार लेकर मिलने गया और बड़े प्रेमसे कुमारको साथ लेकर नगरमें प्रवेश किया।

पुरवासियोंने बड़ी विनयसे कुमारके दर्शन किये। कुमारने अंजनासे मिलनेकी तीव्र लालसासे महलमें प्रवेश किया। घड़ी भर तक सब लोगोंसे कुशलवार्तादि करनेके बाद भी जब अंजनाको नहीं देखा तो विरहसे आतुर होकर वहीं किसी लड़कीसे पूछने लगा! बच्ची! क्या तुम्हें मालूम है यहां अंजना है? बच्चीने कहा—नहीं, यहां अंजना नहीं है। यह सुनकर वज्रसे चोट खाए हुएकी तरह पवनका हृदय चूर २ हो गया, कानोंमें मानों गरम खारा जल भर गया। थोड़ी देरके लिए वह मृतककी तरह निश्चेष्ट हो गया और उसका मुख कमल शोकरूपी हिमसे मुरझा गया। तब वह ससुरालसे चुपचाप निकलकर अंजनाको खोजनेके लिए पृथ्वीपर घूमने लगा। वातपीड़ित मनुष्यकी तरह पवन कुमारको दुखी देखकर प्रहस्तको अत्यंत दुःख हुआ। वह कहने लगा—मित्र! दुखी क्यों होते हो? चिंता छोड़ो! यह पृथ्वी है ही कितनी, हम अंजनाको जहां होगी वहांसे ढूँढ़ निकालेंगे। तब पवन कुमारने कहा—"मित्र! तुम सूर्यपुर जाओ और माता पितासे कहना कि अगर मुझे अंजना न मिलेगी तो मेरा जीना न होगा। अतः मैं अंजनाके न मिलने तक पृथ्वीपर घूमता रहूंगा।" प्रहस्त किसी प्रकार पवनकुमारको धैर्य बँधाकर शीघ्र ही सूर्यपुर गया।

इधर पवनकुमार अंबरगोचर नामक हाथीपर सवार होकर पृथ्वीपर घूमने लगा और मनमें सोचने लगा—कहीं उसे व्याघ्रादि जानवरोंने न मार डाला हो, अथवा वे खाही गये हों तो क्या? नदी नाले आदिके पूरसे डरकर कहीं वहीं न मर गयी हो? अथवा उसका गर्भपात न हो गया हो। भूख प्याससे व्याकुल होकर किसी गड्ढेमें गिरकर प्राण न दे दिये हों। हिरणों, पर्वतों, वृक्षों! अगर तुमने कहीं मेरी अंजनाको देखा हो तो शीघ्र बताओ जिससे मुझे सान्त्वना मिले।

इस तरह विलाप करता हुआ वह निर्जन वनमें घूमते २ भूतरव नामक बनमें पहुँचा। हाथीसे उतरकर शस्त्रोंको फेंक दिया और देहसे वस्त्र उतार कर शोकाकुलित हो वहीं पृथ्वी-पर बैठ गया। हाथीसे बोला—'गजेन्द्र! जाओ जंगलमें विचरण करो, शल्लकी वनमें चरो, हथनियोंके साथ आनन्द करो। मुझे यदि अंजना नहीं मिलेगी तो मैं यहीं मर जाऊँगा।' इतना कहने पर भी स्वामीभक्त हाथी कुमारके आस पास ही घूमता रहा।

उधर प्रहस्तने जाकर पवनके समाचार उसके माता पितासे कहे कि कुमार शोकाकुलित हो नगरको छोड़कर जंगलमें चले गये हैं। यह सुनकर घरके सभी लोगोंको अत्यन्त दुःख हुआ। बिना विचारे जो लोग शीघ्र कार्यकर बैठते हैं उन्हें केतुमतीकी तरह ही बादमें अत्यन्त कष्ट होता है। केतुमती पुत्रशोकसे व्याकुल होकर विलाप करने लगी। कहने लगीः-हाय बेटा! तू मुझे दुःखसे व्याकुल छोड़कर कहाँ चला गया। "प्रह्लादने शीघ्र ही विद्याधरोंको बुलाया और पुत्रका पता लगानेके लिए उन्हें चारों दिशाओंमें भेजा। आज्ञा पाते ही विद्याधरोंमेंसे कोई तो अंजनाको खोजने चले कोई पवन कुमारको ढूढ़ने लगे। प्रतिसूर्य भी कुमारके घरसे चले जानेके समाचार सुनकर अत्यन्त दुखी हुआ और अंजनाके शोकका तो कहना ही क्या था। प्रतिसूर्यने अंजनाको धैर्य बँधाते हुए कहा—बेटी! रंज मत कर, मैं आज ही तेरे पतिको ढूढ़कर यहाँ लाऊँगा। यह कह शीघ्र ही कुमारकी खोजमें चल पड़ा। भूतरव बनमें सब लोगोंने कुमारको बैठा हुआ देखा। ज्योंही लोग कुमारके पास जाने लगे हाथीने उन्हें स्वामी-के पास जानेसे रोका। अन्तमें हथिनीको आगे कर हाथीको वशमें किया और सब लोग कुमारके पास गए।

कुमार अंजनाके ध्यानमें इतना तल्लीन था कि माता पिताके द्वारा बहुत कुछ समझानेपर भी बोला नहीं बल्कि योगीकी तरह चुपचाप बैठा रहा। तब प्रतिसूर्यने एकांतमें पवनकुमार

से अंजनाके सारे समाचार कहे कि किस प्रकार अंजनाके गुफामें पुत्र हुआ और कैसे वह विमानसे नीचे गिरपड़ा और किस प्रकार हम सब हनूरुह द्वीप पहुँचे। पवन कुमार यह सुनकर बड़ा संतुष्ट हुआ। प्रतिसूर्यसे गले मिला और सब विद्याधरोंके साथ स्वर्ग समान समृद्ध हनूरुह द्वीपमें पहुंचा। वहाँ अंजना और पवनका मिलाप हुआ। उन दोनोंके मिलनसे पिता आदि गुरुजनोंको भी परम आनन्द हुआ। दो महीने तक प्रतिसूर्यके यहाँ आतिथ्य पाकर विद्याधर गण वापिस अपने घर आ गए। किन्तु पवनकुमार अंजनाके साथ इन्द्रके समान वहीं आनन्दपूर्वक रहने लगा।

हनूमान अब जवान हुए। अनेक विद्यायें उन्हें सिद्ध हो गई। उधर रावणको वरुणपर फिर चढ़ाई करनी पड़ी। विद्याधरोंको बुलानेके लिए उसने सब जगह दूत भेजे। खरदूषण सुग्रीव नील आदि विद्याधर राजा आज्ञा पाते ही रावणके पास आए। इनके अतिरिक्त राजा प्रतिसूर्य, पवनकुमार, हनुमान आदि भी विजयार्द्धवासी विद्याधरोंके साथ महान सेना लेकर युद्धमें शामिल हुए। महाबलवान हनुमानको देखकर रावण बड़ा प्रसन्न हुआ और मनमें कहने लगा—इस कुमारका सहयोग पाकर अब मेरा कठिन से कठिन कार्य भी सिद्ध हो जायगा। महारूपवान हनुमान हाथ जोड़ रावणके चरणोंमें अभिवादनकर विनयपूर्वक सामने खड़ा हो गया। रावणने भी उसे अपने कण्ठसे लगा लिया और अपनी देहसे वस्त्राभूषण उतार कर बड़े स्नेहसे उसे दे दिये। बादमें परस्पर कुशल क्षेम पूछकर दोनों रत्ननिर्मित भूमिपर बैठ गये। दोनोंमें उस समय परस्पर अत्यन्त स्नेहकी वृद्धि हुई। अभिमानी रावण महाबलवान चतुरंग सेना लेकर पातालमें पुण्डरीक नामकी नगरीमें पहुंचा।

रावणके पहुंचते ही नगरीमें महान कोलाहल हुआ। वरुणके सौ पुत्र यह कोलाहल सुनकर युद्धके लिये निकले। उन्होंने रावणकी सेनाको छिन्न भिन्न कर दिया। यह देखकर रावण स्वयं युद्ध करनेके लिये मैदानमें आया। बड़ा भयंकर युद्ध हुआ। वरुणके पुत्रोंने रावणको चारों तरफसे घेर लिया। रावणको घिरा हुआ देखकर हनुमान मैदानमें आये। उन्होंने बड़े क्रोधसे अपनी लांगूल विद्यासे उन सबको इस प्रकार मजबूतीसे बाँध लिया जिस प्रकार कर्म जीवको बाँध लेते हैं। उसी समय रावणने भी वरुणको नागपाशसे बाँध लिया, जैसे नरकमें नारकीको बाँधा जाता है। रावणका सारा कटक तो वहीं उद्यानमें रहा और कुम्भकर्णने वरुणका सारा नगर लूट डाला। नगरकी सम्पूर्ण स्त्रियोंको पकड़ लिया और रावणके पास ले आया। यह देखकर रावणने दया बुद्धिसे उन सभीको छुड़ा दिया। तथा बेचारे वरुणको भी उसके पुत्र परिवार सहित छोड़ दिया। बदलेमें वरुणने अपनी सत्यवती नामकी कन्याका रावणके साथ विवाह कर दिया। रावण कन्याको विवाहकर मेघवाहन, हनुमान, कुम्भकर्णादिके साथ लङ्का आ गया।

रावणने प्रसन्न होकर अपनी बहिन चन्द्रनखाकी सुन्दर पुत्री अनंग कुसुमाका हनुमानके साथ विवाह कर दिया और कहा, पुत्र! आजसे तुम निर्भय होकर सब विद्याधरोंपर शासन करो। रावणने हनुमानको कुण्डलपुरका राज्य दिया और सब विद्याधरोंका प्रमुख बना दिया। किस्कुपुरमें राजा नलने अपनी हरिमालिनी नामकी कन्या हनुमानको विवाह दी। किन्नरपुरके राजाने अत्यन्त रूप लावण्यवती अपनी कन्याएँ बड़े स्नेहसे हनुमानको दे दी। किष्कन्धपुरके राजा सुग्रीवने अपनी रूप और गुणवती पद्मा नामकी कन्याका उसके साथ विवाह कर दिया। इस तरह हनुमानने पूर्व पुण्यके उदयसे सम्पूर्ण कला और विद्याओंमें कुशल स्त्रियोंसे विवाह किया। पवनकुमार अञ्जना तथा अन्य कुटुम्बीजन हनुमान जैसे पुत्रको पाकर हर्षसे फूले नहीं समाते थे। हनुमान आदि सोलह हजार मुकुट बद्ध राजा रावणकी सेवा

करते थे। जड़ और चेतन दोनों प्रकारके सात रत्न थे। अठारह हजार रानियाँ थीं। तीन खण्डका शासक था। इस प्रकार रावण अनेक विद्याधरोंके साथ लंकामें रहकर राज्यका सञ्चालन करने लगा। इन्द्रजीत, मेघवाहन, कुम्भकर्ण, विभीषण आदि भी सुखसे रहने लगे।

१० भगवान् मुनिसुव्रतनाथका गर्भावतरण।

इतना कहकर गणधर बोले—श्रेणिक ! यह संक्षेपसे तुम्हें रावणका चरित्र कहा। अब तुम मुनिसुव्रतनाथका चरित्र सुनो। उनके चरित्रसे मतलब पञ्चकल्याणकोंके वर्णनसे है अतः उन्हींको मैं यहाँ कहता हूं।

इसी भरतक्षेत्रके अंगदेशमें चम्पापुर नामका नगर है। वहाँका धर्मात्मा राजा हरिब्रह्म अनन्तवीर्य स्वामीके पास दयामयी धर्मका उपदेश सुनकर विरक्त हो मुनि बन गया। गुरुमुखसे उसने ग्यारह अङ्गोंका अध्ययन कर लिया। वे अनशन, अवमौदर्य, व्रत परिसंख्यान, रसपरित्याग, विविक्त शय्यासन, कायक्लेश इन छः बाह्यतपोंका तथा विनय, प्रायश्चित्त, वैयावृत्य कायोत्सर्ग, ध्यान, स्वाध्याय इन छः अन्तरङ्ग तपोंका आचरण करने लगा। आर्त, रौद्र, धर्म और शुक्ल इन चार ध्यानोंमेंसे पहलेके दो ध्यान छोड़कर वह धर्म और शुक्ल ध्यानमें रत रहता। वर्षाके समय वृक्षके नीचे, ग्रीष्ममें पर्वतपर, तथा शीतकालमें नदीके किनारे खड़े होकर तपस्या करता। हिंसा, झूठ, चोरी, अब्रह्म और परिग्रह इनसे विरक्त होकर त्रिकाल योग धारण करता। ईर्या, भाषा, एषणा, आदान निक्षेपण, उत्सर्ग इन पाँच समितियोंका पालन करता। ध्यानके समय मन, बचन, काय, इन तीन गुप्तियोंको धारण करता। क्षुधा, तृषा, शीत, उष्ण, दंशमशक, नाग्न्य, अरति, स्त्री चर्या, निषद्या, शय्या, आक्रोश, बध, याचना, अलाभ, रोग तृणस्पर्श, मल सत्कार पुरस्कार, प्रज्ञा, अज्ञान, अदर्शन इन बाईस परिषहोंको सहन करता। ५ व्रत, ५ समिति, ५ इन्द्रिय निरोध, ६ आवश्यक, केशलोच, नग्नता, एकबार भोजन, खड़े होकर भोजन, स्नानत्याग, अदन्तधावन, भूमिशयन इन अट्ठाइस मूलगुणोंके पालनेमें सदा तत्पर रहता तथा नित्य स्वाध्याय करता था। गुरुके निकट तीर्थंकर प्रकृतिको बध करने वाली सोलह कारण भावनाओंको भाता था अर्थात् तीन मूढ़ता, ८ मद, ६ अनायतन तथा ८ शंकादि दोषोंसे रहित निर्मल निःशंकादि गुणों सहित सम्यक्त्वका पालन करता १। देव, शास्त्र गुरुकी विनय करता २। निरतिचार शीलव्रतोंका पालन करता ३। अंगपूर्वादि शास्त्रोंका नित्य स्वाध्याय करता ४। संसार भोगरूपी दुःखोंसे विरक्त रहता ५। शक्ति अनुसार दान करता ६। शक्ति अनुसार ही अनशनादि तपश्चरण करता ७। भयंकर रोगादिसे पीड़ित साधुओंके समाधि मरणको सम्हालता ८। व्याधि पीड़ित शिष्योंकी वैयावृत्य करता ९। अर्हन्त भक्ति करता १०। आचार्य भक्ति करता ११। गुरु भक्ति करता १२। विनय पूर्वक शास्त्रोंका पठन पाठनकर प्रवचन भक्ति करता १३। षडावश्यकोंके पालनमें तत्पर रहता १४। जैनमार्गकी प्रभावना करता १५। श्रावकादि शिष्योंमें वात्सल्य भाव रखता १६। इस प्रकार भावना भाकर उसने महासुखकारी तीर्थङ्कर प्रकृतिका बंध किया और तपके प्रभावसे कोष्टबुद्धि, वीजबुद्धि, पदानुसारित्व, संभिन्न संश्रोतृत्व आदि ऋद्धियोंको प्राप्त किया।

उत्तमक्षमा, उत्तम मार्दव, उत्तम आर्जव, उत्तम सत्य, उत्तम शौच, उत्तम संयम, उत्तम त्याग, उत्तम आकिंचन्य, उत्तम ब्रह्मचर्य इन दस धर्मोंका पालन किया। इस तरह

हरिब्रह्म मुनिने घोर तपश्चरण किया। वह तीन ज्ञानके धारी हो गये और अन्तमें समाधि मरणकर प्राणत स्वर्गमें इन्द्र हुये। वहाँ उसकी बीस सागरकी आयु थी, शुक्ललेश्या थी. साढ़े तीन हाथका शरीर था. अवधिज्ञानसे पाँचवे नरक तक देखते थे। दस महीनेमें श्वासोच्छ्वास लेते थे। आठ ऋद्धियाँ थीं. बीस हजार वर्षमें मानसिक आहार करते थे। मानसिक ही थोड़ा प्रविचार था। इस तरह भोग नृत्यादिका आनन्द उठाते हुए वह जिनपूजामें तत्पर रहता। श्रेणिक ! अब जिस हरिवंशमें मुनिसुव्रतनाथका जन्म हुआ उसकी उत्पत्तिकी कथा तुझे कहता हूँ—

शीतलनाथ भगवानके मोक्ष चले जानेके बाद वत्स देशकी कौशाम्बी नगरीमें, जो यमुना किनारे थी. एक सुमुख नामका बड़ा विद्वान राजा हुआ। एक बार वह स्त्रियों सहित वसंतोत्सव मनाने निकला। हाथीपर चढ़कर जब वह मार्गमें जा रहा था तो नगर निवासियोंने उसके दर्शन किये। उस समय सुमुखकी दृष्टि झरोखे पर बैठी हुई किसी स्त्रीपर पड़ी। उसे देखते ही वह कामसे पीड़ित हो शीघ्र ही अपने महलोंमें लौट आया और चिन्तातुर रहने लगा। रातको उसे नींद नहीं आती, न दिनमें भूख ही लगती।

राजाका यह हाल देखकर सुमति नामका मन्त्री बोलाः—"देव ! मुझ जैसे मन्त्रीके रहते हुए आपको किस बातकी चिंता है ?" राजाने कहा—वसंतोत्सवके लिये जाते समय मैंने मार्गमें झरोखेपर बैठी हुई एक स्त्रीको देखा था बस तभीसे मेरे मनमें उसके समागमकी चिंता है ?" मन्त्रीने कहा—देव ! वह यहांके धर्मात्मा और धनी सेठ वीरककी स्त्री है। उसका नाम वनमाला है। किसी दूतको भेजकर उसे बुलानेका उपाय करना चाहिए ! यह कह कर मन्त्रीने वीरक सेठको बुलाया और उसे दूर परदेशमें भेज दिया। इधर सेठके घर दूतीको भेजकर वनमालाको राजमंदिरमें बुला लिया। राजा सुमुख और वनमाला पति पत्नीके रूपमें रहने लगे। कुछ दिनों बाद वीरक सेठ लौटा और यह जानकर कि राजाने उसकी स्त्रीको घरमें रख लिया है अत्यंत शोकातुर हुआ। उसने प्रौष्ठिल मुनिके पास जाकर जैन धर्मका उपदेश सुना और विरक्त होकर जिन दीक्षा लेली, तथा कठोर तपश्चरण करने लगा। आयुके अन्तमें समाधि मरण कर पुण्योदयसे सौधर्म स्वर्गमें चित्राङ्गद नामका देव हुआ।

एक दिन सुमुखने वनमाला सहित वरधर्म नामक मुनिराजको आहार दान दिया और परस्त्री सेवनके पापका फल पूंछा। मुनिराजने कहा कि इस पापसे नरक गति मिलती है। यह सुनकर सुमुख और वनमालाने पापसे भयभीत होकर ब्रह्मचर्य व्रत धारण कर लिया। संयोगसे एक दिन उन दोनोंपर बिजली गिरी। सुमुख मरकर भरत क्षेत्रके अन्दर हरिपुर देशके भोगपुर नगरमें हरिवंशके शिरोमणि राजा प्रभञ्जन और रानी मृत्कण्डाके सिंहकेतु नामका क्षमादि गुणशील पुत्र हुआ। तथा वनमाला शीलपुरके राजा वज्रघोष और रानी सुभामाके विद्युत्माला नामकी गुणवती पुत्री हुई। सिंहकेतुने विद्युत्मालाके साथ विवाह कर लिया। पूर्व स्नेहके कारण दोनोंमें खूब अनुराग हुआ। इधर चित्रांगद देव अपना पूर्व बैर स्मरण कर पापबुद्धिसे उन दम्पतिको हर कर ले भागा। तथा सोचने लगाकि इन्हें मार डालूँ या किसी शिलाके नीचे दबा दूँ। वह इस प्रकार सोचता जा रहा था कि सूर्यप्रभ देवने जो उसके पहले भवमें मधु नामका मित्र था और अणुव्रतोंका पालन कर सौधर्म स्वर्गमें देव हुआ था, उसको समझाया और उस अनर्थसे रोका। चित्रांगदने उन्हें चम्पापुरीके उद्यानमें छोड़ दिया। वे दोनों जो उस समय रति और काम जैसे मालूम हो रहे थे जङ्गलसे भयभीत होकर नगरीके निकट पहुंचे। उसी दिन चंपापुरका राजा मर गया। निःसन्तान होनेके कारण उसके उत्तराधिकारीकी खोजके लिये हाथी छोड़ा गया। हाथीने सिंहकेतुके गलेमें माला डाल दी अतः लोगोंने सिंहकेतुको ही राजगद्दी-

पर बैठाया। बादमें सबने सिंहकेतुसे उसके वंश और नगरका परिचय पूछा। सिंहकेतुने कहा—भोगपुरके हरिवंशी राजा प्रभञ्जन और रानी मृत्कंडाका मैं सिंहकेतु पुत्र हूं और यह मेरी पत्नी है। किसी पापी देवने हमको यहां ला पटका है। सिंहकेतुका परिचय सुनकर लोगोंने माताके नामपर उसका नाम मार्कण्डेय रक्खा और महान उत्सव किया। इस तरह मार्कण्डेय पत्नी सहित चंपाका राज्य करने लगा। उस मार्कंडेयके महागिरी, महागिरिके हेमगिरि और हेमगिरिके बसुगिरि आदि क्रमसे अनेक राजा महाराजा हरिवंशमें हुए तथा उत्तराधिकारीको राज्य भार सौंपकर यथायोग्य गतियोंमें गये।

काल क्रमसे उसी वंशके अन्दर मगध देशके सुंदर कुशाग्र नगरमें सुमित्र नामका महा गुणवान राजा हुआ। यह राजा समुद्रकी तरह गम्भीर था. मेरुकी तरह अचल था, कल्पवृक्षकी तरह त्यागी था. इन्द्रकी तरह भोगी था। उसकी सोमा नामकी सुन्दर शीलवती. आज्ञाकारिणी तथा सम्यग्दृष्टिनी स्त्री थी। हरिब्रह्मके जीवकी, जो प्राणत स्वर्गमें इन्द्र था, छः मास आयु शेष जानकर सौधर्म इन्द्रने कुबेरको आज्ञा दी कि कुशाग्रनगरके राजा सुमित्रके छः महीने बाद तीर्थकर पुत्र अवतरित होगा अतः तुम जाकर उनके घरमें रत्न और पंचाश्चर्यकी वृष्टि करो। कुबेर इन्द्रकी आज्ञा मस्तकपर धारणकर बड़े हर्षसे यह पुण्योत्सव मनानेके लिये सुमित्रके घर आया और प्रतिदिन राज प्रासादके आंगनमें पद्मरागमणि वैडूर्य स्वर्ण आदिकी वर्षा करने लगा। इसके अतिरिक्त सभी देवोंने बड़े प्रेमसे गन्धोदककी वर्षा, कल्पवृक्षके फूलोंकी वर्षा, दुंदुभिनाद. जय जय शब्द तथा रत्नवृष्टि इस प्रकार पंचाश्चर्य किये। भगवानके जन्मके सूचक इन पंचाश्चर्योंको देखकर मिथ्यादृष्टि लोग जिनेन्द्र भक्तिमें आस्था करने लगे। इस तरह कुबेर छः महीने तक प्रतिदिन रत्नोंकी वर्षा करता था। भगवानके पुण्य प्रभावसे सभी लोग उस समय इस प्रकार सुखी और संतुष्ट हो गये थे मानों उन्हें धनकी आवश्यकता नहीं है।

छः महीने बाद जब भगवान गर्भमें आनेको हुये तो इन्द्रने देवियोंको आज्ञा दी कि भगवान जिनेन्द्र सोमाके गर्भमें अवतरित होंगे। अतः तुम लोग जाओ और छप्पन कुमारियों-को साथ लेकर भगवानकी माताका गर्भ शोधन करो। इन्द्रके इस प्रकार कहनेपर श्री, ह्री, धृति, कीर्ति, बुद्धि. लक्ष्मी ये षट् कुमारियाँ कुशाग्र नगरमें सुमित्रके घर आईं और बोली—राजन्! आपकी पत्नीके गर्भमें भगवान जिनेन्द्र अवतरित होंगे अतः हम उनकी सेवा करनेकी आपसे आज्ञा चाहती हैं। राजाने कहा—"हाँ आप सेवा कर सकती हैं।" राज स्वीकृति पाकर देवियाँ माताके पास गयीं और इन्द्रके कथनानुसार माताकी सेवा करने लगीं। उन्होंने स्फटिक-के समान स्वच्छ और पवित्र द्रव्योंसे माताका गर्भ शोधन किया। कोई उनमेंसे माताके पैर धोती, कोई स्नान करातीं। इस तरह अनेक प्रकारसे उन्होंने माताकी सेवा की।

चौथे दिन स्नान करके पुष्पकी शय्यापर जब माता सुखसे सो रही थी तब उसने रात्रिके पिछले पहर महान फलवाले भगवानके कल्याणकोंके सूचक सोलह स्वप्न देखे। सबसे पहले उन्नत और मनोहर सफेद हाथी देखा, उसके बाद विशाल कन्धोंवाला श्वेत मनोहर बैल देखा, तीसरे सिरपर पूंछ रक्खे हुये तथा गर्जना करता हुआ सुन्दर अयालों वाला सिंह देखा, चौथे हाथियों द्वारा कलशों-से स्नान करती हुयी लक्ष्मीको देखा, पाँचवें जिनपर भौंरे मंडरा रहे थे ऐसी दो फूल मालायें देखीं, छठवें अपनी सोलह कलाओंसे युक्त तारा मण्डित पूर्ण चन्द्रमा देखा, सातवें उगते हुये प्रातः कालीन सूर्यको देखा, आठवें तालाबके अन्दर तैरती हुई दो सुन्दर मछलियाँ देखीं, नौवें कमलोंसे ढके हुये रत्नजटित दो स्वर्णकुंभ देखे, दसवें खिले हुये कमलोंवाला जलसे लबालब भरा हुआ तालाब देखा, ग्यारहवें लहरोंसे शब्दायमान अपार समुद्र देखा, बारहवां रत्नजटित सोनेका सिंहासन देखा, तेरहवां घंटाध्वजादिसे सजा हुआ सुन्दर स्वर्गका विमान

देखा, चौदहवाँ पृथ्वीसे निकलता हुआ नागेन्द्रका भवन देखा, पन्द्रहवाँ इन्द्र-धनुषके समान रंग बिरंगे रत्नोंकी राशि देखी, सोलहवां निर्धूम अग्नि देखी। इस प्रकार सोलह स्वप्न देखनेके बाद अन्तमें मुँहमें प्रवेश करते हुये कृष्णवर्ण हाथीको देखा।

इसके बाद वह हरिब्रह्मका जीव इन्द्र प्राणत स्वर्गसे च्युत होकर श्रावण कृष्णा द्वितीयाको श्रवण नक्षत्रमें सोमाके गर्भमें आया। प्रातःकाल होनेपर चारणों द्वारा गीत वादित्र आदिकी ध्वनि सुनकर माता प्रसन्नचित्त होकर उठी और स्नान सामायिकादि क्रियाओंसे निवृत्त होकर सखियों सहित अपने पतिके पास गयी। पतिने उसे अपने आसनपर बैठाया। बाद उसने हाथ जोड़कर बड़ी विनयसे पूछा—नाथ, आज रात्रिके पिछले पहरमें मैंने बहुतसे स्वप्न देखे हैं। आप उनका फल कहकर मेरे चित्तको समाधान करें। राजाने कहा—देवि! यह सब स्वप्न तुम्हारे पुत्र होनेके सूचक हैं। हाथी देखनेसे तुम्हारा पुत्र पृथ्वीपर महान होगा, बैल देखनेसे वह राज्य रूपी धुरा धारण करेगा। सिंह देखनेसे अत्यन्त पराक्रमी होगा, लक्ष्मी देखनेसे लक्ष्मीवान (महाधनी) होगा, मालायें देखनेसे वह तीर्थका प्रवर्तक होगा, चन्द्रमा देखने से संसारको सुखशान्ति पहुंचायेगा, सूर्य देखनेसे अज्ञानरूपी अंधकारको दूर करेगा, मीन युगल देखनेसे वह सदा सुखी रहेगा, दो कलश देखनेसे विशाल भण्डारोंका (खजाना) अधिपति होगा, सरोवर देखनेसे अच्छे शुभ लक्षणों (१००८) वाला होगा, समुद्र देखनेसे वह महाज्ञानी (सर्वज्ञ) होगा, सिंहासन देखनेसे वह साम्राज्यका अधिपति होगा, विमान देखनेसे देवोंके समान भोगी होगा, नागेन्द्र भवन देखनेसे तीन ज्ञान (मति, श्रुत, अवधि) का धारी होगा, रत्नराशि देखनेसे वह अनेक गुणोंका धारी होगा, अग्नि देखने वह कर्मों को जलानेवाला होगा और अन्तमें मुखमें प्रवेश करते हुये हाथीके देखने से वह तुम्हारे गर्भमें अवतरित हुआ है।

स्वप्नोंका फल सुनकर माता सन्तुष्ट हो अन्दर महलोंमें चली गयी। उसी समय स्वर्गमें अपने आप घण्टे बजने लगे, ज्योतिषी देवोंके यहां सिंहनाद हुआ, व्यन्तरोंके यहाँ भेरियाँ बजने लगीं, भवनवासियोंके यहां शंखनाद होने लगा, इस तरह सारा संसार गुंजरित हो उठा। देवोंके आसन हिल गये, मुकुट झुक गये। कल्पवृक्षोंसे अपने आप पुष्प वर्षा होने लगी। अवधिज्ञानसे तब जिनेन्द्र भगवानका गर्भावतरण जानकर चतुर्निकायके देव इन्द्रों सहित भगवानका गर्भकल्याणक मनाने आये। नांदी आदि क्रियायें करके राजा सुमित्रके घर उन्होंने पंचाश्चर्यकी वृष्टिकी तथा भगवानकी स्तुति (परोक्ष में ही) कर अत्यन्त हर्षित हुये। देवोंने भगवानकी माताकी तीन प्रदक्षिणा की और बादमें उन्हें बारम्बार नमस्कारकर अपने २ स्थानको चले गये।

---

११. भगवान मुनिसुव्रतनाथका जन्मोत्सव

तीन ज्ञानसे युक्त भगवान गर्भमें इस प्रकार बढ़ने लगे जिस प्रकार सीपमें मोती बढ़ता है। उस समय वे दर्पणमें प्रतिबिम्बके समान सुशोभित हुये। गर्भवृद्धिके साथ ही प्रजाकी सुख समृद्धि होने लगी। इन्द्रकी आज्ञासे छप्पन कुमारिकायें विनयपूर्वक माताकी पूर्ववत् सेवा करने लगीं। तथा अन्य देवियोंमेंसे कोई हावभावोंसे तांडवनृत्य करती थीं, कोई सप्तस्वरोंसे गीत गातीं थी, कोई बाँसुरी, वीणा, मृदङ्गादि बजाती थीं, कोई पौराणिक कथायें सुनाती थीं, कोई माताके लिये शय्या बिछाती थी, कोई बैठनेको आसन देती थी, कोई पान बनाकर देती थी, कोई उठते बैठते हाथका सहारा देती थी, कोई शौच स्नान आदि क्रियायें कराती थी, कोई

पैर धोती थी, कोई रसोई बनाती थी, कोई तलवार लेकर माताकी अङ्गरक्षा करती थी, कोई पंखा झलती थी, कोई श्लोक, गीत, छन्द, पहेलियाँ आदि कहती थीं। कोई मातासे पूछती—माता! तुम्हारे कैसा पुत्र होगा? तो उत्तर मिलता—त्रैलोक्यका भूषण, सर्वज्ञ, लोक-रक्षक तथा कर्मोंका जेता पुत्र होगा। तब देवी कहती—उस सृष्टिपालक, वीतरागी ईश्वरको मैं भक्तिपूर्वक नमस्कार करती हूँ।

कोई देवी कूट श्लोक कहती हुई पूछती थी-विटके संसर्गसे जगमें कौन सुखी नहीं होता? माता कहती—विटके संसर्गसे कौन पुरुष जगतमें सुखी होता है? इस प्रकारके प्रश्नोंसे देवियाँ माताको प्रसन्न करतीं थीं। माताको भगवानके पुण्य प्रभावसे समय बीतता हुआ मालूम नहीं दिया। इस प्रकार गीत नृत्यादि विनोद करते हुये सुखसे नौ मास बीत गये। इस बीचमें माताके उदरमें किसी प्रकारका विकार नहीं हुआ और न देहकी कान्ति ही कम हुई।

वैशाख कृष्ण दशमीको श्रवण नक्षत्र और शुभ दिनमें तीन ज्ञानधारी पुत्रका जन्म हुआ। जिस प्रकार पूर्वदिशा प्रचण्ड तेजस्वी निर्भय सूर्यको जन्म देती है उसी प्रकार माताने महान तेजस्वी तथा संसारमें ज्ञानका प्रकाश करनेवाले पुत्रको जन्म दिया। पुत्रके जन्म समय सभी दिशायें निर्मल हो गयीं, आकाश स्वच्छ हो गया, प्रसन्नता पहुंचानेवाली ठण्डी हवा बहने लगी। कुटुम्बमें अत्यन्त हर्ष हुआ, घर-घरमें गीत नृत्य होने लगे। मनोहर बाजे बजने लगे। स्वर्गमें घन्टानाद, ज्योतिर्लोकमें सिंहनाद, व्यन्तरोंके यहाँ दुन्दुभिनाद और भवनवासियोंके यहाँ शंखनाद होने लगा। चतुर्निकायके देवोंके यहाँ पारिजात आदि फूलोंकी वर्षा हुई तथा बाजे बजने लगे। देवोंके मुकुटोंमें चमक अधिक आ गई। उन्होंने अवधि ज्ञानसे जान लिया कि भगवान तीर्थंकरका जन्म हुआ है। व्यन्तर, भवनवासी और ज्योतिष्क देव अपने २ इन्द्रों सहित भगवानका जन्मोत्सव मनाने आये। इनके अतिरिक्त सौधर्मेन्द्र तथा अन्य सोलह स्वर्गोंके देव भी खूब ठाट-बाटसे पहुँचे। सौधर्मेन्द्र अपनी इन्द्राणी सहित ऐरावत हाथीपर चढ़कर आया। उसके आगे २ महाविभूति संयुक्त सात प्रकारकी सेना चल रही थी। एक-एक सेनामें सात २ अवांतर सेनायें थी। इस प्रकार ४९ सेनायें सौधर्मेन्द्रके साथ चलीं। प्रत्येक सेनामें नाचना गाना बजाना होता जाता था। उन सात प्रकारकी सेनाओंमें पहली सेना बैलोंपर सवारोंकी थी, दूसरी सेना रथवालोंकी थी, तीसरी सेना घुड़सवारोंकी थी, चौथी सेना गजारूढ़ोंकी थी, पाँचवीं नर्तकियोंकी थी, छठी गन्धर्वोंकी थी, सातवीं पदातियोंकी थी। इन वृषभ, अश्व, रथी आदि सेनाओंमें प्रत्येककी पृथक् २ सात २ सेनायें और थीं। यह सब सौधर्मेन्द्रकी विभूति थी। सौधर्म इन्द्रकी तरह अन्य इन्द्र भी अपनी २ विभूतिके साथ भगवानका जन्मोत्सव मनाने निकले।

इन्द्रोंकी पहली सेना गीत और नृत्य करती हुई जा रही थी। गीतोंमें वे त्रेसठ शलाका-पुरुषोंका चरित्र गाते जाते थे। दूसरी सेनाके गन्धर्व पञ्चकल्याण गाते जाते थे, तीसरी सेनाके गन्धर्व चक्रवर्तियोंके आख्यान गाते जाते थे, चौथी सेनाके गन्धर्व अन्य केवलियोंकी कथा गाते जाते थे, पाँचवीं सेनाके गन्धर्व इन्द्रोंकी स्तुति करते जाते थे, छठी सेनाके गन्धर्व धर्मात्मा मण्डलीक राजाओंके चरित्र कहते जाते थे, सातवीं सेनाके गन्धर्व ढाई द्वीपके मनुष्योंका वर्णन करते जाते थे। इस तरह सातों ही स्वरोंमें उन गन्धर्वोंका गाना होता था। साथमें वीणा, मृदङ्ग आदि भी बजते जाते थे। इनमें सबसे आगे कल्पवासी देवोंके इन्द्र चल रहे थे। कल्प-वासियोंके अतिरिक्त ज्योतिषी देव, व्यन्तर देव और भवनवासी देव भी उसी प्रकार बड़ी विभूतिके साथ भगवानका जन्मोत्सव मनाने चले।

इस प्रकार चारों निकायोंके देवता शीघ्र ही राजा सुमित्रके घर आये और भगवानके

जन्मोत्सव मनानेकी इच्छासे नगरकी सभी गलियों, बाजारों यहाँ तक कि वन और आकाश तकमें भर गये। इन्द्रकी आज्ञासे इन्द्राणी प्रसूति घरमें गयी। भगवानकी माताको देखकर सन्तुष्ट हो इस प्रकार स्तुति करने लगी—"हे माता! तू धन्य है, साक्षात् लक्ष्मी है, तेरे दर्शनसे ही मेरे पाप क्षीण हो गये।" इस प्रकार स्तोत्रकर इन्द्राणीने माताकी तीन प्रदक्षिणा दीं और बड़ी प्रसन्नतासे भक्तिपूर्वक नमस्कार किया। बादमें मायासे माताको सुलाकर और एक मायामयी बालक माताके पास लिटाकर बालक जिनेन्द्रको बाहर ले आई। चूड़ारत्नके समान बालकको हाथोंमें लिये हुए इन्द्राणी ऐसी जान पड़ती थी मानों सूर्यको लिये हुए पूर्व दिशा हो। छप्पन कुमारी देवियाँ हाथमें झारी, कलश, ठोना छत्र, चमर, दर्पण, पंखा, ध्वजा इन आठ मङ्गल द्रव्योंको लेकर शचीके आगे २ चल रही थीं, कोई नाचती-गाती तथा भगवानकी नीराजना उतारकर दसों दिशाओंमें छिड़कती जाती थीं।

इन्द्राणी जब भगवानको बाहर ले आई तो इन्द्रने उन्हें अपनी गोदीमें ले लिया और उनके लोकदुर्लभ रूपको देखने लगा। जब देखते हुये आँखें तृप्त नहीं हुईं तो उसने अपनी हजार आँखें बना लीं और भगवानको देखते हुये गद्गद वाणीसे इस प्रकार स्तुति करने लगा—"हे नाथ! आप संसारके स्वामी हैं, तीनों लोकोंके आप ही एक पितामह हैं गुरुजनोंके भी आप गुरु हैं, देवोंके भी देव हैं।" इस प्रकार स्तुति करनेके बाद इन्द्रने अपना एक हाथ मेरुके समान ऊँचा उठाकर देवताओंको चलनेकी सूचना दी। देवता 'जय' 'नन्द' 'वर्द्ध' 'जय जिनेश्वर' कहते हुये चले। घोड़े, हाथी और विमानोंपर आरूढ़ होकर देवता मेरुके शिखरपर पहुंच गये।

देवोंने सुमेरुकी तीन प्रदक्षिणाएँ दीं और जयजयकार करते हुये पाण्डुक शिलापर स्थित सिंहासनपर भगवानको विराजमान किया। तथा सभी देवता विनयपूर्वक अपने २ स्थानपर बैठ गये। सबसे प्रथम इन्द्रने शान्तिके लिये दिग्पाल और लोकपालोंका स्थापनकर उनकी पूजा की। बादमें यह सोचकर कि यहाँके जलमें जीव-जन्तु हैं अतः क्षीरसागरके जलसे भगवानका अभिषेक करना चाहिये, देवोंने क्षीरसमुद्र-पर्यन्त दो पंक्तियाँ बना लीं और हाथोंहाथ मालाओंसे विभूषित कलश भर २ कर वहाँसे लाने लगे। एक कलश सौधर्म इन्द्रने तथा दूसरा कलश इशान इन्द्रने अपने हाथोंमें उठाया। शेष देवता अन्य सेवाकार्य करने लगे। इन्द्राणी आदि देवियाँ भी यथायोग्य कामोंमें लगीं। सब देवताओंने मिलकर "जय जय" शब्द उच्चारण किया और सौधर्म तथा ईशान इन्द्रोंने हजार भुजाओंसे भगवानका अभिषेक प्रारम्भ किया। उस समय खूब जोरोंसे वादित्र ध्वनि हुई। देवोंके जयजयकारसे आकाश गूँज उठा। शेष इन्द्र और देवोंने भी अपनी अपनी भक्तिके अनुसार संसार दुःखके विनाशके लिये भगवानका अभिषेक किया। अभिषेकके बाद देवोंने जल, चन्दन, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य, दीप, धूप, फल, अर्घसे भगवानकी पूजा की और अभिषेक लेकर अपने २ मस्तकोंपर लगाया। बादमें स्वच्छ वस्त्रसे भगवानका शरीर पोंछा और सुगन्धित चन्दनसे उबटन किया। मस्तकपर सुन्दर मुकुट पहनाया। सुन्दर सुवर्णमय रत्नोंसे ललाटपर तिलक किया। आँखोंमें काजल लगाया। गलेमें फूल-माला पहनाई। वज्रसूचीसे भगवानके कान भेदकर उनमें सुन्दर कुण्डल पहनाए। भुजाओंमें बाजूबन्द हाथोंमें कड़े तथा उँगलियोंमें अँगूठी पहनाई। कमरमें करधनी पहनाई। पैरोंमें पैरके भूषण (पेजनी आदि) पहनाये। इस तरह अनेक प्रकारसे भगवानको सजाकर देवोंने उनकी इस प्रकार स्तुति की—हे संसारके अधिपति! आप हमारी रक्षाके लिये ही अवतरे हैं। हे जिनेश्वर! अज्ञानरूपी नींदसे असावधान व्यक्तियोंको आप जगानेवाले हैं। हे देवोंके देव! तुम्हें हमारा नमस्कार है। हे जिनेश! तुम्हें हम प्रणाम करते हैं।

इसी प्रकार स्तुति कर चुकनेके बाद देवोंने भगवानका नाम मुनिसुव्रत इसलिये रक्खा कि वे

आगे व्रतोंका उपदेश करेंगे। देवोंने अपने सुखकी कामनासे भगवानका भक्ति पूर्वक गुणगानकर पुनः उनकी प्रदक्षिणा दी। बादमें उन्हें पहलेकी तरह ही हाथीपर लिटाकर आकाश मार्गसे शीघ्र ही कुशाग्र नगर पहुँचे और राजा सुमित्रके घर बड़ी प्रसन्नतासे वस्त्राभूषणसे सुसज्जित भगवान-को माताके हाथमें सौंपा। पुत्रका चन्दनसे सुगंधित शरीर देखकर माता और पिता दोनों ही अत्यंत प्रसन्न हुए। इन्द्रोंने माता पिताको सिंहासनपर बिराजमान हो जानेकी प्रार्थना की और बादमें अत्यंत भक्तिसे इस प्रकार स्तुति करने लगेः—"आप दोनों धन्य हैं। जिनके यहाँ जगद्गुरु भगवानने जन्म लिया है। आपको तीन लोकको सुख देने वाली अद्भुत लक्ष्मी प्राप्त हुयी है।"

इस तरह बहुत प्रकारसे उनकी स्तुतिकर वस्त्राभूषणोंसे माता पिताका सन्मान किया। इन्द्र नरोंमें प्रधान बनकर हर्षसे नाचने लगा। इन्द्राणी आदि देवियाँ भी हाव भाव विलाससे तांडव नृत्य करने लगीं। भला, जहाँ स्वयं भगवान सभापति हों, इन्द्र गणनायक हो और इन्द्राणी नृत्यकारिणी हो वहाँका कहना ही क्या है। अन्तमें सभी देव अपना २ नियोग पूरा कर तथा उससे सुखदायक पुण्य उपार्जन कर अपने स्थान चले गये। महान पुण्यका भाजन इन्द्र भी कुछ देवोंको भगवानकी सेवामें नियुक्तकर अपने स्थान चला गया। राजा सुमित्र और उसके परिवारने बड़ी विभूतिके साथ पुत्रका महान जन्मोत्सव मनाया।

हे भव्यपुरुषों! अत्यन्त सुन्दर, दिव्य आकृतिवाले, कर्म कलंकके विनाशक, पापहारक सुखकारक तथा मोक्ष देनेवाले भगवानकी उपासना करो।

---

१२ मुनिसुव्रतनाथका चरित

बालक मुनिसुव्रतनाथ देवोंके साथ क्रीड़ा करते हुये धीरे धीरे बढ़ने लगे। घरके आंगन-में डगमगाते हुये पैरोंसे चलते थे। देवतागण भी भगवानकी अवस्थाके अनुसार ही अपना शरीर बनाकर उनके साथ खेलते थे। स्नान, वस्त्र भोजन आदिकी सम्पूर्ण सामग्री इन्द्र द्वारा प्रदत्त होती थी। अन्य देवता भगवानके सेवक रूपमें काम करते थे तथा देवियां परिचारिकायें बनकर रहती थीं। बालक मुनिसुव्रतनाथ अपने सहज हास्य और मुस-कानसे सभी लोगोंको प्रसन्न करते थे। तीन ज्ञानसे संयुक्त थे। उचित वयमें उन्होंने स्वयं ही व्रत धारण कर लिये।

क्रमशः भगवान सोलह वर्षके युवा हुये। इन्द्रको उनके विवाहकी चिन्ता हुयी। हस्तिनाग-पुरके राजा श्रीधर और रानी श्रीमतीकी पुत्री सुमंगलासे उनका विवाह हुआ। उस स्वर्गीय सुख और वैभवके बीचमें मुनिसुव्रतनाथने अपनी पत्नीके साथ खूब दाम्पत्य सुख भोगा। पुत्रको वयस्क और प्रबुद्ध देखकर राजा सुमित्रने उन्हें राज्यभार सौंप दिया। समयानुसार मुनिसुव्रतनाथके विजय नामका पुत्र हुआ। एक दिन मुनिसुव्रतनाथ पुत्रके साथ राज सिंहासनपर बैठे हुये थे। उन्हें मालूम हुआ कि उनके हाथीने खाना पीना सब छोड़ दिया है और अंतरङ्गमें वह दुखी है। अवधिज्ञानसे जानकर भगवानने लोगोंको इसका कारण बताया—'देखो, यह हाथी पहले भवमें नरपति नामका महा भोगविलासी राजा था। पात्र अपात्रका इसे कुछ विचार नहीं था। मूर्खतासे पापका सेवन करता और कुपात्रोंको यथेच्छ दान देता था। वहाँसे मरकर यह कुपात्र दानके प्रभावसे यहाँ हाथी हुआ है। आज अचानक इसे जातिस्मरण हो आया है अतः वह अपनी

पूर्व पर्याय यादकर इस समय दुखी हो रहा है।' हाथीने यह बात सुनकर सम्यक्त्व सहित व्रत ग्रहण कर लिये। हाथीको देखकर भगवान मुनिसुव्रतनाथको भी वैराग्य हो गया। वे सोचने लगे कि यह शरीर, पत्नी, पुत्रादिक सब विनाशीक हैं। इस तरह अनित्य भावनाका चिन्तन करते हुये उन्होंने अशरण, संसार, एकत्व, अन्यत्व, अशुचि, आश्रव, संवर, निर्जरा, लोक, बोधिदुर्लभ और धर्म भावनाओंका चिन्तन किया। उसी समय भगवानको वैराग्य हुआ जानकर भगवानको वैराग्यकी ओर अधिक प्रेरित करनेके लिये लौकान्तिक देव ब्रह्मस्वर्गसे आये तथा अन्य ब्रह्मचारी देवतागण भी आये। उस समय उन सभी देवोंने भगवानको नमस्कारकर स्तुति करते हुये उन्हें सम्बुद्ध किया—'हे जिनेन्द्र! आप चिदानन्द हैं, सर्वज्ञ हैं, सबको सुख देने वाले हैं, आपकी ही कृपासे भव्य पुरुष मार्गमें लगेंगे। इसलिये हे नाथ! आप शीघ्र ही दीक्षा लेनेको प्रवृत्त हों।' इस तरह लौकान्तिक देव अपना नियोग साधनकर अपने स्थान चले गये।

इधर भगवान और भी वैराग्यमें दृढ़ होकर दीक्षा लेनेको उद्यत हुये। भगवानके दीक्षा समाचारोंको अवधिज्ञानसे जानकर देव फिर पहलेकी तरह आकर एकत्रित हो दोनों हाथ जोड़ नमस्कार कर भगवानके सामने खड़े हो गये। भगवान अपने विजय पुत्रको राज्य दे जब दीक्षा-के लिये घरसे चलनेको तय्यार हुये तो देवोंने उन्हें स्नान कराकर अपराजित नामकी सुन्दर पालकीमें बैठाया और वनकी ओर ले चले। सात पैड तक इन्द्र भगवानकी पालकी अपने कन्धे-पर लेकर चला, उसके बाद सात पैड तक अन्य देवोंने पालकी उठायी, बादमें विद्याधर तथा भूमि-गोचरी राजाओंने भी उसी क्रमसे पालकी उठायी। इस तरह वे वनमें पहुँच गये।

देवोंके द्वारा बनाये गये एक सुन्दर मण्डपमें शिलाके ऊपर भगवान पूर्वमुख होकर बैठ गये। घरके लोगोंसे पूँछकर तथा सबको क्षमाकर, देहके तमाम वस्त्राभूषण उतार दिये तथा "नमः सिद्धेभ्यः" कहकर पञ्चमुष्टिसे केशलोंच किया। इन्द्रने भक्तिपूर्वक भगवानके बालोंको रेशमी वस्त्रमें बाँध क्षीर समुद्रमें ले जाकर प्रवाहित कर दिया। भगवानने मन बचन कायसे महाव्रत ग्रहण किये। अंतरंग बहिरंग दोनों प्रकारका दुखद परिग्रह छोड़ा। इस तरह वैशाख कृष्ण दशमीको श्रवण नक्षत्रमें भगवानने दीक्षा ग्रहण की। दीक्षा ग्रहणकर दिगम्बर मुनि भगवान मुनिसुव्रतनाथ पारणाके लिए मध्यान्ह समय राजगृह नगरमें पहुंचे। वहाँके राजा वृषभसेनने भगवानको देखकर उन्हें भक्तिपूर्वक पड़गाहा। तीन प्रदक्षिणाएँ दीं तथा उच्च आसनपर बिठलाकर प्रासुक जलसे उनके पैर धोये। बादमें भक्ति पूर्वक आहार दिया। भगवान आहार लेकर ध्यानार्थ बनमें चले गये।

बनमें जाकर भगवानने एक माह कम एक वर्ष तक तपश्चरण करते हुए छद्मस्थ अवस्थामें अनेक देशोंमें विहार किया। बादमें एक दिन वे दो दिनका उपवास धारण कर चंपक वृक्षके नीचे कायोत्सर्गसे ध्यान करने बैठ गये। इसके पहले उन्होंने सिद्ध पदकी प्राप्तिके लिए सिद्धोंके आठ गुणोंका ध्यान किया, क्षमादि दश धर्मोंका ध्यान किया, आर्त रौद्रको छोड़कर आज्ञा विचय, अपाय विचय, विपाक विचय और संस्थान विचय रूप धर्म ध्यान धारण किया। इस ध्यानके प्रभावसे उन्होंने नरक, तिर्यञ्च और देवायुका क्षय किया साथ ही अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ, मिथ्यात्व, सम्यक्मिथ्यात्व और सम्यक्त्व इन सात प्रकृतियोंका क्षय किया। इसके बाद सातिशय अप्रमत्त गुणस्थानको प्राप्त कर क्षपक श्रेणीपर आरूढ़ हुए। प्रथम ही अधःप्रवृत्त करण प्रारम्भ किया। इसके बाद अपूर्व करण और अनिवृत्ति करण माड़े। पृथक्त्व वितर्क शुक्ल ध्यानके प्रभावसे अनिवृत्ति करणके नौ भागोंमें क्रमसे निम्न छत्तीस प्रकृतियोंका विनाश किया। पहले भागमें निद्रानिद्रा १ प्रचला प्रचला २ स्त्यान गृद्धि ३ तिर्यग्गति ४ तिर्यग-त्यानुपूर्वी ५ नरक गति ६ नरक गत्यानुपूर्वी ७ एकेंद्रिय जाति ८ द्विन्द्रिय जाति ९ तीन

इन्द्रियजाति १० चतुरिन्द्रिय जाति ११ स्थावर १२ आतप १३ उद्योत १४ साधारण १५ सूक्ष्म १६ इन सोलह प्रकृतियोंका विनाश किया। द्वितीय भागमें अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ और प्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ इन आठ कषायोंका विनाश किया। तीसरे भागमें नपुंसक वेद, चौथे भागमें स्त्री वेद, पांचवे भागमें हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, छठे भागमें पुरुष वेद, सातवें भागमें संज्वलन क्रोध, आठवें भागमें संज्वलन मान और नौवे भागमें संज्वलन मायाका विनाश किया। इस तरह अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके नौ भागोंमें ३६ प्रकृतियोंका विनाश कर दशमें गुणस्थानमें सूक्ष्म लोभका भी विनाश किया। क्षीण कषायके प्रथम भागमें निद्रा और प्रचला तथा द्वितीय भागमें चक्षुदर्शन, अचक्षु दर्शन अवधि दर्शन, केवल दर्शन, मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, अवधिज्ञानावरण, मनःपर्यय ज्ञानावरण, केवलज्ञानावरण, दानांतराय, लाभांतराय, भोगान्तराय, उपभोगान्तराय, वीर्यान्तराय इन चौदह प्रकृतियोंका विनाश किया। इनके अतिरिक्त अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया लोभ, मिथ्यात्व, सम्यक्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, नरकायु, तिर्यगायु, और देवायु इन दश प्रकृतियोंका पहले ही विनाश कर दिया था। इस तरह (३६ + १ + १६ + १० = ६३) तिरसठ प्रकृतियोंका क्षय कर भगवान केवली जिन नामक तेरहवें गुणस्थानमें पहुँचे। और वैसाख बदी दशमीके दिन श्रवण नक्षत्रमें सायंकालके समय केवल ज्ञान प्राप्त किया।

उसी समय स्वर्गोंमें तथा ज्योतिषी, व्यन्तर और भवनवासी देवोंके यहाँ पहलेकी तरह ही घंटे आदि बजने लगे। सभीको भगवानके सर्वज्ञ होनेकी सूचना मिली। इन्द्रकी आज्ञासे कुबेरने पंचवर्णीय रत्नोंसे बहुत विभूतिसंयुक्त सुन्दर समवसरणकी रचना की। भगवान भूमिसे पांच हजार धनुष ऊँचे जाकर आकाशमें चतुर्मुख होकर ठहर गये। समवसरणमें वहाँ तक चढ़नेके लिए बीस हजार सीढ़ियाँ थीं। समवसरणका पहला परकोटा धूलिशाल नामका था। इस परकोटेमें चारो दिशाओंमें तोरणोंसे सुसज्जित चार दरवाजे थे तथा उसके आगे मानस्तंभकी तीन पीठिकाएँ थी जिनमें सोलह सीढ़ियाँ थी। प्रत्येक पीठिकापर एक २ शाल था और प्रत्येक शालमें चार २ दरवाजे थे। तीसरी पीठिकापर बिल्कुल बीचमें ध्वजा घंटा आदिसे विभूषित स्वर्णमयी मानस्तंभ था जिनपर दिव्य चमरोंसे युक्त जिनेन्द्र प्रतिबिम्ब विराजमान थे। पहले शालके बाहरकी तरफ चारो दिशाओंमें निर्मल जलसे भरी हुई एक २ बावड़ी थी। उस जलसे देवता भगवानकी पूजा करते थे। इससे कुछ दूर आगे चल कर दूसरा कोट था। उसकी चारो दिशाओंमें चार दरवाजे थे। उसके पहले तीन सुन्दर भूमियाँ थीं। वहाँ देव देवांगनाएँ नाचती गाती थीं। कोटका प्रत्येक द्वार एकसौ आठ मंगल द्रव्यों तथा तोरणोंसे विभूषित था। साथ ही प्रत्येक द्वारपर स्तूपोंके ऊपर धूपघट रक्खे हुए थे। कुछ दूर आगे चलकर तीसरा कोट था जिसके द्वारोंपर पहले ही जैसे धूपघट आदि थी। उस कोटके आगेकी भूमिपर कल्पवृक्षोंका सुन्दर वन था तथा सिद्धार्थ वृक्ष थे जिनके मूलमें सिद्धोंके प्रतिबिम्ब विराजमान थे। वहीं चैत्यवृक्ष भी थे जो जिनेन्द्र प्रतिमावोंसे सुशोभित थे। इसके अतिरिक्त वहाँ चम्पक, आम्र, मंदार और अशोक आदि वृक्ष भी शोभायमान थे। इन वृक्षोंके तीन परकोटे थे और प्रत्येक परकोटेमें चार २ दरवाजे थे। प्रत्येक वृक्षके मूलमें चारो दिशाओंमें शुद्ध स्फटिक मणिकी बनी हुई आठ प्रातिहार्य आदिसे विभूषित अरहंत प्रतिमाएँ थीं। इसके बाद पहलेकी तरह ही दरवाजोंसे सुशोभित चौथा कोट था। उस कोटसे लेकर प्रथम पीठिका पर्यंत स्फटिककी सोलह भीतें बनी हुई थीं जिनके अन्तरालमें बारह सभाएँ थीं। पहली सभामें मुनिराज बैठे हुए थे। दूसरी सभामें कल्पवासिनी स्त्रियां थीं। तीसरी सभामें आर्यिकाएँ और श्राविकाएँ थीं। चौथी सभामें ज्योतिषी देवोंकी स्त्रियां थीं। पाँचवीं सभामें व्यन्तरियाँ थी। छठी सभामें भवनवासिनी देवियाँ

थीं। सातवीं सभामें भवनवासी देव थे। आठवीं सभामें व्यंतर देव थे। नवीं सभामें ज्योतिषी देव थे। दसवीं सभामें कल्पवासी देव थे। ग्यारहवीं सभामें मनुष्य थे। बारहवीं सभामें तिर्यञ्च थे। ये सभाएँ श्री मण्डप भूमिमें बनी हुई थीं जो तोरण चमर आदिसे विभूषित थी। इसके बाद तीन पीठ शोभायमान थे पहले पीठपर अष्ट मङ्गल और धर्मचक्र रक्खे हुए थे। दूसरी पीठपर देवता गण, बैल, हाथी, चक्र, कमल, सिंह गरुड़, गृहमाला, इन आठ चिन्हों वाली ध्वजाएँ लेकर खड़े थे। तीसरे पीठके ऊपर सुन्दर मेखला शोभायमान थी। उसके ऊपर सुन्दर सुवर्णमयी सिंहासन था। सिंहासनके ऊपर सहस्रदल कमल था और कमलसे चार अंगुल ऊपर धर्मोपदेष्टा भगवान मुनिसुव्रतनाथ विराजमान थे। उनके दर्शनके लिए पहलेके ही समान चारो निकायोंके धर्मात्मा देव मनुष्य और पशु आये तथा आठ प्रातिहार्य संयुक्त भगवान जिनेद्रका दर्शन कर मनमें अत्यन्त प्रसन्न हुये। मनुष्य, देवता, तथा इन्द्रोंने पूजा द्रव्योंसे भगवानकी पूजा की और स्तुति तथा नमस्कारकर अपने २ कोठेमें बैठ गये।

उस समय विजय राजाने भगवानसे निवेदन कियाः—हे स्वामिन्! दया करके संसार स्थितिका कारण कहिये। भगवानने कहा—राजन् सुनो' सुख और दुखके भेदसे संसार दो प्रकारका है। पापसे दुख और पुण्यसे सुख होता है। नरकगति और तिर्यञ्चगति यह पापसे ही होती है। मनुष्यगति पाप और पुण्य दोनोंसे होती है। देवगति बहुपुण्यसे होती है। पुण्यके भी दो भेद हैं एक श्रावक धर्मसे होनेवाला पुण्य एक मुनि धर्मसे होनेवाला पुण्य। श्रावकधर्म ग्यारह प्रकारका है। पहला धर्म दर्शन प्रतिमा है, इसमें शुद्ध सम्यग्दृष्टि जीवको देव शास्त्र गुरूकी पूजा करना चाहिये। कुदेव कुशास्त्र और कुगुरूका श्रद्धान नहीं करना चाहिये। सप्तव्यसन और कन्दमूलादिके सेवनका त्याग करना चाहिये। बिना छना जल तथा दो दिनकी छाछ दही और काञ्जीका भक्षण नहीं करना चाहिये। अचार, घुना अन्न तथा अजान फल भी नहीं खाना चाहिये। फूल, फली, कलौंदा और अत्यन्त कोमल सूरण भी नहीं खाना चाहिए क्योंकि ये अनन्त काय होते हैं। जब एकके घातसे अनन्त जीवोंका घात होता हो, दयालु पुरुषोंको उसका सेवन नहीं करना चाहिए। चमड़ेमें रक्खे हुए तेल, घी, चूर्ण, अन्न, हींग, दवा तथा मक्खन मधु और गोरसके साथ द्विदलका त्याग करे। बिना बिदारे हुये बेंगन, सेम, बेर, जामुन तथा जंगली फूल पत्ते और गन्नेकी गाँठके भक्षणका त्याग करे। मिथ्यात्वियोंके यहाँ भोजन, रात्रिभोजन, रातमें पकाया हुआ भोजन, वर्षाऋतुमें बिना दला हुआ अन्न नहीं खाना चाहिये। क्रोध, मान, माया, अतिलोभ, हृदयकी कलुषता इनको छोड़ दे। इन गुणोंसे युक्त पहला दर्शन प्रतिमाधारी श्रावक होता है।

अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और परिग्रहत्याग इन पाँच अणुव्रतोंका, दिग्व्रत, देशव्रत, अनर्थदण्डव्रत इन तीन गुणव्रतोंका तथा सामायिक प्रोषधोपवास, भोगोपभोग परिमाण अतिथि संविभाग इन चार शिक्षाव्रतोंका पालन करने वाला दूसरा व्रत प्रतिमाधारी श्रावक होता है। त्रिकाल सामायिक करने वाला तीसरी प्रतिमाधारी होता है। चतुर्दशी और अष्टमीको उपवास धारण करना यह चौथी प्रतिमा है। अप्रासुक आहारका त्याग करना पाँचवीं प्रतिमा है। दिनमें मैथुन त्याग करना और रात्रिमें भोजन त्याग करना यह छठे श्रावकका कर्तव्य है। सम्पूर्ण स्त्रियोंको माताके समान समझना सातवीं प्रतिमाधारी श्रावकका कर्तव्य है। सम्पूर्ण आरम्भका त्यागी आठवाँ श्रावकहै। एक वस्त्रके बिना सम्पूर्ण परिग्रहका त्याग कर देना नवमा श्रावक है। आहार तथा अन्य सांसारिक कार्योंमें अनुमतिका त्याग करना दसवाँ अनुमति त्याग प्रतिमाधारी श्रावक है। ग्यारहवें श्रावकके दो भेद हैं। जिसमें क्षुल्लकके एक वस्त्र और लङ्गोटी रहती है ऐलकके केवल एक लङ्गोटी ही रहती है। क्षुल्लक गुरुके साथ भोजनके लिये जाता है और सिद्धान्त और प्रायश्चित्त शास्त्रको नहीं पढ़ता। ऐलक हाथमें भोजन करता है, पीछी रखता है,

लोंचकरता है, त्रिकालयोग धारण करता है। इसके अतिरिक्त श्रावक मात्रको भजन, वमन, मल मूत्रोत्सर्ग, मैथुन, सामायिक, जिनपूजन, स्नान आदि कार्योंमें मौन धारण करना चाहिये। गीला चमड़ा, हड्डी, माँस, खून, पीव, शराब इनके देखनेसे और सूखा चमड़ा, हड्डी, बिलाव तथा रजस्वला स्त्री आदिके स्पर्श हो जानेसे भोजनका त्याग करना चाहिए। यदि भोजनमें त्यागी हुई वस्तु भूलसे खाले तो स्मरण आते ही भोजनका त्याग करे। ग्रामदाह, महान उत्पात और निर्दय शब्दके सुनने पर तथा "यह माँस समान है" इस प्रकार चित्त विकल्प होने पर, मलमूत्रादिकी शंका होनेपर भोजनका परित्याग करे।

इस तरह यह श्रावक धर्मका निरूपण किया। अब मुनि धर्मका निरूपण करते हैं। पाँच-व्रत, पाँच समिति और तीन गुप्ति यह तेरह प्रकारका मुनियोंका चरित्र है। श्रावक और मुनि दोनोंको व्रत धारण करनेसे पुण्यका संचय होता है पुण्य सञ्चयसे स्वर्गकी प्राप्ति होती है उसके बाद क्रमसे निर्वाण हो जाता है। इस पुण्यके प्रभावसे ही चौबीस तीर्थङ्कर, बारह चक्रवर्ती नारायण, प्रतिनारायण, बलभद्र आदिके पद मिलते हैं। चौबीस तीर्थकरोंमें भरतक्षेत्र सम्बन्धी चौबीस तीर्थङ्कर निम्न प्रकार हैं:—ऋषभ, अजित, सम्भव, अभिनन्दन, सुमति, पद्मप्रभ, सुपार्श्व चन्द्रप्रभ, पुष्पदन्त, शीतल, श्रेयांस, वासुपूज्य, विमल, अनन्त, धर्म शान्ति, कुंथ, अर, मल्लि, मुनिसुव्रत, नमि, नेमि, पार्श्वनाथ और महावीर। ऋषभनाथके समयमें पहले चक्रवर्ती भरत हुये और भीम नामका पहला रुद्र हुआ। अजितनाथके समयमें दूसरा चक्रवर्ती सगर हुआ और बलि नामका दूसरा रुद्र हुआ। पुष्पदन्तके समयमें जितारि नामका तीसरा रुद्र हुआ। शीतलनाथके समयमें विश्वानल नामका चौथा रुद्र हुआ। श्रेयाँसनाथके समयम सुप्रतिष्ठ नामका पाचवाँ रुद्र हुआ तथा अश्वग्रीव नामका पहला प्रतिनारायण और त्रिपुष्ट नामका पहला नारायण हुआ; विजय नामका बलभद्र और भीम नामका पहला नारद हुआ। वासुपूज्यके समयमें तारक नामका दूसरा प्रतिनारायण और द्विपृष्ट नामका दूसरा नारायण तथा अचल नामका दूसरा बलभद्र हुआ, रुद्रोंमें अचल नामका छठा रुद्र हुआ और महाभीम नामका दूसरा नारद हुआ। विमलनाथके समयमें पुण्डरीक नामका सातवाँ रुद्र, मेरक नामका तीसरा प्रतिनारायण, स्वयम्भू नामका तीसरा नारायण, धर्म नामका बलभद्र और रुद्र नामका तीसरा नारद हुआ। अनन्तनाथके समयमें निशुम्भ नामका चौथा प्रतिनारायण पुरुषोत्तम नामका चौथा नारायण प्रभ नामका चौथा बलभद्र, महारुद्र नामका चौथा नारद और अजितन्धर नामका आठवाँ रुद्र हुआ। धर्मनाथके समयमें जितनाभि नामका नौवाँ रुद्र, कैटभ नामका पाचवाँ प्रतिनारायण, पुरुषसिंह नामका पाचवाँ नारायण, सुदर्शन नामका पाचवाँ बलभद्र, काल नामका पाचवाँ नारद और मघवा नामका तीसरा चक्रवर्ती हुआ। इनके अतिरिक्त पीठ नामका दसवाँ रुद्र और सनत्कुमार नामका चौथा चक्रवर्ती भी इन्हीं तीर्थकरके समयमें हुआ। इसके बाद शान्तिनाथ, कुन्थनाथ, अरनाथ ये तीन तीर्थकर स्वयं पाचवें, छठे और सातवें चक्रवर्ती हुये। इनके बाद सुभौमनामका आठवाँ चक्रवर्ती, महाबलि नामका छठा प्रतिनारायण, पुण्डरीक नामका छठा नारायण, आनन्द नामका छठा बलभद्र, महाकाल नामका छठा नारद हुआ। मल्लिनाथके समयमें बलिघ्न नामका सातवाँ प्रतिनारायण, दत्त नामका सातवाँ नारायण, नन्दमित्र नामका सातवाँ बलभद्र, दुर्मुख नामका सातवाँ नारद और पद्म नामका नवमाँ चक्रवर्ती हुआ। मुनिसुव्रतनाथके मोक्ष चले जानेपर हरिषेण नामका दसवाँ चक्रवर्ती, रावण नामका आठवाँ प्रतिनारायण, तथा लक्ष्मण नामका आठवाँ नारायण, रामचन्द्र नामका आठवाँ बलभद्र और नरकमुख नामका आठवाँ नारद होगा। नमिनाथके मोक्ष जानेपर जयसेन नामका ग्यारहवाँ चक्रवर्ती होगा। नेमिनाथके मोक्ष जानेपर जरासिन्ध नामका नवमाँ प्रतिनारायण, कृष्ण नामका नवमाँ नारायण पद्म नामका नवमा बलभद्र, अधोमुख नामका नवमा नारद और

ब्रह्मदत्त नामका बारहवाँ चक्रवर्ती होगा। महावीरके समय सात्यकी पुत्र नामका ग्यारहवाँ रुद्र होगा।

हे राजन! अब तुम्हें उपमा प्रमाणकी संख्याका प्रमाण बताता हूँ। एक योजन लम्बे चौड़े गड्ढेमें तत्कालके उत्पन्न हुए मैंढेके बालोंके इतने सूक्ष्म टुकड़ोंको कि जिनका कैंची आदिसे दूसरा खण्ड न हो सके, ठसाठस भर देना चाहिये। इसका नाम व्यवहार पल्य है। इस व्यवहार पल्यसे कुछ भी नापा नहीं जाता। किन्तु बादके (उद्धार और अद्धापल्य) पल्योंके व्यवहार का कारण होनेसे इसे व्यवहार पल्य कहते हैं। उस गड्ढेमेंसे एक २ बालको सौ २ वर्ष बाद निकालनेपर जितने समयमें वह रिक्त हो जाय उतने कालका नाम व्यवहार पल्योपम है। उन्हीं रोमच्छेदोंमेंसे प्रत्येकके असंख्यात करोड़ वर्षके जितने समय हैं उतने टुकड़े किये जाँय और उस गड्ढेको पुनः भर दिया जाय यह उद्धार पल्य है। बादमें प्रति समय एक २ बाल निकालनेसे जितने समयमें वह रिक्त हो जाय उसको उद्धार पल्योपम कहते हैं। ऐसे पच्चीस कोड़ाकोड़ी उद्धार पल्योंके जितने रोमच्छेद हैं उतने ही द्वीपसमूह हैं। उद्धार पल्यके रोमच्छेदोंके सौ वर्षके जितने समय हैं उतने और खण्ड किये जाँय। उनसे वह गड्ढा भर दिया जाय यह अद्धा पल्य है। और एक २ समयमें उन रोमच्छेदोंके निकालनेसे जितने समयमें वह रिक्त हो जाय उसे अद्धा पल्योपम कहते हैं। इन दश कोड़ा कोड़ी अद्धा पल्योंका एक अद्धासागर होता है। ऐसे दस अद्धा सागरोपम कोड़ा कोड़ीका एक अवसर्पिणी काल और उतने ही समयका एक उत्सर्पिणी काल होता है। यह दोनों काल कृष्ण शुक्ल पक्षकी तरह आते जाते बने रहते हैं। इनमें प्रत्येकके छः छः भेद हैं। अवसर्पिणीका पहला काल सुखमा सुखमा चार सागरका है। दूसरा काल सुखमा तीन कोड़ा कोड़ी सागरका है। तीसरा काल सुखमा दुखमा दो कोड़ा कौड़ी सागरका है, चौथा काल दुखमा सुखमा ब्यालीस हजार वर्ष कम एक कोड़ा कोड़ी सागरका है, पांचवाँ काल दुषमा इक्कीस हजार वर्षका है, छठा काल भी इक्कीस हजार वर्षका है।

इस प्रकार जिनेन्द्र भगवानने भव्य पुरुषोंके कल्याणके लिये नाना प्रकार धर्मका उपदेश दिया। बादमें वे बिहार करते हुये सम्मेद शिखरपर पहुंचे। एक महीने पहले ही समव-सरणमें होने वाली धर्म सभाओंका त्याग कर वे ध्यानारूढ़ होकर बैठ गये और शुक्ल ध्यानसे शेष चारों अघातियाँ कर्मोंका विनाश कर नित्य निरंजन तथा अनंत सुखके स्थान मोक्षको प्राप्त हुये। भगवान मुनिसुव्रत फाल्गुन कृष्ण द्वादशीको रात्रिके पिछले पहर श्रवण नक्षत्रमें सिद्ध हुये। देवतागण अवधि ज्ञानसे भगवानको निर्वाण हुआ जानकर पहलेकी तरह ही एकत्रित हो गए। विक्रियासे भगवानकी देहका निर्माण कर मुकुटकी अग्निसे उनकी देहका दाह संस्कार किया। तथा उसकी भस्म लेकर माथेपर लगाई और पुण्योपार्जनकर अपने स्थानको लौट गए।

जिनका निर्मल चरित्र दोष रहित सम्यक्त्व तथा क्षायिक ज्ञान मुक्ति प्रदान करने वाला है, देवता जिनकी सेवा करते हैं, जिनके वचन सदा सुख प्रदान करने वाले हैं वे श्रीमुनिसुव्रत नाथ भगवान संसारभयसे सदा भव्यात्माओंकी रक्षा करें।

१३. हरिवंश और रघुवंशकी उत्पत्ति कथा

गणधर बोले—हे श्रेणिक! अबतक मैंने भगवान् जिनेन्द्रके पांच कल्याणकोंका वर्णन किया। अब मैं हरिवंशका वर्णन करूँगा।

राजा विजयसे दक्ष नामक पुत्र हुआ। दक्षसे इलावर्द्धन और इलावर्द्धनसे श्री वर्द्धन, श्रीवर्द्धनसे श्री वृक्ष, श्रीवृक्षसे संजयंत, संजयंतसे कुणिम, कुणिमसे महारथ, महारथसे पुलोमा

इत्यादि हजारों राजा हरिवंशमें पैदा हुये। उनमेंसे कोई मोक्ष गये कोई स्वर्ग गये. इस तरह अनेक राजाओंके हो जानेके बाद इसी वंशमें मिथिला नगरीमें वासवकेतु नामका राजा हुआ। विपुला नामकी दीर्घनयना उसकी पटरानी थी। उनके जनक नामका नीतिनिपुण पुत्र हुआ, जो पिताकी तरह सदा प्रजाका पालन करता था। इस तरह यह जनककी उत्पत्ति तुम्हें बतलाई।

अब जिस वंशमें राजा दशरथ हुए उसका वर्णन सुनो। इक्ष्वाकुओंके महान वंशमें अनेक राजा हुए। क्रमसे भगवान मुनिसुव्रत नाथके तीर्थकालमें अयोध्यामें विजय नामका राजा हुआ। उसके हेमचूलिनी नामकी रानी थी। शक्रमन्यु नामका उनके पुत्र हुआ। कीर्तिमती नामकी उसके स्त्री थी। उनके सूर्य चन्द्रमाके समान दो पुत्र हुये। एकका नाम वज्रबाहु था दूसरेका नाम पुरन्दर था। हस्तिनागपुरमें हस्तिबाहु नामका राजा हुआ। उसकी रानीका नाम चूड़ामणि था। उन दोनोंके चार्वीनामा पुत्री थी। वज्रबाहूने विधि पूर्वक उससे विवाह किया। कुटुम्बी जन उस कन्याको पाकर हर्षित हुए। एकदिन कन्याका भाई उदय सुन्दर अपनी बहन और बहनोईको लेने गया। वज्रबाहु कुमार भी बहुत बड़े परिवारके साथ श्वसुरके घर चला। मार्गमें ध्यानारूढ़ मुनिराजको पाकर वह उनकी ओर एक टक देखने लगा। उदयसुन्दरने हँस कर विनोद पूर्वक वज्रबाहुसे कहा—"बाहुकुमार! एकाग्र दृष्टिसे मुनिकी तरफ क्या देख रहे हो? क्या तुम्हारे मनमें भी दीक्षा लेने की है।" वज्रबाहुने कहा—"तुमने ठीक कहा, अब तुम्हारे कहनेसे मैं दीक्षा अवश्य ग्रहण करूंगा।" इसतरह उदय सुन्दरको उत्तर देकर वह हाथीसे नीचे उतरा और मुनिराजको नमस्कार कर दीक्षा देनेकी प्रार्थना करने लगा। उदय सुन्दरने कहा—यह तो मैंने आपसे हँसीमें कहा था आपको उसे सत्य ही करके नहीं बैठजाना चाहिये। वज्रबाहुने कहा—"हँसीमें पिया हुआ अमृत क्या मनुष्योंको सुखका कारण नहीं होता। यह कह कर उसने सम्पूर्ण वस्त्र उतारकर दीक्षा लेली। उसे देखकर उदयसुन्दर आदि अन्य छब्बीस राजकुमार वहीं गुणसागर मुनिके पास दीक्षित होगए। मार्वी आदि स्त्रियोंने भी मुनिको नमस्कारकर विरक्त हो दीक्षा लेली। यह समाचार सुनकर अयोध्याका राजा विजय सोचने लगा—"अरे मेरी मूर्खता देखो। नाती तकने तो दीक्षा लेली और मैं मूर्ख घरमें ही बैठा हुआ हूँ।" यह मनमें सोचकर उसने राज्यका भार अपने पुत्र पुरन्दरको सौंपा और स्वयंने सुरन्द्रमन्यु पुत्रके साथ निर्वाणघोष मुनिके निकट दीक्षा लेली।

इसके बाद पुरन्दरकी पत्नी पृथ्वीमतीके कीर्तिधर नामका पुत्र हुआ। पुरन्दरने कीर्तिधर-को राज्य देकर क्षेमंकर मुनिके समीप दीक्षा लेली। कीर्तिधर सुखसे राज्य करता हुआ अपनी सहदेवी भार्याके साथ आनन्दसे दिन बिताने लगा। एकदिन वह वायुके द्वारा बादलोंको विघटित देखकर विरक्त हो दीक्षा लेनेको उद्यत हुआ और मंत्रियोंको बुलाकर राज्यभार संभालने-को कहा। मन्त्रियोंने कहा—"राजन्! ध्यान पूर्वक सुनिये, आपके कोई पुत्र नहीं है अतः राज्यसम्पदा आप किसे देंगे? बिना रक्षकके साम्राज्य नष्टभ्रष्ट हो जायगा. साम्राज्यके नष्ट होनेपर प्रजाका विनाश होगा. और प्रजाके नाशसे धर्मकी हानि होगी। अतः पुत्रका मुख देखकर ही आप दीक्षा लेना।" राजा मन्त्रियोंके समझानेसे रुक गया और पूर्ववत् ही कुटुम्बमें रहने लगा। समयानुसार सहदेवी गर्भिणी हुई। परन्तु पतिके दीक्षा ले जानेके डरसे उसने अपना गर्भ प्रकट नहीं होने दिया। नौवाँ महीना बीतनेपर उसने किसीको मालूम न हो इस प्रकार एकान्त महलमें पुत्रको जन्म दिया। सोलहवें दिन सहदेवीकी दासी प्रसूतिके वस्त्र धोने दूर किसी बनमें तालाबपर गई। वहाँ किसी ब्राह्मणने उससे इतना दूर आनेका कारण पूछा। दासीने रानीके पुत्रोत्पत्तिके सब समाचार उससे कह दिये। यह सुनकर ब्राह्मण शीघ्र ही राजमहल आया और सिंहासनपर बैठे हुये राजाको नमस्कारकर पुत्रोत्पत्तिके शुभ समाचार सुनाये। राजा यह सुनकर बड़ा प्रसन्न हुआ। ब्राह्मणको बहुतसा द्रव्य देकर पुत्रका जन्मोत्सव

मनाया और उसका नाम सुकोशल रक्खा। उसी समय उस नवजात पुत्रको राजतिलक करके स्वयं मुनि होगया।

राजा सुकोशल युवा होनेपर अपनी बत्तीस स्त्रियोंके साथ भोग भोगता हुआ राज्य-शासन चलाने लगा। बत्तीस वर्ष बीत जानेपर कीर्तिधर मुनिराज सुकोशलके घर चर्याके लिये आये। पापिनी सहदेवीने उन मासोपवासी मुनिको देखत ही घरसे निकाल दिया। मुनि बनमें जाकर ध्यानारूढ़ हो गये। इधर सहदेवीकी धाय मुनिके अपमान पूर्वक लौट जानेसे रोने लगी। सुकोशलने आकर उससे रोनेका कारण पूछा। धायने कहा—"तुम्हारे पिता तुम्हें राज्य देकर मुनि हो गये थे। आज वे एका-एक यहाँ घरपर भिक्षाके लिये आये तो महारानीने उन्हें घरसे निकाल दिया। वे मुनिराज उसी समय बनको लौट गये।"

सुकोशल यह सुनकर पिताके पीछे ही चल दिया और बनमें पिताको देखकर उन्हें नमस्कार किया तथा विरक्त हो दीक्षाके लिये प्रार्थना की। मन्त्रीगण यह समाचार सुनते ही सुकोशलको समझाने आये और कहा—राजन्! पुत्रका मुख देखकर ही आपको संयम ग्रहण करना चाहिये। सुकोशलने कहा—'अच्छी बात है। विचित्र मालाके उदरमें जो महान गर्भ है उसे ही मैं अपना साम्राज्य देता हूँ।' इस प्रकार कहकर सुकोशल मुनि हो गये। मन्त्रीगण विचित्र-मालाके साथ नगरको लौट गये। सहदेवीने यह समाचार सुनकर आर्तध्यानसे प्राण छोड़े और मरकर पापिनी व्याघ्री हुई। एकबार सुकोशल और कीर्तिधर मुनि बनमें बैठे हुये ध्यान कर रहे थे कि व्याघ्रीको उन्हें देखकर पूर्व भवका बैर स्मरण हो आया। वह सुकोशलके पैरपर झपटी और उसके शरीरका भक्षण करने लगी। यहाँ तक कि मुख पर्यन्त उनका सारा शरीर भक्षण कर डाला। जब मुखमें उसने दाँतोंको देखा तो उसे जातिस्मरण हो गया। अपने पुत्रको ही खाया हुआ समझकर वह शोकातुर हो गई। संसारकी कैसी विचित्र दशा है कि माता पुत्रादिका भक्षण कर लेती है।

सुकोशल शुक्ल ध्यानसे प्राण छोड़कर सिद्ध पदको प्राप्त हुये। कीर्तिधर मुनिने उस व्याघ्रीको सम्बोधा और उसे अणुव्रत दिये। आयुके अन्तमें संन्यासपूर्वक मरणकर वह स्वर्गको प्राप्त हुई। इन्द्रोने मुनि सुकोशलके शरीरकी पूजा की। कीर्तिधर मुनि भी शुक्ल ध्यान पूर्वक केवल ज्ञानका उपार्जनकर सम्यक्त्वादि अष्ट गुणसहित प्रकाशमान मोक्षपदको प्राप्त हुये।

विचित्रमालाने चन्द्रमाके समान शुभ-लक्षणवाले हिरण्यरुचि नामक पुत्रको जन्म दिया। हिरण्यरुचिकी रूपसौभाग्यशालिनी अमृतवती नामकी स्त्री हुई। उन दोनोंके नघुष नामका महाबलवान पुत्र हुआ। हिरण्यरुचि नघुषको राज्य देकर विमल योगी मुनिके समीप मुनि बन गया। राजा नघुषके सिंहिका नामकी रानी थी। उसे अयोध्यामें ही छोड़कर वह अपने सैकड़ों सामंतोंके साथ उत्तर दिशाको जीतनेके लिये चला। राजाको दूर गया हुआ जानकर दक्षिणके राजाओंने अयोध्याको इस तरह घेर लिया जिस तरह चन्दन वृक्षको सर्प घेर लेते हैं। रानी सिंहिकाने उन सबको मार कर भगा दिया। शस्त्र चलानेमें अभ्यस्त वह रानी चतुरंग सेना सहित उन राजाओंके पीछे ही लगी रही और उन सबको जीतकर पुनः अपने सामंतोंके सहित नगरमें वापिस लौट आई। उधर उत्तरदिशाको जीतकर नघुष भी अयोध्यामें वापिस आ गया। उसने जब रानीके साहसके समाचार सुने तो उसे असती समझकर छोड़ दिया। एक बार राजा नघुष ज्वरसे पीड़ित हुआ। वैद्योंने उसकी खूब चिकित्सा की परन्तु उससे कोई लाभ नहीं हुआ। यह देखकर रानी सिंहिका मनमें बड़ी व्याकुल हुई। अपने बन्धु बान्धव और सामन्त जनोंको बुलाकर उसने कहा—"अगर मैं पतिव्रता हूं तो मेरे इस जल छिड़कनेसे मेरे पतिको आराम हो।" यह कहकर उसने वह जल उन्हें दे दिया। वह जल ज्योंही नघुषके शरीर-

पर छिड़का कि राजाका ज्वर जाता रहा। तबसे नघुष सिंहिकासे प्रेम करने लगा। समयानुसार उन दोनोंके बुद्धिमान सौदास नामका पुत्र हुआ। नघुष सौदासको राज्य देकर मुनि हो गया।

सौदास मांसका लोलुपी बनकर अयोध्याका राज्य करने लगा। अयोध्यामें कार्तिक और फाल्गुन-की अष्टान्हिकाओंमें जीवहिंसा न करनेकी सूर्यवंशी राजाओंकी आज्ञा चली आरही थी। सौदासने उन्हीं अष्टान्हिकाके दिनोंमें सुंडा नामके कोतवालको बुलाकर मांस लानेके लिए कहा। कोतवालने कहा—महाराज! इन दिनों आपके नगरमें सर्वत्र जीव हिंसाका निषेध है। राजाने कहा—"कोई जानने न पाए इस तरह मेरे लिए मांस लानेका प्रयत्न करो। मेरे जीवनकी रक्षा तुम्हारे हाथ है।" राजाकी यह हालत देखकर सुंडा कोतवाल नगरके बाहर गया और जमीनमें रक्खे हुए तत्कालके मृतक बालकको वस्त्रसे ढककर ले आया तथा स्वादिष्ट वस्तुओंके साथ पकाकर चुपचाप राजाको खिलादिया। वह मांस राजाको बड़ा स्वादिष्ट मालूम दिया। खानेके बाद उसने पुनः कोतवालसे पूछा—'भद्र! यह मांस तुम कहाँसे लाये। ऐसा स्वादिष्ट मांस तो मैंने पहले कभी नहीं खाया था।' कोतवालने अभयदान मांगकर जैसेका तैसा सब निवेदन कर दिया। राजाने कहा तुम ऐसा ही मांस सदा लाया करो। उस दिनसे सुंडने बच्चोंको लड्डू बांटना प्रारम्भ किया। बच्चे लड्डुओंके लोभसे वहाँ प्रतिदिन आने लगे और जब वे लड्डू लेकर जाते तो सुंड पीछेसे उनमेंसे किसी एकको मारता और उसका माँस पकाकर राजाको खिलाता। प्रतिदिन जब बालक कम होने लगे तो पुरवासियोंको पता चला। उन्होंने सौदासको सुण्ड सहित नगरसे निकाल दिया और रानी कनकप्रभासे उत्पन्न उसके पुत्र सिंहरथको राजसिंहासनपर बैठाया। माँसका लोलुपी सौदास तिरस्कृत हो दुःखसे भरे हुये मुर्दोंके शवको खाता हुआ दुःखसे पृथ्वीपर भ्रमण करने लगा। चूंकि यह सिंहके समान ही माँसका आहार करता था अतः इसका नाम 'सिंह सौदास' लोकमें विख्यात हो गया। इसी तरह भ्रमण करता हुआ यह दक्षिण दिशाकी ओर गया। वहाँ किसी मुनिसे धर्म श्रवणकर इसने अणुव्रत धारण कर लिये।

उसी समय महापुर नगरका राजा विना पुत्रके ही मर गया था। अतः नये राजाको लानेके लिये नगरकी तरफसे राजहस्ती छोड़ा गया। वह सौदासको कन्धेपर बिठाकर ले गया। अतः सौदास ही उस नगरका राजा घोषित किया गया। राजा बन जानेके बाद सौदासने अपने पुत्रके पास दूत भेजा कि वह मुझे आकर नमस्कार करे। पुत्रने कहला भेजा कि तुम्हारा आचरण निंद्य है अतः मैं नमस्कार नहीं करूँगा। इसपर सौदासने सिंहरथपर आक्रमण-कर दिया। सौदासका आक्रमण सुनकर नगरके लोग इस डरसे भागने लगे कि यह मनुष्योंको खा जायगा। पुत्रको युद्धमें जीतकर तथा पुनः उसे ही राज्य देकर सौदासने विरक्त हो दीक्षा ले ली।

उस सौदासके पुत्र सिंहरथसे ब्रह्मरथ हुआ, ब्रह्मरथसे चतुर्वक्र, चतुर्वक्रसे हेमरथ, हेमरथसे शतरथ, शतरथसे उदयपृथु, उदयपृथुसे अज, अजसे पयोरथ, पयोरथसे इन्द्ररथ, इन्द्ररथसे सूर्यरथ, सूर्यरथसे मानधाता, मानधातासे वीरसेन, वीरसेनसे प्रतिमन्यु, प्रतिमन्युसे कमलबन्धु जो सूर्यके ही समान तेजस्वी था, कमलबन्धुसे रविमन्यु जो प्रतापसे सूर्यके समान था, रविमन्युसे वसन्त तिलक, वसन्त तिलकसे कुबेरदत्त, कुबेरदत्तसे कुंथभक्त जो महायशस्वी था, कुंथभक्तसे शरभरथ, शरभरथसे द्विरदरथ, द्विरदरथसे सिंह दमन, सिंहदमनसे हिरण्य-कशिपु, हिरण्यकशिपुसे पुंजस्थल, पुंजस्थलसे ककुत्स्थ, ककुत्स्थसे महापराक्रमी रघु। इस तरह इक्ष्वाकु वंशमें अनेक राजा हुए जिनमें बहुतसे दिगम्बर व्रत धारणकर मोक्ष गये।

इसके बाद राजा रघुके अनरण्य नामका पुत्र हुआ। अनरण्यके शीलादि गुणोंसे विभूषित पृथ्वीमती नामकी भार्या थी। उनके सूर्य चन्द्रमाके समान दो पुत्र हुये। पहलेका नाम अनन्तरथ

था दूसरेका नाम दशरथ था। रावणके साथ युद्धमें पराजित होकर जब सहस्ररश्मि मुनि हो गया तो मित्रके स्नेहसे अनरण्य भी संसारसे विरक्त हो गया। एक महीनेके बालक दशरथको राज्य सौंपकर वह अपने ज्येष्ठ पुत्र अनन्तरथके साथ मुनि बन गया। अनरण्य तप करके मोक्ष गये और अनन्तरथ मौनपूर्वक पृथ्वीपर विहार करने लगे। अनेक कठिन परीषहोंमें भी ये अडिग रहे अतः लोग इन्हें अनन्तवीर्य कहने लगे। इनका यही नाम प्रसिद्ध हो गया।

दर्भपुरके राजा सुकोशल और उनकी अमृतप्रभा नामक रानीसे उत्पन्न अपराजिता (कौशल्या) नामकी कन्यासे दशरथने विधिपूर्वक पाणिग्रहण किया। दूसरी पद्मपत्र नगरके राजा तिलकवन्धु और रानी मित्रासे उत्पन्न सुमित्रा नामकी कन्यासे विवाह किया। तीसरी रत्नपुरके राजाकी पुत्री सुप्रभासे विवाह किया। इस प्रकार दशरथ पूर्व पुण्योदयसे तीनों रानियों-के साथ सुखपूर्वक रहने लगा।
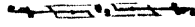
१४ श्री रामचन्द्र और सीताका जन्म

एकबार राजा दशरथ सभामें बैठे हुये थे कि उनके पास आकाश मार्गसे नारद आये। दशरथने उनका बहुत बहुत सन्मान किया और मणिमयी उच्चासनपर बैठाया। परस्परमें सब प्रकारकी कुशल क्षेम पूछनेके बाद दशरथने पूछा—महाराज कैसे आना हुआ? नारदने कहाः—मैं विदेह क्षेत्रसे आ रहा हूं। वहाँ सीमन्धर स्वामीका दीक्षा कल्याणक देखकर जहाँ २ मन्दिर थे उन सबकी मैंने बन्दना की। उसके बाद मनोरञ्जनके लिये मैं लंका गया वहाँ राक्षस-वन्शी महाबलवान राजा रावण है। उसके घरमें शान्तिनाथ भगवानकी प्रतिमाके मैंने दर्शन किये। उसकी सभामें मैंने एक बड़ी विपरीत बात सुनी। निमित्त ज्ञानीने रावणसे कहा है कि सीताके निमित्तसे दशरथके पुत्रों द्वारा उसकी मृत्यु होगी। यह सुनकर भयभीत विभीषणने रावणसे कहा कि जब तक राजा जनक और दशरथके सन्तान हो उसके पहले ही मैं उन्हें मार डालूगा। उसने अपने दूत तुम्हें देखनेके लिये भेजे थे। वे प्रच्छन्न रूपसे तुम्हें देखकर वापिस चले गये हैं और तुम्हारे विषयमें सारी बातें विभीषणसे जाकर कह दी हैं। अतः विभीषण तुम्हें मारनेकी सोच रहा है। वह आज कलमें ही यहाँ आयेगा। यह सब वृत्तान्त मैंने सुना था। तुम्हारे स्नेहवश उसे तुमसे कहने यहाँ आया हूँ। अतःतुमको अपनी रक्षाका प्रयत्न करना चाहिए।

इस प्रकार दशरथको सब समाचार कहकर नारद मिथिलापुर गये और जनकसे भी उसी प्रकार सब समाचार कहे। राजा दशरथ और जनक दोनोंने यह समाचार अपने २ मन्त्रियोंके सामने रक्खे। मन्त्रियोंने कहा—न जाने आगे क्या हो? अतः जब तक यह विघ्न नहीं टलजाता तब तक आप लोग प्रच्छन्न रूपसे दूसरे नगरमें रहें। इसमें ही अपना कल्याण है। यह सुनकर दोनों राजा देशान्तर चले गये और उनकी जगह दो नकली शरीर बनाये गये। उनमें लाखका रस आदि भरके उन्हें सिंहासनपर बैठा दिया। विभीषणने आकर उन नकली राजाओंको मार दिया। इससे मिथिला और अयोध्याकी राजभक्त प्रजामें खलबली मच गई। विभिषण भी उन राजाओंको मरा हुआ समझकर हर्षित हो लंकाको लौट गया। रावण इस व्यर्थ हिंसाके पापका प्रायश्चित्त कर अपने भाइयोंके साथ निष्कंटक राज्य करने लगा।

उधर राजा दशरथ जनकके साथ अनेक देशोंमें पैदल भ्रमण करते हुये कौतुक मङ्गल नगरमें आये। शुभमति उस नगरका राजा था पृथ्वीमती उसकी रानी थी। उनके कैकय और द्रोण नामके दो सुन्दर पुत्र थे और कैकामती नामकी एक कन्या थी। यह कन्या गुणरूप और संगीतमें पारंगत तथा शस्त्र तथा शास्त्र विद्यामें अत्यन्त निपुण थी। उसके पिताने उसके विवाहके लिये स्वयंवर रचा जिसमें हरिवाहन आदि अनेक राजा आये। वे सब अपने २ मञ्चपर बैठे हुये थे। वहीं जनकके साथ राजा दशरथ भी बैठ गये। धायने पुत्रीको हरिवाहन आदि अनेक पराक्रमी अभिमानी राजाओंका परिचय दिया। किन्तु कन्याने सब राजाओंको छोड़कर राजा दशरथके गलेमें वरमाला डाल दी। यह देखकर हेमप्रभादि राजाओंको क्रोध हो आया। "यह कौन भिखारी है जो कन्याको लिये जाता है।" इस तरह कह कर वे लड़ने उठे। तब कन्याके पिता शुभमतिने क्रुद्ध हो जामाता (दशरथ) से तो कन्याकी रक्षा करनेके लिये कहा और उन राजाओंके प्रति कहा कि इन दुष्टोंको मैं अभी हथियारोंसे मार डालता हूं। दशरथने कहाः—महाराज. आप ठहरें आपके देखते ही मैं इन्हें अभी यमराजके घर पहुंचाता हूँ। यह कहकर दशरथ सुडौल घोड़ोंसे जुते हुये रथपर चढ़कर अनेक शस्त्रोंसे सुसज्जित हो रणभूमिमें आये। देवी कैकामती उस रथके सारथीको हटाकर स्वयं रथ हाँकने बैठ गई और कहा—देव! आज्ञा करो किस पापी दुष्टकी ओर रथ हाँकूँ? दशरथने कहा—देवि! रङ्कोंको मारनेसे क्या, ये जो राजा लोग हैं इन्हींकी तरफ रथ हाँको। तब कैकामतीने कहे अनुसार उन्हीं राजाओंकी तरफ विमानकी तरह शीघ्र रथ दौड़ाया। दशरथने अनेक राजाओंको मारा। यहाँ तक कि बहुतसे घोड़े और रथ छोड़कर भाग खड़े हुये। तब हेमरथ युद्धमें सन्मुख आया। किन्तु वह भी दशरथके आगेसे हिरणकी तरह भाग गया। इस विजयसे दशरथकी सेनामें जयजयकार हुआ। राजा शुभमति अपने दोनों पुत्रों सहित खूब प्रसन्न हुआ। केकामती और दशरथका बड़ी धूमधामसे विवाहोत्सव मनाया गया। वन्दिजनोंने राजा रानी व उनके पुत्रोंका जयजयकार किया। राजा दशरथ चतुरङ्ग सेना सहित गाजे बाजेके साथ अयोध्या चले गये और राजा जनक मिथिलापुरी चले गये। नगर निवासियोंने उनका पुनः जन्मोत्सव मनाया और दुबारा राज्याभिषेक किया। सब प्रकारसे निर्भय पुण्यात्मा दशरथ अपनी चारों रानियोंके बीच स्वर्गमें इन्द्रकी तरह सुशोभित हुये।

दशरथने एक दिन एकान्तमें रानी केकामतीसे कहाः—देवि. यदि उस दिन तुमने रथ न हाँका होता तो मेरी विजय न होती अतः तुम इस समय अपनी इच्छानुसार मुझसे वर माँगो। केकामतीने प्रसन्न होकर कहाः—देव, जब कोई आवश्यकता होगी तब मागूँगी। दशरथने कहा— अच्छी बात है जब तुम्हारी इच्छा हो तब माँगना।

एक दिन सुन्दर शय्यापर सुखसे सोती हुयी रानी अपराजिता (कौशल्या) ने रात्रिके पिछले पहर चार स्वप्न देखे। उठकर जय जयनादके साथ वह पतिके समीप गई और चरणोंको नमस्कारकर पतिके दिये हुये आधे आसनपर बैठ गई और बोली—नाथ! मैंने प्रभात समय हाथी, सिंह, सूर्य और चन्द्रमा इस तरह चार स्वप्न देखे हैं।' राजाने कहा—देवि! तुम्हारे अत्यन्त भाग्यशाली, सुखी, शत्रुओंका दमन करनेवाला श्रेष्ठ पुत्र होगा।' रानी स्वप्नोंका फल सुनकर प्रसन्न हो महलमें चली गई। उसी रात्रिको ब्रह्म स्वर्गसे एक जीव चयकर रानीके गर्भमें आया। तबसे रानी प्रतिदिन भगवानकी कल्याणकारिणी पूजा करती हुई खूब प्रसन्नचित्त रहने लगी। कुछ दिनोंके बाद सुमित्राने भी रात्रिके पिछले पहर पाँच स्वप्न देखे। पहले महाबलवान सिंह देखा, फिर पर्वतपर रक्खा हुआ सिंहासन देखा, उसके बाद अत्यन्त गम्भीर समुद्र देखा, चौथे उगता हुआ सूर्य देखा. पाँचवे परम माँगलिक चक्ररत्न देखा। सुमित्रा प्रभातकी वादित्र-ध्वनिके साथ उठी और पतिसे उसी प्रकार स्वप्नोंका फल पुत्रोत्पत्ति जानकर प्रसन्न हो लौट आई।

नौ महीने पूर्ण होनेपर फाल्गुन कृष्णा त्रयोदशीको रानी अपराजिताने सूर्यके समान शुभलक्षण वाले पुत्रको जन्म दिया। पुत्रके वक्षस्थलमें पद्मका चिन्ह था अतः बालकका नाम पद्म (रामचन्द्र रक्खा गया। घरके सभी लोगोंने बालकका जन्मोत्सव मनाया। सुमित्राने भी शुभलक्षणोंवाले पुत्रको जन्म दिया। उस समय शत्रुओंके घरोंमें भयकारी अपशकुन हुये। सूर्य चन्द्रमाके समान दोनों बालक क्रीड़ा करने लगे। केकामतीने भरत नामके पुत्रको जन्म दिया। तथा सुप्रभाने शत्रुक विनाश करने वाले शत्रुघ्नको पैदा किया। चारों पुत्र इस तरह शोभित हुये मानो चारों खम्भे ही हों। दशरथको अब पुत्रोंके पढ़ानेकी चिन्ता हुई। कंपिल्य नगरमें एक भार्गव नामका ब्राह्मण था उसकी पत्नीका नाम ईषका और पुत्रका नाम एहिरुढ़ था। पुत्रको नालायक समझकर पिताने उसे घरसे निकाल दिया। वह दुखी होकर दो जीर्ण वस्त्र लेकर राजगृह नगर पहुंचा वहाँ धनुर्विद्याका पारंगत एक वैवस्वत नामका पण्डित अपने हजारों शिष्योंके साथ रहता था। उससे उसने विधिवत् धनुर्विद्या सीखी और उसमें अत्यन्त निपुण हो गया। कुशाग्र नगरके राजाने जब यह सुना कि एक विदेशी ब्राह्मण मेरे पुत्रोंसे भी अधिक बाणविद्या निपुण हो गया है तो उसे क्रोध चढ़ आया। राजाको क्रुद्ध जानकर गुरुने एहिरुढ़को समझा दिया कि तुम ऐसा उपाय करो जिससे राजाको तुम्हारी विद्याका पता न चल पावे। एकदिन राजाका निमन्त्रण पाकर सभी शिष्य अपने गुरुके साथ कुशाग्र नगर पहुंचे। राजाने एक करके सभीकी धनुर्विद्याकी जाँच की। उस समय एहिरुढ़ने छलसे राजभयके कारण अपनी चतुरता प्रकट नहीं की। उन सब शिष्योंमें अपने पुत्रोंको अधिक निपुण पाकर राजा मनमें अत्यन्त प्रसन्न हुआ और यह समझकर कि एहिरुढ़को शस्त्रविद्यामें कुछ नहीं आता उसने आचार्य वैवस्वतका खूब आदर सत्कार किया। गुरु और शिष्य राजाज्ञा पाकर राजगृह लौट आये। गुरुने अपनी पुत्री एहिरुढ़को विवाह दी। उसे लेकर एहिरुढ़ अयोध्या आया। दशरथने धर्मार्थ कामकी सिद्धिके लिये शास्त्राध्ययनके निमित्त उसे अपने पुत्रोंको सौंप दिया। उसने उन राजकुमारोंको विद्यामें खूब निपुण कर दिया। बदलेमें दशरथने उसे खूब धन देकर सन्तुष्ट किया। वे चारों राजकुमार अयोध्यामें अनेक प्रकारकी लीलायें करने लगे।

इधर जनक राजाकी विदेहा रानी पूर्वपुण्यसे गर्भवती हुई। उस गर्भकी एक देवता बड़े प्रयत्नसे रक्षा करता था। श्रेणिकने पूछा—भगवन्! देवता उसकी रक्षा क्यों करता था? गौतमने कहा—दारुपत्र नगरमें एक विमुचि नामका ब्राह्मण रहता था. अनुकोषा उसकी स्त्री थी तथा भूतिवर पुत्र और सरसा नामकी नवयौवना पुत्री थी। उसके घरके पास ही एक रुद्र नामका ब्राह्मण रहता था। उसकी पत्नीका नाम कुरी और पुत्रका नाम कपान था। पिताके मर जानेपर कपान अकेला ही रहने लगा। एक बार विमुचि अपनी स्त्री सहित कहीं भिक्षाके लिये चला गया। पीछेसे पापी कपान सरसाको लेकर अपनी माताके साथ निकल भागा और दूर किसी देशमें चला गया। उसे खोजनेके लिये भूति पृथ्वीपर इधर उधर घूमने लगा। इधर उसका सूना घर भी पीछेसे लुट गया। विमुचि जब भीख माँगकर लौटा तो घरको लुटा हुआ देखकर बड़ा दुखी हुआ। वह फिर अपनी स्त्री सहित पुत्रीको खोजने चल दिया। खोजते २ वह सर्वारि नगर पहुंचा! वहाँ उसे तीन ज्ञानधारी सर्वसिद्धि मुनिके दर्शन हुये। उनसे धर्म श्रवणकर विमुचि मुनि हो गया और अनुकोशा अर्जिका बनकर धर्म ध्यानमें तत्पर रहने लगी। रुद्रकी स्त्री कुरी भी अर्जिका हो गयी। तीनों तप करके देव हुये। विमुचिका जीव वहाँसे चयकर रथनूपुरका राजा चन्द्रगति हुआ और अनुकोशा पुष्पवती नामकी उसकी रूपवती रानी हुई। कुरी राजा जनककी भार्या विदेहा हुई। भूति आदिक भी भ्रमणकर यत्र तत्र पैदा हुये। उनमें सरसा मृगी होकर दावानलसे जल मरी और चक्रपुरके राजा चक्रध्वज और रानी मनस्विनीके चित्रोत्सवा नामकी

सुन्दर कन्या हुई। कपान भी ऊँट होकर और मरकर उसी नगरमें राज पुरोहितकी पत्नी स्वाहाके पिंगल नामका कलाविज्ञानसे शून्य पुत्र हुआ। चित्रोत्सवाके साथ वह गुरुके निकट पढ़ नहीं सका। पूर्वजन्मके प्रेमके कारण इस भवमें भी उन दोनोंका प्रेम हो गया। अतः पिंगल चित्रोत्सवाको हरकर ले गया। दरिद्रतासे परिपूर्ण दोनों विदग्ध नगर पहुंचे। दरिद्रताके कारण चित्रोत्सवा पिंगलके पास शोभित नहीं हुई। पिंगल गांवके बाहर कुटी बनाकर रहने लगा और लकड़ियां बेचकर अपना और चित्रोत्सवाका उदर भरने लगा। इधर भूतिवरका जीव मानसरोवरमें हंस हुआ। मुनिसे धर्मश्रवण कर शुभलेश्या पूर्वक मरा और दश हजार वर्षकी आयुका धारक किन्नर देव हुआ। वहांसे चयकर इसी विदग्धपुरमें राजा ज्योतिहर और रानी प्रत्ररावलीके कुंडल मण्डित नामका महापराक्रमी बुद्धिमान पुत्र हुआ। एक बार वह नवयुवक कुमार घोड़ेपर चढ़कर जा रहा था कि झोपड़ीमें बैठी हुयी चित्रोत्सवाको देखकर कामसे पीड़ित हो गया। उसने चित्रोत्सवाको दूती भेजकर घर बुला लिया और उसके साथ मनमाने भोग-भोगकर उसे घर पर ही रख लिया। वह भी लोभमें फँसकर उसीके साथ रहने लगी। पिंगल जब घर लौटा तो चित्रोत्सवाको न पाकर बड़ा दुखी हुआ। अपनी पत्नीको हरा हुआ जानकर पिंगल राजमहल गया और कहा—राजन्! किसीने मेरी पत्नी चुराली है आप उसकी खोज करें। दुखी, दरिद्री और विशेषतया पीड़ित स्त्री पुरुषोंको राजा ही शरण है। तब राजाने धूर्त मन्त्रीको बुलाकर छल पूर्वक कहा—जाओ, देर मत करो इसकी पत्नीको कहींसे खोजकर लाओ। तब मन्त्री आँखका इशारा करके बोला—महाराज! पोदनापुरके रास्तेमें पथिकोंने इसकी स्त्रीको जाते देखा है। क्षांति आर्यकाके पास वह तप करना चाहती है। अतः ब्राह्मण देवता, रोते क्यों हो? जाओ उसे रोको। यह सुनकर ब्राह्मण शीघ्र ही पोदनापुरकी तरफ गया और सारे नगरमें, मठोंमें, उपवनोंमें अपनी स्त्रीको ढूँढ डाला। जब कहीं नहीं पाया तो पुनः विदग्ध नगर आकर राजमन्दिर गया। राजाकी आज्ञा पाकर लोगोंने उसे वहांसे निकाल दिया। वह चिंतातुर होकर पृथ्वीपर घूमने लगा। सौभाग्यसे उसे आर्यगुप्त आचार्यके दर्शन हुये। उनसे धर्मश्रवणकर वह मुनि हो गया और घोर तपश्चरणकर महातेजस्वी असुर कुमार देव हुआ।

इधर राजा कुंडलमंडित किलेका आश्रय पाकर चौरविद्यासे अयोध्या तथा अन्य देशोंको उजाड़ने लगा। वहाँका राजा अनरण्य (दशरथका पिता) उसे पकड़ नहीं सका। अतः अपने देशोंके उजड़नेसे वह चिंतित रहने लगा। रातको न सोता न दिनको खाता, अतः अत्यन्त कृश हो गया। राजाकी हालत देखकर बालचन्द्र सेनापतिने पूछा—"महाराज! आप सदा उद्विग्नसे रहते हुये मालूम पड़ते हैं इसका कारण क्या है।" राजाने उसे अपनी बेचैनीका सारा वृत्तान्त कह दिया। तब सेनापतिने प्रतिज्ञा की—राजन्! जब तक कुंडलमंडितको मैं पकड़ नहीं लाऊँगा तब तक आपको मुँह नहीं दिखाउँगा। यह कहकर क्रोधसे भरा हुआ सेनापति चतुरङ्ग सेना सहित युद्धके लिये चला। कुंडलमंडित चित्रोत्सवामें अत्यन्त आसक्त होनेके कारण अन्य राज्यादि कार्योंमें चित्त ही न देता था, प्रमादी था। उसके व्यवहारसे नौकर चाकर भी असन्तुष्ट थे। वह लोक वृत्तान्तसे शून्य निरुद्यम हो गया था। अतः बालचन्द्रने क्रीड़ा मात्रमें ही उसे मृगकी तरह पकड़ लिया। उसकी सेना और राज्यपर अधिकार कर उसे देशसे निकाल दिया और स्वयं अनरण्यके समीप लौट आया। बालचन्द्रने अनरण्यका राज्य निष्कंटककर दिया। अतः अनरण्य उससे खूब प्रसन्न हुआ।

उधर पापी कुण्डलमण्डित दरिद्र होकर पश्चात्ताप करता हुआ पृथ्वीपर घूमने लगा। घूमते घूमते वह मुनियोंके आश्रममें पहुंचा और उन्हें नमस्कार कर उनसे धर्मका स्वरूप पूँछा। सच है—दुखी, दरिद्री, अनाथ और रोगीजनोंकी ही प्रायः धर्ममें बुद्धि होती है। दयालु मुनियोंने

उसे चारों गतिके भेद प्रभेद बतलाये. पुण्य पापका सुख दुख फल बतलाया तथा शास्त्रानुसार मुनि और श्रावकके व्रत कहे। मुनियोंसे धर्म-श्रवणकर कुण्डलमण्डितने आचार्यको नमस्कार कर सम्यक्त्व पूर्वक रात्रि भोजन त्याग आदि श्रावकके व्रत ग्रहण किये। किन्तु उसे अपने देश निकालेकी सदा चिन्ता रहती। उसने मनमें सोचा कि मेरा मामा बड़ा पराक्रमी है। दुखी देख कर वह अवश्य सहायता करेगा। उसकी सहायतासे मैं राजा होकर पुनः शत्रुको जीत लूँगा। इस तरह मनमें निश्चयकर आशापूर्ण चित्तसे वह दक्षिण दिशाकी ओर गया। किन्तु थकान आदिके दुखोंसे मार्गमें ही उसे समाधि मरण पूर्वक प्राण छोड़ने पड़े। अतः वह मरकर व्रत पुण्यके प्रभावसे रानी विदेहाके गर्भमें आया है। उसके गर्भमें आनेके बाद ही वह पिंगलका जीव असुर कुमार पूर्व वैर स्मरणकर इस विचारसे उसकी देख भाल कर रहा था कि जन्म होते ही उसे मार डालूँगा।

नौ महीने पूर्ण होनेपर विदेहाने सुन्दर बालकको जन्म दिया। असुरने उसी समय उस बालकको हर लिया और आकाश मार्गसे ले जाकर एक शिलासे दबाकर मारनेका विचार किया। किन्तु उस शुभलक्षणवाले बालकको देखकर वह सोचने लगा—अहो, पहले भवमें मैं मुनि था उस समय एकेन्द्री जीवको भी मैंने नहीं मारा था। अब इस पचेन्द्री जीवको मैं कैसे मारूँ ? मैं यह संसारमें रुलाने वाला कार्य नहीं करूंगा। अतः इसे बनमें ही किसी स्वच्छ और सुरक्षित स्थानपर रख आऊँगा। यह सोचकर उसने बालकके कानोंमें कुण्डल पहराये और उसे लघुपर्णा विद्याके सहारे नीचे छोड़ दिया। उसी समय उद्यानमें स्थित विद्याधर चन्द्रगतिने रातमें विद्याके सहारे गिरते हुये उस बालकको देखा। "यह कोई नक्षत्र पात है या विद्युत्पात है" इस तरह थोड़ी देर विचारकर उसने निकट आकर देखा तो एक सुन्दर बालक पाया। बड़ी प्रसन्नतासे उस बालकको वह घर ले गया और शय्यापर सोती हुई अपनी रानी पुष्पवतीकी जंघाओंके बीचमें उसे रख दिया और कहने लगा—रानी, उठो उठो देखो तो तुम्हारे कैसा सुन्दर पुत्र हुआ है। पतिके हाथके स्पर्शसे जगकर रानी उँघती हुई शय्यासे उठी और बालकको देखकर बड़ी प्रसन्न हुई। बालककी सुन्दर कांतिसे रानीकी रही सही निद्रा भी जाती रही। बड़े आश्चर्यसे उसने पतिसे पूछा—नाथ, यह पुत्र किस पुण्यवती स्त्रीने जन्मा है ? पतिने कहा—देवि ! यह पुत्र तुम्हारे ही पैदा हुआ है। सच मानो, इसमें संशयकी क्या बात है ? भला तुमसे अधिक पुण्यवती और कौन है। रानीने कहा—नाथ मैं वांझ हूं अपने पूर्वकर्मोंसे वैसी ही ठगी गई हूँ अब उस-पर आप और हँसी कर रहे हैं। पतिने कहा—देवि, इसमें शंका न करो। कर्मके नियोगसे स्त्रियोंके प्रच्छन्न गर्भ भी रहता है। रानीने कहा-अच्छी बात है लेकिन यह इतने सुन्दर कुण्डल यहाँ मनुष्य लोकमें कहाँ होते हैं ? राजाने कहा-अच्छा अब तक तो यह यों ही बातें थीं अब तुम्हें मतलबकी बात बताता हूँ। इस बालकको आकाशसे गिरते हुए मैंने पकड़ा है। यह तेरा पुत्र कुलीन वंशका है इसके लक्षण इसके महापुरुष होनेकी सूचना करते हैं। किसीने बड़े कष्ट और श्रमसे इसके गर्भका भार वहन किया होगा परन्तु तुझे यह अनायास ही सुखसे मिल गया है। रानी प्रसन्नतासे उस पुत्रको गोदमें लेकर सूतिका घरमें चली गई। सुबह होनेपर पुत्र जन्मकी सूचना सारे राज्यको दी गई। रथनूपुरकी प्रजाने बड़ी धूमधामसे कुमारका जन्मोत्सव मनाया। सभी कुटुम्बी जनोंको पुत्रोत्पत्तिसे बड़ा विस्मय हुआ। रत्नकुण्डलोंकी प्रभासे मण्डित पुत्रको देखकर माता पिताने उसका नाम प्रभामण्डल रक्खा और उसे पालनेके लिए धायको दे दिया। अंतः-पुरमें सभी लोग उसे हाथों हाथ खिलाते थे।

उधर रानी विदेहा पुत्रके हरण हो जानेसे विलाप करने लगी। सभी कुटुम्बीजन दुःखसे व्याकुल होकर रोने लगे। उसी समय रावणकी पट्टरानी मन्दोदरीके गर्भमें भी पूर्व जन्मके वैरको

लेकर स्वर्गसे आया हुआ जीव था। उस गर्भकालमें ही मन्दोदरीको यह दुष्टबुद्धि पैदा हुई कि मैं अपने पतिको शस्त्रोंसे मार डालूँ। जब रावणको मन्दोदरीका यह दोहला मालूम हुआ तो उसने मन्दोदरीको एकान्त स्थानमें रख दिया। नौ मास पूर्ण होनेपर मन्दोदरीके कन्या पैदा हुई। रावणने उसे अपनी जन्मकी वैरिणी जानकर तत्काल एक मंजूषामें बन्द कर दिया और मारीचके हाथमें देकर कहा कि इसे कहीं दूर जाकर पृथ्वीपर फेंक आओ। रावणकी आज्ञा पाकर मारीच उस मंजूषाको लेकर विमानसे उड़ गया और मिथिलाके उद्यानमें उतरकर वहीं किसी अच्छे स्थानपर उसे रखकर लंकाको लौट आया। प्रभात होनेपर एक किसान जब हल लेकर खेत जोतने आया तो सामने पड़ी हुई वह मंजूषा देखी। जिस दिन असुरने जनकके पुत्रको हरा था उसी दिन किसानने डरसे वह मंजूषा लाकर राजाको दी। उस मंजूषाके अन्दर सुन्दर कन्या देखकर राजाने उसे वियोगसे शोकाकुलित रानीके हाथमें दिया और कहा—देवि, शोक मत करो यह पुत्री अपनी गोदमें लो, मैं शीघ्रही तुम्हारे पुत्रकी खोज करूँगा। इस प्रकार सुंदर वचनोंसे जनकने विदेहाको शांत किया। पुत्रके वियोगसे दुखी विदेहा भी उस पुत्रीको देखकर संतुष्ट हुई। चूंकि पुत्रीको हलवाहकने पृथ्वीसे पाया था इसलिए पुत्रीका नाम माता पिताने सीता[1] रक्खा। पुत्रके हरणकी सूचना जनकने राजा दशरथको भी दे दी थी। दोनोंने बहुत खोज करनेके बाद भी जब पुत्रको नहीं पाया तो निराश होकर बैठ रहे।

सुन्दरी सीता कलाविज्ञानमें पारंगत होकर सयानी हुई। उसे देखकर घरके सभी लोगोंको बड़ा हर्ष होता था। एकबार ऐसा हुआ कि बबर देशके म्लेच्छोंने राजा जनकके राज्य पर चढ़ाई कर दी। अपने राज्यको नष्ट भ्रष्ट होते देखकर जनकने सहायताके लिए दशरथके पास गुप्त नामका दूत भेजा। दूतने दशरथको नमस्कार कर कहा—'राजन्! बर्बर देशके म्लेच्छ राजाओंने आकर जबर्दस्ती अनेक नगरोंपर अधिकार कर लिया है, चारों तरफ मार काट कर रहे हैं, वर्णाश्रम धर्मको भ्रष्ट कर दिया है, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रोंको बल पूर्वक एक बर्तनमें मद्य मांसादि खिलाते हैं, अनेक चैत्यालय और शिखरबद मंदिर ढा दिए हैं, मुनियोंको पीड़ा देते हैं, श्रावकोंको त्रस्त करते हैं, स्त्रियोंको पकड़कर कारागारमें डाल देते हैं। गाएँ आदि लूट ले जाते हैं। और अब वे शीघ्र ही मिथिलामें आरहे हैं।' यह सुनकर दशरथने राम लक्ष्मणसे जानेको कहा। दोनों भाई चतुरङ्ग सेना लेकर मिथिला चले। जनक और कनक दोनों भाइयोंको युद्धमें म्लेच्छोंने पकड़कर कारागारमें डाला ही था कि राम और लक्ष्मण शीघ्र मिथिला पहुँचे, और म्लेच्छोंको इस तरह मारा जैसे सिंह हाथियोंको मारता है। कुमारोंने उसी समय जनक और कनकको कारागार मुक्त किया। उनके डरके मारे म्लेच्छ राजा हाथी रथ आदि छोड़कर भाग गए। तो भी उन्होंने म्लेच्छोंका पीछा कर उन्हें मारा, यहाँ तक कि म्लेच्छ राजा डरकर गंगाके वनोंमें जाकर छिप गए। दोनों कुमार जनकको राज्य सम्हलवाकर अयोध्या लौटे और पिताके चरणोंको नमस्कार कर सुखसे रहने लगे। पिता भी पुत्रोंको देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए। जनक आनन्दसे मिथिलामें राज्य करने लगे, परन्तु उन्हें एक चिंता निरन्तर रहने लगी। वे सोचते कि रामने हमारा बहुत उपकार किया है अतः पुण्यशाली पुरुषको बदलेमें क्या पुरस्कार दूँ? हाँ, मेरी एक सुन्दर कन्या है। मैं उसे ही रामको समर्पण करूँगा। इस तरह सोचकर रामको सीता देनेका मनमें संकल्प किया।

---

१ हलको संस्कृतमें सीता कहते हैं।

१५. सीताका विवाह, धनुषयज्ञ, भामण्डल समागम और दशरथ वैराग्य

रामको सीता प्रदानका संकल्प सुनकर नारद सीताको देखने मिथिलापुरी आए और जनककी सहमतिसे भीतर अंतःपुरमें चले गए। उस समय सीता दर्पणमें अपना मुख देख रही थी। दर्पणमें नारदकी दाढ़ी सहित भयानक आकृतिका प्रतिविम्ब देखकर वह डरसे भीतर भाग गई। नारद भी कुतूहलसे उसके पीछे ही पीछे चलने लगे। द्वाररक्षक स्त्रियोंने उन्हें बीचमें ही रोका। दोनोंमें कलह होने लगी। कलह सुनकर खड्गधारी सिपाही इकट्ठे होगए। पकड़ो, मारो, कौन है ? कहकर जोर २ से चिल्लाते हुए होठ डसते हुए मारनेको उद्यत पुरुषोंको देखकर नारद भयभीत होगए, उन्हें रोमाञ्च हो आया। तुरन्त आकाशमार्गसे उड़कर कैलाशपर जाकर विश्राम किया। सोचने लगे, ओह, मैंने बड़ा कष्ट भोगा, यह मेरा नया ही जन्म हुआ है, दावानलसे पक्षीकी तरह ही मैं उस महाविपत्तिसे निकल सका हूँ। सीताको देखनेके लिए मैं गया था। सीताने ही मुझे पिटवाया। इसके बदलेमें अगर सीताको ही दुख नहीं दिया तो मैं नारद ही काहेका।

इस तरह मनमें सोचकर सीताका चित्रपट बनाकर वे रथनूपुर ले गए और उद्यानमें खेलते हुए कुमार भामंडलको वह चित्र दिखाया। कुमार उस चित्रको देखते ही मूर्च्छित होगया। थोड़ी देरमें सचेत हो जानेके बाद वह कामसे पीड़ित हो शोक करने लगा। न रातको सोता न दिनको खाना खाता। कामकी दसों दिशाओंको प्राप्त होकर व्याकुल चित्त रहने लगा। कुमारका यह हाल देखकर चन्द्रगति विद्याधरने नारदसे पूछा कि-यह किसकी कन्या है ? क्या नाम है ? क्या गुण है ? नारदने कहा—'मिथिलाके राजा हरिवंश कुलोत्पन्न जनककी यह सीता नामकी पुत्री है। अत्यन्त गुणवती रूपवती तथा कला और विज्ञानमें पारंगत है और तुम्हारे पुत्रके लिये सर्वथा योग्य है।' नारदके वचन सुनकर चन्द्रगतिको बड़ी प्रसन्नता हुई। पत्नीके साथ आकर पुत्रसे कहा-बेटा ! खाना पीना आदि पहले जैसा ही करने लगो मैं अवश्य इस कन्यासे तुम्हारा विवाह करा दूँगा।' इस तरह पुत्रको समझाकर फिर एकान्तमें हर्ष विषाद और आश्चर्य पूर्वक अपनी पत्नीसे कहाः—प्रिये ! विद्याधरोंकी अत्यन्त सुन्दर उपमारहित कन्याओंको छोड़कर भूमिगोचरियोंकी कन्याओंसे हमारा सम्बन्ध करना कहाँ तक उचित है ? दूसरे भूमिगोचरियोंके घरपर भी हमारा जाना कहाँ तक ठीक है ? तीसरे हमने जाकर कन्या माँगी और उन्होंने नहीं दी तो हमारा क्या मुँह रहेगा। इसलिए किसी भी उपायसे कन्याके पिताको यहाँ ले आना चाहिए। यहीं उनसे कन्याकी मँगनी करेंगे। इसके अतिरिक्त और कोई दूसरा मार्ग नहींहै।' रानीने कहाः—नाथ ! ठीक है या नहीं यह तो आप जाने। परन्तु आपकी बात मेरी भी समझमें आती है।

इसके बाद चन्द्रगतिने चपलवेग नामके नौकरको बुलाकर उसके कानमें सारा वृत्तान्त समझाया। नौकर आज्ञा पाकर शीघ्र ही मिथलानगरी गया जैसे कोई तरुण हंस बड़ी प्रसन्नतासे विकसित पद्मनीकी ओर जाता है। वहाँ जाकर उसने सुन्दर घोड़ेका रूप बनाया और नगरके गाय भैंस घोड़े आदिको त्रास देने लगा। घोड़ेके उपद्रवसे नगरमें कोलाहल मच गया। लोगोंके मुखसे घोड़ेकी सारी करतूतें सुनकर जनक हर्ष, उद्वेग और कौतुकसे नगरसे बाहर निकला और तरुण घोड़ेको देखा। अश्व पकड़नेकी कलामें चतुर पुरुषोंने अनेक प्रपञ्चोंसे उस घोड़ेको पकड़ पाया। एक महीने तक धीरे २ हिलाकर उसे वशमें किया। एक दिन किसी हाथी पकड़ने वालेने राजाको आकर प्रणाम करके कहा—महाराज ! जंगलमें एक उत्तम हाथी आया है उसे आप देखलें। यह सुनकर राजाने अपना घोड़ा मँगवाया। सेवक वही घोड़ा

राजाके पास ले आया। राजा जनक ज्यों ही उस घोड़े पर चढ़े कि घोड़ा उन्हें आकाशमें ले उड़ा और अदृश्य होगया। कुटुम्बके तथा नगरके सभी लोग हाहाकार करते हुए घबड़ाहटके साथ बड़े विस्मित चित्तसे वापिस लौट आये।

घोड़ा अनेक नदी, पर्वत और देशोंको लांघता हुआ राजा जनकको विजयार्द्ध पर्वतके ऊपर रथनूपुरकी भूमिपर ले आया। वहाँ घोड़ेपर भागता हुआ राजा जनक जिन-मन्दिरके पासही उद्यानमें लगे हुए वृक्षकी शाखा पकड़कर लटक गया। थोड़ी देर बाद जनक वृक्षसे उतरा और जिनमंदिर देखकर स्नान करके उसमें घुसा। जनक यद्यपि घबराया हुआ था तो भी भगवानको नमस्कार कर संतुष्ट हुआ और रत्न मण्डपके नीचे सभा स्थानपर जाकर बैठ गया।

चपलवेग विद्याधर अपना कार्य पूर्ण करके अभिमानके साथ रथनूपुर आया और चन्द्रगतिको नमस्कारकर कहा—'स्वामिन्! राजा जनकको मैं ले आया हूँ और निकट ही उद्यानके अन्दर जिनमन्दिरमें छोड़ आया हूँ।' जनकको आया हुआ सुनकर चन्द्रगति बड़ा प्रसन्न हुआ। अपने इष्ट बन्धुओंके साथ पूजाकी सामग्री ले अनेक सवारियोंपर चढ़कर जिनमंदिर चला। अनेक वादित्र और शंखध्वनिके साथ उस महान सेनाको आते हुए देखकर जनकको आश्चर्य हुआ। बादमें जब उसने सिंह, हाथी और हंस आदिपर चढ़े हुए पुरुषोंको और उनके बीचमें एक विमानको देखा तो सोचने लगा-निश्चयसे ये विद्याधर हैं, मैंने सुना है कि ये सब विजयार्द्ध पर रहते हैं। यह इनके बीचमें जो सुन्दर विमान है उसमें इन विद्याधरोंका कोई राजा बैठा हुआ मालूम देता है।'

इस तरह राजा सोच ही रहा था कि विद्याधरोंका अधिपति बड़े हर्षसे विनय पूर्वक जिन मन्दिर आया। उसे बहुत बड़े लवाजमेके साथ देखकर जनक कुछ सोचता हुआ सिंहासनके नीचे बैठा रहा। चन्द्रगतिने भगवानको नमस्कारकर विधि पूर्वक पूजा और स्तुति की। जनक भी स्तुति सुनकर खड़े होकर भगवानका गुणगान करने लगा। स्तुतिके बाद चन्द्रगतिने कुछ संकोचके साथ जनकसे पूछा—आप कौन हैं? और इस निर्जन स्थानमें जिन मन्दिरके अन्दर कैसे रह रहे हैं? किस देशसे आपका आना हुआ है और आपका नाम क्या है? देखनेमें तो आप राजासे मालूम पड़ते हैं।' जनकने उत्तर दिया, 'मैं मिथिला नगरीसे आया हूं, जनक मेरा नाम है, मायावी घोड़ा मुझे यहाँ हरकर ले आया है।' जनकके इस तरह परिचय देनेपर उन दोनोंमें परस्पर स्नेह हो गया। दोनों परस्पर अभिवादनकर सुखसे बैठ गए। थोड़ी देर तक इधर उधरकी बातें होती रही। बादमें जब दोनों और भी अधिक घुल मिल गये तो चन्द्रगति जनकको घर ले गया। स्नान, भोजन, पान, गन्ध लेपन आदिसे जनकका खूब सत्कार किया। बादमें चन्द्रगतिने कहा—'मेरा बड़ा सौभाग्य है कि आपके दर्शन हुए। मैंने सुना है कि आपके एक सुन्दर कन्या है। मैं चाहता हूँ कि आप उसका विवाह मेरे पुत्रके साथ कर दें।' राजा जनकने कहा—हाँ, मेरे एक सुन्दर कन्या तो है, परन्तु मैंने सन्तुष्ट होकर उसे रामको देनी कर दी है। उन रामके महान गुणोंकी प्रशंसा आपसे मैं क्या करूँ? उन्होंने लीला मात्रमें म्लेच्छ राजाओंको युद्धमें पराजित-कर दिया। शस्त्र और शास्त्र विद्यामें वह पारंगत है, उन्हें देखकर मनुष्य और देवता तक भक्ति पूर्वक नमस्कार करते हैं। अयोध्याके स्वाभिमानी राजा दशरथके वे पुत्र और अपने चारों भाइयोंमें सबसे बड़े हैं। उनसे मेरा बड़ा स्नेह है। अतः उन्हें छोड़कर मैं अन्य किसे अपनी पुत्री दूँ?'

यह सुनकर चन्द्रगतिने कहा—'राजन्! तुम भूमिगोचरियोंकी क्या तारीफ करते हो, देवताओंके समान विद्याधरोंके सामने वे पशुओंके समान हैं' जनकने कहा—'राजन्! आपको

इस तरहके बचन नहीं बोलने चाहिए। किसीका अविनय (तिरस्कार) करना महापापका कारण है। जिन भूमिगोचरियोंमें महापुण्यके कारण तीर्थकर, चक्रवर्ती आदि पैदा होते हैं उनकी निन्दा कैसे की जा सकती है? राम एक महान योद्धा है, लक्ष्मणसा उनका भाई है। उन्हींको मैंने कन्या देना विचारा है, अतः अब किसी दूसरेको कन्या देना उचित नहीं।'

इस पर चन्द्रगति जनकका हाथ पकड़कर आयुधशालामें ले गया और बोला—आप राम और लक्ष्मणका व्यर्थ ही गुणगान कर रहे हैं। विद्याबलसे रहित भूमिगोचरियोंमें बल कहाँसे आया? फिर भी यदि तुम रामको ही कन्या देना चाहते हो तो सुनो—पुराने जमानेमें धरणेन्द्रके दिए हुए मेरे यहाँ दो धनुष हैं। यह दोनों धनुष भक्ति पूर्वक नमि विद्याधरको दिए गये थे। विद्याधरोंका राजा मैं उन्हींका वंशज हूँ। उन दोनों धनुषोंमें एक वज्रावर्त धनुष है दूसरा सागरावर्त धनुष है। दोनों ही मेरे संरक्षणमें हैं। यदि इन दोनोंको वे चढ़ा दें तो इससे ही उनकी शक्तिका पता लग जायगा और अधिक कहनेसे क्या? वज्रावर्त धनुषको चढ़ा देनेपर ही रामचन्द्रसे कन्याका विवाह कर सकते हैं। अन्यथा उस कन्याको बलात् हम यहाँ ले आएंगे।' जनकने यह स्वीकार किया किन्तु उन भीमकाय धनुषोंको देखकर मनमें थोड़ी आकुलता हुयी। सबने भगवानकी पूजा स्तुति की, फिर गदा, हल आदिसे संयुक्त धनुषकी भी पूजा की। बादमें उन दोनों (धनुष और जनक) को लेकर विद्याधर योद्धा मिथिलापुरी आये।

जनकको आया हुआ सुनकर मिथिलाकी खूब शोभा की गई, मंगलाचार किए गए। जनकने नगर निवासियोंको दर्शन देते हुए महलमें प्रवेश किया। विद्याधर उन धनुषोंके लिए एक नई आयुधशाला बनाकर उसकी रक्षा करते हुए बड़े अभिमानसे नगरके बाहर ठहर गए। जनकने अपने सब मन्त्रियोंको इकट्ठा किया और उन्हें रथनूपुरकी वार्तासे अवगत कराया। साथ ही उनसे यह भी पूछा कि स्वयंवरकी केवल बीस दिनकी अवधि दी है अतः अब क्या करना चाहिए? मन्त्रियोंने कहाः—राजन! चिन्ता करनेसे क्या? राम लक्ष्मणकी शक्तिका परिचय सबको धनुषके चढ़ानेसे ही मिल जायगा। तब राजा जनकने धनुषशालाके समीप ही स्वयंवर मण्डप बनवाया और पृथ्वीके सम्पूर्ण राजाओंको निमन्त्रित किया। अयोध्याको भी दूत भेजे। वहाँसे माता पिताके साथ रामचन्द्र और लक्ष्मण आये। जनकने उन सबका आदर किया। अत्यन्त सुन्दरी सीताने सातसौ कन्याओंके साथ मण्डपमें प्रवेश किया। अनेक योद्धा उसकी रक्षाको छोड़ दिये गये। महलके निकट अनेक सामन्त बड़े वैभवके साथ नाना प्रकारकी लीला करते हुए खड़े हो गये। इसके बाद एक बड़ा अनुभवी कंचुकी कन्याके सामने खड़े होकर स्वर्णके बेंतसे संकेत करता हुआ उच्च स्वरसे बोलाः—

'हे राजपुत्रि! यह देखो यह कमललोचन श्रीरामचन्द्र हैं, ये अयोध्याके अधिपति राजा दशरथके पुत्र हैं, और यह इनका छोटा भाई परम तेजस्वी लक्ष्मीवान् लक्षण है। यह महापराक्रमी भरत है और यह सुन्दर चेष्टावाला शत्रुघ्न है। इन महागुणवान पुत्रोंके साथ दशरथ निष्कंटक पृथ्वीका राज्य करता है। और ये बुद्धिमान हरिवाहन हैं, ये धनप्रभ हैं, ये चित्ररथ हैं जो बड़े सुन्दर हैं, ये दुर्मुख हैं जो बड़े प्रभावशाली हैं, ये संजय हैं, ये जय हैं, ये भानु हैं, ये सुप्रभ हैं, ये मन्दर हैं, ये बुध हैं, ये विशाल हैं, ये श्रीधर हैं, ये बीर हैं, ये बंधु हैं, ये भद्रबल हैं, ये शिखी है इत्यादि। ये सभी राजकुमार चन्द्रमाके समान उज्वल कान्तिवाले, विशुद्ध कुलोत्पन्न और अतिशय शोभासम्पन्न है। इनका जो वर्णन किया गया है उसी प्रकारसे ये विख्यात है। तुम्हारे लिये ही इनका यह परीक्षण प्रारम्भ किया गया है। इनमेंसे जो वज्रावर्त धनुष चढ़ादे उसीको तुम बर लो।

कंचुकीके परिचय दे चुकनेके बाद सभी राजकुमार बारी २ से अपनी प्रशंसा करते हुए धनुषकी तरफ गये। वहाँ पहुंचते ही वे देखते कि धनुषसे बिजलीके समान

लाल २ आग निकल रही हैं, बड़े भयानक सर्प फुंकार कर रहे हैं। अग्निज्वालासे किसीकी आँखोंमें चकाचौंध लगने लगा। अतः दुखी होकर उसने हाथोंसे अपनी आँखें बन्द करली और इस तरह बेचारा चलनेसे पराधीन हो गया। किन्हींने दूरसे ही पृथ्वीपर गिर फुंकारते हुए साँपोंको देखकर काँपते हुए आँखें बन्द करली। कोई ज्वर पीड़ित होकर वहीं गिर पड़ा, किन्हींकी बोलती बन्द हो गई, कोई शीघ्र ही भाग गए, किन्हींको मूर्च्छा आगई। अन्तमें रामचन्द्रजी उठे उन्होंने सूर्यकी ज्योतिके समान उस धनुषको उठाया और उस पर डोरी चढ़ाई। उसकी टंकारसे पृथ्वीतल गूंज उठा। पातालमें नाग भयभीत हो उठे स्वर्गमें विमान काँप उठे। उस समय देवोंने प्रसन्नतासे पंचाश्चर्य किये। चारों तरफसे जय जयकार शब्द होने लगा। सीताने उसी समय रामचन्द्रजीके गलेमें वरमाला डाल दी। उस समय रामचन्द्रजीके पासमें बैठी हुई सीता इन्द्राणी जैसी ही सुशोभित हुई। राम धनुषकी डोरी उतारकर सीताके साथ ही अपने आसनपर विनय पूर्वक बैठ गए। इसके बाद तुरन्त ही लक्ष्मणने क्षोभित समुद्रके समान शब्द करते हुए सागरावर्त धनुषको उसकी डोरी जोड़कर चढ़ा दिया। धनुष चढ़ाकर ज्यों ही बाणकी ओर देखा कि विद्याधर "रहने दीजिए" "रहने दीजिए" कहते हुए फूल बरसाने लगे। लोगोंको डरते हुए देखकर लक्ष्मणने धनुषकी डोरी उतारली और अत्यन्त विनयसे रामचन्द्रके समीप आकर बैठ गए।

रामचन्द्रका पराक्रम देखकर विद्याधरोंको बड़ा आश्चर्य हुआ। धनुषकी आशा छोड़कर वे रथनूपुर लौट आये। नगरमें आकर भयभीत हो उन्होंने चन्द्रगतिसे सब समाचार कहे। चन्द्रगति ये समाचार सुनकर बड़ा चिन्तातुर हुआ। इधर दशरथ पक्षके लोगोंने आकर रामचन्द्रजीके चरण कमलोंकी पूजा की। प्रसन्नतासे उनका जय जयकार किया। दशरथकी प्रेरणासे जनकने अपने भाई कनक और उसकी स्त्री सुप्रभासे उत्पन्न लोकसुन्दरी कन्याका विवाह भरतके साथ कर दिया। अन्य आए हुए राजा लोग हतप्रभ होकर और रामचन्द्रकी चर्चा करते हुए अपने अपने नगर लौट गये। इसके पश्चात् राम और सीताका खूब धूम धामके साथ गाजे बाजेसे विवाह हुआ स्त्रियोंने मंगलगीत गाये, ब्राह्मणोंने संस्कार कराया। जनकने आभूषण, घोड़े, हाथी, वस्त्रोंसे वर पक्षका खूब सन्मान किया। सेवकोंको दान देकर संतुष्ट किया। सीता और रामचन्द्र उस समय ऐसे शोभित हो रहे थे जैसे रति और कामदेव या चन्द्र और रोहिणी अथवा धरणेन्द्र और पद्मावती शोभित होते हैं। दशरथ विवाह महोत्सव समाप्त करनेके बाद अपने पुत्रोंके साथ अयोध्या आ गये। और नाना प्रकारके भोग भोगते हुए धर्म कार्योंमें सावधान होकर साम्राज्यका संचालन करने लगे।

एक बार आषाढ़ शुक्ला अष्टमीको अष्टान्हिकाके प्रथम दिन दशरथने पंचामृताभिषेक पूर्वक भगवानकी पूजा की और कंचुकियोंके हाथों अपनी चारों पट्टरानियोंको अभिषेकका जल भेजा। तीन कंचुकियोंने तो वह पापनाशक गंधोदक शीघ्र ही अपनी २ स्वामिनियोंको जाकर दे दिया, जिसे पाकर केकामती, सुमित्रा और अपराजिताको परम हर्ष हुआ, किन्तु चौथा वृद्ध कंचुकी सुप्रभाके पास गंधोदक लेकर नहीं पहुँचा। सुप्रभाको इससे बड़ा बुरा लगा। दुखी होकर क्रोधसे वह मरना चाहने लगी। भंडारीको बुलाकर सुप्रभाने विष मांगा। तब तक दशरथ उसके महलमें आगए। पूछा—देवि, तुम क्यों रुष्ट हो? तथा किस लिए मरना चाहती हो। आत्म घातसे तो तुम्हें नरक मिलेगा। तुम्हें जैन मार्ग नहीं मालूम इसीसे ऐसा सोच रही हो। दशरथ यह कह ही रहे थे कि वृद्ध कंचुकीने आकर रानीसे कहा:—'देवि, लो यह राजाने गंधोदक भेजा है।' दशरथने वह गंधोदक स्वयं लेकर रानीको दिया और अनेक प्रकारसे अनुनय विनय कर रानीको मनाया। इसके बाद कंचुकीसे कहा:—क्यों रे कंचुकी! इतनी देर तैने कहाँ लगाई? तेरे ही

कारण रानी रूठी हुई हैं। कंचुकीने कांपते हुए कहा:—महाराज ! मैं वृद्ध हूं, टांगोंसे चल नहीं सकता, लाठीके सिवा और कोई मेरा सहारा नहीं है, कानोंसे मैं सुन नहीं सकता, आखोंसे मुझे दीखता नहीं, शरीरका मांस सूख गया है, वचन स्खलित निकलते हैं, देह शिथिल हो गई है, बाल पक गए हैं, दांत गिर गए हैं, आहारके बिना क्षण भर भी मेरा शरीर खड़ा नहीं रह सकता, पहलेके अभ्याससे ही मैं आपके इस रत्न निर्मित घरमें घूम रहा हूँ। आपके बुजुर्गोंने मुझे खूब खिलाया पिलाया था, अब मेरे पैर लड़खड़ाते हैं, बचन ठीक २ नहीं निकलते. पुरुषार्थ भी मुझमें नहीं रहा, उसकी बहुत कुछ रक्षा भी की तब भी वह नष्ट हो गया, आज या कल मरनेको बैठा हूं फिरभी तुम्हारी आज्ञाका पालन करता हूं, मेरा जैसा पहले रूप था वह आप भी जानते हैं। लेकिन आज वह तप और दानके बिना यों ही चला गया, न कोई किसीका पुत्र है, न पिता है, न माता है, न भाई है, न नौकर है।'

बुढ़ापेसे दुखी कंचुकीके दयनीय वचन सुनकर राजा मनमें बड़ा भयभीत हुआ। वह संसारके भोगोंसे विरक्त हो तप करनेकी इच्छा करता हुआ सोचने लगा। अहो, जन्म जरा और मृत्युसे परिपूर्ण यह संसार बड़ा कष्टमय है, इसे धिक्कार है। अतः मैं इन राज्य भोगोंको छोड़कर अब तपश्चरण करूँगा। ऐसा विचार करते हुए राजाको प्रभात होगया।

उधर नगरके उद्यानमें सर्वहित नामके आचार्यका पदार्पण हुआ। उन्होंने किसी प्रासुक स्थानपर ठहर कर चातुर्मास योग स्थापन किया। जहाँ तहाँ मुनिगण ध्यान करने लगे। मुनियों-का आगमन सुनकर राजाको बड़ा हर्ष हुआ। पुरजन और परिजनोंको साथ लेकर उनकी वंदना करने निकला। संघके साथ महेन्द्र नामक उद्यानमें पहुंचकर उसने मुनियोंकी वंदना और पूजा की और वहीं जमीन पर बैठ गया। आचार्यने आशीर्वाद देकर उसे संतुष्ट किया। बादमें मुनिराजसे धर्मोपदेश सुना, जीवोंकी उत्पत्ति, प्रलय, कुलकरोंकी व्यवस्था, सात तत्त्वोंका संबंध, तीर्थंकरोंका चरित्र, मुनि और श्रावकका धर्म आदि उपदेश सुनकर विरक्तचित्त हो घर गया। धर्मात्मा श्रावकगण स्त्रियोंसहित मुनिचरणोंकी सेवाके लिए प्रतिदिन आते जाते। अनेक प्रकारकी शास्त्रचर्चा और दान और पूजासे चतुर्मासका समय जाते हुए उन्हें मालूम नहीं हुआ। दशरथ विरागी होकर घरमें ही रहने लगे।

गौतम बोले-श्रेणिक इस प्रसङ्गको यहीं छोड़कर अब तुम्हें भामंडलका वृत्तान्त कहता हूं।

रथनूपुरमें भामंडलको सीताके बिना कहीं अच्छा नहीं लगता। सोना, बैठना, खाना आदि सब भार स्वरूप हो गये। उस समय इसके मित्र वसंत कीर्तिने भामंडलके माता पितासे जाकर कहा:—राजन्! कुमार भामंडल सीताकी चितासे अत्यंत दुखी है। आप उसका कुछ भी उपाय नहीं कर रहे। इस तरहके कार्यमें विलम्ब नहीं किया जाता।' राजाने कुमारको बुला कर मिथिलाके धनुष चढ़ाने आदिके सब समाचार सुना दिए और कहा:—बेटा, तुम किसी विद्याधरकी कन्यासे विवाह कर लो, सीताकी आशा छोड़ दो। उसका विवाह तो रामचन्द्रके साथ कर दिया गया है। जिस महात्माने देवाधिष्ठित शस्त्र हाथमें ले लिया उसके सामनेसे कन्याको हम हरकर भी तो नहीं ला सकते।' पिताकी यह बात सुनकर विवेकी भामंडलको क्रोध आ गया। बोला:—विद्याबलसे रहित ये भूमिगोचरी हैं ही कितने ? मैं उनका निग्रह कर अभी कन्या लाता हूँ।

यह कह कर क्रुद्ध हो वहाँसे उठा और चतुरङ्ग सेना लेकर अयोध्याकी तरफ चला। चलते २ वह विदग्ध नगर पहुंचा। उस नगरको देखकर उसे जातिस्मरण हो आया। अपनेको कुंडलमंडित स्मरणकर वह मूर्च्छित हो गया। साथके लोग उसे उसके पिताके पास ले गए। वहाँ शीतोपचारसे चैतन्य हो कर वह सोचने लगा:—हाय ! हाय !! बड़ा पाप हुआ मुझ पापीने बहनके साथ संबंध करना चाहा।' यह सुनकर चन्द्रगतिने पूछा:—बेटा ! कहाँकी बहन। कहाँका

भाई ? यह तुम भ्रमसे क्या बक रहे हो ? तब भामंडलने हंसकर कहाः—पिता ! इस जन्मके मेरा पिता जनक हैं और माता विदेहा है। पूर्व जन्मके बैरसे देवने मुझे आकाशसे पटक दिया था। उस समय संभवतः आप भूले न होंगे आपने मुझे बीचमें ही दोनों हाथोंसे थाम लिया था। इस तरह भामंडलने अपने पूर्व जन्म, जिनमें वह विमुचि आदि हुआ था, सब विस्तारसे चन्द्रगति-को कह सुनाए।

पुत्रसे उसके पूर्वभव सुनकर चन्द्रगति सोचने लगाः—इस संसारको धिक्कार है, यहाँ माता मरके भार्या हो जाती है, भार्या भगिनी हो जाती है, अतः इसको छोड़कर मैं अब तप करूँगा। इस तरह कहते हुए चन्द्रगति उठा और सपरिवार अयोध्या आया। नन्दन वनमें सर्व-हित मुनिराजको नमस्कार कर धर्मोपदेश सुनने बैठ गया। गुरुने दयामयी दश प्रकारके धर्मका उपदेश दिया। चन्द्रगतिने धर्म श्रवण कर विरक्त हो मुक्तिकी अभिलाषासे पंच महाव्रतकी याचना की। गुरुने प्रार्थनानुसार उसे निर्दोष दीक्षा दे दी। चन्द्रगति भामडलको राज्य देकर मुनि बन गया। बन्दीजनोंने भामंडलकी स्तुति की—यह जनकका पुत्र महाबलवान कुमार जयवंत हो बालकपनमें जिसका हरण हुआ, राजा चन्द्रगतिके यहाँ विद्याधरोंके वंशमें जिसका लालन पालन हुआ। वह कुमार भामंडल जयवंत हो।'

सुबह जय जयकार शब्द सुनकर "क्या हुआ" 'क्या हुआ' कहते हुए लोग उठे और मुनियोंके समीप जयध्वनि सुनकर संतुष्ट हुए। सीता भी वह स्तुति पाठ सुनकर मनमें बड़ी व्याकुल हुई। सोचने लगी क्या मुनियोंके माहात्म्यसे मेरा भाई आ गया। राम शीघ्र ही अपनी शय्यासे उठे। इतने में ही प्रभात होनेके साथ २ सूरज भी निकल आया। राजा दशरथ अपने परिवारके साथ उद्यानमें आए। विमान, घोड़े और हाथियोंसे भरे हुए उद्यानको देखकर बड़ी प्रसन्नतासे वे मुनिराजके समीप गए और नमस्कार करके बैठ गए। वहाँ नवीन मुनिराजके दर्शन कर उनसे संयमका कारण पूछा। मुनिने भामण्डलसंबंधी सब वृत्तान्त उनसे कहा। जनकका पुत्र जानकर दशरथने भामंडलको बड़े प्रेमसे बुलाया। दोनों परस्पर बड़े प्रेमसे मिले। राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न भी आदर और विनयसे मिले। सीता भी कंठसे लगकर खूब रोई। सबमें परस्पर स्नेह हुआ।

दशरथने शीघ्र ही मिथिलाको आदमी भेजा। पुत्रका आगमन सुनकर जनकको बड़ी खुशी हुई। परिवार सहित अयोध्या आया। दशरथ और भामंडल भी नगरसे अगवानी करने निकले। नगरके बाहर दोनोंका सम्मिलन हुआ। पुत्रका मुख देखकर माता विदेहाको बड़ा हर्ष हुआ। माता पिता पुत्रादि सभी आपसमें मिले। परस्पर कुशल क्षेम पूछकर संतुष्ट हुए बादमें विमानमें बैठकर सब लोग मिथिला आ गए। राजा जनकने वहाँ पुत्रका जन्मोत्सव मनाया। पुत्रवती विदेहा अपने भाग्यको सराहती हुई बोलीः—बेटा, मैंने तुम्हारी बाललीलाएँ नहीं देख पाईं। तब भामंडलने विद्याके बलसे अपनी बालोचित अनेक क्रीड़ाएँ दिखाईं। जन्मोत्सवके समय लोगोंकी दरिद्रता मिट गई। याचकोंको आवश्यकतासे अधिक दान बांटा गया। संबंधीजन एक एक महीने तक ठहरे। चलते समय रामने भामंडलसे कहाः—सीताके तुम्ही एक भाई हो अतः उसकी रक्षाका भार तुम्हारे ऊपर है' भामंडलने कहा, मुझे आपकी आज्ञा स्वीकार है।

इसके बाद भामंडलने बहनको छातीसे लगाकर उसे नीतिका उपदेश दिया और समझाया—"बहिन ! सास, श्वसुर, पति और कुटुम्बीजनोंसे तुम इस प्रकार व्यवहार करना जिससे तुम्हारी सब प्रशंसा करें। अन्तमें भामण्डलने सबको बुलाकर विमानमें बैठाया और ढाई द्वीपके जिन-मंदिरोंकी वंदना की। बादमें पुनः मिथिला आकर वस्त्र आभूषणोंसे सबका सन्मान किया। मान्यपक्षके लोग रामचन्द्रजी वगैरह अयोध्या लौट आये।

दूसरे दिन दशरथ परिवारके साथ बनमें आए। मुनिको नमस्कार कर अपने पूर्वभव पूछे। मुनिने कहाः—राजन् ! सेनापुर नामके नगरमें उपास्ति नामकी एक दरिद्र वैश्यकी पुत्री

रहती थी। वह मिथ्यादृष्टिनी साधुओंकी निन्दा करती, न स्वयं दान देती न औरोंको देने देती। इस पापसे उसने नरकादि अनेक योनियोंमें भ्रमण किया। एक दिन "जिन" यह दो अक्षर उसे सुनाई पड़े। उस पुण्यके प्रभावसे वह चन्द्रपुरमें भद्रनामके मनुष्यकी स्त्री धारिणीके धरण नामका बुद्धिमान पुत्र हुआ। उसकी रूपवती स्त्रीका नाम नयन सुन्दरी था। दोनोंने मिलकर मुनिराजको दान दिया। उस दानके प्रभावसे दोनों मरकर धातकी खण्डके अन्दर उत्तरकुरुमें तीन पल्य आयुके धारी भोगभूमियाँ मनुष्य हुए। वहाँसे मरकर स्वर्ग गए। स्वर्गसे चयकर पृथलापुरमें नंदिघोष और उसकी पत्नी वसुधासे नंदिवर्द्धन नामका पुत्र हुआ। नन्द घोप यशोधर मुनिके पास धर्मका उपदेश सुनकर पुत्रको राज्य दे मुनि हो गया और घोर तपश्चरणकर नवग्रैवेयकमें अहमिन्द्र हुआ। धर्मात्मा नन्दिवर्द्धन गृहस्थ धर्मका आचरण करता हुआ नाना भोग भोगता रहा। अन्त समय समाधिमरण पूर्वक शरीर छोड़कर पंचम स्वर्गमें देव हुआ। वहाँसे चयकर सुमेरुके पश्चिमकी तरफ विजयार्द्ध पर्वतपर चन्द्रपुर नगरमें राजा रत्नमाली और रानी विद्युल्लताके अत्यंत रूपवान सूर्यजय नामका पुत्र हुआ। एक दिन राजा रत्नमाली देदीप्यमान सुन्दर रथ, पदाति, हाथी, घोड़े तथा शस्त्र चलानेमें निपुण योद्धाओंके साथ वज्रलोचनसे युद्ध करने सिंहपुर गया। कवच पहनकर, धनुष हाथमें ले, अग्नि विद्यासे शत्रु स्थानको जलानेके लिए क्रोधसे होंठ डसता हुआ रथमें बैठकर वह जा रहा था। आकाशसे सहसा किसी देवने इससे कहाः—रत्नमालि! यह क्या करने जा रहे हो? क्रोध छोड़ो और अपने पूर्वभवका वृत्तान्त सुनो—

'इसी भरत क्षेत्रके अन्दर गंधि नगरमें मांसभक्षक, महापापी सात व्यसनोंका सेवन करने वाला भूतिनामका एक राजा था। एक दिन कमल प्रभ साधुके पास धर्मोपदेश सुन कर वह सम्यक्त्व शून्य श्रावक हो गया। किन्तु पापबुद्धि उपमन्यु नामके पुरोहितने उसका वह व्रत छुड़वा दिया। एक दिन नगरके फाटकपर खड़े हुए दोनोंको किसी पूर्व जन्मके बैरीने मार दिया। पुरोहित भूतिराजाके पुत्रके घर हाथी हुआ और युद्धमें घायल होकर नमस्कार मन्त्र सुनते हुए प्राण छोड़े। मन्त्रके प्रभावसे गंधिनगरके राजा भूति और उसकी रानी योजन गंधाके अरिसूदन नामका पुत्र हुआ। अनलभद्र मुनिराजको देखकर उसे जातिस्मरण हो गया और उन्हींके पास दीक्षा ले ली। वहाँसे मर कर शतार स्वर्गमें मैं देव हुआ हूँ। और तू भूतिका जीव मरकर मोदारण्य बनमें मृग हुआ। वहाँ दावानलसे जलकर अकाम निर्जरा करके मरा और किलज नामका व्याध हुआ। वहाँ भी अत्यंत पापाचरण करके मरा और दूसरे नरकमें पैदा हुआ। वहाँ पूर्व स्नेहसे मैंने तुझे समझाया उससे तू यहाँ आकर रत्नमाली विद्याधर हुआ। क्या तू उन नर्कोंके दुःखोंसे अघाया नहीं?

वह सुनकर रत्नमाली सूर्यजय पुत्रको राज्य दे वैराग्यको प्राप्त हुआ। बादमें सूर्यजयके साथ ही उसने दीक्षा ले ली। दुःखोंसे भयभीत होकर रत्नमालीने घोर तपश्चरण किया और आयु समाप्त कर महाशुक्र विमानमें महाऋद्धिधारी देव हुआ। सूर्यजयभी मरकर वहीं उत्तम देव हुआ। और वहाँसे चयकर अनरण्यका पुत्र दशरथ हुआ। राजन्! थोड़ेसे पुण्यसे ही उपास्तिके भवसे लेकर वटके बीजके समान तेरी उन्नति होती गई। नंदिवर्द्धनके भवमें नंदघोष जो तेरा पिता था, वह मैं ग्रैवेयकसे आकर सर्वभूतहित हुआ हूँ। और भूति तथा उपमन्युके जीव दोनों महाशुक्रसे चयकर जनक और कनक हुए हैं। संसारमें न कोई पराया है न कोई अपना है। केवल अपने शुभा-शुभ कर्मोंसे ही यह जीव जीता मरता रहता है।' इस प्रकार अपने पूर्वभव सुनकर संशयसे रहित हो विनयी दशरथ विरक्त होकर संयम धारण करनेके लिए तत्पर हुआ। बड़ी विनयके साथ गुरु चरणोंकी पूजा की और प्रणाम कर अयोध्या आये तथा मनमें यह

विचार कर लिया कि रामको राज्य देकर मैं मुक्तिका साधन करूँगा। भोग संपदाओंसे विरक्त, मोक्षके इच्छुक राजा दशरथको चिन्ताके मारे रातको नींद भी नहीं आई।

——:-०-:——

१६ रामका वनवास, दशरथकी प्रवज्या, भरतका राज्याभिषेक

प्रातःकाल होते ही दशरथने मन्त्रियोंको बुलाकर कहा कि मैं रामको राज्य देकर दीक्षा लेना चाहता हूँ। दशरथके यह विचार सुनकर पट्टरानी अपराजिताने कहाः—नाथ ! हम लोगोंको निराधार छोड़कर आप क्यों दीक्षा लेते हैं ? इन अनेक प्रकारके भोगोंको छोड़कर जिन दीक्षामें क्या रक्खा है ? अतः आप यहाँ रहकर गृहस्थ धर्मका ही पालन करते रहें। दशरथने कहा प्रिये ! मैं ऐसा नहीं करूँगा। मुझे दीक्षा अवश्य लेना है।

दशरथका यह दृढ़ निश्चय जानकर सब लोगोंने रामचन्द्रजीके राज्याभिषेकके लिए तय्यारियाँ प्रारम्भ करदीं। उधर भरत भी दीक्षाके लिए तत्पर होकर नित्य विरक्तसा रहने लगा। रानी केकामती भरतको इसी तरह उदासीन देखकर सोचने लगी कि पुत्र विना मैं ही यहाँ रहकर क्या करूँगी ? कैसे अपने पति या गुणी पुत्रको दीक्षा लेनेसे रोकूँ। सोचते २ केकामतिको अपना माँगा हुआ वर याद आगया। वह शीघ्र ही राजाके पास गई। सिंहासनपर बैठे हुए पतिको देखकर वहीं जाकर बैठ गई और बड़े स्नेहसे बोली—महाराज ! आपने रानियोंके समक्ष मुझे प्रसन्न होकर वर देनेको कहा था। अब आप मुझे मेरा वर दीजिए। दान देनेमें तो आपकी सर्वत्र कीर्त्ति फैल रही है। दशरथने कहा—प्रिये, बोलो क्या माँगती हो ? जो चाहोगी तुम्हें वही दूँगा। रानी अपना वर पहले ही निश्चित कर चुकी थी अतः आँसू छोड़ते हुए बोली—नाथ; दीक्षा लेते समय आप मेरे पुत्रको राज्य दें। दशरथने कहा—देवि इसमें संकोचकी क्या बात है ? जो धरोहर तुमने मुझे सौंपी थी वह अपनी ले लो। अतः तुम्हारी माँग मुझे मंजूर है। अब तुम शोक छोड़ो। अच्छा किया, तुमने मुझे उऋण कर दिया। अन्यथा न जाने तुम कब क्या माँगती और मैं न दे सकता ? बादमें दशरथने लक्ष्मण सहित रामको बुलाकर कहाः—बेटा ! पहले एक युद्धमें अनेक कलाओंमें पारंगत तुम्हारी माता केकामतीने बड़ी चतुरताके साथ मेरा रथ हाँका था। उस समय अनेक राजा और रानियोंके समक्ष मैंने इन्हें इच्छित वर माँगनेको कहा था। उस समय तो वह वर इन्होंने मेरे पास धरोहर रख दिया। अब ये किसी अभिप्रायसे अपने पुत्र भरतको राज्य माँग रही हैं। प्रतिज्ञाके अनुसार मुझे उनकी यह माँग पूरी करना चाहिए। अन्यथा भरत दीक्षा ले लेगा और पुत्र शोकसे यह प्राण देगी। वचन भङ्ग करनेसे लोकमें मेरी भी अपकीर्ति होगी। यह सचमुच मर्यादाके प्रतिकूल है कि बड़ेको छोड़कर छोटेको राज्य दिया जाय। भरतको राजगद्दी देनेपर क्षात्रतेजके धारक आप लोग कहाँ जाँय, यह मैं अभी कुछ निर्णय नहीं कर पाया हूँ। क्या करूँ ? मैं इस समय बड़ा दुखी हूँ।

रामचन्द्रजीने बड़े स्नेह और विनयसे पिताके चरणोंकी तरफ दृष्टि रखते हुए कहा—तात ! आप अपने वचनोंका पालन करें और हमारी चिन्ता छोड़ दें। आपके अपयशके साथ तो मुझे इन्द्रकी सम्पदा भी स्वीकार नहीं है। सुपुत्रको वही कार्य करना चाहिए जिससे माता पिताको थोड़ा भी कष्ट न हो। पंडितोंका कहना है कि पुत्रका पुत्रपना ही यह है जो पिताको पवित्र करे और कष्टसे उनकी रक्षा करे।" दशरथ और राम इस प्रकार बातें कर ही रहे थे कि विरक्तहृदय भरत भी वहाँ शीघ्रतासे आ पहुँचा। दशरथने उसे गोदीमें बिठाकर छातीसे लगा मुख चूमा और कहा—बेटा. तुम राज्यका संचालन करो और मैं तपोवनको जाता हूँ। भरतने कहा—मैं राज्य नहीं करूँगा बल्कि मैं दीक्षा लेना चाहता हूँ। दशरथने कहा—तुम्हारी

नई अवस्था है। अभी तुम मानवीय सुखोंका अनुभव करो। जब वृद्ध हो जाओ तब दीक्षा ले लेना। भरतने कहा—पिता, आप मुझे व्यर्थ क्यों मोहमें डालते हैं? मृत्यु बालक तरुण या वृद्धकी प्रतीक्षा नहीं करती। दशरथने कहा—बेटा, गृहस्थाश्रममें भी रहकर धर्मका संचय हो सकता है। तपस्या करना बड़ा भयानक है उसे बालक नहीं कर सकते। भरतने कहा—पिता! इन्द्रियोंके वशवर्ती काम क्रोधादिसे युक्त गृहस्थोंको मुक्ति तो नहीं होती? और यदि घरमें भी मोक्ष सुख मिलता है तो आप क्यों घर छोड़ रहे हैं? भरतके इस प्रकार वचन सुनकर दशरथ पुलकित हो उठे। बड़े हर्षसे बोले; बेटा! तू धन्य है, अपने हितमें सावधान है, भव्य पुरुषोंमें मुख्य है। तैने जो कुछ कहा सो ठीक है परन्तु तू आज तक इतना विनयवान रहा है कि तैने मेरी प्यारसे कही हुई बात कभी नहीं टाली।

इसके बाद रामने भरतके दोनों हाथ पकड़कर बड़े स्नेहसे देखते हुए मधुर शब्दोंमें कहा—भाई! पितासे तुमने जो कहा है उसे और दूसरा कौन कह सकता है? समुद्रसे पैदा होने वाले रत्न तालाबमें पैदा नहीं होते। तुम्हारी अवस्था इस समय तप करने लायक नहीं है। अतः पिता-की निर्मल कीर्ति फैलानेके लिए तुम्हें राज्य करना चाहिए।' इस प्रकार भरतको समझाकर रामने सिर झुकाकर पिताके चरणोंको नमस्कार किया और लक्ष्मण सहित वहाँसे चल दिए।

उस समय पिताको मूर्च्छा आ गई किन्तु खम्भेके सहारे चित्रकी तरह खड़े रह जानेके कारण किसीको उनकी मूर्च्छाका पता नहीं लगा। राम तरकस और धनुप ले माताके पास गए और प्रणामकर बोले— मा, मैं दूसरे देशको जारहा हूँ।' यह सुनकर माताको मूर्च्छा आगई मानों दुखका अनुभव न होने देनेके लिए सखी आगई हो। फिर थोड़ी देर बाद सचेत होकर अश्रुपूर्ण नेत्रोंसे रानी अपराजिता बोली—हा बेटा, तू कहाँ जारहा है? शोक सागरमें फेंककर मुझे क्यों छोड़े जारहा है।' माताको इस तरह विलाप करते हुए देखकर मातृ भक्त रामने विनय पूर्वक कहा हे मा, तुम रंज मत करो, दक्षिणकी तरफ कोई रहनेके योग्य स्थान ठीककर मैं तुम्हें आकर अवश्य ले जाऊँगा। माताके वरदानके कारण पिताने भरतको राजगद्दी दी है यह तुमने सुना ही है। अतः मैं या तो विंध्याचलके वनमें या समुद्रके पास मलयाचलके वनमें निवास करूँगा। मेरे यहाँ रहनेपर भरतकी आज्ञाका विस्तार नहीं होगा।' तब अत्यंत दुःखसे रोती हुई माताने अपने विनीत पुत्रको छातीसे लगाया और स्नेहपूर्ण विवश नेत्रोंसे देखती हुई बोली—बेटा, मैं आज ही तेरे साथ चलूँगी। तेरे बिना देखे मैं जीवित न रह सकूँगी। पिता, पति और पुत्र यह तीन ही स्त्रियोंके आश्रय हैं जिसमें पिता मेरे रहे नहीं, पति दीक्षा लेनेको उत्सुक हैं, अब मेरे जीवनका सहारा एक तू ही है। अतः बता, तेरे बिना अब मैं कहाँ जाऊँ?' पुत्रने कहाः—मा पृथ्वी कंकड़ पत्थरोंसे बड़ी कठोर होगी। तुमसे उसपर पैदल कैसे चला जायगा? अतः कहीं सुखसे रहनेका स्थान ठीककर मैं किसी सवारीपर तुम्हें ले जाऊँगा। भला तुम्हें कैसे छोड़ सकता हूं। यह तुम्हारे चरणोंकी मुझे सौगन्ध है। मैं अवश्य आकर तुम्हें ले जाऊँगा। अतः तुम रञ्ज मत करो।' इस तरह कहकर माताको सान्त्वना दी।

वहाँसे विदा होकर पिताके पास गए। पिता उस समय तक होशमें आ चुके थे। अतः उन्हें नमस्कार कर अन्य माताओंके पास गए, उन सबको नमस्कार कर समझाया बुझाया। इसके बाद घरके भाई बन्धुओंसे मिले, उन्हें छातीसे लगाया, बात चीत की, फिर सीताके महलमें गए। बोले, 'प्रिये! तुम यहीं रहना मैं अन्यत्र कहीं जा रहा हूँ।' सीताने कहा जहाँ आप जाएगें वहीं मैं रहूँगी।' सीताके यह वाक्य सुनकर रामचन्द्रजी आँखोमें आंसू भर लाए। वहाँसे चलकर अन्य स्नेही जनोंसे मिले, उन्हें आलिङ्गन किया। इसके बाद मन्त्रियों तथा अन्य राजाओंसे मिले, राजकर्मचारियोंसे संभाषण किया, नौकर चाकर आदि सभी लोगोंसे बिदा ली। रोते हुए मित्रोंके द्वारा पुनः रोके जाने पर भी उन्हें स्नेहसे आलिङ्गनकर लौटा दिया। सामंत, घोड़े, हाथी आदिको

और स्नेह पूर्वक देखकर रामचन्द्रजी सुमेरुकी तरह स्थिरचित्त होकर पिताके घरसे निकले। सामंतगण—हाथी, घोड़े आदि भेंट करने लाए परन्तु रामचन्द्रजीने लेनेसे मना कर दिया। पतिको विदेश गमनके लिये उद्यत देखकर जानकीने सुंदर वस्त्र पहने और हर्षित होकर सास श्वसुरको प्रणाम किया। सखियोंसे विदा लेकर सीता रामचन्द्रजीके पीछे इस तरह चली जैसे इन्द्राणी इन्द्रके साथ चलती है। रामचन्द्रजी जब चलनेको तय्यार हुए तो उनके स्नेहसे द्रवित होकर लक्ष्मणको क्रोध चढ़ आया। सोचने लगा:—पिताने यह ऐसा अन्याय करना कैसे विचारा ? धिक्कार है इन स्त्रियोंको जो नित्य अपने स्वार्थकी ओर ही देखती हैं। हमारे बड़े भाई बड़े उदार हृदय पुरुषोत्तम हैं। इस प्रकारका निर्मल अन्तः करण तो मुनियोंके ही कठिनसे होता है। मैं चाहूं तो अन्यायियोंको सजा देकर अभी सारा वातावरण बदल दूँ और भरतसे राज्य लक्ष्मी छीन लूँ। परन्तु क्रोधसे मुझ छोटे भाईको ऐसा करना उचित नहीं। क्रोध साधुको भी अंधा कर देता है। अथवा मुझे इन अनुचित विचारोंसे क्या ? बड़े भाई समय असमय सब समझते हैं। हमको तो जिस प्रकार पिताकी बड़ाई हो वैसा काम करना चाहिए। अतः मैं चुपचाप बड़े भाईके साथ चला जाऊंगा। इस प्रकार अपने क्रोधको शांत कर धनुष-बाण ले माता पिता तथा अन्य सभी जनोंको सात्वना देकर लक्ष्मणने उनसे विदा ली। और मार्गोचित वेश बनाकर अत्यन्त विनय पूर्वक रामचन्द्रके साथ चला। माता पिता और परिवार आसुंओंकी वर्षा करते हुए पुत्रोंको विदा देने चले। परिजन पुरजन मना करने पर भी इनके साथ चले। दोनों भाई राजद्वारसे निकले।

सभी पुरवासी जनोंकी आँखोसे सावन भादोंकी सी वर्षा हो रही थी। संध्या हो जानेपर दोनों भाई परिवार सहित नगरके बाहर जिन मंदिरमें पहुँचे। वहाँ भगवान चन्द्रप्रभकी पूजा की। पूजा कर रातको सब लोग दुखी होकर सो गये। इधर मन्त्री गण राजा दशरथसे वार्तालाप करने लगे:—राजन्, राज्य रामचन्द्रजीको ही देना चाहिए था। यों राज्यके प्रश्नको लेकर परस्पर चर्चा करते हुए कोई सो गये, कोई ऊँगने लगे। आखिर आधी रात तक सब लोग जहाँ तहाँ सो गये। उसी समय राम लक्ष्मण सीता सहित वहाँसे चल दिए। किसीको भी इनके जानेकी खबर नहीं हुई। प्रभात होने पर सब जिधर ये गए थे उधर ही भागे। दो कोस जानेपर रामचन्द्रजी इन्हें मिल गये। इन सबके साथ प्रत्येक गाँव, नगर, पुरमें आतिथ्य सत्कार पाते हुये रामचन्द्रजी धीरे २ चले। चलते २ जब सीमांतवर्ती बाहु नदी (सरयूनदी) के तट पर पहुँचे तो रामचन्द्रजीने वहाँ सब लोगोंसे कहा:—आप लोग अब लौट जाइये। पिताजीने भरतको कौशल साम्राज्यका अधिपति बनाया है अतः आप लोग उनकी सेवा करते हुए आनन्दसे अपने स्थान पर रहें। इस तरह उनको लौटनेके लिए कहकर सीताको बीचमें ले राम और लक्ष्मणने नदी पार की। तीनोंने विनोद करते हुए बड़ी प्रसन्नतासे भयंकर बनमें प्रवेश किया। जब रामचन्द्रजी दूर निकल गए तो बहुतसे राजाओंने वहीं दीक्षा ले ली, बहुतसे नगरको लौट आए।

इधर दशरथने भरतको राज्य देकर सर्वभूत हित मुनिके पास बहत्तर राजाओंके साथ दीक्षा ले ली। और मोह बन्धनको काटकर अनेक देशोंमें बिहार करने लगे। पतिके दीक्षित हो जानेसे सुमित्रा और अपराजिता शोक संतप्त रहने लगीं। उन्हें दुःखसे निरन्तर रोते हुए देखकर भरतको राज्य विष जैसा प्रतीत हुआ। केकयीने जब उन दोनोंके दुःखको देखा तो उसे दया आयी। पुत्रसे बोली, बेटा ! तुझे राज्य भी मिला और सारे राजा भी तुझे नमस्कार करते हैं परन्तु राम और लक्ष्मण बिना तेरा राज्य शोभा नहीं देता। राजपुत्रीके साथ सुखमें पले हुए वे दोनो बालक बिना सवारीके पथरीली भूमिपर कैसे गए होंगे। उनके वियोगसे उनकी दोनों माताएँ निरन्तर रोते २ प्राण दे देंगी। अतः तू शीघ्र जाकर उन्हें ले आ और फिर चिरकाल तक पृथ्वीका पालन करना। तू शीघ्रगामी घोड़ेपर आगे चल मैं पीछेसे आती हूँ।" माताके इस प्रकार बचन सुनकर भरतने एक हजार घोड़े साथ ले चलनेको तैयार कराये और रामको पहुंचा

कर जो लोग आए थे उन्हें साथ लेकर वायुके समान चंचल घोड़े पर सवार होकर बड़ी उत्सुकतासे दक्षिणकी ओर चला। थोड़ी देरमें उसी हाथियोंसे रुद्ध भयंकर अटवीमें पहुंचा जहाँ सघन वृक्षोंके कारण सूर्यकी किरणे तक प्रवेश नहीं कर पाती थीं। वहाँ वृक्षोंके बड़े २ लट्ठोंके बेड़े बनाकर नदीको क्षण भरमें पार किया। रास्तेमें भरत मनुष्योंसे पूछता जाता था कि तुमने एक स्त्री सहित दो पुरुष तो आगे जाते हुए नहीं देखे ? जब वे लोग मना करते तो इसका चित्त बड़ा दुखी होता। भरतने आगे जाकर एक सघन बनमें सरोवरके किनारे राम लक्ष्मणको सीता सहित बैठे हुए देखा. पासमें ही धनुष बाण रक्खे हुए थे। सीताके साथ रहनेके कारण राम लक्ष्मणने जो मार्ग कई दिनोंमें तय किया था भरतने उसे छः दिनमें पूरा किया। दूरसे ही घोड़ेसे उतर कर भरत पैदल गया और रामकी छातीसे लगकर उनके पैरोंमें मूर्छित हो गया। रामने भरतको सचेत किया। परस्पर कुशल क्षेम पूछनेके बाद भरतने हाथ जोड़ मस्तक नवाकर कहा—नाथ ! आप विद्वान और न्याय प्रधान पुरुष हैं, राज्यके बहाने मेरी यह विडंबना की। आपके बिना यह राज्य तो दूर रहा मुझे अपना जीवन भी अभीष्ट नहीं है। आप उठें, अयोध्या चलें. मुझपर कृपा दृष्टि करें, राज्यका संचालन करे और मुझे खुशी रहनेका आशीर्वाद दें। मैं आपके सिर पर छत्र लगाये खड़ा रहूंगा. शत्रुघ्न चमर ढारेगा. और लक्ष्मण आपका मंत्री पद संभालेगा। मेरी मां पश्चात्ताप रूप अग्निसे जली जा रही है तथा आपकी और लक्ष्मणकी माता भी शोकसे विह्वल है।

भरत इस प्रकार कह ही रहा था कि इतने में ही रानी केकयी शीघ्रगामी रथपर आरूढ़ होकर सौ सामंतोंके साथ वहाँ आपहुंची। पुत्रोंको देखकर शोकसे दुखी हो हाहाकार करने लगी। दोनोंको उसने कंठसे लगाया। जब आँसुओंका प्रवाह बन्द हुआ तो खेद खिन्न हो कहने लगी—बेटा ! उठो अपनी राजधानी चलें. अपने छोटे भाइयों सहित वहाँ राज्य करना। तुम्हारे बिना मुझे सब सुनसान मालूम पड़ता है, भरतको तुम शिक्षा देते रहना, स्त्री होनेके कारण मुझ नष्ट बुद्धिसे जो अनुचित कार्य बन पड़ा है उसे क्षमा करो।' यह सुनकर रामचन्द्रजी बोले—मा क्या तुम नहीं जानतीं कि क्षत्रियोंके वचन अन्यथा नहीं होते ? पिताने जो कहा है वही ठीक है। उसीपर मुझे और तुम्हें दृढ़ रहना चाहिए, जिससे भरतकी संसारमें अपकीर्ति न हो। भाई भरत ! तुम किसी प्रकारकी चिंता मत करो। राज्य करनेमें तुम्हें अनौचित्यकी जो आशंका है उसे दूर कर दो क्योंकि इस कार्यमें तुम्हें मेरा समर्थन प्राप्त है।' इतना कहनेके बाद रामने पुनः भरतका उपस्थित राजाओंके सामने वहीं पर राजतिलक किया और केकयीको प्रणामकर तथा बार २ सान्त्वना देकर भरतको गले लगाया और दोनोंको बड़ी कठिनतासे विदा दी। वे दोनों भी राम लक्ष्मण और सीताका यथायोग्य विनयोपचार कर वापिस अयोध्या लौट आए।

भरत सम्पूर्ण शत्रुओंका दमनकर प्रजाको सुखदायक राज्यका संचालन पिताकी तरह करने लगा। राज्यके इस प्रकार निष्कंटक रहने पर भी शोकाकुलित रहनेके कारण मनस्वी भरतका शासनमें अनुराग नहीं हुआ। दोनों समय अरनाथ भगवानकी पूजा करता और चैत्यालयमें धर्म श्रवण करने जाता। इसीमें उसे संतोष था। वहीं अनेक साधुओंके साथ द्युतिनामके आचार्य विराजमान थे। उनके सामने भरतने यह प्रतिज्ञा की कि "रामके जब दर्शन होंगे तभी मैं मुनि व्रत धारणकर लूँगा।" इस प्रकार नियमकर भरतने भगवानकी पूजा की और घरमें ही योगीकी तरह रहने लगा। और रामचन्द्रजीकी आज्ञा शिरोधार्यकर शत्रुघ्नके साथ राज्य करने लगा।
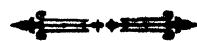
१७ वज्रकर्णका उपसर्ग निवारण

भ्रमण करते २ रामचन्द्रजी भीम नामक वनमें तापसोंके आश्रममें पहुंचे। वहाँ तापसोंने उनका खूब सन्मान किया। कुछ दिन ठहर कर जब वहाँसे विदा होने लगे तो तापसोंने उन्हें बहुत रोकना चाहा परन्तु वे नहीं रुके और भ्रमण करते २ चित्रकूटमें पहुँचे और वहीं रहने लगे। दोनों भाई वृक्षोंमें, लता पुष्पोंमें तथा मृगोंके बीचमें आनन्दसे क्रीड़ा करते, सुगन्धित द्रव्योंका उबटन करते, जंगलके चावलोंसे सुरागायके दूधमें खीर बनाकर खाते, वनके सरस फलोंका आस्वादन करते तथा झरनोंका मीठा पानी पीते। इस प्रकार उन्होंने वहाँ साढ़े चार मास बिताए। फिर वहाँसे मालवामें उज्जयनी नगरीके निकट आये। वहाँ देखा कि ईखके खेत खड़े हैं, गेहुँ, जौ और धानके ढेर लगे हैं, आलीशान जिन मंदिर बने हैं, लेकिन मनुष्य एक भी दिखाई नहीं देता। रामने लक्ष्मणसे कहा कि जरा देखो कोई मनुष्य आता जाता दिखाई दे तो उससे यहाँका हाल पूछना। यह कह कर रामचन्द्र सीताके साथ वहीं रत्नकंबल बिछाकर बैठ गये।

लक्ष्मणने वृक्षपर चढ़कर देखा तो दूरसे आता हुआ एक दरिद्र पुरुष दिखाई दिया। लक्ष्मण उसे पकड़ कर रामके पास ले आया। वह रामको नमस्कारकर वहीं पर बैठ गया। रामने पूछा-तू कौन है? कहाँसे आया है। उसने कहा—महाराज, मैं दूरसे आया हूँ। शीरगुप्ति मेरा नाम है और जातिका मैं कुटुम्बी हूं। सदा इसी तरह कपड़े लत्तोंके बिना दुखी रहता हूँ। रामचन्द्रजीने फिर पूछाः—अच्छा, यहाँके सब मनुष्य कहाँ चले गए? वह बोला—दशपुर नगरमें पापी मिथ्या दृष्टि हिंसक वज्रकर्ण नामका एक राजा रहता है। एक दिन परवारके साथ वह वनमें गया, वहाँ एक शिलाके ऊपर शांतिमूर्ति, क्षमाशील, शास्त्र पारंगत, ध्यानमें तत्पर मुनिराजको बैठे हुये देखकर घोड़ेपर चढ़े हुए ही बड़े गर्वसे बोलाः—रे मुनि! तू यह ध्यान किस लिये कर रहा है, संसारमें न कोई जीव है, न स्वर्ग है, न मोक्ष है। इस लिए इस देहके सुखानेसे क्या लाभ?

मुनिराज बोले-जीव अवश्य है जिस प्रकार काष्ठमें अग्नि रहती है उसी प्रकार जीव भी देहमें व्याप्त है। जीवकी तरह स्वर्गका भी अस्तित्व है, क्योंकि भूतादि रूप प्रत्यक्ष देखे जाते हैं और जब स्वर्ग है तब मोक्ष भी अनुमानसे निश्चित है। इसलिये जो पुण्य करता है उसे स्वर्ग मिलता है और जो घोर तपश्चरण करता है वह मोक्ष प्राप्त करता है। जो जीवोंका वध रूप हिंसादि पाप करता है वह महादुःख दायक घोर नरकमें पड़ता है। अतः हे राजन! तुम दयामयी धर्मका पालन करो, संसार रूपी समुद्रसे पार करने वाला सम्यक्त्व ग्रहण करो। 'मुनिका यह उपदेश सुनकर राजा घोड़ेसे उतरा और उन्हें नमस्कारकर उसने श्रावकके व्रत ग्रहण किये साथ ही प्रतिज्ञा ली कि मैं जिन देव और निर्ग्रंथ गुरुके सिवा अन्य किसीको नमस्कार नहीं करूँगा।' बादमें उन प्रीति वर्द्धन नामक मुनिको नमस्कार कर वह घर चला गया। तबसे वह प्रतिदिन पात्र दान करता है व्रत और शीलोंका पालन करता है, दयालु तथा क्षमाशील है और अँगूठीमें जिन प्रतिबिम्ब जड़वाकर उसकी नित्य पूजा करता है। एक दिन वह उज्जयनी नगरी गया। वहाँके राजा सिंहोदरको नमस्कार करनेके बहाने उसने मुद्रिका स्थित जिनबिम्बको ही नमस्कार किया और अपने नगर लौट आया। यह बात किसी दुष्ट पुरुषने भांपकर सिंहोदरसे कह दी कि वज्रकर्ण तुम्हें नमस्कार नहीं करता किन्तु अपनी मुद्रिकाके अन्दर जड़े हुए जिन बिम्बको नमस्कार करता है। यह सुनकर सिंहोदरको क्रोध चढ़ आया। वह बोला-इसका कपट ही देखता हूं या इस पापीको मार ही डालता हूँ। सिंहोदरने छल पूर्वक इसे दशपुर नगरसे बुलवाया और बड़े अभिमानसे मारनेको उद्यत हुआ। वज्रकर्ण सिंहोदरका निमन्त्रण पाकर बड़ी विनयसे उज्जयनी चलनेको तय्यार हुआ। इतनेमें ही हाथमें दंड लिए हुए कोई युवक राजाके पास आया और नमस्कार कर बोलाः—राजन्! अगर भोग और शरीरसे आप विरक्त हो गए हैं तो

उज्जयनी जावें अन्यथा आपका वहाँ जाना ठीक नहीं, क्योंकि नमस्कार नहीं करनेके कारण सिंहोदर आपको मारनेको तय्यार बैठा है। अब आपकी जो इच्छा हो सो करें।" उसको इस प्रकार कहते हुए सुनकर वज्रकर्णको कुछ खेद हुआ। पूछा, तू कौन है ? क्या नाम है ? कहाँ रहता है ? और यह अत्यन्त गुप्त भेद तुझे कैसे मालूम हुआ ? वह बोला—

कुंदपुरमें समुद्र-संगम नामके मेरे पिता एक धनिक वणिक हैं और मेरी मांका नाम यमुना है। वर्षाके समय जब बिजली चमक रही थी तब मेरा जन्म हुआ अतः घरके लोगोंने मेरा नाम विद्युदंग रक्खा। जब मैं जवान हुआ तो उजयिनीमें धन कमानेके लिए आया। वहाँ कामलता वेश्याको देखकर कामसे पीड़ित हो रात दिन बेचैन रहने लगा। एक रातको उसके साथ समागम किया। बस तभीसे मैं उसके प्रेममें इस तरह फँस गया जैसे हिरण व्याधके जालमें फँस जाता है। पिताका वर्षोंका कमाया धन मुझ कुपुत्रने छः महीनेमें ही खो दिया। एक दिन वह वेश्या अपनी सखीसे अपने कानोंके कुण्डलों-की बुराई कर रही थी—और कह रही थी "धन्य है वह सौभाग्यवती रानी श्रीधरा जिसके कानोंमें ऐसे सुन्दर कुण्डल हैं' उसकी यह बात सुनकर मैं सोचने लगा—"अगर उन कुण्डलोंको लाकर मैंने इसकी आशा पूरी नहीं की तो मेरा जीवन ही वृथा है। इस तरह मनमें सोचकर कुण्डल चुरानेकी इच्छासे अपने जीवनकी परवाह न कर रातके अंधेरेमें राजाके घर गया। उस समय मैंने श्रीधराको राजासे यह पूछते हुए सुनाः—नाथ, आपको नींद क्यों नहीं आ रही, आप इस समय बेचैनसे मालूम पड़ते हैं ? राजाने कहाः—देवि, मेरा चित्त व्याकुल है। जब तक नमस्कार न करने वाले उस शत्रुको मैं न मार लूंगा तब तक मुझे नींद कहाँ ? उस उद्दंड वज्रकर्णको मारे बिना मेरा जीवन ही व्यर्थ है।' उनकी यह बातें सुनकर मेरे हृदयपर बज्रकी सी चोट लगी। बस कुण्डल चुरानेकी बुद्धि छोड़कर यह रहस्य रूपी रत्न वहाँसे लेकर लौट आया। और आपको धर्ममें तत्पर तथा साधु सेवी जानकर आपसे यह सब निवेदन करने आया हूं। अब आप इसका निवारण करें। मद झरते हुए अंजन गिरिके समान प्रचण्ड हाथियों और शीघ्रगामी तुरंगों पर चढ़े सवार तथा कवच पहने हुए भट उसकी आज्ञासे मार्ग रोके खड़े हैं और आपको मारनेको तय्यार हैं। अतः आप कृपाकर वहाँ न जायं, मैं आपके पैरों पड़ता हूं आप मेरी बात अवश्य मानें। अगर आपको मेरी बातपर विश्वास न हो तो वह देखिये शत्रुकी सेना भयानक गर्जनाके साथ धूल उड़ाती हुई चली आ रही है।"

शत्रु सेनाको आते हुए देखकर वज्रकर्ण विद्युदंगके साथ शीघ्र ही लौट गया और नगरमें जाकर किलेके अन्दर बैठ गया। बाहरसे प्रतिरोध करनेके लिये चारों ओर सामंत खड़े हो गये। वज्रकर्णको किलेमें घुसा हुआ सुनकर सिंहोदर क्रोधसे जलता हुआ अपनी सारी सेना लेकर चढ़ आया। किलेको दुर्जेय जानकर अपनी सेनाके नष्ट हो जानेके भयसे सिंहोदरने उसपर अधिकार करनेका विचार तो छोड़ दिया किन्तु अपना एक दूत शीघ्र वज्रकर्णके पास भेजा। दूतने जाकर अपने स्वामीकी तरफसे बड़ी कठोरता पूर्वक कहाः—तू जिन शासनके गर्वसे अभिमानी होकर मेरे ऐश्वर्यका कांटा बना है, तेरी सारी सद्भावनाएँ जाती रहीं, घरमें फूट डालने वाले दुष्ट साधुओंके बहकानेसे तू आज अन्यायी बनकर इस अवस्थाको पहुंचा है। मेरे दिये हुए देशोंका तू उपभोग करता है और अर्हंतको नमस्कार करता है, तू इतना मायाचारी हो गया है। अब शीघ्र आकर तू मुझे प्रणाम कर अन्यथा तुझे मार डाला जायगा।" दूतके यह वचन सुनकर वज्रकर्णने जो जवाब दिया वह दूतने आकर सिंहोदरसे इस प्रकार कहाः—महाराज वज्रकर्णने कहा है कि आप मेरा नगर, सेना, कोष और देश आदि सब ले लें किन्तु स्त्री सहित मेरा धर्म मेरे पास रहने दें। जो मैंने प्रतिज्ञा की है उसे मरने पर भी नहीं छोड़ूँगा,

आप मेरे धनके मालिक हैं मेरे शरीरके नहीं।' यह सुनकर सिंहोदरका क्रोध और भी बढ़ गया. उसने और नगरको चारों ओरसे घेर कर उजाड़ डाला।"

महाराज! यह मैंने इस देशके उजड़नेका कारण आपको बताया। अब मैं यहाँसे पास ही अपने सुनसान गांवको जाता हूँ। उस गांवको भी सिंहोदरने जलवा दिया है। विमान तुल्य अनेक घरोंमें आग लग जानेके कारण मेरी फूस बांसकी बनी हुई झोपड़ी भी नष्ट होगई। केवल छिपे रक्खे हुए सूप. घड़ा और थाली बच गए, उन्हें ही लानेके लिए मेरी कर्कशा स्त्रीने मुझे क्रूर वचन कह कर भेजा है। अथवा उसने मेरा यह अत्यन्त उपकार ही किया है जो आप सरीखे किन्हीं महानुभावोंका दर्शन हुआ।"

दरिद्रके ऐसे वचन सुनकर उसे दुखी देख रामचन्द्रजीने दयार्द्र होकर अपना रत्नोंका हार उसे दे दिया। दरिद्रने बड़ी भक्तिसे दोनों भाइयोंको नमस्कार किया और हार लेकर शीघ्र ही अपने घर गया। उस बहुमूल्य हारसे वह राजाके समान रहने लगा। राम भी सीता और लक्ष्मणके साथ वहांसे चले और दशपुर नगरके बाहर जिनालयमें पहुंचे। वहां चन्द्रप्रभ स्वामीके दर्शनकर एक कोठेमें ठहर गए और लक्ष्मण खानेका सामान लाने नगरमें गए। वज्रकर्णने लक्ष्मणको देखकर पूछा—कहाँसे आए हो? लक्ष्मणने कहा:—मैं दूर देशसे आया हूं. मेरे भाई भाबी सहित अकेले नगरके बाहर ठहरे हुए हैं। उनके लिए मैं यहाँ अन्न लेने आया हूँ।' वज्रकर्णने लक्ष्मणको सरस अन्न दिया। लक्ष्मण उसे लेकर भाईके पास आए। सीताने विधिपूर्वक रसोई बनाई और तीनोंने आनन्दसे जीमा। इसके बाद रामचन्द्रजी बोले—लक्ष्मण, देखो तो वज्रकर्ण राजा कैसा धर्मात्मा और वात्सल्य प्रेमी है। तुम जाकर उसकी रक्षा करो।' रामचन्द्रजीकी आज्ञा पाकर लक्ष्मण धनुष लेकर चला और शीघ्रही सिंहोदरके दरबारमें पहुंचा।

सिंहोदरने पूछा—तुम कौन हो? कहाँसे आए हो? लक्ष्मणने कहा—मेरा नाम लक्ष्मण है, मैं भरतका दूत हूँ और तुम्हें तुम्हारे हितके लिए समझाने आया हूँ। वज्रकर्णको तुमने व्यर्थ ही क्यों रोक रक्खा है? वह जिन धर्मी. दयालु और दान पूजामें सदा तत्पर रहता है।

सिंहोदर बोला–कौन दूत? कहाँका भरत? रे मूढ़! व्यर्थ ही अभिमानमें आकर क्यों गरजता है? यह दुष्ट मायाचारी वज्रकर्ण मेरा महान शत्रु है, मेरी आज्ञा नहीं मानता, मुझे नमस्कार नहीं करता। अतः मैं इसे अवश्य मारूँगा। इसे ही नहीं बल्कि तुझे और भरतको तथा अन्य जो भी इसका पक्ष लेंगे उन सबको मारूँगा।' यह सुनकर लक्ष्मण क्रोधसे भर गए। वृक्षोंकी डालियां तोड़कर शत्रुओंको मारने लगे, किन्हींको बाणोंसे मारा किन्हींको वृक्षोंसे मारा, किन्हींको तलवारसे मारा. किन्हींको वज्रसे मारा, हाथी घोड़े रथ आदिमें खूब कोलाहल मच गया।

सिंहोदर बहुत सी सेना लेकर अनेक हथियारोंके साथ हाथी पर चढ़कर रावणके समान लड़ने आया। लक्ष्मणने धनुषबाणसे सिंहोदरको हाथीसे नीचे गिरा लिया और उसकी मुश्कें बांधकर रामचन्द्रजीके पास लेगए। जाकर कहा—"देव, यह वही दुष्ट सिंहोदर है। अब इसके बारेमें अच्छा बुरा जो कुछ आप समझें सो करें।" सिंहोदरने रामचन्द्रजीके चरणोंमें नमस्कार किया और कहा—' देव. वज्रकर्णको आप मेरा राज्य दे दीजिए। मैं भक्ति पूर्वक सदा आपकी सेवा करूँगा। आप राजराजेश्वर बड़े कृपालु हैं मुझ पर दया करें।" सिंहोदरकी रानियोंने भी रामचन्द्र और सीताके पैर पकड़ कर पतिकी याचना की। सिंहोदरको इस प्रकार नतमस्तक देखकर रामचन्द्रजीने कहा कि तुम वज्रकर्णकी आज्ञामें रहो। इसके बाद एक मनुष्य वज्रकर्णको बुलाने गया। वज्रकर्ण विद्युदंगके साथ जिन मंदिर गया और भगवानको तीन प्रदक्षिणा देकर तथा नमस्कार कर रामचन्द्रजीके पास गया, कुशल क्षेम पूंछी। रामचन्द्रजीने कहा–' तुम्हारी कुशलतासे हमारे भी कुशलता हैं, जिनेन्द्र भक्तिमें तत्पर महाधीर बीर तू धन्य है कि जिनेन्द्र भगवानको छोड़कर अन्य किसी पुरुषको नमस्कार नहीं करता। सचमुच मुक्ति रूपी स्त्री एक तेरे ही आधीन

हो सकती है।" वज्रकर्णने बड़ी नम्रतासे कहाः—"देव, आपकी ही कृपासे मेरी यह प्रतिज्ञा पूर्ण हुई है।" लक्ष्मणने रामचन्द्रजीके सामने वज्रकर्णकी खूब प्रशंसा की। रामचन्द्रजीने वज्रकर्णसे कुछ इच्छा प्रकट करनेके लिए कहा। वज्रकर्णने कहा—"देव. आपकी कृपासे सब कुछ मौजूद है केवल एक ही इच्छा है कि आप हमारे राजा सिंहोदरको छोड़ दें।' वज्रकर्णकी प्रार्थना पर लक्ष्मणने सिंहोदरको छोड़ दिया। दोनों परस्पर गले मिले स्नेहकी वृद्धि हुई। सिंहोदरने वज्रकर्णको उज्जैनका आधा राज्य दे दिया, हाथी, रथ, घोड़े आदि संपत्ति भी आधी समर्पण कर दी।

दोनों भाई चन्द्रप्रभ चैत्यालयमें बहुत दिनों तक उन राजाओंके साथ रहे और एकदिन रातके समय उनसे बिना ही कहे सीताके साथ वहाँसे चल पड़े तथा नलकच्छपुर नगरके बाहर उद्यानमें पहुंचे। वहाँ कम्बल बिछाकर सीताके साथ बैठ गए। लक्ष्मण जल लाने कुछ दूर तालाबपर गए। उसी समय उस नगरका कल्याणमाला नामका सुन्दर राजा हाथी पर चढ़कर रथ घोड़े तथा अनेक दास दासियोंको लेकर बहुत बड़ी भीड़के साथ जा रहा था। लक्ष्मणको देखकर वह मोहित हो गया। राजाने लक्ष्मणकी ओर कमल फेंककर संकेत करते हुए एक मनुष्यसे कहा कि इन्हें यहाँ बुला लाओ। उसने जाकर लक्ष्मणसे निवेदन किया कि महाराज! आपको हमारे स्वामीने याद किया है। वीर लक्ष्मण बड़े कुतूहलसे राजाके पास पहुंचे। राजा भी हाथीसे उतर पड़ा और लक्ष्मणको हाथ पकड़कर टहलते हुए तालाबके किनारे तम्बूमें ले गया। दोनों बड़े स्नेहसे एक ही आसनपर बैठ गए। कल्याणमालाने पूछा—आप कौन हैं? कहाँसे आये हैं? लक्ष्मणने कहा मेरे यहां चले आनेसे मेरे भाई दुखी होंगे अतः पहले उन्हें पहुंचा आऊँ फिर आकर सब बातें कहूँगा।' उसी समय राजाने दाल भात चटनी, ताजा घी, पूए, सुन्दर व्यञ्जन दूध, दही, वस्त्र, आभरण माला और नाना प्रकारके बहुतसे पदार्थ शीघ्र ही अपने आदमियोंसे तैय्यार कराए। एक आदमी राजाकी आज्ञानुसार रामचन्द्र और सीताको लिवाने गया। उसने जाकर रामचन्द्रजीसे कहा—देव! यहाँके राजाने कहला भेजा है कि आपके भाई इसी तम्बूमें ठहरे हुए हैं अतः आप वहीं चले। वहाँ सुन्दर सघन शीतल छाया है और थोड़ा रास्ता होनेके कारण आपको चलनेमें कष्ट भी नहीं होगा। यह सुनकर रामचन्द्रजी सीताके साथ इस प्रकार चले जैसे चाँदनीके साथ चन्द्रमा चलता है। रामचन्द्रजीको दूरसे देखकर तम्बूके सब लोग लक्ष्मण सहित उठ खड़े हुए और अगवानी करने गये। राम और सीताको एक सुन्दर आसन पर बैठाया तथा अर्घ्य प्रदान आदिसे उनका सन्मान किया।

स्नान भोजन आदि नित्य कर्म कर चुकनेके बाद राजाने यह कहकर कि मेरे पिताने कोई दूत भेजा है अपने पाससे सब लोगोंको हटा दिया. केवल ये चारों ही जने (राम लक्ष्मण सीता और राजा) तम्बूमें रहे। द्वारपर वीर प्रहरियोंको नियुक्त कर दिया तथा घोषणा कर दी कि जो कोई यहाँ आयेगा उसे प्राणदण्ड दिया जायगा। इसके बाद राजाने अपने हृदयका वास्तविक अभिप्राय प्रकट करनेके लिए लज्जाको दूरकर अपना ऊपरका बनावटी वेष हटा दिया और उसकी जगह सुन्दर रूपवती कन्या दीख पड़ी मानों अभी स्वर्गसे ही अवतरित हुई है। अथवा पातालको भेदकर कोई नागकन्या प्रकट हुई है और लज्जावनत मुख होकर खड़ी है। कन्या मनुष्यका वेष छोड़कर शरमाते हुए शीघ्र ही सीताके पास गई जैसे लक्ष्मी रतिके पास जाती है। इसी बीचमें लक्ष्मण कन्याको देखकर कामासक्त हो गए, उनकी हालत बदल गई नेत्र चंचल हो उठे। रामचन्द्रजीने शुद्ध सात्विक हृदयसे कन्यासे पूछा—'कन्ये तुम कौन हो और किस लिए अनेक वेष धारणकर क्रीड़ा करती फिरती हो।" उस मधुर भाषिणी कन्याने

वस्त्रसे अपने अङ्ग प्रत्यङ्ग ढाककर इस प्रकार कहना प्रारम्भ किया—देव, जो वास्तविक वृत्तान्त है वह आपको सुनाती हूं।

'इस नगरके अधिपति अत्यन्त सदाचारी मुनिके समान लोकवत्सल राजा बालखिल्य हैं। जब उनकी रानी पृथ्वी गर्भवती हुई तो उन्हें युद्धमें म्लेच्छ राजाने पकड़ लिया। अतः महाराज सिंहोदरने, जिनके आधीन बालखिल्य थे, यह आज्ञा की कि रानी पृथ्वीके गर्भसे यदि पुत्र उत्पन्न हो तो वही राजगद्दीपर बैठे। समयानुसार गर्भसे मैं पापिनी पैदा हुई अतः हमारे मन्त्री सुबुद्धिने मुझे ही पुत्र बताकर पुत्रजन्मके समाचार महाराज सिंहोदरके पास भिजवा दिए और माताने मेरा अर्थहीन नाम कल्याणमाला रख दिया। सो ठीक ही है व्यवहारमें प्रायः लोग मंगलकी ही कामना करते हैं। तबसे अब तक माता और मन्त्रीके सिवा सब लोग मुझे कुमार ही समझते हैं। अब पुण्ययोगसे आपके दर्शन हुए हैं। मेरे पिता म्लेच्छोंके यहां बन्दी हैं। बड़े दुखी हैं। सिंहोदर भी उन्हें छुड़ानेमें समर्थ नहीं है। देशकी सारी उपज म्लेच्छोंके यहाँ ही जाती है। पिताकी वियोगरूपी अग्निसे सन्तप्त मेरी माँ चन्द्रमाकी क्षीण कलाके समान प्रभाहीन हो गई है।' इस तरह कहकर अत्यन्त दुखी हो वह मूर्च्छित हो गई और बादमें फूट २ कर रोने लगी। रामचन्द्रजीने मिष्ट वचनोंसे सान्त्वना दी। सीताने गोदमें बैठाकर उसका मुँह धोया: और लक्ष्मणने उसे शोक छोड़कर पुरुष वेशमें ही राज्य शासन करनेकी सलाह दी और कहा–धैर्यसे तुम कुछ दिन और इसी तरह बिताओ। बादमें शीघ्र ही अपने पिताको मुक्त और म्लेच्छ राजाको बन्दीके रूपमें देखोगी।' इसके बाद दोनों भाई वहाँ तीन दिन तक देवोंकी तरह सुखसे रहे। एक दिन रातको जब सबलोग सो रहे थे सीता सहित दोनों भाई मौका पाकर वहाँसे चुपचाप चल दिए। कन्याने उठकर जब उन तीनोंको नहीं देखा तो अत्यन्त व्याकुल हुई, हाहाकार करती हुई शोकसे विलाप करने लगी। जैसे-तैसे दुःख को दबाकर वह हाथीपर सवार हो अपने नगर गई और पहलेकी तरह ही दुखित चित्तसे रहने लगी।

उसकी सुन्दरता और नम्रतासे आकर्षित राम, सीता और लक्ष्मण भ्रमण करते २ मेखला-नदीपर पहुंचे। सुखसे क्रीड़ा करते हुए उस नदीको पारकर अनेक देशोंमें होकर वे विंध्यावटी पहुंचे और जहाँ युद्धके लिए उद्यत सेनाका पड़ाव पड़ा हुआ था, उस मार्गसे जाने लगे। पथिकों, ग्वालों और किसानोंने उन्हें उधर जानेसे रोका। सीताने भी अपशकुन देखकर जानेसे मना किया लेकिन ये दोनों भाई उधर ही गए और आगे चलकर म्लेच्छोंकी सेना देखी। धनुषबाण लेकर राम लक्ष्मणको आते देख पहले तो म्लेच्छोंकी सेना भागने लगी लेकिन फिर इकट्ठे होकर वे इनसे लड़ने लगे। लक्ष्मणने लीलामात्रमें ही उन्हें जीत लिया, उनके धनुषबाण छूट गये। हतप्रभ होकर चिल्लाते हुए वे अपने स्वामीके पास गए और सारा वृतान्त निवेदन किया। उनका राजा क्रोधसे बहुत बड़ी सेना लेकर अनेक हथियारोंसे सुसज्जित हो निकला। ये सब म्लेच्छ काकोनद नामसे विख्यात थे और अत्यन्त कठोर, माँसभक्षक तथा राजाओंसे भी दुर्जेय थे। मेघोंकी काली घटाके समान इनकी भीड़ देखकर लक्ष्मणने कुछ क्रुद्ध हो धनुष चढ़ाया। धनुषकी टंकार सुनकर सारा वन काँप उठा, जंगली जानवरोंको ज्वरसी कपकपी हो उठी। लक्ष्मणने ज्यों ही धनुष पर बाण चढ़ाया कि म्लेच्छोंकी सेना डरकर अन्धोंकी तरह इधर उधर भटकने लगी। अन्तमें म्लेच्छोंका अधिपति भयभीत होकर रथसे उतरा और दोनों भाइयोंको हाथ जोड़ प्रणामकर कहने लगा—"कौशाम्बी नगरीमें विश्वानल नामके एक अग्निहोत्री ब्राह्मण और प्रतिसंध्या ब्राह्मणीसे मेरा जन्म हुआ है। रौद्रभूति मेरा नाम है। बचपनसे ही मैं जूआ खेलनेमें प्रवीण होकर अनेक कुकर्म करने लगा। एक बार मुझे चोरीके अपराधमें फाँसीकी सजा मिली। उस समय किसी धर्मात्मा धनिकने जमानत देकर मुझे छुड़ा दिया। मैं डरसे

काँपता हुआ इस देशमें चला आया और कर्मयोगसे म्लेच्छोंका अधिपति बन बैठा। यहाँ धर्म कर्मके बिना पशुकी तरह रह रहा हूँ। तबसे अबतक अपार सेनाके अधिपति बड़े २ राजाओंको भी मेरे सामने आनेका साहस नहीं हुआ। लेकिन आपने मुझे दर्शनमात्रसे ही पराजित कर दिया। मेरे अहोभाग्य हैं कि मुझे आप जैसे महापुरुषोंके दर्शन हुए। अब मुझे आप आज्ञा दें कि मैं क्या करूँ? अथवा आप कहें तो आपकी पवित्र चरण पादुकाएँ अपने सिरपर रखलूँ। यह विन्ध्याटवी अनेक निधियों और सैकड़ों सुन्दर स्त्रियोंसे परिपूर्ण है। आप यहाँ एकान्तमें आनन्दसे रहिए।" यह कहकर वह ज्यों ही प्रणाम करने लगा कि दुखसे मूर्छित होकर कटे हुए वृक्षकी तरह पृथ्वीपर गिर पड़ा। उसे इस प्रकार दुखी देखकर रामचन्द्रजीने कहा—"उठ, भय मत कर, बालखिल्यको बन्धनसे मुक्त करदे और उसीकी आज्ञासे उसका मन्त्री बनकर रह? म्लेच्छोंकी संगति छोड़कर देशकी रक्षा कर।" प्रभो! ऐसा ही करूँगा।" यह कह कर म्लेच्छाधिपतिने राम लक्ष्मणको आदरसे प्रणाम किया और विशाल रथमें बैठकर बालखिल्यके पास जा उसे बन्धन मुक्त कर दिया, उबटन स्नान भोजन आदि कराए तथा सुसज्जित रथमें बैठाकर दोनों भाइयोंके पास ले गया। बालखिल्यने जाकर राम लक्ष्मणके पैर छुए और भक्तिपूर्वक उनकी स्तुति की। बादमें रामचन्द्रजीकी आज्ञा लेकर अपने नगर आ गया। मन्त्रियोंने उसे पुनः राजसिंहासनपर बैठाया तथा म्लेच्छोंका राजा रुद्रभूति उसका मंत्री बना। सिंहोदर आदि राजागण यह सुनकर चित्तमें बड़े सन्तुष्ट हुए।

राम लक्ष्मण और सीता आनन्दसे भ्रमण करते हुए खान देशमें पहुँचे, जहाँ ताप्ती नदी बहती है। और एक गाँवमें कपिल नामक ब्राह्मणके घर उसकी यज्ञशालामें सीता सहित ठहर गए। कपिलकी ब्राह्मणीने सीताको पीनेके लिये जल दिया। सीताने पूंछा—"यह जल छान लिया है या नहीं?" इतनेमें ही चोटी रखाये, जनेऊ पहने, कमण्डल हाथमें लिये तथा घासका गट्ठर सिर पर रक्खे कपिल ब्राह्मण आ गया। और "यह कौन अज्ञानी शास्त्रहीन जल छाननेकी बात पूंछ रहा है? इसे मेरे घरसे निकाल दो" इस प्रकार भण्ड वचन बोलने लगा। लक्ष्मणको सुनकर क्रोध आ गया! बोलेः—इसकी टांगे पकड़ कर इसे अभी शिलासे पछाड़ कर मारता हूँ।" रामचन्द्रजीने कहाः—लक्ष्मण, ऐसा मत करो, वीरपुरुष दीन भिखारी ब्राह्मणको नहीं मारते। अतः उठो, चलो इस नन्दन बन समान बनमें चलकर रहें।

यह कह कर दोनों भाई सीताको साथ लेकर आगे बनमें चले गये। बनमें पहुंचते ही शीतल सुखदायक वर्षा हुई। वर्षाका जल पीकर तीनोंने अपनी प्यास बुझाई और रातको बड़के पेड़के नीचे सो गये। बड़पर रहने वाला यक्ष इन्हें देखकर बड़ा प्रसन्न हुआ और जाकर विंध्याचलपर अपने स्वामीको खबर दी कि मेरे घरपर आज रात तीन मनुष्य आकर सोये हैं। ये समाचार पाकर यक्षाधिपति तुरंत अपनी स्त्री सहित उस स्थानपर पहुंचा और उन्हें देखकर अवधिज्ञानसे जान लिया कि ये दोनों बलभद्र नारायण हैं। उनके प्रभाव और वात्सल्यसे यक्षने उसी समय एक सुन्दर नगरीकी रचना की। प्रभात होते ही बन्दी जनोंका गाना सुनकर तीनो सोकर उठे, अपने आपको रत्न जटित शय्यापर बैठे हुए पाया, विशाल सुंदर राज महल देखा, विनयवान दासी दास देखे, बड़े २ मकान और परकोट फाटकों वाला नगर देखा। अचानक इस प्रकार विशाल नगर देखकर राम लक्ष्मणने कुछ भी आश्चर्य नहीं किया; क्योंकि इस प्रकारकी चेष्टाएँ चद्र पुरुषकी हुआ करती है। सब प्रकारकी वस्तुओंसे परिपूर्ण उस नगरमें दोनो भाई सुखी देवोंकी तरह सुंदर क्रीड़ा करते हुये रहने लगे। चूंकि यक्षने रामके लिये इस नगरीकी रचना की थी अतः वह पृथ्वीपर रामपुरी कहलाई। द्वारपाल, सैनिक, मन्त्री, घोड़े, हाथी, प्रजा आदि सब अयोध्याकी तरह वहाँ भी हुये।

एक दिन कपिल ब्राह्मण लकड़ी बीननेके लिये उधर बनमें आया। वहाँ ऐसा सुंदर नगर

देखकर उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। एक स्त्रीसे पूंछाः—यह कौनसी नगरी है और यहाँका राजा कौन है ? स्त्रीने कहाः—यह रामपुरी है और इसके राजा श्रीराम हैं, भगवान जिनेन्द्रके भक्त हैं, जैन गुरुओंकी सेवा करते हैं और जैन पात्रोंको दान देते हैं, लक्ष्मण उनके भाई हैं और सीता रानी हैं। वह विमान सदृश उनके रहनेका महल है। इस देवाधिष्ठित नगरीमें एक जैन धर्म ही प्रचलित है अतः जैनके सिवाय दूसरा वहाँ प्रवेश नहीं कर सकता ? स्त्रीके मुखसे धन प्राप्तिका उपाय सुनकर कपिल उसे नमस्कार कर बनमें चरित्र भूषण नामक मुनिके निकट गया और प्रणाम कर उनसे जीवदया मूलक जैन धर्म सुननेकी अभिलाषा प्रकट की। मुनिराजने विस्तारसे सम्यग्दर्शनादि रूप जिनेन्द्र प्रतिपादित धर्मका उपदेश दिया। धर्मोपदेश सुनकर कपिल व्रतधारी जैन श्रावक हो गया और घर आकर उसने अपनी पत्नीको भी जैन बना लिया। वहाँसे वह पत्नी सहित रामपुरी आया और अपनेको जैन बताकर जिन मन्दिरमें गया। वहाँ सामयिकादि क्रियाओंसे निवृत्त होकर नमस्कार पूर्वक जैन शास्त्रोंका पाठ करता हुआ रामचन्द्रजीके पास पहुंचा। सिंहासनपर सीता और लक्ष्मणके साथ रामचन्द्रजीको बैठा हुआ देखकर वह उन्हें पहचान गया और उसी समय बेहोश हो गया। लक्ष्मणने उपचारकर उसकी मूर्च्छा दूर की। ब्राह्मणने अपने और उनके बीच जो पहले घटना हुई थी वह सब कह सुनाई। ब्राह्मणको सम्यग्दृष्टी भव्य जानकर तथा यह जानकर कि यह सद्व्रती और जिन मार्गका उद्योत करने वाला है रामचन्द्रजीने उसे बहुत सा धन दिया। धन लेकर वह घर आया और खूब ठाठ बाटसे रहने लगा। उसे देखकर और भी अनेक मनुष्य उसके उपदेशसे जैन हो गये। वे सब प्रसन्न होकर रामचन्द्रजीके पास गये और कपिलकी तरह ही बहुत सा धन लेकर लौटे। समयानुसार कपिल विरक्त हो मुनि हो गया और घोर तपश्चरण कर मोक्षको प्राप्त हुआ। उसकी स्त्री जैन धर्मके प्रभावसे स्वर्ग गई।
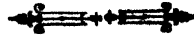
१८ वनमालाका विवाह आदि

चतुर्मास व्यतीत होनेपर अब आकाश स्वच्छ और निर्मल हो गया, रामचन्द्रजी वहांसे चलनेको उद्यत हुए। चलते समय यक्षने कहाः—"देव, अविनयसे जो कुछ आपका अपराध हुआ हो उसे आप क्षमा करना, क्योंकि आप जैसे महापुरुषोंकी सेवा कौन कर सकताहै ?" उत्तरमें रामचन्द्रजीने यक्षसे कहा-'असुर! हमसे भी यदि कोई अपराध हुआ हो तो तुम क्षमा करना।' रामचन्द्रजीके ये वचन सुनकर यक्ष बड़ा हर्षित हुआ। उसने रामचन्द्रजीको नमस्कार कर भक्ति-पूर्वक उनका सन्मान किया और भेंटमें स्वयंप्रभ नामका सुंदर हार समर्पित किया। लक्ष्मणको चांद सूर्य समान दो कानोंके कुंडल भेंट किये। सीताको सुकल्याण नामका चूड़ामणि रत्न दिया और विनोदके लिये मीठे सुरों वाली एक सुंदर वीणा दी। यक्षको संतुष्ट कर राम लक्ष्मणने उससे विदा ली। उधर यक्ष भी मायामयी नगर संकोच कर अपने स्थान चला गया।

व्याघ्र सिंहादिसे भरे हुये अनेक प्रदेशोंको उल्लंघ कर उन्हीं वन्य पशुओंके साथ क्रीड़ा करते हुये दोनो भाई विजयपुर नगरके बाहर उद्यानमें पहुंचे। रात्रिके समय किसी नाग मन्दिरमें शिलाके ऊपर रत्न कम्बल बिछाकर मार्गका थकान दूर करनेके लिये अंधेरेमें ही सो गये। इसी नगरके राजा पृथ्वीधर और महान गुणवती रानी इन्द्राणीसे उत्पन्न एक बनमाला नामकी कन्या थी। बाल्यकालमें ही वह लक्ष्मणकी प्रशंसा सुनकर उसमें अनुरक्त थी। इधर कन्याके पिताने यह सुनकर कि दशरथके दीक्षा लेनेपर राम लक्ष्मण और सीता कहीं बनमें चले गये हैं, पुत्री बनमालाका विवाह इंद्रनगरके राजाके सुंदर पुत्र बालमित्रके साथ कर देना चाहा। लक्ष्मणमें

अनुरक्त बनमालाने जब यह सुना तो विरह और भयसे आतुर हो सोचा—"पेड़से लटककर गलेमें फांसी लगाकर मर जाऊँगी किन्तु दूसरे पुरुषके साथ समागम नहीं करूँगी'? इस तरह सोचकर बनमालाने उस दिन उपवास रक्खा और दिन छिपे माता पिताकी आज्ञा लेकर सखी-जनोंके साथ रथमें सवार हो शोभाके साथ वनदेवीकी पूजा करने गई। जिस रातको जिस जगह राम लक्ष्मणने निवास किया था दैवयोगसे उसी रातको उसी जगह वह भी पहुंची। वहाँ जाकर उसने वन देवीकी पूजा की और जब सब लोग प्रगाढ़ निद्रामें सो गये तब यह वनकी हिरणीकी तरह चुपचाप वहाँसे निकली। उसकी आहट पाकर "क्या है" यह देखनेके लिये वीर लक्ष्मण उठे। उसे देखते ही सोचा-यह प्रकाशकी रेखासी कौन मूर्ति है। अवश्य ही यह कोई कुलीन श्रेष्ठ कुमारी कन्या है और अत्यन्त मानसिक दुःखसे पीड़ित है। दुःख निवारणका उपाय न देखकर निश्चयसे यह आत्मघातपर उतारू है अतः छिपकर देखूँ यह क्या करती है।' यह सोचकर लक्ष्मण वृक्षकी आड़में इस तरह बैठ गये जैसे कोई देव कल्पवृक्षके सहारे बैठा हो। सुंदरी बनमाला भी चुपचाप बड़े कौतुकसे एक बट हंसिनीकी तरह धीरे २ चलती हुई उसी वृक्षके निकट पहुँच गई।

उसे वहाँ निकट आई हुई देखकर लक्ष्मण सोचने लगे-"अब यहाँ यह जो कुछ कहेगी उसीसे ठीक २ मालूम हो जाएगा कि यह क्या चाहती है? बनमालाने स्वच्छ वस्त्रकी फांसी बनाई और योगियोंके भी मनको हरण करने वाली वाणीमें इस प्रकार कहने लगी :—हे इस वृक्षके निवासी देवताओं! तुम मुझपर इतनी कृपा करना कि अगर कुमार लक्ष्मण तुम्हें इस बनमें कहीं घूमते हुए दीख पड़ें तो उनसे कहना कि बनमाला तुम्हारे विरहमें दुखी होकर तुम्हारा ही ध्यान करती हुई मर गई है। अपने गलेमें फंदा लगाकर वट वृक्षसे लटक कर तुम्हारे लिये प्राण देते हुये उसे हमने देखा है, साथ ही उनसे मेरा यह संदेश कहना कि अगर इस जन्ममें मुझे तुम्हारा समागम नहीं मिला है तो अगले जन्ममें तुम्हीं मेरे पति होना।' ऐसा कहकर ज्योंही वह फाँसीपर लटकने-को तय्यार हुई कि लक्ष्मणने आकर रोका और कहाः—मुग्धे, जिस गलेमें मेरी बाहें डालनी चाहिये उसमें वस्त्रकी फांसी क्यों लगा रक्खी है? हे सुंदरि, मैं ही वह लक्ष्मण हूं। अतः तू यह फंदा अलग हटा। तैने जैसा मुझे सुना था वैसा ही अगर विश्वास न हो तो मुझे अच्छी तरह देखकर निश्चय कर'। यह कहकर लक्ष्मणने उसके हाथसे फाँसी छीन ली। बनमालाने लजाते हुये धीरेसे रूपवान लक्ष्मणकी तरफ देखा और प्रथम मिलनमें रोमाञ्चित होती हुई बड़े आश्चर्यसे सोचने लगी—क्या मेरा संदेश सुनकर दयासे वनदेवियोंने यह मेरा उपकार किया है कि जैसा मैंने सुना था वैसे ही मेरे स्वामी दैवयोगसे मुझे आ मिले और मुझे मरते हुये बचा लिया' इस प्रकार सोचती हुई बनमाला लक्ष्मणके आलिंगनसे कुछ पसीनेमें भींगकर बड़ी भली मालूम दी।

प्रभात होते ही रामचन्द्रजी फूलोंकी कोमल शय्यासे उठकर लक्ष्मणको देखने लगे। जब लक्ष्मणको नहीं देखा तो सीतासे पूछाः—देवि! यहाँ आज लक्ष्मण दिखाई नहीं देता। रातको हमारे लिये फूल पत्तोंका बिछौना कर आप भी यहीं पासमें ही सोया था। लेकिन अब न जाने कहाँ गया? रामचन्द्रजीने जोरसे पुकाराः—भद्र लक्ष्मण, आओ कहां चले गये? जल्दी उत्तर दो। "आता हूँ अभी आ रहा हूं" इस तरह आवाज देते हुए लक्ष्मण बनमालाके साथ भाईके पास आकर खड़े हो गये। आकर दोनोंने रामके चरणों को नमस्कार किया, रातकी बीती सारी कथाः कही और वहीं पृथ्वीपर बैठ गये।

उधर जब बनमालाकी सखियां जगीं तो बनमालाको न देखकर "कहाँ गई' कहां गई कहती हुई रोने लगीं। उनका रुदन सुनकर सुभट चारो ओर दौड़े। बनमालाको लक्ष्मणके पास देखकर सारा वृत्तान्त मालूम किया और जाकर राजासे निवेदन किया। राजा पृथ्वीधर रानीके साथ जहाँ लक्ष्मण और बनमाला थे वहाँ पहुँचा। जाकर दोनों भाइयोंको नमस्कार कर वहीं बैठ गया।

परस्पर स्नेह पैदा हुआ और पुत्री वनमालाका विवाह वहीं लक्ष्मणके साथ कर दिया। बड़े उत्सवसे हाथीपर सवार होकर राजाके साथ उन्होंने नगरमें प्रवेश किया और राजमंदिरमें ठहराए गए। लक्ष्मण वनमालाके साथ आनन्दसे रहने लगे. राम और सीताने भी बड़े सुखसे यहाँ समय बिताया।

एक दिन राजा पृथ्वीधर राम लक्ष्मण और अपने आठ पुत्रोंके साथ दरबारमें बैठा हुआ था। उसी समय नंद्यावर्त नगरसे एक दूत आया और हाथ जोड़ नमस्कार कर इस प्रकार कहने लगा—महाराज, नंद्यावर्तके राजा अतिवीर्यने आपको चतुरंग सेना सहित बुलाया है। राजाने पूछा—मेरे बुलानेका क्या प्रयोजन है ? दूतने कहाः—अयोध्यामें एक भरत नामका राजा है। अतिवीर्यने उसके पास दूत भेजा था कि वह आकर मेरे (अतिवीर्य) चरणोंकी सेवा करे अन्यथा राज सिंहासन छोड़ दे। इसपर शत्रुघ्नने क्रोधसे दूतको नगरसे निकाल दिया। दूतने शीघ्र ही जाकर सब समाचार अतिवीर्यसे कहे कि किस प्रकार शत्रुघ्नने उसे कष्ट पहुंचाया। अतिवीर्य सुनकर बड़ा क्रोधित हुआ। अंग, बंग, तिलंग देशके म्लेच्छ राजाओंको लेकर दश अक्षोहिणी सेनाके साथ अनेक हाथी घोड़े रथ और पयादोंसे सुसज्जित होकर उसने भरतपर चढ़ाई की। भरत भी शत्रुघ्नको लेकर अवन्ती और मिथिलाके राजाओंके साथ अतिवीर्यका सामना करने निकला। दोनों वीर योद्धाओंकी सेना नर्मदा नदीके उत्तर दक्षिण तटपर आ डटी। जब रात हुई तो शत्रुघ्नने अतिवीर्यके चौंसठ हजार घोड़े चुप चाप खोल लिए। इसपर अतिवीर्यने क्रुद्ध होकर विभिन्न देशोंके राजाओंको बुलानेके लिए दूत भेजे हैं। अतः आप भी अब शीघ्र वहाँ चलिए'। दूत इस प्रकार निवेदनकर चला गया।

रामचन्द्रजी दूतके मुखसे सब समाचार सुनकर बड़े चिन्तित हुए। लक्ष्मणसे पूछा—"वत्स ! क्या करना चाहिए, कार्य बहुत कठिन आ पड़ा है ?" अतिवीर्य बड़ा शक्तिशाली तथा बहुतसी सेनाका अधिपति है। उसके सामने भरत पराक्रमहीन अल्प सेनावाला है। यदि भरत पराजित हो गया तो हमें अपने देशमें बड़ी लज्जा उठानी पड़ेगी और इस समय अपने आपको प्रकट करना उचित नहीं है। अतः गुप्त रीतिसे ही हमें अपना कार्य करना चाहिए।" इस तरह सोचकर राजा पृथ्वीधरसे उन्होंने अपना अभिप्राय प्रकट किया। पृथ्वीधर अपने आठो पुत्रों तथा राम लक्ष्मणको लेकर सेनाके साथ नगरसे चला। जाकर राजा अतिवीर्यसे भेंट हुई। अतिवीर्यने बड़े स्नेहसे उन्हें किसी दूसरे स्थानपर सेना सहित ठहरा दिया। रामचन्द्रजी पासके ही जिन मन्दिरमें भगवानकी पूजा करने चले गए। वहीं वरधर्मा नामकी आर्यकाके पास सीताको सफेद वस्त्र पहराकर छोड़ दिया। और स्वयं लक्ष्मण सहित नृत्यकारिणी-का वेष बनाकर अप्सराके समान जिन मन्दिरमें नाचने लगे। वहाँसे निकलकर छद्म वेशसे राजाओंके डेरे २ पर नृत्य किया। किसीने अतिवीर्यसे भी जाकर नृत्यकारिणीकी प्रशंसा की। अतिवीर्यने नृत्यकारिणीको बुलाया। लक्ष्मण सहित रामने वहाँ बड़ा सुन्दर नृत्य किया। प्रारम्भमें भगवानके मङ्गलगान गाए। बादमें भरतकी प्रशंसाके गीत गाने लगेः—राजा दशरथ धन्य है जिसके वंशमें पृथ्वीके सम्पूर्ण राजाओंका पालन करने वाला भरत जैसा पुत्र हुआ।"

भरतका स्तुति गान सुनकर अतिवीर्य क्रुद्ध होने लगा। किन्तु नृत्यकारिणीने गाते हुए ही कहा— 'अतिवीर्य, तुम हमारा कहा मानो, भरत इस समय भारतका अधिपति है उसकी सदा सेवामें ही तुम्हारा हित है। यह सुनकर अतिवीर्यने क्रुद्ध हो तलवार सम्हाली और नृत्य-कारिणीको ज्यों ही मारने उद्यत हुआ कि लक्ष्मणने उसके केश पकड़ लिए और उनसे दोनों हाथ पीछे बाँधकर मुक्के लगाए। दूसरोंको भी मारनेके लिए लक्ष्मणने ज्यों ही तलवार उठाई कि पीछे खड़े हुए राजालोग भयभीत होकर कहने लगे—"क्या यह किसी स्वर्ग अप्सराका उत्पात है अथवा भरतके पुण्योदयसे किसी विद्याधरकी स्त्रीने यह सब कुछ किया है।" लक्ष्मणने उन

भयभीत राजाओंसे कहा—'राजन्य ! आपलोग अतिवीर्यका पक्ष छोड़कर यदि भरतकी आज्ञा शिरोधार्य करोगे तो मैं सबको छोड़ दूँगा अन्यथा नहीं'। नर्तकीके बचन सुनकर राजा गण डर गए और जीवनकी आशासे उन्होंने भरतकी सेवा स्वीकार की। रामचन्द्रजी शत्रुपराजयसे प्रसन्न होकर अतिवीर्यको बन्दी बना लक्ष्मणके साथ हाथीपर चढ़कर जिन मन्दिर गए। जाकर पहले भगवानकी तथा बादमें आर्यिकाकी पूजा की। पूजा करके लक्ष्मण और सीताके साथ राजा महीधर और उनके पुत्रोंके बीचमें बैठ गए। रामचन्द्रजीने दयार्द्र होकर लक्ष्मणसे कहा कि अतिवीर्यके बालोंसे बंधे हुए दोनों हाथ खोलदो। लक्ष्मणने वैसा ही किया। पुनः रामचन्द्रजीने अतिवीर्यसे कहा—"अतिवीर्य ! मान भंगसे चिन्ता क्यों करते हो ? भरतकी आज्ञा शिरोधार्य करो और अपनी स्त्रियों सहित स्वर्ग समान महलमें आनन्दसे रहो।" अतिवीर्यने कहा—"मुझे अब भोगोंसे कोई सरोकार नहीं है, मैं अब संसार समुद्रसे तारने वाली जिन दीक्षा ग्रहण करूँगा।" यह कहकर विरक्त हो शत्रु और मित्रको क्षमाकर श्रुतसागर मुनिके पास दीक्षा ले ली। रागद्वेषसे रहित होकर धर्मध्यानमें तत्पर अतिवीर्य मुनि विन्ध्याचलके ऊपर तप करने लगे।

अतिवीर्यके पुत्र विजयरथको रामचन्द्रजीने राज्य तिलक किया। विजयरथने अपनी बहन रतिमालाका लक्ष्मणके साथ विवाह कर दिया। विवाहके उपरान्त दोनों भाई भगवानके दर्शनकर राजा महीधरके साथ विजयपुर आगए। नर्तकीके निमित्तसे अतिवीर्यको दीक्षित सुन कर शत्रुघ्न हँसी उड़ाने लगा। किन्तु भरतने ऐसा करनेसे रोक दिया। विजयरथने चतुरंग सेना सहित आकर भरतको प्रणाम किया और अपनी विजय सुन्दरी नामकी छोटी बहनका सम्बंधकर भरतसे सन्धि करली। भरतने भी अतिवीर्य मुनिके निकट जाकर उनके चरणोंमें प्रणाम किया और इस प्रकार बोले—हे देव ! मेरा जो अपराध हो उसे क्षमा करें। आप धन्य हैं जो शीघ्र ही मुक्तिरूपी स्त्रीको अपने बशमें कर लिया।" इस प्रकार भक्ति पूर्वक स्तुति और पूजाकर तथा बार २ नमस्कार कर भरत शत्रुघ्न आदिके साथ अपने नगर लौट गए। तथा विजयसुन्दरीके साथ आनन्दसे रहते हुए निष्कंटक राज्य करने लगे।

विजयपुरमें कुछ दिन रहनेके बाद रामचन्द्रजीने लक्ष्मणसे चलनेके लिए कहा। लक्ष्मणने बनमालासे विदा माँगी और कहाः—देवि, तुम यहीं रहो मैं शीघ्र ही तुम्हारे पास लौटकर आऊँगा। बनमालाने कहा—"नहीं, मैं आपके साथ चलूँगी और आपकी सेवा करती रहूँगी।"लक्ष्मणने कहा—"अपने रहनेका स्थान निश्चितकर मैं तुम्हें लेने आऊँगा। तबतक तुम यहीं रहो। अगर मैं तुम्हें लेने न आऊँ तो रात्रिभोजनमें अथवा कंदमूलके भक्षणमें अथवा बिना छना जल पीनेमें जो पाप लगता है वह मुझे लगे।" इस प्रकार शपथोंसे बनमालाको सन्तोष दिलाकर रात्रिमें ही राम लक्ष्मण सीता वहाँसे चल दिए।

चलते २ वे कहीं पन्द्रह दिनको,कहीं एक माहको कहीं एक रातको अथवा कहीं एक दिनके ही लिये ठहर जाते। जहाँ कहीं वे विश्राम लेते वहाँके लोग इनके रूप लावण्यपर मुग्ध हो जाते। प्रत्येक गाँवमें इन्हें देखकर नगरकी स्त्रियाँ कामपीड़ासे व्याकुल होकर इनके पीछे दौड़तीं। क्रमसे चलते हुए दोनों भाई क्षेमाञ्जलि नगरमें पहुंचे। नगरके बाहर उद्यानमें ठहरकर भोजनादिसे निवृत्त हो वीर लक्ष्मणने अपना शृङ्गार वगैरह किया और रामचन्द्रजीकी अनुमतिसे धनुषबाण हाथमें ले शहर देखने गए। शहरमें घुसकर रत्नोंके ढेर लगे हुए बाजार देखे और देखा कि कुछ लोग इधर उधर खड़े हुए व्याकुल चित्तसे आपसमें बातें कर रहे हैं। लक्ष्मणने एक मनुष्यसे पूछा कि ये लोग घबड़ाए हुए क्या बात चीत कर रहे हैं ? उसने कहाः—इस नगरके राजाका नाम शत्रुदमन है। उसकी रानी हेमप्रभासे उत्पन्न एक जितपद्मा नामकी कन्या है,वह अत्यन्त रूपवती है और उसके नेत्र कमलके समान है।

इस राजाके घरमें पीढ़ियोंसे चली आई पाँच देवाधिष्ठित शक्तियाँ (शस्त्रविशेष) हैं। "राजा द्वारा चलाई गई उन शक्तियोंको जो मनुष्य झेल लेगा वही मेरा पति होगा" ऐसी उस कन्याकी प्रतिज्ञा है। भला किसको पड़ी है जो उस कन्याके लिए उन शक्तियोंको झेलेगा। यही सब बातें ये लोग कर रहे हैं।" लक्ष्मण यह सुनकर राजमन्दिर गए और द्वारपालकी आज्ञा लेकर राज सभामें पहुंचे। राजाने यह देखकर कि कोई अत्यन्त सुन्दर पुरुष बिना ही नमस्कार किए यहाँ आ खड़ा हुआ है लक्ष्मणसे पूछा:—तुम कौन हो और कहाँसे आए हो? लक्ष्मणने कहा मैं भरतका दूत हूं और तुम्हारी पुत्रीका गर्व खर्व करने आया हूं। राजाने कहा:—जो मेरी छोड़ी हुई शक्तिको झेल लेगा वही मेरी पुत्रीका पति होगा। लक्ष्मणने उत्तर दिया:—तुम अपनी एक क्या पाँचो शक्तियाँ मुझपर चलाओ, मेरे लिये वे तृणके समान हैं।

इधर इनका यह विवाद हो रहा था उधर झरोखोंसे जितपद्मा आदि राज महिलाएँ यह सब देख रही थीं। राजाने क्रोधसे शक्ति घुमाकर लक्ष्मणपर फेंकी, लक्ष्मणने बड़ी आसानीसे उसे सीधे हाथमें झेल लिया। राजाने दूसरी शक्ति उसी प्रकार फेंकी, वीर लक्ष्मणने वह अपने बाएँ हाथमें पकड़ ली। राजाने फिर क्रोधसे तीसरी शक्ति फेंकी, लक्ष्मणने उसे दाहीं बगलमें दाब लिया। जब चौथी शक्ति फेंकी गई तो लक्ष्मणने उसे बाईं बगलमें रख लिया। अन्तमें पांचवीं शक्ति फेंकी गई और लक्ष्मणने उसे भी दांतोंसे पकड़ लिया। लक्ष्मण उस समय पञ्चदन्ती हाथीके समान सुशोभित हुआ। उसी समय देवोंने आकाशसे पुष्पवर्षा की। लक्ष्मणके पराक्रमको देखकर शत्रुदमन बड़ा ही लज्जित हुआ और कहने लगा—'मुझे आज तक कोई नहीं जीत पाया परन्तु तुमने आज जीत लिया, पृथ्वीपर तुम्हारे समान बलशाली कोई नहीं है इसलिए अब तुम मेरी गुणवान पुत्री जितपद्मासे विवाह करो।" लक्ष्मणने उत्तर दिया इस सम्बन्धमें मेरे भाई जानें। राजाने कहा—तुम्हारे भाई कहाँ हैं उनके भी जाकर दर्शन करूंगा।

इस प्रकार कहकर राजा सेना सहित राम और सीताके पास चला, साथमें जितपद्मा और लक्ष्मण भी हाथीपर सवार होकर चले। रामचन्द्रजी और शत्रुदमन दोनों बड़े प्रेमसे मिले और वहीं रत्नकम्बल बिछाकर बैठ गए। परस्परमें कुशलक्षेम पूछनेके उपरान्त शत्रुदमनने नगरमें जो कुछ हुआ था सब कह सुनाया। बादमें वहीं बड़ी धूमधामसे लक्ष्मण और जितपद्माका शत्रुदमनने विवाह किया और सबको नगरमें लाकर राजमन्दिरमें ठहरा दिया। वस्त्र तथा आभूषणोंसे उनका खूब सन्मान किया। लक्ष्मण जितपद्माके साथ और रामचन्द्रजी सीताके साथ वहाँ सुखसे रहने लगे।

——:-०-:——

१९ देशभूषण कुलभूषणका उपाख्यान, जटायुसे मिलाप

वनमालाकी तरह जितपद्माको भी समझा बुझा कर राम लक्ष्मण सीता सहित रात्रिको ही दक्षिण समुद्रकी तरफ निकल चले। मार्गमें कहीं तो वे झूला झूलते, कहीं तालाबमें क्रीड़ा करते, कहीं पुष्प वाटिकाओंमें खेलते, कभी सीताको गोदमें लेकर हाथीपर सवारी करते, कभी जंगली घोड़ोंकी सवारीका आनन्द लेते, कभी जंगली बैलोंसे छेड़ छाड़ करते, और कभी फूल मालाओं आदिसे सीताका शृंगार करते। इस तरह क्रीड़ा करते हुए क्रमसे वंशाख्य (वंशस्थल) नगर पहुंचे। जाकर दिनके तीसरे पहर नगरके बाहर ठहर गये। वहाँ देखा कि सभी लोग भयसे भागे जा रहे हैं। रामने पूछा—"अरे, तुम क्यों भागे जा रहे हो? उन्होंने कहा:—"आज तीन दिन हुए रातको इस पर्वतके ऊपर बिजली गिरनेके समान महाभयंकर घोर शब्द होता है, भूत प्रेतादिकोंके बड़े डरावने आकार दिखाई देते हैं। अतः रातको हम भयसे बाहर भग जाते हैं और

सुबह फिर खाने पीनेके लिए नगरमें आ जाते हैं।' यह सुनकर सीताने कहा--हे देव ! चलो, हम भी इन्हीं लोगोंके साथ यहाँसे बाहर चलें, कौन बुद्धिमान पुरुष इस हालतमें यहाँ रहना चाहेगा, न जाने यह भयंकर शब्द कौन करता होगा।' यह सुनकर रामचन्द्रजीने हंसकर कहा—"देवि. तुम्हीं इनके साथ चली जाओ जिससे तुम्हें किसी प्रकारका कष्ट न हो।' सीताने कहाः—आपके बिना मुझे अपने सुखसे क्या ? रामचन्द्रजी बोले-यदि ऐसा है तो शान्त रहो। आज मैं पर्वतपर जाकर यह सब तमाशा देखूंगा।

यह कह कर राम और लक्ष्मण सीताको बीचमें करके चले। धीरे २ पर्वतपर चढ़कर वे ऊपर पहुँचे। वहाँ मोक्षके अभिलाषी धीर वीर ज्ञानमूर्ति वीतरागी, तप और ध्यानमें तत्पर देशभूषण और कुलभूषण नामके दो निर्ग्रन्थ दिगम्बर मुनि ध्यान कर रहे थे। उनकी सारी देह-पर साँप बिच्छू कीड़े मकोड़े आदि लिपटे हुए थे। मुनियोंको देखकर दोनों भाई प्रसन्न हो क्षण-भर केलिये खड़े हो गये। फिर अपने धनुषोंसे सांप, बिच्छू आदि जीवोंको मुनियोंके शरीरसे हटाकर उन्होंने जलसे मुनि चरणोंका प्रक्षालन किया. गंध विलेपन आदिसे भक्ति पूर्वक उनके चरणोंकी पूजा की। रामचन्द्रजी यक्ष द्वारा दी हुई वीणा वजाने लगे, सीता नृत्य करने लगी और लक्ष्मण ताल देने लगे। उनके नृत्यसे वहाँके पशु भी मुग्ध हो गये। तांडव नृत्य करनेके बाद मुनियोंको नमस्कार किया। इतनेमें ही रात हो गई। चारों ओर डरावना अंधकार फैल गया। मुनियोंके पूर्व बैरसे असुरने पीड़ा देना प्रारम्भ किया, सिंह व्याघ्रादि रूप बनाकर और पत्थरोंकी वर्षा कर वह घोर उपसर्ग करने लगा, वैतालकी आकृति बनाकर हुँकारता हुआ कायरोंको डराने वाली घोर गर्जना करने लगा। उसे देखकर सीता डर गई और कांपती हुई प्राण बचानेके लिये रामचन्द्रजीके गलेसे चिपट कर कहने लगी—"नाथ ! बचाइए ! बचाइए !! मुझे डर लग रहा है।' दृढ़ सम्यक्त्वी रामने कहा—"देवि, डरो मत मुनियोंके चरणकी शरणमें रहो।" यह कह रामने सीताको तो मुनि चरणोंमें बैठा दिया और स्वयं लक्ष्मण सहित अपना धनुष चढ़ाया। उसके टंकार शब्दसे डरकर दैत्य कांपने लगा और उसी समय न जाने कहां भाग गया। उपसर्ग दूर होनेके साथ २ आकाश भी उपद्रव रहित स्वच्छ सुखप्रद हो गया। उसी समय दोनों मुनियोंको केवलज्ञान हुआ. उसके प्रभावसे चतुर्निकायके देव वन्दनाके लिए आए। जल चंदन अक्षत आदिसे केवलियोंकी पूजा स्तुति की और भक्ति पूर्वक प्रणाम कर सभी पशु मनुष्य देवादिक धर्म सुननेके लिए सुंदर समवशरणमें यथास्थान बैठ गए।

धर्म श्रवण कर रामने केवलीसे पूछा—हे प्रभो ! किस दुष्टने आपपर यह उपसर्ग किया ? केवली कहने लगेः—इसी भरत क्षेत्रके पद्मिनीपुरके राजा विजय पर्वत और रानी धारिणीके एक अमृतस्वर नामका दूत रहता था। उसकी स्त्री उपयोगासे उदित और मुदित नामक दो गुणवान पुत्र हुए। उसी नगरके एक वसुभूति नामक ब्राह्मणका उपयोगासे अनुचित संबंध था। एक दिन राजाने अमृतस्वर दूतको किसी कार्यके लिये दूसरे नगर भेजा कि वसुभूतिने मार्गमें आगे जाकर उसका वध कर दिया और नगरमें वापिस आकर उसकी स्त्रीके साथ रमण करने लगा। जब दूतके पुत्र उदित और मुदितको पता लगा तो उन्होंने पिताका बदला लेनेके लिये वसुभूतिको मार डाला। वसुभूति मरकर सम्मेदाचलपर दरिद्र म्लेच्छ हुआ।

एक बार मतिवर्द्धन मुनिराज चतुर्विध संघसहित विहार करते हुये पद्मिनीपुर आये और वसंततिलक उद्यानमें किसी प्रासुक स्थानपर आकर ठहर गये। बनमालीने जाकर राजासे समाचार कहे कि उद्यानमें संघ सहित कोई जैन मुनि आये हैं। यदि मैं उन्हें रोकता हूँ तो डर है कि कहीं वे शाप न दे दें जिससे मेरे कुलका नाश हो जायगा, और यदि नहीं रोकता हूं तो उद्यानके विनाशसे आप क्रुद्ध होंगे। इस प्रकार मेरे एक ओर व्याघ्र है दूसरी ओर गड्ढा है, समझमें नहीं आता कि मैं क्या करूँ? राजाने कहा—तू डर मत। मैं शीघ्र ही जाकर उन तपोधन साधु-

के दर्शन करता हूं। इस प्रकार कह कर राजा कुटुम्बके साथ मुनियोंके दर्शन करने गया। वनमें पहुंच कर हाथीसे उतरते ही उसने मोक्षाभिलाषी, ध्यानमें तत्पर तपस्वी मुनियोंको जहाँ तहाँ बैठे देखा अभिमान छोड़कर मुनि चरणोंमें नमस्कार किया। मतिवर्द्धन आचार्यने "धर्मवृद्धि" कहकर राजाको आशीर्वाद दिया और संसारकी अनित्यता तथा पाप पुण्यका भेद समझाया। मुनिद्वारा प्रतिपादित धर्म श्रवणकर राजा पुत्रको राज्यदे स्वयं मुनि हो गया। उदित मुदित भी उन्हीं मतिवर्द्धन आचार्यके पास संसारदुखसे भयभीत होकर दिगम्बर मुनि हो गये। एक बार उदित मुदित दोनों मुनि सम्मेद शिखरकी वन्दनाके लिये गये। वहाँ पूर्वके बैरी दुष्ट म्लेच्छने उन्हें देखा। वह ज्यों ही उन्हें मारनेको उद्यत हुआ किसी म्लेच्छाधिपतिने दयाकर उसे रोक दिया।

रामचन्द्रने पूछा—"नाथ, उस म्लेच्छने मुनियोंकी क्यों रक्षा की ?" केवलीने कहा:—यक्षपुरमें सुरप और कर्षक नामके दो भाई थे। एक दिन उन्होंने किसी व्याधके हाथसे कुछ मूल्य देकर एक हिरनको छुड़ाया था। वह हिरण मरकर म्लेच्छ हुआ और वे दोनों भाई उदित और मुदित हुये। मृगके भवमें इन्होंने उसकी रक्षा की अतः उसने इनकी रक्षा की। विना कारण न तो किसीका किसीसे प्रेम होता है और न बैर होता है। अस्तु उपसर्गसे मुक्त हो जानेके बाद वे दोनों मुनि आयुके अन्तमें मरण कर स्वर्गमें देव हुए। वसुभूति चिरकाल तक भ्रमणकर मनुष्य गतिको प्राप्त हुआ और कुतपका आचरण कर ज्योतिष्क जातिका देव हुआ। वहाँसे वह अरिष्टपुरके राजा प्रियव्रतकी पत्नी हेमप्रभासे अनुधर नामका दुर्बुद्धि पुत्र हुआ। उदित मुदितके जीव स्वर्गसे चयकर प्रियव्रतकी दूसरी पत्नी पद्मप्रभासे रत्नरथ और चित्ररथ नामके दो सुंदर पुत्र हुए। राजा प्रियव्रत अपनी आयुके अन्तमें पुत्रोंको राज्य दे छः दिनका सन्यास धारण कर मरकर स्वर्गमें देव हुआ। रत्नरथका विवाह रत्नपुरके राजाकी पुत्री श्री प्रभासे हुआ। अनुधरसे यह सहन नहीं हुआ। वह लड़नेको उद्यत हुआ। चित्ररथ और रत्नरथने उसे देशसे बाहर निकाल दिया, वह तापसी बनकर इधर उधर देशोंमें घूमने लगा तथा चित्ररथ और रत्नरथ दोनों भाई तपकर स्वर्गमें देव हुए। वहाँसे चयकर सिद्धार्थ पुरके राजा क्षेमंकरकी रानी विमलासे देशभूषण कुलभूषण नामके पुत्र हुए। पिताने दोनोंको किसी दूसरे नगरमें विद्या पढ़ने भेज दिया, वहाँ गुरुके निकट उन्होंने खूब विद्याभ्यास किया। विद्याभ्यास पूर्ण करने के बाद दोनों कुमार युवा होकर घर लौटे। बन्धुजनोंने उनका स्वागत किया। उसी समय झरोखेमें बैठी हुई राजपुत्रीको देखकर वे दोनों मोहित हो गए। वह कन्या भी इन्हें देखकर कामासक्त हो गई। इतनेमें ही बन्दीजन विरुदावली गाने लगे:—'महाराज क्षेमंकरके ये दोनों पुत्र जयवन्त हो और यह झरोखेमें बैठी हुई शोभाशालिनी इनकी बहिन नीलोत्सवा जयवन्त हो।' बन्दीजनोंके मुखसे उस कन्याको अपनी बहिन जानकर दोनों भाई सोचने लगे यह तो नरक पहुंचाने वाला बड़ा पाप हमसे बन पड़ा। उसी समय दोनों भाई विरक्त होकर मुनि हो गए और अनेक देशोंमें विहार करते हुए इस पर्वतपर आ पहुंचे। वे दोनों भाई हम ही हैं। हमारे वियोगसे दुःखी होकर हमारे पिता मरकर सुपर्णोंके अधिपति गरुणेन्द्र हुए और आसन कम्पित होके कारण अवधिज्ञानसे सारा वृत्तान्त जानकर वे यहाँ व्यंतरोंकी सभामें बैठे हुए हैं।'

उधर वह अनुधर तापस वेशमें घूमता हुआ अपने शिष्योंके साथ कौमुदी नगरी पहुंचा। उस नगरके राजा सुमुखकी सौ रानियाँ थीं जिनमें रतिवती पट्टरानी थी और एक मदना नामक रखेल थी जो मानो त्रैलोक्य विजयसे प्राप्तकामकी रताका ही थी। वह दत्त मुनिके उपदेशसे जैन बन गई थी अतः दूसरे मतोंको तृणके समान मानती थी। एक दिन एकान्तमें राजाने रानीसे तापसीकी प्रशंसा करते हुए कहा कि यह बड़ा तपस्वी है। रानीने कहा—

ऐसे लोगोंका तप किस कामका, मिथ्या दृष्टियोंका तप तो विवेक रहित केवल दम्भका कारण होता है।' राजा इसपर क्रुद्ध हुआ, किन्तु रानीने कहा—नाथ! क्रुद्ध न हो, आप इसे शीघ्र ही मेरे पैरोंमें लोटता हुआ देखेंगे। इस प्रकार कहकर वह शीघ्र ही अपने महलमें गई और अपनी सुन्दर कन्या नागदत्ताको सिखा पढ़ाकर तापसीके आश्रम भेजा। वह आश्रममें तापसी जहाँ योग साधन कर रहा था वहाँ स्वर्गकी देवाङ्गनाके समान जाकर खड़ी हो गई और हवासे वस्त्र उड़नेका बहाना करती हुई अपनी जाँघें, योनि, नाभि, बगल आदि सुन्दर अङ्गोपाङ्ग दिखाने लगी। उसका रूप देखकर कामसे व्याकुल हो तापसीने पूछाः—लड़की, तू किसकी पुत्री है और यहाँ किस लिए आई है? कन्याने कहा—स्वामी, मैं इसी नगरके राजाकी कन्या हूं। मांने मुझे मारकर घरसे निकाल दिया है। कोई शरण न पाकर मैं आपके पास आई हूं और सांसारिक कार्योंको छोड़कर अब तपस्विनी होना चाहती हूं।" यह सुनकर व्याकुल हो तापसी बोला—'तू सुखसे मेरे घरमें रह और भोग विलास कर।" इस प्रकार कहकर ज्यों ही वह मूढ़ आलिङ्गन करने लगा कि कन्याने यह कहकर रोक दिया कि मैं अभी तक पुरुष समागमसे रहित अविवाहित हूं। कार्य वही करना चाहिए जो आगे चलकर भी टिकाऊ रहे। इसलिए आप मुझे मेरी मातासे माँग लें, वह मुझे नहीं चाहती अतः तुम्हें अवश्य दे देगी। उसके हाथ पैर जोड़ोगे तो सब काम ठीक हो जायगा'। यह सुनकर वह मूर्ख तापस प्रभात होते ही कन्याके साथ राजमहलमें रानीके पास गया और राजाके सामने ही रानीके पैर पकड़कर कन्याके लिए गिड़गिड़ाने लगा। राजाने उसे गधेपर बैठाकर मुक्के और ढेलोंसे मारकर अपने नगरसे निकाल दिया। अपमानसे दुखी होकर वह पृथ्वीपर घूमता हुआ नाना दुःख-पूर्ण योनियोंमें भ्रमणकर दैवयोगसे दरिद्र मनुष्य हुआ। लोग उसका तिरस्कार करते, जन्मसे ही माँ ने गालियाँ देकर उसके पिताको बाहर निकाल दिया और बचपनमें ही विषयासक्त म्लेच्छ इसकी माँको पकड़ ले गए। इस तरह यह कुटुम्ब रहित होकर दुःखसे तापसी बन गया और बाल तप करने लगा। वहाँसे आयु समाप्त कर ज्योतिर्लोकमें वह्निप्रभ नामका देव हुआ।

एक बार देवताओंसे पूज्य श्री अनन्तवीर्य केवलीसे किसी धर्मात्मा भक्तने पूछा—"देव! भगवान मुनिसुव्रतनाथके तीर्थमें आपके समान अब और दूसरा कौन भव्य प्राणियोंको तारने वाला होगा। केवलीने कहा:—मेरे निर्वाणके बाद श्रमणोंमें देशभूषण कुलभूषण दो केवलज्ञानी केवलदर्शनी होंगे जिनका उपदेश सुनकर अनेक भव्य संसार समुद्रसे पार होंगे'। केवलीके मुखसे यह सुनकर वह्निप्रभ देव अपने स्थान गया और केवलीकी भविष्यवाणीका स्मरण करते हुए उसने अवधिज्ञानसे जाना कि हम दोनों मुनि इस पर्वतपर आए हैं। स्वामी अनंत-वीर्य सर्वज्ञके वाक्योंको मिथ्या करनेके लिए बड़े अभिमानसे वह पूर्व वैरका स्मरणकर उपद्रव करने पर्वतपर आया। यहाँ चरम शरीरी आपको देखकर और सुरेन्द्रके कोपके भयसे वह भाग गया। तुमने नारायणके साथ आकर हमारी सेवा की अतः घातिकर्मका क्षय हो जानेसे हमको केवल ज्ञान हुआ। हे प्राणियों! भवान्तर सुनकर परस्परमें वैर करना छोड़ दो।

केवलीका इस प्रकार पवित्र उपदेश सुनकर संसार दुःखसे भयभीत देवोंने उन्हें प्रणाम किया। इतनेमें ही गरुडेन्द्र प्रसन्न होकर केवलीके चरणोंको नमस्कारकर रामचन्द्रजीसे बोला—"तुमने मेरे पुत्रोंकी (पूर्वभवके) सेवा की है उससे मैं बड़ा प्रसन्न हूँ। अतः उसके उपलक्षमें तुम जो चाहो सो माँग लो'। क्षणभर सोचकर रामचन्द्रजी बोले:—"गरुडेन्द्र, तुम हमपर प्रसन्न हो अतः इतना करना कि जब हमपर विपत्ति आवे तो भूल न जाना।" "ऐसा ही होगा" गरुडेन्द्रके इस प्रकार कहने पर देवोंने शंखध्वनि की। मेघके समान गम्भीर शब्द करती हुई भेरियाँ तथा अन्य बाजे बजने लगे। मुनियोंके पूर्वभव सुनकर बहुतोंने दीक्षा ली,

अनेकोंने अणुव्रत धारण किए। जो मनुष्य देशभूषण कुलभूषण मुनिका चरित्र विशुद्ध चित्तसे पढ़ते हैं उनके पाप नष्ट हो जाते हैं।

वंशपुरके राजा सुरप्रभने राम, सीता और लक्ष्मणका वस्त्राभूषणोंसे खूब सन्मान किया। कुछ दिन वहाँ ठहरकर रामचन्द्रजीने पर्वतपर ध्वजा तोरणादिसे विभूषित बड़े ऊँचे २ जिनमन्दिर बनवाए। रामजीके वहाँ रहनेके कारण ही वह पर्वत रामगिरि कहलाया। उस समय प्रतिष्ठामें जो लोग सम्मिलित हुए थे उन्होंने रामगिरि नामसे ही इस पर्वतकी प्रसिद्धि की।

राम और लक्ष्मण वहांसे निकलकर सीताके साथ अनेक देशोंमें पर्यटन करते हुए फूलोंसे सुवासित सघन वृक्षोंवाले सुन्दर दण्डक वनमें पहुंचे। समुद्रके किनारे बसे हुए अत्यन्त सघन एवं मृगोंसे भयंकर इस वनमें भीलोंका भी प्रवेश नहीं है। दोनों भाई चलते २ वनके बीचमें बहते हुए कर्णरवा नदीके सुन्दर वृक्षोंसे सुशोभित तटपर पहुंचे। वहाँ नदीमें जलक्रीड़ा कर स्नान किया और वस्त्राभूषण पहनकर पत्थरकी शिलापर तीनों सो गए। बादमें लक्ष्मणने ढाकके पत्तोंके बर्तन बनाए। सीताने चावल और वनगायोंके दूधकी खीर बनाई तथा और भी अनेक पकवान बनाए। लक्ष्मण वनहस्तीके साथ क्रीड़ा करते हुए वनमें दूर निकल गए।

इतनेमें ही सुगुप्ति और गुप्ति नामके दो अवधिज्ञानी और सोपवासी मुनि चर्याके लिए आए। सीताने उन्हें दूरसे देखकर रामचन्द्रजीको बताया। रामचन्द्रजी मुनियोंको देखकर शीघ्र ही उठे और भक्तिपूर्वक उन्हें प्रणाम किया। राम और सीताने हाथमें शुद्ध जल लेकर "तिष्ठ तिष्ठ" कहते हुए उन्हें पड़गाहा तथा तीन प्रदक्षिणाएँ देकर अत्यन्त विनयसे नमस्कार किया। इस तरह मुनि जब आहारके लिए रुक गए तो दोनोंने उनके चरणोंका प्रक्षालन किया, अष्टद्रव्योंसे पूजा की तथा अपनी श्रद्धा और शक्तिके अनुसार सीझा हुआ अन्न दिया। मुनियोंने देहको स्थिर रखनेके निमित्तसे सीताके द्वारा बनाया हुआ और रामचन्द्रजी द्वारा अर्पण किया गया आहार ग्रहण किया और उन्हें आशीर्वाद दिया। आहारके अनन्तर पात्रदानके प्रभावसे देवोंने पुष्पवृष्टि, गन्धोदकवृष्टि, रत्नवृष्टि, जय २ शब्द आदि करके पञ्चाश्चर्य किए। मुनि आहारकर वहीं शिलापर बैठ गए। मुनिको देखकर उस समय एक गृद्ध पक्षीको जातिस्मरण हो गया। भक्तिसे प्रेरित होकर बड़ी दीनतासे वह मुनियोंके चरणोंमें आकर गिर पड़ा और चरणोंके गंधोदकमें लोट-पोटकर स्तुति करने लगा। गन्धोदकके प्रभावसे उसका शरीर स्वर्ण जैसा हो गया, बाल रेशमके समान हो गए, पङ्ख वैडूर्य मणिके समान हो गए, चोंच और पञ्जे पद्मराग मणिके समान हो गए। इस तरह पाँच वर्णोंसे युक्त कौतुक पूर्ण पक्षीको देखकर राम और सीताको बड़ा आश्चर्य हुआ।

रामने मुनिराजसे पक्षीकी इस प्रकार भक्तिका कारण पूछा। मुनिराज बोले—"राजन् पहले यहाँ ग्राम, नगर, वन, बावड़ी आदिसे सुशोभित एक विशाल देश था। उसमें एक कर्णकुंडल नामका नगर था। उस नगरका राजा दण्डक बड़ा बलवान और मिथ्यादृष्टि था। उसकी रानी मस्करी निरन्तर विषयभोगोंमें रत रहती थी। इसी प्रकार राजा भी रानीमें सदा कामासक्त रहता था। एक दिन नगरसे बाहर जाते हुए राजाने कायोत्सर्ग करते हुए ध्यानारूढ़ मुनिको देखा और पत्थरके समान कठोर चित्त होकर उनके गलेमें मरा हुआ विषलिप्त सर्प डाल दिया। मुनिराज यह प्रतिज्ञाकर कि 'जब तक कोई इस सर्पको नहीं हटा देगा तब तक ध्यान नहीं छोड़ूँगा।' चुपचाप ध्यानमें स्थिर हो गए। कई दिन बीत जानेपर राजा फिर उसी मार्गसे गया और मुनिको वैसे ही खड़ा हुआ पाया। उसी समय एक मनुष्य मुनिराजके गलेसे सर्प दूर करने लगा। राजाने निकट जाकर उस मनुष्यसे पूछा 'यह क्या' है? उसने कहा:—राजन् किसी नरकगामी मनुष्यने इन ध्यानी मुनिके कण्ठमें यह मरा हुआ सर्प डाल दिया था। उस

सर्पके संसर्गसे मुनिका शरीर काला चिपचिपा और बड़ा घिनावना हो गया।" मुनिको स्वयं अपने ऊपरसे सर्प हटाते न देखकर राजा बड़ा प्रभावित हुआ। मुनिको प्रणामकर उसने क्षमा याचना की और अपने घर आगया। तबसे वह उपसर्गादि करना छोड़ दिगम्बर जैन मुनियोंका भक्त हो गया। जब पापिनी रानी मस्करीने देखा कि राजा जैन हो गया है तो जैनधर्मसे उसका मुख मोड़नेके लिए रानी उपाय सोचने लगी। एक दिन राजद्वारपर कोई दिगम्बर साधु चर्याके लिए आए। उन्हें देखकर रानी कहने लगी—"राजन्! देखो यह मुझसे भोग करना चाहता है। दिगम्बर साधुका यह कार्य सुनकर और पहले मन्त्रियों आदिसे जो दिगम्बर मुनियोंकी निन्दा सुन रक्खी थी कि ये श्रमण बड़े दुष्ट होते हैं, उसका स्मरणकर राजाको क्रोध आ गया और तुरन्त उन्हें कोल्हूमें पेल देनेकी आज्ञा दी। आज्ञानुसार आचार्य सहित समस्त मुनिराज कोल्हूमें पेल दिए गए। उस समय संघके एक मुनिराज बाहर गए हुए थे। वे जब लौटने लगे तो एक आदमी करुणा भावसे उन्हें रोककर कहने लगा—"हे दिगम्बर साधु, तुम वहाँ अपने संघमें न जाओ, तुम्हारे साथके सभी श्रमणोंको राजाने क्रुद्ध होकर यन्त्रमें पिलवा दिया है। अतः यहाँसे शीघ्र भाग जाओ और धर्मके आश्रय अपने इस शरीरकी रक्षा करो।" संघकी मृत्युके समाचार सुनकर मुनिराज बड़े दुखी हुए और क्षणभरके लिए वज्रस्तम्भकी तरह निश्चल जड़ होकर खड़े रह गए। उसी समय असह्य दुःखसे प्रेरित होकर मुनिराज रूपी पर्वतकी समतारूपी गुफासे क्रोधरूपी सिंह निकला। क्रोधके कारण कालाग्निके समान उनकी बायीं भुजासे कुटिल और विशाल अशुभ तैजस निकला। उसने जाकर शीघ्र ही ग्राम, नगर, सरोवर, बावड़ी आदि सहित समूचे देशको भस्म कर दिया, मनुष्य, पशु, वृक्ष, भूमि आदि सब राख हो गए। राजा भी प्रजा सहित हाय २ करता हुआ जल मरा। मुनिवधके पापसे न अन्तःपुर बचा, न देश बचा, न कोई नगर बचा, न पर्वत बचे। महा वैराग्यसे युक्त मुनिराज भी चिरकालसे उपार्जित धर्मको नष्टकर नरक गए। चूँकि यहाँके राजाका नाम दंडक था अतः इस देशका नाम भी दण्डक पड़ा और उसी कारण यह वन भी तबसे दण्डकवन कहलाता है। बहुत समय बीत जानेपर जब वहाँकी दग्ध पृथ्वी ठीक हो गई तो यहाँ वृक्ष, पर्वत, नदी, तालाब आदि हो गए। उन मुनिके डरसे देवोंके लिए भी भयानक वह स्थान सिंह शरभ आदिसे व्याप्त हो गया। इधर दण्डक राजा संसारमें चिरकाल तक भ्रमण करके इस स्थानके प्रेमके कारण यहां यह गृद्ध हुआ। अब हमें यहाँ आया हुआ देखकर पापकर्मकी निवृत्तिसे इसे जातिस्मरण हो गया है। देखो, जो दण्डक बड़ा शक्तिशाली राजा था पापकर्मके उदयसे वह अब कैसा हो गया है। इस प्रकार पापका फल बुरा जानकर भी न जाने यह प्राणी पापसे विरत होकर धर्ममें क्यों नहीं लगता?

इसके बाद मुनिराज गृद्धसे बोले:—रे पक्षी, अब तू भय मतकर और न रो, होनहारको भला कौन बदल सकता है? तू धैर्य रख, शान्त हो, काँपना बन्दकर, सुखसे रह। देख, कहाँ यह वन, कहां राम सीताका आगमन, कहां हमारा वनमें प्रतिज्ञा कर आहारके लिए आना और कहां हमारा समागम पाकर तेरा प्रबुद्ध होना, यह सब कर्मोंकी गति है। कर्मोंकी विचित्रतासे यह जगत् भी विचित्र है। इस सम्बन्धमें जो कुछ हमने देखा-सुना तथा अनुभव किया है वही हम तुझसे कहते हैं। इतना कहकर मुनिराज रामके भी हृदयका अभिप्राय जानकर पक्षीको प्रतिबोध करनेके लिए अपने वैराग्यकी कथा इस प्रकार कहने लगे:—

"बनारस नगरके राजा अचल और उसकी गुणवती रानी गिरिदेवीके यहां एक दिन शुद्ध आचारवान् त्रिगुप्ति नामके मुनि आहारके लिए आए। रानीने अत्यंत श्रद्धासे विधिपूर्वक उन्हें आहार दिया और बादमें मुनि चरणोंको प्रणामकर अपने पुत्र होनेके बारेमें बहानेसे इस प्रकार प्रश्न किया—"नाथ! यह मेरा गृहवास सफल होगा या नहीं?" मुनिराज भक्तिके अनुरोधसे

वचन गुप्ति भंग करते हुए बोले—"तुम्हारे दो पुत्र होंगे।" मुनि त्रिगुप्तिके कथनानुसार रानीके यथा समय हम दो पुत्र हुए। माता पिताने हमारा सुगुप्ति और गुप्ति नाम रक्खा। बचपनसे ही हम सब कलाओंमें निपुण और लक्ष्मीवान् थे। लोग हमें बड़ा प्यार करते और हम नाना प्रकारकी क्रीड़ाएँ करते।

इसी संबंधमें एक दूसरा वृत्तान्त हुआः—गन्धवती नगरीके राजाके पुरोहित सोमके सुकेतु और अग्निकेतु नामके दो पुत्र थे, दोनोंमें अत्यंत स्नेह था। समयानुसार सुकेतुका विवाह हुआ। किन्तु दोनों भाई यह सोचकर कि इस स्त्रीके आ जानेसे हमको अलग२ सोना पड़ेगा, दुखी रहने लगे। सुकेतु शुभ कर्मोंके योगसे प्रतिबुद्ध होकर अनंतवीर्य स्वामीके पास मुनि बन गया और अग्निकेतु भाईके वियोगसे दुखी होकर बनारसमें उग्र तापसी साधु हो गया। भाईके तापस बन जानेकी खबर सुनकर सुकेतु मुनि भ्रातृस्नेहसे उसे समझाने जाने लगे। चलते समय गुरूने सुकेतुसे कहा—"देखो, तुम भाईसे जब इस प्रकार बात करोगे तब वह शांत होगा।" सुकेतुने पूछाः—"किस प्रकार?" गुरूने कहाः—पहले वह बुरी नियतसे तुमसे विवाद करेगा। विवादके समय विचित्र कपड़े पहने हुए एक गौर वर्णवाली कन्या अनेक स्त्रियोंके साथ शामको गंगा तट-पर आएगी। मेरे बताये हुए चिन्होंसे उसे पहचानकर तुम अपने भाई तापसीसे कहनाः—"अच्छा अगर तुझे ज्ञान है तो इस कन्याका शुभाशुभ बतला?" वह उस समय क्रुद्ध होकर तुमसे भी यही कहेगा कि आप जानते हैं तो आप ही उसका शुभाशुभ बतलाइये?' तब तुम इस प्रकार कहनाः—यहां प्रवर नामका एक वैश्य है उसकी यह रुचिरा नामकी पुत्री है। आजसे तीसरे दिन यह बेचारी मरकर कवर गांवमें अपने मामा विलासके यहाँ बकरी होगी। वहाँ भेड़िया इसे मारेगा। वहाँसे मरकर यह भेड़ होगी, भेड़से भैंस होगी, भैंससे अपने पूर्व जन्मके मामा विलासके यहाँ पुत्री होगी।" "अच्छा इसी प्रकार कहूँगा" कहकर सुकेतुने गुरूको प्रणाम किया और चलते चलते तापसीके आश्रममें पहुँचा। वहाँ जाकर जैसा कुछ गुरूने कहा था वैसा ही तापससे कहा और वही हुआ इधर प्रवरसेनने विलासकी पुत्री विधुराकी याचना की। अतः जब विवाहका समय आया तो अग्निकेतुने जाकर प्रवरसे कहा कि यह तेरी पूर्व जन्म-की पुत्री है और विलाससे भी जाकर कन्याके पूर्वभव कहे। कन्याको यह सुनकर जाति स्मरण हो गया और विरक्त होकर दीक्षा लेनेकी इच्छा करने लगी। इसपर दुष्ट प्रवर विलाससे झगड़ने लगा। किन्तु हमारे पिता (राजा अचल) के दरबारमें प्रवरका मान भंग हुआ। कन्या उधर आर्जिका हो गई और तापस श्रमण साधु (दिगम्बर मुनि) बन गया। जब ये समाचार हमने सुने तो हमें भी संसारसे वैराग्य हो गया और हमने अनंतवीर्य स्वामीके पास जिन दीक्षा ले ली।"

मुनि मुखसे यह वैराग्य कथा सुनकर गिद्ध संसारसे बड़ा भयभीत हुआ। मुनिने उसे श्रावकके व्रत दिए। गिद्धने रात्रि भोजन और मांसादिकका त्याग कर दिया तथा जीव हिंसा छोड़कर समता भावोंसे रहने लगा। मुनियोंने दया युक्त होकर उस सुन्दर शरीर धारी पक्षीको पोषणके लिए सीताके हाथोंमें सौंपा और सबको 'धर्मवृद्धि' का आशीर्वाद देकर वहाँसे विहार कर गये। रामचन्द्रजी सीता और पक्षीके साथ वहीं बैठ गये।

भोजनके लिये लक्ष्मणकी बाट देखते हुए राम सीता परस्पर कह रहे थे कि देखो, परदेशमें जाकर भी हमसे दान पुण्य हो गया। इतनेमें ही वीर लक्ष्मण भी हाथीपर सवार हुए आ गये। बिखरी हुई रत्नराशि और सुन्दर पक्षीको देखकर लक्ष्मणने रामसे पूंछाः—"प्रभो, यह पक्षी कहां का है?" रामचन्द्रजीने मुनियोंको दान देने आदिके सब समाचार कह सुनाये। लक्ष्मण उसे सुन-कर बड़े प्रसन्न हुए। बादमें पक्षी सहित सबने भोजन किया और एक स्वच्छ शिलापर बैठ गये। तीनोंने बड़ी प्रसन्नतासे गृद्धका नाम जटायू रक्खा। रत्न और स्वर्णसे व्याप्त उस वनस्थलीमें

पक्षी सहित वे तीनों पर्यटन करने लगे। कहीं पन्द्रह दिन, कहीं एक मास, कहीं रात भर, कहीं दिन भर ही ठहरते और फल फूल खाकर सुखसे समय बिताते।

एक दिन वनमें एक सुंदर स्थान देखकर रामने लक्ष्मणसे कहा:—यहीं सुंदर नगर बसाकर हमें रहना चाहिये। अतः तू जाकर वियोगसे दुखी माता आदिको इसी स्वच्छ और सुन्दर स्थानपर ले आ अथवा तू यहाँ सीताके साथ रह मैं जाकर उन्हें ले आऊँगा क्योंकि इस समय दुखसे उनकी एक २ घड़ी एक २ वर्षके समान बीतती होगी। लक्ष्मण बोले—"जैसी आपकी आज्ञा हो वैसा मैं करनेको तय्यार हूँ, आपके बचनोंसे बाहर नहीं हूं।" रामचन्द्रजीने फिर कहा:—अच्छी बात है, आजकल वर्षा ऋतु है, नदी आदिकी बाढ़से जगह २ मार्ग रुक जानेके कारण रथ या पालकी आ जा न सकेगी, अतः वर्षाकाल समाप्त हो जानेपर तू सबको यहाँ ले आना।" सीताने भी रामकी बातका ही समर्थन किया अतः लक्ष्मणने उसे मान लिया। दोनों भाई सीता सहित नदी किनारे सुन्दर घर बनाकर बड़े स्नेहसे सुखपूर्वक रहने लगे। वनगायोंके दूधमें खीर बनाकर तथा घीमें अन्न सेककर शाकके साथ वे नित्य भोजन करते और जंगली हाथी घोड़ोंके साथ अपने नगरकी तरह आनन्दसे क्रीड़ा करते।

——:-❀-:——
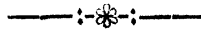
२० सीताका हरण

शरद् ऋतु आई, आकाश बादलोंसे स्वच्छ हो गया, चन्द्रसूर्यकी किरणोंसे सम्पूर्ण पृथ्वी निर्मल हो गई, वृक्ष पर्वत सब हरे भरे बड़े शोभायमान दीखने लगे, अनेक जातिके पक्षी चारों ओर कल २ शब्द करने लगे। राम, लक्ष्मण, सीता घरके लोगोंको लानेके लिये सोचने लगे। रामने कहा:—"लक्ष्मण! देखो तो यहाँ नगर निर्माणके लिये कौनसा स्थान उपयुक्त होगा।" लक्ष्मण आज्ञानुसार धनुष हाथमें लेकर बड़ी प्रसन्नतासे स्थानकी खोजमें वनमें घूमने लगे। अचानक ही उन्हें बड़ी मनोहर सुगंध आई। लक्ष्मणने आगे बढ़कर देखा तो बांसोंके झुरमुटमें लटकती हुई एक सुंदर तलवार देखी। लक्ष्मणने "यह क्या?" कहते हुए वह तलवार हाथमें ले ली और तीक्ष्णताकी परीक्षाके लिये उसे अपनी भरपूर शक्तिसे उसी बांसोंके झुरमुटपर चलाया। बांसोंके झुण्डके साथ वहाँ किसीका सिर भी कट गया। लक्ष्मण उसे देखकर पापसे भयभीत हो बड़े दुखी हुए।

श्रेणिकने गौतम गणधरसे पूछा:—"भगवन्! यह किसका मस्तक था?" गणधर बोले—

लंकासे उत्तरमें और दंडक वनके दक्षिणमें समुद्र तटपर योजनके आठवें भाग विस्तारवाला अलंकारपुर नामका एक विशाल पाताल नगर है जो शत्रुओंसे भी असाध्य है और सैकड़ों देशोंके बीच बसा हुआ है तथा अनेक गावोंका केन्द्र है। उसके राजाका नाम खरदूषण तथा रानीका नाम चन्द्रनखा है। यह चन्द्रनखा रावणकी बहन है। इसके संबूक और सुंदर नामके दो पुत्र हुये। दोनों ही अपने मामा (रावण) के बड़प्पनसे अभिमानी पूर्ण युवा हुए। युवा होनेपर संबूक पिता द्वारा मना करनेपर भी मृत्युसे प्रेरित होकर सूर्यहास खड्ग सिद्ध करने दंडक वन गया। वहां देवों द्वारा रक्षित उस बांसोंके झुरमुटको देखकर उसके अन्दर घुस गया और ब्रह्मचर्य तथा एक बार भोजनकी प्रतिज्ञा लेकर केवल एक वस्त्र पहनकर, गंध नैवेद्य पुष्प आदिसे अर्चना करता हुआ बारह वर्षके लिए खड्ग सिद्ध करने बैठ गया। दुपहरको प्रतिदिन इसकी माँ इसे भातका भोजन देने आती और खड्ग सिद्ध करते हुए अपने पुत्रको देख जाती। जब बारह वर्ष पूर्ण हो गए तो सातवें दिन माता उस खड्गको देखकर बड़ी प्रसन्न हुई और पतिके पास जाकर बोली:—प्रभो, आजसे तीसरे दिन मेरा पुत्र खड्ग सिद्ध करके यहाँ आ जायगा इसलिए

उसके स्वागतकी तैय्यारी करें।" अच्छा कहकर खरदूषण स्वागत समारोहकी तय्यारीमें लग गया। श्रेणिक, अब पुनः तू लक्ष्मणका वृत्तान्त सुन।

उस कटे हुए मस्तकको देखकर लक्ष्मण व्याकुल हो सूर्यहास तलवार लेकर रामके समीप आए और चरणोंमें नमस्कारकर उनसे सारा वृत्तान्त कहा। परिस्थितियोंको समझनेवाले महाबली रामचन्द्रजीने कहा—"यह किसी विद्याधरका मस्तक तैने काट दिया है। इसलिए अवश्य ही यहाँ कुछ अनर्थ होनेकी सम्भावना है, यह कहकर राम लक्ष्मण सीता सहित सावधान हो गए और धनुषबाण हाथमें लेकर सुखपूर्वक बैठ गए।

इसके बाद चन्द्रनखा पुत्रको देखनेके लिए आई। किन्तु उसका मस्तक कटा हुआ देखकर वह बड़े दुःखसे रोने लगी:—हाय! किसने मेरे प्यारे पुत्रका मस्तक काट लिया। उस दुष्टने कैसे यह चन्द्रमाके समान सुन्दर चेहरा काट दिया? कौन पापी उस सूर्यहास खड्गको ले गया? इस प्रकार वह रोती हुई शोकरूपी अग्निसे सन्तप्त होकर मूर्च्छित हो गई। पुनः स्वयं सचेत होकर क्रुद्ध होती हुई कहने लगी—"देखती हूँ यह किसने मुझे दुःख पहुंचाया है। उसीको अपने पति और भाईके हाथों मरवा डालूँगी।" इस प्रकार कहकर दुखी हो वह इधर उधर देखने लगी। उसने दूरसे कलाविज्ञानसे भूषित और रूपलावण्यसे युक्त कामदेवोंके समान इन दोनों भाइयोंको बैठे हुए देखा। उन्हें देखकर पुत्रका दुख भूल वह कामसे पीड़ित हो गई और अशोक वृक्षके नीचे तिरस्कृतसी बैठ गई। मायासे वनलक्ष्मीके समान स्तनभारसे युक्त कन्याका सुन्दर रूप बनाकर वह दीनता पूर्वक रोने लगी। उसका रुदन सुनकर सीता वहाँ आई और पूछने लगी:—लड़की, तू किसकी पुत्री है और तेरा पति कौन है? अकेली इस तरह दुखी होकर तू क्यों रो रही है? भय मत कर ठीक २ अपना सारा वृत्तान्त कह।

इस प्रकार कहकर सीता उसे हाथ पकड़कर रामके पास ले आई। रामने भी करुणा पूर्वक उससे सीताके समान उसी प्रकार पूछा। कामसे पीड़ित चन्द्रनखा लजाती हुई कहने लगी:—हे नाथ, बचपनमें ही मेरे माता पिता मर गए हैं, वस्त्रादिसे रहित होकर मैं इस जंगलमें हिरणके समान घूमती हूँ, यहाँ मेरा कोई सहारा नहीं है जिसकी मैं जाकर शरण लूँ। आप दोनोंमेंसे यदि कोई एक मुझे प्रेमसे अपनाले तो मैं उसीकी शरणमें बनी रहूँगी; अन्यथा मर जाना निश्चित है"। इस प्रकार कहकर वह आशा लगाए हुए चुप हो गई। उसकी बात सुनकर समयको पहचाननेवाले रामचन्द्रजी बोले:—बाले! यहाँ हम दोनोंमेंसे तो तुम्हें कोई नहीं चाहता, दूसरा यदि कोई तुम्हें आश्रय देता हो तो वहाँ चली जाओ'। इस प्रकार कहकर रामचन्द्रजी-ने उसे अपने यहाँसे निकाल दिया। वह क्रुद्ध हो अपने नगर लौट आई। वीर लक्ष्मण उसके रूपका स्मरण करते हुए चित्तमें व्याकुल हो वहाँ ठहर न सके। इसलिए कोई बहाना लेकर रामचन्द्रजीकी अनुमतिसे वहाँसे चले और उसका रूप देखनेके लिए वनमें घूमने लगे। जब वह रूपलावण्यवती सुन्दरी कहीं नहीं दिखी तो लक्ष्मणको बड़ा आश्चर्य हुआ। अतः निराश हो इधर उधर देखते हुए अपने स्थान लौट आए और रामचन्द्रजीके पास आकर बैठ गए।

इधर पुत्र वियोगसे दुखी होकर चंद्रनखा खरदूषणके पास अलंकारपुर आई। बाल बखेर शरीरमें खरोंचकर मलिन अङ्गसे हृदय विदारक रुदन करने लगी। छाती कूट २ कर उसने आँसुओंकी झड़ी लगा दी और दुःखसे मूर्च्छित हो पृथ्वीपर गिर पड़ी। उसका रोना सुनकर खरदूषण आया। पूछने लगा:—प्रिये! क्या हुआ, क्यों इस प्रकार दुखी होकर रो रही हो, किस दुष्टने तुम्हें पीड़ा या दुःख दिया है, तुम यह विलाप करना छोड़ो मैं शीघ्र ही कान नाक छेदकर उसका निग्रह करूँगा'। चन्द्रनखाने बड़े दुःखसे कहा:—नाथ! आपका पुत्र संबूक दण्डकवनमें सूर्यहास खड्गका साधन कर रहा था। वहाँ स्त्री सहित कहींसे आए हुए दो पुरुषोंने

साधनामें लीन उस पुत्रका बध कर दिया और सिंहके समान हुंकार करते हुए उसके हाथमें आया हुआ खड्ग छीन लिया। बड़े स्नेहसे मैं पुत्रको देखने गई थी लेकिन वहाँ पुत्रका कटा हुआ सिर देखकर रोने लगी, इसपर वे दुष्ट कामी फिर आए और मुझे सताने लगे, इतना ही अच्छा हुआ कि पूर्व पुण्यके योगसे मेरा शील खण्डित नहीं हुआ। मैं वहाँसे भागकर अब आपके पास आई हूँ। हे नाथ. आप पुत्रबधका बदला उससे अवश्य लें"।

पुत्रका मरण सुनकर खरदूषण दुखी होकर मूर्च्छित हो गया। बहुत देरके बाद लोगोंने उसे सचेत कर पाया और इस प्रकार शोक करने लगाः—हे पुत्र, तू बचपनसे ही ऐसा पुण्यवान था कि तुझे थोड़ा सा भी दुख नहीं हुआ। किन्तु आज निर्जनवनमें न जाने दुष्टोंने तुझे कैसे मार दिया ? इस प्रकार शोककर उसे क्रोध चढ़ आया। "मैं शीघ्र ही जाकर उनका मस्तक धड़से अलग करूँगा।" इस प्रकार कहता हुआ वह भीतर गया और मन्त्रियोंसे सलाह की। मन्त्रियोंने कहा कि जिसने सूर्यहास खड्ग ले लिया और जो संबूकका बध करके भी वहीं ठहरा हुआ है वह कोई कायर पुरुष नहीं होगा। इसलिए राजा रावणके पास भी युद्धके लिए दूत भेजना चाहिए। मन्त्रियोंके वचन सुनकर खरदूषणने दूतको सारे समाचार समझाकर रावणके पास लंका भेजा। समाचार सुनकर रावणको क्रोध चढ़ आया सेना आदि सुसज्जित कर रावण इधर युद्धकी तय्यारी करने लगा। तब तक खरदूषण दुःख न सह सकनेके कारण चतुरंग सेना लेकर अनेक विद्याधरोंके साथ युद्धको चला और नाना रणवाद्योंके साथ दण्डकवन पहुँचा।

सीता बाजोंकी ध्वनि सुनकर डरसे पतिके हृदयमें लिपट गई। "डरो मत डरो मत" कहकर राम चन्द्रजीने सीताको ढाढ़स बँधाया और कहाः—'देवि, यह कोई विद्याधर राजा है। अथवा कोई देव मेरुकी वन्दना करने सुमेरु पर्वत जा रहा है। अथवा कोई विद्याधर ही विवाहके लिए बरात लेकर जा रहा है"। इस प्रकार रामचन्द्रजी कह ही रहे थे कि शत्रुकी सेना निकट आ गई। उसे देखकर लक्ष्मण बोलेः—बाँसोंके झुरमुटमें बैठे हुए उस मनुष्यको पक्षके यह लोग मालूम पड़ते हैं। हे देव, बादलोंके समान उसकी यह हाथियोंकी सेना और वायुके समान चंचल ये घोड़े तथा पर्वतके समान ये रथ और दैत्योंका मुख भञ्जन करने वाले महा दैत्योंके समान ये पयादे देखो। निःसन्देह उस मायाविनी कुलटा स्त्रीने ही इन अपने आदमियोंको हमें त्रास देने भेजा है।' यह सुनकर रामचन्द्रजी बोलेः—लक्ष्मण तू सीताकी रक्षाका उपाय कर और मैं इन्हें मारता हूँ।' लक्ष्मणने हाथ जोड़कर कहा— 'देव ! मेरे उपस्थित रहते आपको युद्ध करना शोभा नहीं देता। इसलिए राजपुत्री (सीता) की रक्षा आप ही करें और मैं शत्रुके सन्मुख जाता हूँ। यदि मुझपर कोई विपत्ति आएगी तो मैं सिंहनाद कर आपको सूचना दूँगा।"

इस प्रकार कहकर सागरावर्त धनुष और सूर्यहास खड्ग हाथमें लेकर लक्ष्मण युद्धको उद्यत हो शत्रुके सन्मुख जा डटा। उस धीर वीरको देखकर विद्याधर हृदयमें यद्यपि भयभीत हुए तो भी युद्ध करने लगे। अकेले लक्ष्मण वीरने सारी सेना रोक ली और मेघोंके समान बाणोंकी वर्षाकर सबको व्याकुल कर दिया। लक्ष्मणके बाणोंसे आकाश स्थित विद्याधरोंके कुण्डलमण्डित सिर कमलोंकी तरह कट २ कर गिरने लगे। तथा आकाशसे हाथी, घोड़े और पदाति भर-भरकर गिरने लगे इसी बीचमें रावण भी चतुरंग सेना सहित शीघ्र दण्डक बनमें आ पहुंचा।" कहाँ है ? कहाँ है ? संबूकका मारनेवाला नराधम कहाँ है ?" इस प्रकार कहता हुआ वह सन्मुख आया और रामके साथ रूपलावण्यवती सीताको देखकर कामसे पीड़ित होगया। संबूकके बधको भूलकर वह कामसे व्याकुल हो सोचने लगा—"यह कौन है ? किसकी पत्नी है ? किसकी पुत्री है ? कहाँसे आई है ? क्या करूँ ? कहाँ जाऊँ ? कैसे इसे अपनी बनाऊँ ? इसके बिना

मेरा सारा वैभव फीका है। यदि बल पूर्वक इसको पकड़ूं तो इसके आदमीके साथ युद्ध होनेके कारण बड़ी कलह होगी और परस्त्रीके पकड़नेसे बड़ा अपयश होगा, तथा राक्षसोंके महान कुलमें कलङ्क लगेगा। इस लिए इसके हरनेका उपाय ही सोचना चाहिए और कोइ जान न पाए उस प्रकार प्रयत्न करना चाहिए'।

इस प्रकार सोचकर उसने कर्ण पिशाचनी विद्याको बुलाकर पूछा कि यह कौन है, किसकी लड़की और किसकी पत्नी है? विद्याने कहाः-यह रघुवंशमे उत्पन्न राम है और यह सीता नामकी उसकी पत्नी है जो उसे प्राणोंसे भी अधिक प्यारी है; और यह जो युद्ध कर रहा है वह लक्ष्मण उसका भाई है। सिंहनादका संकेत करनेपर राम भी युद्धको जायगा और तुम्हारे मित्र खरदूषणकी इस युद्धमे मृत्यु होगी'। विद्याके वचन सुनकर परस्त्रीलंपट दुष्ट रावणने तदनुसार ही किया। उसने सिंहनी विद्याको बुलाया और उस मायाविनीको अच्छी तरह सिखाकर युद्धस्थलमें भेजा। वहां जाकर उसने दोनों ओरकी सेनामें गाढ़ अंधकार कर दिया और 'राम' 'राम' इस प्रकार सिंहनाद किया। रामचन्द्रजी उस सिंहनादको स्पष्ट लक्ष्मण द्वारा किया हुआ जानकर भाईपर विपत्तिके भयसे बड़े व्याकुल हुए। बहुतसे पत्तों वगैरहसे सीताको ढककर उन्होंने कहा—"प्रिये यहीं रहना डरना मत"। इसके बाद जटायूसे कहाः-मित्र जटायू, यदि हमारा अपनेपर कुछ उपकार समझो तो इस स्त्रीजातिकी प्रयत्नसे रक्षा करना'। इस प्रकार कह कर पक्षियों द्वारा कोलाहल करके मना करनेपर भी रामचन्द्रजी सीताको उस महावनमें अकेली छोड़कर युद्धमें शामिल हो गए। इसी बीचमें विद्या द्वारा सारा वृत्तान्त जानकर कामाग्निसे पीड़ित रावण धर्मबुद्धिको भुलाकर, हाथी जैसे कमलिनीको पकड़ता है उसी प्रकार सीताको वहाँ से उठाकर ज्योंही आकाशमे स्थित पुष्पक विमानमें बैठाने लगा कि अपने स्वामीकी स्त्रीको हरा देखकर जटायू क्रोधरूपी अग्निसे जल उठा। बड़े वेगसे उड़कर वह रावणके ऊपर झपटा और अपने तीक्ष्ण नखों और पूंछसे उसने रावणका वक्षस्थल लोहुलुहानकर दिया। अपने कठोर पंखोंको फड़-फड़ाकर और उसके वस्त्र फाड़ दिए इस प्रकार उसके सारे शरीरपर प्रहार किया। अपने मनोरथमें विघ्न आता देखकर रावणने गिद्धको थप्पड़ मारकर पृथ्वीपर गिरा दिया। हाथके इस कठोर आघातसे विह्वल होकर पक्षी चीखता हुआ मूर्छित हो गया। उधर रावण कामको निर्विघ्न पूरा हुआ जानकर सीताको पुष्पक विमानमें बैठाकर स्वतन्त्रता पूर्वक अपने स्थान चला गया।

सीता अपनेको हरा हुआ जानकर शोकाकुलित हो राम राम चिल्लाती हुई पीड़ित स्वरसे विलाप करने लगी। रावण सीताको अपने पतिके लिए ही रोती देखकर थोड़ी देरके लिए कुछ विरक्तसा हो गया? सोचने लगा-यह केवल राममें ही आसक्त है दूसरे पुरुषसे घृणा करती है फिर मैं इसे क्यों लाया? क्यों मैंने इसे अंगीकार किया? इसको अभी तलवारसे मारता हूँ। इस प्रकार सोचकर ज्योंही मारने लगा कि मनमें विचार आया—"यह अबला है, मेरा यह हाथ जो शत्रुओंपर पड़ना चाहिए इसपर कैसे उठाऊँ? समीचन विद्या, पर स्त्री, पर राज्य और पराया धन ये धीरे धीरे ही बुद्धि, प्रेम और युक्तिसे वशमें होते हैं। इसलिए मेरे घरका ठाठ बाट देखकर यह अवश्य ही मेरे बसमें हो जायगी। तब तक इसे अपने घरके पश्चिम उद्यानमें रक्खूंगा। इसपर बलात्कार करना ठीक नही है क्यों कि मुझे पहले गुरुने प्रतिज्ञा दिलादी है कि मैं किसी स्त्रीके साथ उसकी इच्छाके विरुद्ध समागम नहीं करूँगा। इस लिए प्राण छोड़ देना या धनका नष्ट कर देना अच्छा है परन्तु भव-भवमें दुख देनेवाला व्रतभंग करना अच्छा नहीं। अथवा पतिव्रता स्त्रीपर बलात्कार करनेसे उसके श्रापसे मेरी सारी विद्याएँ नष्ट हो जायँगी"। इस प्रकार सोचकर वह मूढ़ विषयी रावण सीताको पुष्पक विमानमें बैठाकर लंका ले गया।

उधर बाणोंसे आच्छन्न रणभूमिमें रामको आया हुआ देखकर बुद्धिमान लक्ष्मण बोला:-देव, हाय आप सीताको भयानक बनमें अकेली छोड़कर यहाँ कैसे चले आए? रामचन्द्रजीने कहा- तुम्हारा सिंहनाद सुनकर ही मै यहां शीघ्र चला आया हूँ'। लक्ष्मणने कहा—"शीघ्र लौट जाइए आपने यह अच्छा नहीं किया"। "तू इसी प्रकार परम उत्साहसे शत्रुपर विजय प्राप्त करना" इस प्रकार लक्ष्मणको आशीर्वाद दे रामचन्द्रजी सीताके लिए सशंकित हो लौटे। क्षणभरमें लौटकर देखा तो सीता नहीं है। पहले तो रामको बुद्धिभ्रमसा जान पड़ा। बादमें हाय सीता! हाय सीता!! कहते हुए मूर्च्छित हो पृथ्वीपर गिर पड़े। उस समय पृथ्वी अपने पतिसे आलिङ्गन करती हुईसी सुशोभित हुई।

रामचन्द्रजी जब सचेत हुए तो वृक्षोंकी ओर देखकर बड़े प्रेमसे इस प्रकार बोलेः—हे देवि, तुम कहां गई? जल्दी उत्तर दो, क्यों हंसी कर रही हो? मुझे मालूम है कि तुम वृक्षोंके पीछे छिपी हो। आओ देखो मैं यह आगया। प्रिये, अब क्रोध क्यों करती हो? तुम्हें मालूम है कि तुम्हारे क्रोध करनेसे मुझे कितनी पीड़ा होती है। बोलो, क्या तुम मुझे अपने वियोगसे मरा हुआ देखना चाहती हो। मुझसे तुम्हें अत्यंत स्नेह था और मैं भी सबको छोड़कर तुम्हारे साथ यहां आया। प्रिये! यहां मैं अकेला हूँ मुझपर इस प्रकार क्रोध मत करो'। इस तरह विलाप करते हुए रामचन्द्रजी जब घूम रहे थे तो मरणासन्न जटायूको बहुत धीरे २ कराहते हुए देखा। रामचन्द्रजीने दुखी होकर उसके कानमें नमस्कार मन्त्र दिया। उसके प्रभावसे मरकर वह देव हुआ। जटायूके मरजानेसे सीताके वियोगरूपी अग्निसे दुखी रामचन्द्रजीको और भी अधिक दुःख हुआ और वे पुनः मूर्छित हो गए। जब चेत हुआ तो चारों ओर देखने लगे, आखिर निराश होकर पुनः दुखी हो भूताविष्टकी तरह विलाप करने लगे। 'हाय हाय! किस दुष्टने मौका पाकर इस भयानक वनसे सीताको चुराया है, रे सिंह मृग सर्प पक्षी हाथी और भेड़ियो'! यदि तुमने कहीं मेरी सीता देखी हो तो बताओं। वृक्षों! यदि तुम्हें कहीं सीताका पता हो तो बताओ।'

जब कहींसे कुछ उत्तर नहीं मिला तो रामचन्द्रजी पुनः मूर्छित होगए। सचेत होनेपर उन्होंने क्रुद्ध हो वज्रावर्त धनुष चढ़ाया और उसका टंकार शब्द किया। उससे सिंह मृग आदि सब भयभीत होगए। पर्वत गूंज उठे, वृक्ष लता आदि भग्न होगए, पानीके झरने फटगए, पक्षी कोलाहल करने लगे, फिर भी सीताका पता नहीं लगा अतः पुनः मूर्छित हो गए। जब ठंडी हवा लगी तो उन्हें चेत हुआ, दोनो हाथ गालोंपर रख कर बैठगए और सोचने लगे—कर्मकी शक्ति तो देखो, पिता माता आदिका भी वियोग हुआ और बनमें आकर सीता भी चली गई, अब इस गहन बनमें किससे पूछूं; क्या करूँ, कहां जाऊँ? किसी दुष्टने सीताको चुरा लिया? न जाने वह दुखिनी जीवित है या नहीं? मेरी मूर्खता तो देखो कि सहायकके बिना सीताको वनमें अकेली छोड़कर मैं युद्धमें चलागया। क्यों न सीताको अपने दोनों भाइयोंके बीचमें लेकर मैं युद्ध करने गया, या उसे पीठपर बाँधकर ही ले जाता। अथवा कौन जाने कर्मको क्या इष्ट था'?

इस तरह नाना प्रकार शोककर रामचन्द्रजी व्याकुल चित्त हो पुनः मूर्छित होकर पृथ्वीपर गिर पड़े। इधर रामचन्द्रकी यह अवस्था थी उधर वीर लक्ष्मण खरदूषणके सैनिकोंके साथ अकेले ही भयंकर युद्ध कर रहे थे। इतनेमें ही चन्द्रोदरका पुत्र विराधित वहां आया और लक्ष्मणको नमस्कारकर कहने लगा:—देव! अंलकारपुर नगर पहले वंश परपंरासे हमारा चला आ रहा था। किन्तु खरदूषणने उसे हमसे छीन लिया, आपकी कृपासे अब वह पुनः मेरे अधिकारमें आ जायगा। आप अकेले खरदूषणके साथ युद्ध करें और दूसरे दुष्ट सैनिकोंको मैं मारता हूँ'। लक्ष्मणने कहा—"अच्छी बात है"। बस विराधित खरदूषणके पक्षके योद्धाओंके सामने जा डटा और सबको ललकारते हुए बोला:—हे योद्धाओं! मैदानमें आओ, यह देखो विराधित तुम्हारा क्षय करने,आ गया है। यह सुनकर सारे सैनिक विराधितके सन्मुख रणभूमिमें आए। दोनों ओर

की सेनाओंमें घमासान युद्ध हुआ। हाथी हाथियोंके साथ, घोड़े घोड़ोंके साथ, पयादे पयादोंके साथ भिड़गए। दोनों ओरके राजारूढ़ सैनिक मरकर नीचे गिरने लगे। सुभट एक दूसरेका सिर काटने लगे। हाथियोंके पदाघातसे घोड़े नीचे गिरने लगे, घोड़ोंके खुराघातसे मनुष्य मरने लगे।

इधर लक्ष्मण भी खिलवाड़ करते हुए युद्ध करने लगे। खरदूषण बड़े क्रोधसे गर्व पूर्वक लक्ष्मणसे कहने लगाः—रे मूढ़ दुरात्मा, मेरे पुत्रको मारकर अब तू कहां जाता है। रे परस्त्री लंपट पापी! देख तू अभी युद्धमें मरता है। अतः अपने किसी कुलदेवताका स्मरण कर जिससे तेरी अच्छी गति हो। रे दुष्ट, तू लज्जा रहित होकर कैसे मेरे सामने खड़ा है।

खरदूषणकी गालियाँ; सुनकर लक्ष्मण क्रुद्ध होकर बोलेः—रे मूर्ख, हाथीके सामने कुत्तेकी तरह तू व्यर्थ क्यों भोंक रहा है? जहां तेरा पुत्र गया है वहीं तुझे भी भेजता हूँ'। इस प्रकार कहकर लक्ष्मणने ज्योंही बाण चलाया कि खरदूषण बाणके प्रहारसे रथसे गिरपड़ा। इस तरह सातवार खरदूषणको लक्ष्मणने रथविहीन किया। खरदूषण फिर हाथीपर चढ़कर युद्ध करने लगा। लेकिन लक्ष्मणने हाथीपरसे भी उसे गिरा दिया। तब वह पैदल युद्ध करने लगा। दोनोंमे उस समय बड़ा भयंकर द्वंद्व युद्ध हुआ। परस्परके आघातसे पर्वत भी गूंजने लगे। दोनोंके उस भंयकर युद्धको देखकर देव भी आश्चर्य करने लगे, नारद नृत्य करने लगे। उसी समय लक्ष्मणने सूर्यहास खडगसे कुंडल मुकुट सहित खरदूषणका सिर काट लिया। खरदूषण निष्प्राण होकर पृथ्वीपर गिरपड़ा। उस समय वह ऐसा लगा मानो स्वर्णकी पुरुषाकार कामदेवकी मूर्ति हो। इधर खरदूषणके सेनापति सुभग दूषणने विराधितको रथरहित करना चाहा। किन्तु लक्ष्मणने उसके वक्षस्थलमें भिन्दमालका प्रहार किया। अतः वह निःप्राण होकर पृथ्वीपर गिर पड़ा। सेनापतिके मरते ही सारी फौज भाग खड़ी हुई। लक्ष्मणने उन सबको अभयदान दिया और विराधितको सब शत्रु सामग्री सोंपकर विजयी हो रामचन्द्रके पास पहुंचे। वहां सीताके वियोगमें मूर्छित रामको देखकर लक्ष्मणने कहाः—"भाई! क्यों सो रहो हो? सीता कहाँ है?' रामचन्द्रजी शीघ्र ही उठे और लक्ष्मणको विना घावके देखकर कुछ प्रसन्न हुए और बड़े आदरसे उन्हें छातीसे लगाया तथा कहने लगेः—हे भद्र! सीताको न जाने किसीने हर लिया या सिंहने उसे खा लिया, खोजनेपर भी उसका पता नहीं लगा? न जाने उसे कोई पाताल ले गया या ऊपर आकाशमें लेगया अथवा सुकुमार शरीर होनेके कारण वह उद्वेगसे विलीन होगई'।

लक्ष्मणको यह सुनकर क्रोध आगया। कुछ खिन्न होकर बोले-"देव, शोक करनेमे अब क्या हाथ लगेगा'। इस प्रकार श्रुतिमधुर तथा सुन्दर वचनोंसे सान्त्वना देकर स्वच्छ जलसे उसने रामचन्द्रजीका मुह धुलाया। उसी समय तीव्र कलकल शब्द सुनाई दिया। रामने आश्चर्यसे लक्ष्मणसे पूछाः—क्या आकाशसे यह ध्वनि आरही है? अथवा यह पृथ्वी गरज रही है? लक्ष्मणने कहा-नाथ! यह राजा चन्द्रोदरका पुत्र विराधित विद्याधर है, इस युद्धमें इसने मेरा बड़ा उपकार किया है। उसी स्नेहसे प्रेरित होकर वह चतुरङ्ग सेना सहित यहाँ आ रहा है। उसका ही यह शब्द सुनाई दिया है'। इस प्रकार ये दोनों बातें कर ही रहे थे कि विराधित अपनी विशाल सेनाके साथ आ पहुँचा। मन्त्रियों सहित जय जय उच्चारण करते हुए हाथ जोड़ नमस्कारकर वह इस प्रकार बोलाः—नाथ! चिरकालकेबाद आप जैसे पुरुषोत्तमको हमने अपना स्वामी पाया है अतः आप हमें कुछ आज्ञा दीजिए। यह सुनकर लक्ष्मणने कहाः—हे मित्र, किसीने मेरे इन बड़े भाईकी पत्नी हरली है। उसके विरहसे ये बड़े दुखी है; अगर इस दुखसे इन्होंने प्राण छोड़ दिए तो मैं आगमें जलकर मर जाऊँगा, इनके प्राणोंके आधारपर ही मेरे प्राण टिके हुए हैं। इस लिए इस कार्यमें तुम्हें कुछ प्रयत्न करना चाहिए'।

विराधितको यह सुनकर बड़ा खेद हुआ, वह सोचने लगा—इस दुःख रूपी समुद्रमें गोते खाते हुए भी मैं पार नहीं लग रहा हूँ, रामचन्द्रजीके दुखसे जान पड़ता है कि ये मुझसे भी

अधिक दुखी हैं। कर्मोंकी विचित्रता देखो कि इनपर भी दुःख आपड़ा' ? तो भी अपने मनको मजबूतकर विराधित बोला–देव, आप चिन्ता न करें, आपकी पत्नीको मैं अवश्य खोजकर लाऊँगा। इस प्रकार कहकर उसने अपने योद्धाओंको दशों दिशाओंमें भेजा। उन्होंने आकाशमें, पातालमे, पर्वतोंपर, भयंकर वनोंमे तथा नगर, गांव, नदी, बावड़ी, समुद्रादिकोंमें सब जगह खोज की किन्तु सीता कहीं दिखाई नहीं दी। अतः सारे सुभट निरास होकर रामचन्द्रजीके पास लौट आए। उनका उत्तर हुआ चेहरा देखकर राम चन्द्रजी बोले–'भाग्य नष्ट हो जानेपर धन स्त्री और यश कहाँ रक्खे हैं ? यह जीव सोचता कुछ है भाग्यसे होता कुछ है। देवता भी जिस भाग्यसे छुटकारा नहीं पासके वहाँ भला मनुष्य बलवान होकर भी क्या पराक्रम दिखा सकता है ? समुद्रमें गिरा हुआ रत्न पापी पुरुषोंको नहीं मिलता। आप सब लोग मेरे दुखसे दुखी है; अतः मेरी आशा छोड़कर सबलोग आनन्दसे घर जाइए मैं। यही प्राण त्याग करूँगा। सीताके बिना मेरी शोभा नहीं, अतः उसका वियोग सहनेकी अपेक्षा मेरा मरजाना अच्छा है। माता पिता गृह आदिसे रहित होकर मैं यहां वनमें आया तो भी पापी दैवने मुझे सीताके साथ नहीं रहने दिया'।

इस प्रकार रामको विविध प्रकारसे विलाप करते हुए देखकर लक्ष्मण आदि भी रोने लगे। उन्हें देखकर विराधित बोला–"हे देव ! किसी दुष्ट द्वारा हरी गयी सीता क्या दुःख करनेसे मिल जायगी ? इसलिए धैर्य रखकर कुछ उपाय कीजिए। जीवन रहेगा तो लक्ष्मी, राज्य, सुख स्त्री आदि सब मिलेंगे। विद्याधरोंके अधिपति खरदूषणके मरजानेसे बहुतसे विद्याधरोंके साथ बैर होगा; क्योंकि सुग्रीव, मेघनाद, इन्द्रजीत, कुंभकर्ण इत्यादि बहुतसे राजा खरदूषणके पक्षके हैं। उसका मरण सुनकर वे शीघ्र ही आयेंगे। इसलिए उठिये-अंलकारपुर नगर चलें, वहां रहकर मैं शीघ्र पदातियोंको सीताका पता लगानेके लिए भामंडलके पास भेजूंगा। वह और मैं दोनों सीताको खोजकर आपसे मिलायेंगे। अन्य था मैं प्राण त्याग दूँगा"। इस प्रकार विविध वाक्योसे रामचन्द्रजीको सान्त्वना देकर सब लोग रथमें सवार होकर अलंकारपुर चले। चतुरंग सेनाके साथ पहुँचकर उन्होंने नगर घेर लिया और उसपर अधिकार कर लिया। चन्द्रनखा छोटे पुत्रके साथ पश्चिम द्वारसे निकलकर भाग गई। विराधितने राम और लक्ष्मणके साथ गाजे बाजेसे जयध्वनिपूर्वक नगरमें प्रवेश किया। अपने पूर्व राजा (विराधित) को प्राप्तकर पुरवासी लोग बड़े प्रसन्न हुए। विराधितने राम लक्ष्मणको एक सुसज्जित महलमें ठहरा दिया। किन्तु सीताके बिना रामचन्द्रजीको स्वर्गके समान वह स्थान स्मशान जैसा मालूम पड़ा। वहाँ हजारों स्तभोंसे सुशोभित जिन मंदिरमें भगवानकी पूजाकर रामचन्द्रजीने क्षणभर शांतिका अनुभव किया और बादमें सघन वृक्षोंवाले बगीचेमें बैठ गए। विराधित लक्ष्मणके साथ रामके पास बैठ गया तथा अन्य लोग भी यथास्थान बैठ गए और सीताको ढूढ़ लानेकी चर्चा करने लगे। परन्तु सीता कहाँ है इसका कुछ पता नहीं चला।

——:-०-:——

२१ सीताका विलाप और मायावी सुग्रीवकी मृत्यु

कामी तथा धनसे गर्वित रावण सीताको लिये विमानमें बैठा हुआ जा रहा था। रामका स्मरणकर रोती हुई सीताको देखकर उसने कहाः—देवि ! सुन, राम भूमिगोचरी है, विद्या और लक्ष्मीसे हीन है, उस मूर्खकी आशा छोड़कर तू मेरे साथ भोग कर। मैं राक्षसोंका अधिपति हूँ, अनेक विद्याओंका स्वामी हूँ, शक्तिशाली तथा धनसे परिपूर्ण हूँ, कामशास्त्रमें चतुर हूँ, अपनी

अठारह हजार रानियोंमें तुझे पट्टरानी बनाऊँगा। तू स्वर्गकी इन्द्राणीकी तरह रहेगी। अतः हे देवि, तू मुझपर दयाकर और मेरे साथ आनन्दसे रह, तेरे दुःखसे अगर मैं मर गया तो उसका पाप तुझे लगेगा। दासकी तरह बड़े प्रेमसे मैं तेरी सेवा करूँगा'।

इस प्रकार कहकर तथा सीताके चरणोंको नमस्कारकर ज्योंही वह उसका शरीर छूने लगा कि सीताने कहाः—पापी, तेरे जीवनको धिक्कार है, परस्त्रीसंगमके कुपापसे तू नरकमें जाकर पड़ेगा, तेरे साम्राज्य और तेरी पापिनी लक्ष्मीको धिक्कार है। हे पापाचारी दुरात्मन् ! तू मुझे छूनेके योग्य नहीं है। दुष्ट ! दूर हो, अन्यथा सतीके स्पर्शमात्रसे ही तू भस्म हो जायगा और घोर दुःखको प्राप्त होगा, मनसे वचनसे या कायसे जिसने भी सतीका अपमान किया है उसीका साम्राज्य, लक्ष्मी, विद्या आदि सब नष्ट हो गए हैं'। इस प्रकार कहकर सीता विलाप करने लगी—'हा लक्ष्मण ! हा राम ! हा भामण्डल ! हा पिता जनक ! हा माता विदेहा ! आओ दया कर मुझे इस दुखसे छुड़ाओ'। इस प्रकार विलाप करती हुई सीताके साथ रावणने 'जय, नन्द, वर्धस्व' इत्यादि शब्दोंके साथ लंकामें प्रवेश किया और बड़े गाजे-बाजेसे मन्त्रियोंके साथ अनेक धातुओंसे बने हुए अपने सुन्दर महलमें पहुँचा। घरके पीछे बागमें सीताको ठहरा-कर आप महलके अन्दर गया और सभामें जाकर बैठ गया। सीताको वहाँ जाकर मालूम हुआ कि यह विद्याधरोंका नगर है और यह विषयी पापी मुझे यहाँ ले आया है। अतः उसने प्रतिज्ञा की कि जबतक रामचन्द्रजीके समाचार न सुन लूँगी तबतक मेरे अन्न जलका त्याग है।

रावणकी अठारह हजार रानियाँ खरदूषणके मरणके समाचार सुनकर रावणके पास आकर रोने लगीं। इतनेमें ही चन्द्रनखा अपने पुत्र सुंदके साथ बहुतसे आदमियोंको लेकर आई और रावणके सामने बाल बखेरे हुए रोने लगी। उस समय रावणके घरमें हाहाकार मच गया। बहिनको विलाप करते देख रावण उसे समझाने लगा :—बहिन चन्द्रनखे ! सुन, संसारमें कोई मनुष्य स्थिर नहीं है आगे सभीको मरना है। इसलिए पापका कारण यह शोक करना व्यर्थ है। तेरे पतिके हत्यारेको मैं शीघ्र ही मारूँगा। तू यहीं मेरे यहाँ सुखसे रह और दान पूजादि धर्मका आचरण कर'। इस प्रकार बहिनको सान्त्वना देकर रावण अन्तःपुरमें गया और उदासीन होकर आकुल चित्तसे शय्यापर जाकर लेट गया। पतिको व्याकुल देखकर मंदोदरी बोली :—नाथ, आप खेद खिन्न क्यों हैं और भोजन क्यों नहीं करते ? कुछ विनोद-वार्ता भी आज आप नहीं कर रहे, खरदूषणकी मृत्युसे ऐसा आपका क्या बिगड़ गया जो इस प्रकार शोक कर रहे हैं। युद्धमें पहले आपके बहुतसे बांधव मारे गए तब आपने कभी यों शोक नहीं किया, फिर आज ही आपको क्या हुआ' ? मंदोदरीकी यह बात सुनकर रावण हँसकर बोला :—"प्रिये ! यदि मुझे सुखी देखना चाहती है तो मुझपर क्रोध मत करना। यह बात तुम्हें स्वीकार हो तो मैं अपने शोकका कारण बतलाता हूँ उसे तुम क्रोध रहित होकर एकाग्रचित्तसे सुनो"। इस तरह कहकर रावणने मंदोदरीको कसम दिलाई और इस प्रकार कहने लगा :—'एक भूमि गोचरी स्त्री सीताको मैंने उद्यानमें लाकर रक्खा है, अनेक उपाय करनेपर भी वह मेरे अनुकूल नहीं होती। अतः कामज्वरसे पीड़ित होकर मैं उस दुःखसे मर जाऊँगा। बल-पूर्वक उसे पकड़ूँ तो गुरुने मुझे नियम दे रक्खा है कि परस्त्रीके साथ मैं बलात्कार नहीं करूँगा'। यह सुनकर मंदोदरी बोली—'वह कैसी पापिनी है जो तुम्हारे रूप और वैभवको देख-कर भी तुमपर मोहित नहीं होती। अच्छा मैं उसे वशमें करके तुम्हें दूँगी। तुम तबतक शांत रहो और अपने स्वास्थ्यकी तरफ ध्यान दो'। इस प्रकार कहकर वह जहाँ सीता ठहरी थी वहाँ गई। उसे देखकर पूर्व मोहसे (क्योंकि यह मंदोदरीकी औरस पुत्री थी) मंदोदरी बोली—"लड़की; तू यहाँ आकर उदास क्यों हो गई है, विद्याधर राजाके अनुकूल क्यों नहीं होती ? रावण जैसे प्रिय पतिको प्राप्त कर भी तू शोक क्यों करती है ? बिना पुण्यके रावण जैसा पति नहीं

मिलता। अतः शोक छोड़कर रावणके साथ समागम कर और हम अठारह हजार रानियोंमें पट्टरानी बन। हे शुभानने, उन भूमिगोचरियोंके छोड़ देनेसे तेरा क्या बिगड़ जायगा ? रावण जब कुपित होंगे तो राम लक्ष्मणकी तू मृत्यु ही समझ। इसमें जरा भी झूठ नहीं है'।

मंदोदरीके ये वाक्य सुनकर सीता बोलीः—माता ! सतियोंको ऐसे वचन कभी नहीं बोलना चाहिए। परपुरुष अगर इन्द्रके समान भी सुन्दर हो तो मेरे लिए भाईके समान है। थोड़े ही दिनोंमें लक्ष्मणके हाथों तुम्हारा पति मारा जायगा इसमें जरा भी झूठ नहीं है'। इतना कहकर सुंदरी सीता रोने लगी। मंदोदरी मोहसे द्रवित होकर बोली —बाले ! तू रोती क्यों है ? तुझे देखकर मुझे इस समय ऐसा स्नेह हो रहा है जैसे माताको अपनी सन्तानसे होता है। सीताने कहा—माता तुम्हें देखकर मुझे भी उसी प्रकारका स्नेह हो रहा है जैसा संतानको माँसे होता है अतः मुझपर दयाकर मेरे शीलव्रतकी रक्षा करो'। मंदोदरीने कहा—पुत्री, ऐसा ही होगा। शील ही सब नारियोंका भूषण है'।

इतनेमें ही स्वयं रावण कामाग्निसे संतप्त होकर मत्त हाथी जैसे गंगामें आता है उस प्रकार सीताके पास आया और बड़ी मधुरवाणीसे मुसकराता हुआ बोलाः—देवि, तीन लोकमें ऐसी कौन-सी वस्तु है जो मेरे पास नहीं है फिर क्या कारण है कि तू मुझे स्वीकार नहीं करती'। इस प्रकार कहकर ज्योंही उसने सीताकी ओर हाथ बढ़ाया कि सीता बड़े क्रोधसे बोली—पापी ! दूर हो, शरीर मत छू। नीच और व्यभिचारी पुरुषकी संपदा केवल मैल है जब कि साधु शीलवान पुरुषका दारिद्र्य भी भूषण है। दोनों लोकोंको बिगाड़नेवाले कुशीलके सेवनसे तो कुलीन पुरुषोंका मर जाना अच्छा है'।

इतनेमें ही अंधेरा हो गया मानो सीताका शोक न देख सकनेके कारण सूर्य अस्ताचलको चला गया हो। रावणने मायासे सिंह, सर्प आदि अनेक रूप दिखाकर सीताको डराना चाहा परन्तु वह शीलसे च्युत नहीं हुई। आखिर उपसर्गों वाली वह भयंकर रात समाप्त हुई और शीलरूपी पुण्यके प्रभावसे निर्मल प्रभात हुआ। रावण सीताको वहीं परदेमें छिपाकर पास ही दरबार जोड़कर बैठ गया। विभीषणादिक खरदूषणकी मृत्युसे दुखी होकर रावणके पास आकर बैठ गए। तुरन्त ही उन्हें पर्देसे आवाज सुनाई दी। विभीषणने पर्दा हटाकर शोकार्त सीतासे पूछाः—बहिन ! तू किसकी पुत्री है और क्यों इस प्रकार दीनतासे रो रही है ? सीताने रोते हुए कहाः—भाई, मैं जनककी पुत्री और भामंडलकी बहिन हूँ, मेरे पतिका नाम राम है मेरा नाम सीता है। दंडकवनमें राम लक्ष्मण युद्धके लिए गए थे कि यह दुष्ट (रावण) मुझे हरकर यहाँ ले आया। इसलिए हे भाई ! मेरे वियोगसे रामचन्द्रजी मृत्युको प्राप्त हों उसके पहले ही तू उन्हें यहाँ ले आनेका प्रयत्नकर'। इस प्रकार कहकर सीता शोक संतप्त होकर पुनः रोने लगी। सीताके मुखसे सब समाचार सुनकर विभीषण बड़ा क्रुद्ध हुआ। रावणको नमस्कारकर बोलाः—देव, ज्ञानवान होकर भी तुमने यह परस्त्री हरणका पाप क्यों किया ? परस्त्री-समागमसे कुलका नाश हो जाता है, इस लोकमें अपयश और परलोकमें नरक मिलता है। राजन् ! मुझपर दयाकर आप सीताको छोड़ दें, यह सुनकर रावणने कहाः—भाई विभीषण सुन, लोकमें वस्त्र, रत्न, हाथी, घोड़ा, स्त्री आदि जो भी उत्तम पदार्थ हैं वह सर्व मेरे हैं दूसरेके नहीं हो सकते। यह कहकर रावण मारीचके साथ अन्य चर्चा करने लगा, किन्तु मारीचने कहा—नाथ, राजाओंको सदा न्याय-मार्गपर चलना चाहिए। लोक-विरुद्ध पाप करनेसे वंशनाश हो जायगा'। रावणको मारीचका यह धर्मशास्त्रका उपदेश अच्छा नहीं लगा। अतः वहाँसे उठकर स्वयं त्रैलोक्य मंडन हाथीपर बैठा और वियोगसे दुखी सीताको पुष्पक विमानमें बैठाया तथा सर्वसामंतों-सहित बड़े गाजे-बाजेसे वह नगरसे निकला और सीताको हर्षसे अपनी विभूति दिखाता हुआ आगे चला। उसने सुन्दर घोड़े, विशालकाय हाथी, पदाति, रथ

तथा सजी हुई लंका आदि सारा वैभव सीताको दिखाया तो भी रामचन्द्रजीके गुणोंमें अनुरक्त सीताको रावण तृणके समान लगा। क्रमसे चलते २ वह नगरके बाहर पर्वतपर बने हुए सघन वृक्षोंवाले प्रमद नामक वनमें पहुंचा। इस वनके नीचे छः वन और थे जिनके नाम निम्नप्रकार हैं, प्रकीर्णक, जनानंद, सुखसमुच्चय, चारणप्रिय, प्रमद और महीपृष्ट। जिनमें प्रमद वन बड़ा ही सुन्दर था। इसमें जगह २ बावड़ी और कुए बने हुए थे, कोयलें कुहुक रही थीं, विद्याधर कुमार और उनकी स्त्रियां क्रीड़ाएँ किया करती थीं, मुनियोंके समूह विचरा करते थे। उस सार्थक नामवाले प्रमद वनमें रावणने अशोक उद्यानके बीच अशोक वृक्षके नीचे रत्न जटित शय्यापर सीताको ठहराया और उसकी सेवाके लिए विद्याधरियां रखकर वह घर चला गया। वे विद्याधरियां चन्दन आदिसे सीताके चरणोंकी सेवा करने लगी। रावण ऊपर ही ऊपर दूतियोंको माध्यम बनाकर सीताके पास भेजता और दूतियां सीताके पास जाकर मध्यस्थता करतीं और लौट आतीं। आकर रावणसे कहतीं—"प्रभो! सीता अन्न जल कुछ ग्रहण नहीं करती और मौन साधकर बैठी है। वह आपके वशमें कभी नहीं होगी'। यह सुनकर मूढ़ रावण अत्यंत आकुल हो बड़ा शोक करता, बार बार सीताका ही मनमें विचार करता। इस तरह रावण जब कामके वशीभूत हो रहा था तब विभीषणने उसकी यह दशा देखकर मन्त्रियोंको इकट्ठा किया और इस प्रकार विचार करने लगाः—देखो, रावण सीताको ले आया है इससे बड़ा अनर्थ होगा, जन धनकी हानि होगी और मानभंग होगा। रावणके इस पापको देखकर न्याय मार्गपर चलने वाले हनुमान आदि राजा भी विरुद्ध हो जाएँगे। भगवानसे प्रश्न करनेपर उनके मुखसे आप लोगोंने पहले यह सुना ही था कि दशरथके पुत्रों द्वारा राक्षसोंका विनाश होगा। इस लिए आप महानुभाव इस समय सोचकर अनेक उपायों द्वारा देशकी रक्षा करें'।

गौतम श्रेणिकसे बोले—हे राजन्! विभीषणसे अधिक रावणका और कोई हितैषी नहीं था अतः रावणको किसी प्रकार दुःख न हो इस लिए वह सबको समझाता था। विभीषणने कहा—देखो, रावणकी दाहिनी भुजा खरदूषण युद्धमें मारा गया। विराधित रामका साहाय्य पाकर बलवान हो गया है, माया सुग्रीवके मारे सुग्रीव भी इस समय व्याकुल है, वानरवंशी स्वभावसे ही दुर्जन एवं क्रोधी हैं'।

विभीषणकी ये बातें सुनकर संभिन्नमति मन्त्रीने कहा—सचमुच रावणने बड़ा बुरा कार्य किया है'। इसपर पञ्चमुख मन्त्रीने कहा—'यदि खरदूषण मर भी गया तो इससे रावणका क्या बिगड़ गया? खरदूषणके समान रावणके यहाँ बहुतसे सुभट हैं'। यह सुनकर सहस्र-मतिने युक्तिपूर्वक कहा—अग्निकी एक चिनगारी ही सम्पूर्ण जगत्‌को भस्म करनेके लिए काफी होती है। बहुत बड़ी सेनाका अधिपति अश्वग्रीव जो संसारमें विख्यात था, मामूली त्रिपृष्टके द्वारा युद्धमें मार दिया गया। इसलिए हे प्रभो! लङ्काकी रक्षाका प्रयत्न करना चाहिए। बड़े-बड़े यन्त्रोंसे लंकाका मार्ग अवरुद्ध कर देना चाहिए, प्रभावशाली पुरुषोंको मधुर वाक्योंसे अपने पक्षमें कर लेना चाहिए और दुर्जनोंको धन आदि देकर नौकरकी तरह अपने अनुकूल कर लेना चाहिए तथा विनययुक्त सुन्दर वचनोंसे रावणको प्रसन्नकर सीता रामको दिला देना चाहिए। अथवा दान-सम्मान आदिके द्वारा वह जिस प्रकार रावणके वशमें हो उस प्रकार करना चाहिए जिससे रावण सुखी हो। पत्नीके वियोगजन्य दुःखसे राम अवश्य मर जायगा और रामके मरनेपर लक्ष्मण अग्निमें प्रवेश कर जायगा, उन दोनोंके बिना शक्तिहीन विराधित कुछ भी नहीं कर सकेगा। माया सुग्रीवके द्वारा सुग्रीव भी मारा जायगा। अतः हम सबको तबतक धैर्य रखना चाहिए'। इस प्रकार सोचकर सब अपने-अपने स्थान चले गए।

विभीषणने चारों ओर यन्त्रोंका एक दूसरा परकोट बनाकर लंकाको उसके बीचमें अनेक विद्याओं द्वारा गड्ढेकी तरह कर दिया, जहाँ-तहाँ हथियारबन्द सुभट खड़े कर दिए, दसों दिशाओंमें दिग्पाल नियुक्त कर दिए और चारों ओर दिशाओंको बधिर कर देनेवाली वादित्रोंकी ध्वनि होने लगी'। इतना कहकर गौतम गणधरने कहा—राजन्! अब हम तुम्हें माया'मयी सुग्रीवसे संबंध रखनेवाली सुग्रीवकी कथा सुनाते हैं—

पहले जिसका हम वर्णन कर चुके हैं वह साहसगति नामका कामी विद्याधर हिमालय पर्वतपर शीघ्र ही इच्छित रूप बनानेवाली विद्या सिद्धकर, जब सुग्रीव कहीं गया हुआ था और नगरीका प्रधान भी वहाँ नहीं था, सुग्रीवका रूप बनाकर किष्किंधापुरी आया। राजमहलमें घुसकर वह सुग्रीवकी स्त्री सुताराके महलमें गया। यह वहाँके नौकर-चाकर, कुटुम्बी आदिका नाम नहीं जानता था, खजानेकी चीजोंका इसे पता नहीं था, सोने-बैठने आदिके ठिकानोंसे अपरिचित था, सुग्रीव-जैसी विद्या, श्लोक, संगीत, नाटक आदिका भी इसे अभ्यास नहीं था। अतः उस अजानकारीमें ही वह सुताराको पकड़ने गया। सुताराने तुरन्त उसे भाँप लिया और डरकर मनमें सोचने लगी, यह सुग्रीवका वेष धारण करनेवाला कोई मायावी पुरुष मालूम पड़ता है। इसलिए जबतक इसका निश्चय नहीं हो जायगा तबतक मैं शीलव्रतसे रहूँगी'। इस प्रकार नियम करके वह घरके एकान्त स्थानमें रहने लगी।

इसी बीचमें असली सुग्रीव भी अपने नगर आगया। नगरवासी लोग उसे देखकर व्याकुल हो बड़ा आश्चर्य करने लगे कि प्रभात होनेपर यह दूसरा सुग्रीव कहाँसे आगया। उन सबको व्याकुल देखकर सुग्रीव मनमें सोचने लगा कि ये सब लोग मुझे देखकर घबड़ाए क्यों हैं? क्या कुछ मेरे घरमें अनिष्ट हो गया है अथवा अंगद सुमेरुकी वंदना करने गया था उसके कोई दुखद समाचार घरपर आए हैं। इस प्रकार सोचता हुआ सुग्रीव धीरे-धीरे घरकी ओर जाने लगा। इतनेमें ही नकली सुग्रीव युद्धके लिए आया, दोनों सेनाओंमें खूब घमासान मचा। किसीको यह पता नहीं लगा कि इनमें असली सुग्रीव कौन है। तब प्रधान पुरुषोंने बैठकर आपसमें विचार किया कि हमलोग भी इनमें सत्य सुग्रीव कौन-सा है यह नहीं जानते। परन्तु दोनों ओरके सुभट बेचारे अकारण ही मर रहे हैं। अतः कुछ उपाय करके हमें सेनाका संरक्षण करना चाहिए। इसलिए हम यह तय करते हैं कि जबतक इन दोनोंमेंसे असली सुग्रीवका पता न लग जाय तबतक ये दोनों नगरके बाहर रहें, क्योंकि ऐसा कार्य नहीं होना चाहिए जिससे वानरवंशियोंका महान वंश मलिन हो जाय। इस प्रकार कहकर उन्होंने दोनों सुग्रीवोंको क्रमशः नगरके उत्तर और दक्षिण भागमें ठहरा दिया। इसके बाद मन्त्रियोंने सुग्रीवकी स्त्री सुतारासे पूछा कि :इन दोनोंमें असली और नकली सुग्रीव कौन है? सुताराने कहा—हे मन्त्रियो सुनो, जो दुष्ट पहले आया था वह असली सुग्रीव नहीं है। जांबुवंतने भी उसीका समर्थन किया। तो भी मन्त्रियोंने यह सोचकर कि अतिवृद्ध, बालक, स्त्री, शराबी, चोर और ग्रहाविष्ट ये विश्वासपात्र नहीं है। सुताराके वचनोंका कोई विश्वास नहीं किया और दोनोंको पहले जैसा कहा था उत्तर-दक्षिण दिशामें ठहरा दिया। दोनों ओर सात-सात अक्षौहिणी सेना हो गई। दोनोंको संदिग्ध देखकर बालिके पुत्र चन्द्ररश्मिने शासनकी बागडोर अपने हाथमें ली और यह प्रतिज्ञा की कि इनमें जो कोई सुताराके महलके द्वारपर जावगा उसीका तलवारसे मैं सिर उतार लूँगा। दोनों सुग्रीव नगरसे बाहर रहकर सुताराके लिए बेचैन रहने लगे। असली सुग्रीव पत्नीके विरहसे दुखी होकर कार्यसिद्धिके लिए देशान्तरोंमें घूमने लगा और रावण तथा हनुमानसे माया सुग्रीव-संबंधी अपना सारा दुःख निवेदन किया।

हनुमान सुग्रीवसे उसका दुःख सुनकर बड़ा क्रुद्ध हुआ और तत्काल किष्किंधापुर सुग्रीवके यहाँ आया। जब माया सुग्रीवने हनुमानका आगमन सुना तो बड़े स्नेहसे हाथीपर

चढ़कर असली सुग्रीवकी तरह मिलने आया। हनुमान दोनोंका एकसा रूप देखकर बड़ा आश्चर्यान्वित हुआ और संशयमें पड़कर सोचने लगा कि स्पष्ट सामने ये दोनों सुग्रीव दिखाई दे रहे हैं, इनमेंसे किसको मारूँ; क्योंकि दोनोंमें कोई अन्तर नहीं दिखलाई देता। कहीं ऐसा न हो कि इन दोनोंमें अन्तर न समझकर मैं अपने वास्तविक मित्र सुग्रीवको मार बैठूँ। इस प्रकार सोचकर हनुमानने थोड़ी देर मन्त्रियोंसे विचार-विमर्श किया और बादमें उदासीन होकर अपने नगर चला गया।

हनुमानके चले जानेपर नकली सुग्रीव निर्भय हो गया और असली सुग्रीवने चिन्तातुर होकर अपने पुत्रसे कहा—'अगर मैं अब रावणकी शरण जाता हूँ तो कहीं ऐसा न हो कि वह कामी हम दोनोंका ही बध कर मेरी स्त्री सुताराको ले जाय, क्योंकि यह नीति है कि मंत्र, दोष, अनादर, दान-पुण्य, शूरता, व्यभिचार और मानसिक दुःख अपनी ये बातें खोटे मित्रको नहीं बताना चाहिए। अतः अब मैं शीघ्र ही खरदूषणकी शरण जाता हूँ, वह शक्तिशाली और ज्ञानवान है अवश्य ही मेरा कार्य पूरा करेगा'। इस प्रकार निश्चयकर असली सुग्रीव पाताल नगर गया और नगरके बाहर दण्डक वनमें युद्ध-स्थलके निकट पहुँचा, वहाँ उसने शस्त्रोंसे जर्जरित शरीर वाले मृत हाथी, घोड़े और मनुष्य देखे। उनकी लाशें कहीं तो शृगाल खा रहे थे, कहीं वे चिताओंमें जल रहीं थीं, कहीं क्रंदन हो रहा था। सुग्रीवको यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने किसी आदमीसे पूछाः—भाई! क्या यहां कोई युद्ध हुआ है? यदि हुआ है तो किसका किसके साथ? तू डरे मत, ठीक ठीक बता'। उस मनुष्यने रामका वहाँ नगर बनाकर रहना, खरदूषणका मरण, सीताका हरण, विराधितका पुनः राज्य प्राप्त करना आदि सब बातें विस्तारसे सुग्रीवको बतलाई। सुग्रीव यह सुनकर चित्तमें दुखी हो मनमें सोचने लगा—"जहाँ जाता हूँ वहीं पापके उदयसे कार्य बिगड़ जाता है; जिसकी मैं शरण आया था वह पहले ही मरगया, अब मैं किसकी शरण जाऊँ? मेरा दुःख कौन हरेगा? क्या मैं कूआ बावड़ी या तालाबमें डूबकर मरजाऊँ"? इतनेमें ही उसे सुबुद्धि पैदा हुई। सोचने लगा—जिसने खर-दूषणको मारा है उसकी ही शरणमें जाना ठीक होगा, वही मेरा दुःख सर्वथा दूरकर सकता है। पत्नी विरहका मेरा मानसिक दुःख वही समझ सकेगा"। इस प्रकार सोचकर उसने एक चतुर आदमीको विराधितके पास रामको बड़े आदरसे मित्र बनानेके लिए भेजा। दूतके मुखसे सुग्रीवका संवाद सुनकर विराधितको बड़ा आश्चर्य और साथ ही बड़ा संतोष हुआ। सोचने लगा–"अहो! रामके संसर्गसे न जाने क्या क्या लाभ होंगे, देखो सुग्रीव राजा भी मेरी शरण आ गया"। विराधितने मिष्ट बचनोंसे दूतका आदर सत्कार किया और कहा कि सुग्रीवसे कहना कि वह शीघ्र ही रामकी शरण आ जाय, राम उसका मानसिक दुःख शीघ्र ही दूर करदेंगे।

दूतने जाकर सब बातें सुग्रीवसे कहीं—सुग्रीव भी अपनी सेना लेकर रामके पास चला। सेनाके नगाड़ोंके शब्द सुनकर पाताल लंकाके लोग भयभीत होने लगे। लक्ष्मणने स्नेहसे विराधितसे पूछा—'यह किसके बाजेका शब्द आ रहा है? विराधितने कहाः—देव! वानरवंशी राजा सुग्रीव अपनी महान सेना लेकर आपकी सेवा करने आ रहा है। किष्किंधा नगरके अधिपति बाली और सुग्रीव नामके दो भाई हैं, सूर्यरजके प्रसिद्ध पुत्र हैं, बाली छोटेभाई सुग्रीवको राज्य देकर मुनि हो गया, सुग्रीवके अंग और अंगद दो पुत्र हुए'। इस प्रकार कथा हो ही रही थी कि सुग्रीव चतुरंग सेनासहित मन्त्रियोंके साथ आ पहुँचा। राम लक्ष्मण आदि राजा सुग्रीवको देखकर बड़े प्रसन्न हुए, परस्पर गले मिले। सुग्रीव आदि रामके चरणोंको नमस्कारकर यथास्थान बैठ गए।

रामने जांबुवंतसे पूछा–'यह कौन है और कहांसे आया है?"। जांबुवन्तने कहा—'यह वानरवंशी राजा सुग्रीव है, चौदह अक्षौहिणी विद्याधर सेनाका अधिपति है। विजयार्द्ध पर्वतपर

यह तीर्थोंकी वन्दना करने गया था तब तक कोई मायावी पुरुष सुग्रीवका रूप बनाकर आ गया और किष्किंधापुरीमें जाकर रहने लगा। यह भ्रमण करता हुआ हनूमानके पास गया। परन्तु जब हनूमानने भी नहीं सुना तो सब जगहसे असहाय होकर आपकी शरण आया है। हे धर्मवत्सल, संसारमें आप पराया दुःख हरनेके लिए ही पैदा हुए हैं।' रामने अपने मनमें सोचा कि यह मेरे ही समान दुखी है अतः पत्नीवियोगसे दुखी होकर मेरा कार्य अवश्य करेगा। उन्होंने सुग्रीवको बुलाकर कहा कि यदि तू शीघ्र ही सीताका पता लगाकर लायेगा तो मैं नकली सुग्रीवको निकालकर तुझे तेरा राज्य दिलाऊँगा और सुतारासे तेरा मिलन कराऊँगा'। तब सुग्रीवने कहाः—महाराज सुनिये, मैं ढाई द्वीपमें भ्रमण करनेमें समर्थ हूं। अगर सात दिनमें आपकी स्त्रीका पता नहीं लगा तो मैं आगमें प्रवेश करूँगा"। सुग्रीवके इन शब्दोंसे राम बड़े प्रसन्न हुए उन्हें रोमाञ्च हो आया। "हम परस्पर एक दूसरेसे द्रोह तथा विश्वासघात नहीं करेंगे" इस प्रकार आदर पूर्वक दोनोंने जिनालयमें प्रतिज्ञा की।

बादमें सुग्रीव राम लक्ष्मणको सुन्दर रथमें बैठाकर अनेक सामन्तोंके साथ किष्किंधा नगर ले गया। नगरके निकट पहुंचकर सुग्रीवने नकली सुग्रीमके पास दूत भेजा। दूतने जाकर कहा कि तुम रामचन्द्रजीकी शरण जाओ अन्यथा युद्धके लिए तैयार हो जाओ। यह सुनकर नकली सुग्रीवने दूतको मारकर निकाल दिया और रथपर सवार होकर बहुत बड़ी सेना लेकर युद्धके लिए चला। दोनो सेनाओंमें खूब घमासान युद्ध हुआ, मार काटकी प्रचण्ड आवाज होने लगी। विद्याके प्रभावसे विषयोंमें आसक्त तथा युद्धके लिए तय्यार नकली सुग्रीव क्रुद्ध हो सुग्रीवकी ओर झपटा। दोनो ओरसे एक दूसरेपर बाणोंका प्रहार होने लगा, यहां तक कि बाणोंसे भूमिमें अंधकार छागया, फिर भी दोनों बिना थके चिरकालतक लड़ते रहे। बहुत देरतक लड़ने-के बाद नकली सुग्रीवने असली सुग्रीवपर गदासे प्रहार किया और उसे मरा हुआ समझकर पुनः किष्किंधामें जा बैठा।

असली सुग्रीवको मूर्च्छित देखकर मित्रगण उसे डेरेमें ले आए। जब उसे होश आया तो रामचन्द्रजीसे कहने लगा–'प्रभो ? हाथमें आया हुआ चोर कैसे फिर मेरे नगरमें घुसगया। राघव ! यदि आपको पाकर भी मेरे दुःखका अन्त नहीं हुआ तो इससे अधिक कष्ट और क्या होगा' ? यह सुनकर रामचन्द्रजी बोले, युद्ध करते समय तुम दोनोंके रंगरूपमें अन्तर नहीं जान पड़ा इसलिए हमने तुम्हारे शत्रुको नहीं मारा'। इसके बाद रामने पुनः परस्त्रीलोलुप नकली सुग्रीवको ललकारा और युद्धके लिए उसके सन्मुख हुए, सागरावर्त धनुषपर डोरी चढ़ाई और तीन लोकको डरादेने वाला टंकार शब्द किया। जिसे सुनकर नकली सुग्रीवकी इच्छित रूप देनेवाली वेताली विद्या शीघ्र निकलकर भाग गई। अतः सुग्रीवका रूप हटकर साहसगति विद्याधर पुनः पहले जैसा हो गया। सुग्रीवकी जगह साहसगतिको देखकर उसकी सारी सेना बड़े हर्षसे असली सुग्रीवसे जाकर मिलगई। जब साहसगति लक्ष्मणसे लड़ रहा था तो रामने तलवारसे उसका सिर उतार लिया। वानर वंशियोंके पक्षमें महान जयकार शब्द हुआ। सुग्रीवने राम लक्ष्मणका खूब आदर सत्कार किया और उन्हें समारोह पूर्वक अपने नगरमें ले गया। किष्कंधापुरको अत्यन्त वैभव सम्पन्न देखकर राम लक्ष्मण नगरके बाहर नन्दन वनके समान उद्यानमें ठहर गए। उनके साथ अनेक राजा थे, विद्याधरियाँ सेवा करती थीं तो भी सीताके बिना उन्हें एक दिन एक वर्षके समान जान पड़ता था।

इधर चिरकालका बिछुड़ा हुआ सुग्रीव घर गया और सुताराके साथ नाना प्रकार भोग विलास करने लगा। भोगोपभोगमें वह इतना निरत हुआ कि रामकी सारी कथा भूल गया और सुताराके साथ आनन्द करता हुआ राज्य करने लगा।

---

२२ लक्ष्मणका कोटि-शिला उठाना, हनुमानका लंका जाना तथा लौटकर सीताका संवाद देना

सीताके विरही रामचन्द्रजी सीताको खोजनेके लिए नन्दनवनमें रहने लगे। किन्तु जब उन्होंने देखा कि सुग्रीव अपने वायदेको पूरा नहीं कर रहा है तो वे उसके घर गए और सुग्रीवसे कहा—रे दुष्ट ! सुताराको पाकर अब तू सुखसे घरमें बैठ गया'। इस प्रकार कहकर रामचन्द्रजी सुग्रीवको मारनेके लिए ज्यों ही तैयार हुए कि सुग्रीव डरसे काँपता हुआ, अपने प्राण बचानेके लिये लक्ष्मणकी शरण आया। लक्ष्मणने रामचन्द्रजीसे कहा—देव ! इस पापीको क्षमा करें, इसको आपके कार्यका ध्यान नहीं रहा था। क्षुद्र पुरुषोंकी ऐसी ही गति होती है, इस प्रकार विनयरूप वचनोंसे लक्ष्मणने रामको शान्त किया और सुग्रीवसे कहा—राजन ! महान पुरुषोंको किसीका उपकार नहीं भूलना चाहिए। फिर तुम मूढ़ यक्षदत्तकी तरह कैसे हमारा उपकार भूल गए ?

श्रेणिकने गणधरसे पूछा, प्रभो ! यक्षदत्तका वृतान्त सुनना चाहता हूँ। गणधरने कहा:—राजा श्रेणिक सुन, जिस प्रकार मुनिने यक्षदत्तको उसकी मातका स्मरण दिलाया वह सब मैं तुझे सुनाता हूं —

क्रौंचपुर नगरमें एक राजा यक्ष रहता था। उसकी रानीका नाम राजिला था। उनके यक्षदत्त नामका एक पुत्र हुआ। एक दिन सुखसे बाहर घूमते हुए उसने किसी दरिद्रकी झोपड़ीमें एक सुन्दरी स्त्रीको देखा। उसे देखकर कामबाणसे पीड़ित हो यक्षदत्त अपनी तलवार ले रातको उसके पास जा रहा था कि किन्हीं अवधिज्ञानी मुनिने उसे जानेसे मना किया। बिजलीकी चमकमें उसने वृक्षके तले अयन नामा मुनिको देखा। यक्षदत्त उन मुनिके पास गया और उन्हें नमस्कारकर विनयपूर्वक उनसे पूछा, भगवन ! आपने मुझे मेरे कामसे क्यों रोका ? मुनिने कहा, जिसके लिये तू कामुकतासे जा रहा था वह तेरी माँ है इस लिए मैंने तुझे रोका है। यक्षदत्तने फिर पूछा, वह मेरी माँ कैसे है ? मुनिने सारा वृत्तान्त इस प्रकार कहना प्रारंभ किया—

मृत्तिकावती नगरीमें कनक नामका वैश्य था और उसके धू नामकी पत्नीसे बन्धुदत्त नामका पुत्र था। उसके मित्रवती नामकी भार्या थी। किसी समय बन्धुदत्त प्रच्छन्न रूपसे मित्रवतीको गर्भ धारण कराकर जहाजसे विदेश यात्राको चला गया। सास श्वसुरने जब मित्रवतीको गर्भवती देखा तो उसे दुश्चरित्र कहकर उन्होंने उत्पलिका दासीके साथ घरसे निकाल दिया। वह पिताके घरकी ओर चल दी। मार्गमें किसी वनमें उत्पलिका दासी साँपके काटनेसे मर गई। अतः मित्रवती सखीके बिना केवल शीलकी सहायतासे शोकाकुलित होकर इस क्रौंचपुर नगरमें आई। यहाँ किसी विस्तृत देवोद्यानमें उसने पुत्र प्रसव किया। प्रसवके बाद शीघ्र ही वह अपने कपड़े धोने गई कि इतनेमें ही एक कुत्ता रत्न कंबलमें लिपटे हुए बच्चेको उठाकर ले गया और उसने वनमें आए हुए राजाको उसे सौंप दिया। राजाके अपना कोई पुत्र नहीं था अतः उसने वह बच्चा अपनी रानी राजिलाको सौंप दिया और उसका यक्षदत्त यह सार्थक नाम रक्खा। वही यक्षदत्त तू है। मित्रवतीने जब लौटकर बच्चेको नहीं देखा तो दुःखसे बहुत देरतक वह विलाप करती रही। इतनेमें ही वहाँके पुजारीकी दृष्टि इसपर पड़ी। उसने इसे बहिन कह अपने घरमें ठहरा लिया। असहाय मित्रवती लज्जा और अकीर्तिके भयसे पिताके घर न जाकर वहीं रहने लगी। अतः दरिद्रकी झोपड़ीमें जो स्त्री तूने देखी थी वह यहीं जिनधर्म परायण शीलवती तेरी मा मित्रवती है। बंधुदत्तने परदेश जाते समय जो इसे रत्न कम्बल दिया था वह अब भी राजा यक्षके घरमें सुरक्षित है'। इस प्रकार मुनिके कह चुकनेपर यक्षदत्तने उनकी वंदनाकी और तलवार लिए यक्षराजाके पास आया और बोला—मैं अभी इस तलवारसे आपका सिर

काटता हूँ अन्यथा मेरे जन्मका ठीक-ठीक वृतान्त कहिए। राजाने उसके जन्मका ज्योंका त्यों वृत्तान्त कह सुनाया और कहा कि तबका रत्न कंबल अब भी जरायुमें सना हुआ रक्खा है। यज्ञदत्त यह सुनकर अपने पूर्व माता-पितासे बड़े समारोहके साथ मिला।

गौतमने श्रेणिकसे कहा, राजन् ! प्रसङ्ग पाकर तुम्हें हमने यह वृतान्त कहा है कि जिस प्रकार मुनिने यज्ञदत्तको अपनी माताका स्मरण दिलाया उसी प्रकार लक्ष्मणने सुग्रीवको उसकी प्रतिज्ञाका स्मरण दिलाया, अब तुम प्रकृत कथाको ध्यानसे सुनो। सुग्रीवने रामचन्द्रजीको नमस्कारकर कहा—"प्रभो आप मेरी शक्ति देखिए मैं अभी सीताका पता लगाकर आता हूँ"। इस प्रकार कहकर उसने अपने सुभटोंको बुलाया और कहा कि आपलोग सब जगह जाकर सीताकी खोज करें। सुग्रीवकी आज्ञा पाकर सुभटोंने ढाई द्वीपमें नदी, पर्वत, समुद्र, गुफा, पाताल, पर्वत शिखर सब जगह सीताको खोजा। सुग्रीव भी स्वयं विमानमें बैठकर सीताका पता लगाने गया। सीताको खोजते २ अनेक देशोंको लाँघता हुआ यह कंबुद्वीपके पर्वत शिखरपर पहुँचा। वहाँ उसने वृक्षके नीचे किसी भले आदमीको बैठा हुए देखा अतः वह आकाशसे उतरकर उसके पास गया। सुग्रीवको आते हुए देखकर वह मनुष्य भी डरसे कांपने लगा, उसने सोचा कि सचमुच सुग्रीव मुझे मारने आ रहा है क्योंकि सुग्रीव रावणका मित्र है अतः निश्चयसे रावणने ही उसे यहाँ भेजा है'। यह सोच वह भयसे गद्गद होकर रोने लगा। सुग्रीवने उसके पास जाकर कहा—तू कौन है ? कहाँसे आया है ? काँपता क्यों है ? भय मत कर, सब बातें साफ-साफ बतला।

उसने कहा—राजन ! देवपुर नगरके राजा अर्कजटीका मैं पुत्र हूँ, मेरा नाम रत्नजटी है। धातकी खंडके चैत्यालयोंकी वंदनाकर मैं अपने नगरको जा रहा था कि मेरे कानोंमें सीताकी यह रोनेकी आवाज आई—"हाय लक्ष्मण ! हाय राम !! हाय भाई भामंडल !!!" मैं तुरन्त उसके पास गया और देखा कि रावण उसे हरकर बिमानमें लिए जा रहा है। मैंने उसे ललकारते हुए कहा—रे पापी, यह रामकी पत्नी और मेरे स्वामी भामण्डल राजाकी बहन है, लक्ष्मणकी भाभी है और राजा दशरथकी पुत्रवधू है। इसे तू कहाँ लिए जा रहा है, होशमें आ और इसे जल्दी छोड़। यह कहकर मैं रावणके साथ लड़ने लगा। रावणने क्रोधसे मेरी विद्याएँ नष्ट कर दीं। आयु शेष रहनेके कारण मैं इस कंबूवनमें आकर गिरा। क्षणभर पृथ्वीपर ठहरकर मैं इस पर्वतके ऊपर आया तबतक मुझे तुम्हारा समागम हो गया'।

सुग्रीव रत्नजटीके मुखसे सीताके समाचार सुनकर बड़ा प्रसन्न हुआ। कहने लगा—विद्या नष्ट हो जानेसे तू भय मत कर, तू भी राजा है अतः हमारा भाई है'। यह कहकर सुग्रीव रत्नजटीको विमानमें बैठाकर किष्किंधा नगर आया और रामके चरणोंमें नमस्कार कर बोला—देव, सीताके बिस्तृत समाचार इस विद्याधरसे मालूम कीजिए। रामने रत्नजटीसे पूछा—विद्याधर ! तुमने मेरे वियोगसे दुःखी सीताको कहाँ देखा ? रत्नजटीने रामको प्रणामकर सीताहरणके सब समाचार उनसे कहे। रामचन्द्रजीने पुनः गद्गद बचनोंसे पूछा भाई सत्य कहना क्या वास्तवमें तुमने मेरी सीता देखी है ? रत्नजटीने कहा—प्रभो, सचमुच मैंने आपके वियोगसे दुखी सीताको देखा है, निश्चयसे लंकाका राजा पापी रावण उसे हरकर ले गया है'।

रामने ये सत्य समाचार सुनकर विद्याधरको सुन्दर मणियोंका हार और एक वस्त्रका जोड़ा पुरस्कारमें दिया और कहा कि तेरा राज्य भी तुझे वापिस दिलाऊँगा। इसके बाद रामने कुछ हो विद्याधरोंसे पूछा कि लंका यहाँसे कितनी दूर है और यह रावण दुष्ट कौन है ? यह सुनकर विद्याधर डर गए, रावणकी बात करना भी उनकी शक्तिके बाहर था अतः सब चुप रह गए। रामके बार-बार पूछनेपर उनमेंसे जांबुवंत विद्याधरने कुछ साहस पैदाकर रावणके वंश, पराक्रम आदिका परिचय दिया और कहा कि पृथ्वीपर रावणसे लड़नेको कोई समर्थ नहीं

है, यहाँतक कि उसकी बात करनेकी भी किसीमें सामर्थ्य नहीं है, अतः आप राक्षस-वंशियोंके हाथमें गई हुई सीताको लानेका विचार छोड़ दें। उसके बदले अन्य विद्याधर कन्याओंके साथ भोग भोगें'। रामने कहा–इन्द्राणीके समान भी यदि कोई स्त्री हो तो मुझे उससे मतलब नहीं है।

लक्ष्मणने कहा :—उस रावणमें जरा भी शक्ति नहीं है, यदि शक्ति होती तो इस प्रकार परस्त्रीको न ले जाता। भला उस दंभी डरपोक पापी अधम राक्षसमें शक्ति कहाँ रक्खी है? रामचन्द्रजीने कहा :—अधिक कहनेसे क्या, जिसके समाचार ही मिलना दुर्लभ था भाग्यसे आज उसका पता लग गया। अब उस अधम राक्षसको पीड़ित करनेके सिवा हमें और कोई काम नहीं है। कर्मानुसार उसका जैसा फल होगा वैसा देखा जायगा। अतः यदि आप लोग हमारा प्रत्युपकार करना चाहते हैं तो हमें शीघ्र ही लंकाका मार्ग बताइए'। रामचन्दजीके इस प्रकार हठ करनेपर जांबूवंतने कहा—प्रभो! कृत्रिम मयूरके लिए हट करने वाले एक क्षुद्र पुरुषकी तरह आप यह कदाग्रह छोड़िए। उस क्षुद्र पुरुषकी कथा इस प्रकार है :—

वेणातट नगरमें एक सर्वरुची नामके गृहस्थके विनयदत्त नामका गुणी पुत्र था। किसी प्रकार उसकी पत्नीके साथ उसके मित्र विशालभूतिका अनुचित संबंध हो गया। एक दिन दुष्ट विशालभूति विनयदत्तको उसकी पत्नीकी इच्छानुसार किसी बहानेसे जंगलमें ले गया और वहाँ उसे वृक्षसे बाँधकर घर लौट आया। पूछनेपर वह विनयदत्तके संबंधमें इधर-उधरकी बातें बना देता। इसी बीचमें एक थका हुआ क्षुद्र पुरुष दिशाभ्रमसे मार्ग भूलकर घूमता हुआ उधर आ निकला और जिस वृक्षपर विनयदत्त बँधा था उसकी सघन छाया देखकर विश्रामके लिए उसके नीचे बैठ गया। उसने किसीके कराहनेकी धीमी आवाज सुनी। मुँह ऊपर उठाकर देखा तो एक मनुष्यको वृक्षकी ऊँची शाखापर मजबूत रस्सियोंसे बँधे हुए निश्चेष्ट देखा। क्षुद्रने दयाकर विनयदत्तको वहाँसे बंधनमुक्त किया। विनयदत्त क्षुद्रके साथ अपने घर आ गया। कुटुम्बमें खूब हर्षोत्सव मनाया गया। उधर विशालभूति विनयदत्तको दूरसे ही आते देखकर भाग गया। क्षुद्र पुरुषके पास एक नकली सुन्दर मयूर था। वहाँके राजकुमारने उसे क्षुद्रसे छीन लिया। इससे क्षुद्रको बड़ा दुःख हुआ। विनयदत्तसे कहने लगा अगर तुम मुझे जीवित देखना चाहते हो तो मुझे मेरा मयूर दिला दो। मैंने तुम्हें वृक्षसे जो बंधनमुक्त किया था उस उपकारका बदला इस समय तुम मुझे दो'। विनयदत्तने कहा—तुम उसके बदले मुझसे मणि रत्न आदि ले लो, मयूर मैं तुम्हें कहाँसे लाकर दूँ'। क्षुद्र हट पकड़ गया, कहने लगा—नहीं, मैं तो वही अपना मयूर लूँगा। हे पुरुषोत्तम! बस उसी क्षुद्र जैसा हाल आप भी कर रहे हैं। भला कृत्रिम मयूर जिसे राजपुत्रने ले लिया वह अब कैसे मिल सकता है और कोई लेना भी चाहेगा तो उसे मृत्युके सिवा और क्या मिलेगा? इसलिए जिनके नेत्र कमलके समान श्वेत, श्याम, रक्त वर्ण वाले हैं, शरीरकी कान्ति स्वर्ण समान है, स्तन पुष्ट हैं, विशाल जंघाएँ हैं, मुखकी कान्तिसे जिन्होंने सम्पूर्ण चन्द्र-मण्डलको जीत लिया है तथा जो गुणोंसे परिपूर्ण है, उन कन्याओंके आप पति बनें और यह दुःख बढ़ानेवाला हँसीका कारण हट छोड़ दें। कृत्रिम मयूरके लिए शोक करनेवाले क्षुद्रकी तरह आचरण करना आपको उचित नहीं। हे रघुनन्दन, पुरुषोंको कृत्रिम मयूरकी तरह स्त्रियाँ सदा सुलभ हैं। अतः बुद्धिमान पुरुषोंको शोक नहीं करना चाहिए"।

क्षुद्रका दृष्टान्त सुनकर लक्ष्मणने कहाः—जांबूवंत, तुम्हारा यह दृष्टान्त ठीक नहीं है। किन्तु हम जो दृष्टान्त देते हैं वह सुनोः—कुसुम पुर नगरमें एक प्रभव नामका गृहस्थ अपनी स्त्री सहित रहता था। उसके धनपाल, बन्धुपाल, गृहपाल, क्षेत्रपाल, पशुपाल, आदि अनेक पुत्र थे जो सदा उसकी सेवा करते थे। सार्थक नामवाले वे सभी पुत्र कुटुम्बके कार्योंमें सदा तत्पर रहते तथा निरन्तर गृहकार्योंमें परिश्रम करते। प्रभवके एक आत्मश्रेय नामका सबसे

छोटा लड़का भी था जो पुण्योदयसे पृथ्वीपर देवोंकी तरह अनेक भोग भोगता था। किन्तु माता पिता गालियाँ देकर सदा इसकी भर्त्सना करते। एकदिन यह अभिमानी माता पिताके दुर्व्यवहारसे दुखी होकर बाहर चला गया। सुकुमार शरीर होनेके कारण कोई उद्यम कर नहीं सका। अतः जीवनसे उदास हो मरनेकी इच्छा करने लगा। इसी बीचमें दैवयोगसे कोई बटोही इसके पास आया और उसने इस प्रकार अपना परिचय दिया—मैं पृथुस्थानपुरके राजाका पुत्र सुभानु हूँ, मेरे वंशवालोंने मेरा राज्य छीन लिया। अतः निमित्त ज्ञानीके कहे अनुसार पृथ्वीपर भ्रमण करता हुआ मैं कूर्मपुर पहुँचा। वहाँ मुझे एक गुरुका समागम हुआ, उन्होंने मुझे दुःखी देखकर दयासे यह लोहेका कड़ा दिया है, इस कड़ेसे तमाम रोग नष्ट हो जाते हैं, बुद्धि बढ़ती है, ग्रह, सर्प और पिशाच आदि सब वशमें हो जाते हैं, इसके निमित्तसे अब मेरा अच्छा समय आ गया है अतः मैं अपना राज्य करने पुनः अपने नगर जा रहा हूँ। राज्य करने वालेसे अगणित असावधानियाँ होती हैं और थोड़ीसी असावधानीसे ही यह कड़ा विनाशका कारण बन जाता है। अतः अगर तू अपनी विपत्ति दूर करना चाहता है तो यह कड़ा मैं तुझे देता हूँ। प्राप्त हुई चीजका काम निकालनेके बाद पुनः दान कर देनेसे महाफल होता है, कीर्ति फैलती है और लोग उसका आदर करते हैं'। आत्मश्रेयने 'अच्छा' कहकर वह कड़ा ले लिया और अपने घर चला गया। सुभानु अपने स्थान लौट गया।

उसी दिन उस नगरके राजाकी रानीको सर्पने काटलिया। रानी चेष्टाहीन हो गई। अतः लोग उसे मरी हुई जानकर जलाने लाए। आत्मश्रेयने उसे अपने लोहेके कड़ेके प्रसादसे जीवित कर दिया। राजाने यह देखकर उसका खूब आदर सत्कार किया। राजसन्मान पाकर आत्मश्रेय पूर्व पुण्योदयसे खूब मालामाल हो गया। एक दिन आत्मश्रेय उस कड़ेको वस्त्रपर रखकर तालाबमें स्नानकर रहा था कि एक गुहेरा उस कड़ेको उठाकर विशालवृक्षके नीचे शिलाओंसे ढके हुए अपने विलमें ले गया और भयानक शब्द करने लगा। उसके इस भयानक शब्दसे वह स्थान लोगोंमें प्रलयकी आशंका कर देता था। आत्मश्रेयने शिलाओं सहित उस वृक्षको उखाड़ फेंका और गुहेरको मारकर वह कड़ा और उसका सारा खजाना लेलिया। हे जाम्बूनद! यहाँ आत्मश्रेयके समान रामचन्द्र हैं, कड़ेके समान सीता है, रावणके अभिमानके समान गुहेरका भयानक शब्द है, खजानेके समान लंका है, गुहेरके समान रावण है और उसके शब्दसे प्रलयकी आशंका करने वाले डरे हुए लोगोंके समान आप हैं"।

लक्ष्मण द्वारा यह दृष्टान्त सुनकर जाम्बूनदने कहाः—पुरुषोत्तम राम! आप यह व्यर्थ हठ कर रहे हैं, मैं कहता हूँ सो सुनिएः—पहले किसी समय रावणने भगवान् अनन्तवीर्यसे पूछा था कि मेरी मृत्यु किसके हाथसे होगी? उस समय भगवानने उत्तर दिया था कि जो अपने पराक्रमसे सिद्ध शिला (कोटिशिला) उठा लेगा वही तेरा चक्रद्वारा वध करेगा।" यह सुनकर लक्ष्मणने कहा–उस शिलाको मैं उठाऊँगा। लक्ष्मणकी यह बात सुनकर जाम्बूनद सुग्रीव, नल, नील, विराधित आदि बहुतसे विद्याधर राम लक्ष्मणको साथ ले विमानमें बैठकर कोटिशिला गए। यह शिला नाभिगिरिके ऊपर स्थित है, एक योजन ऊँची और आठ योजन विस्तृत है तथा अनेक मुनि यहाँसे सिद्ध हुए हैं। वहाँ उतरकर उन्होंने सुर असुरों द्वारा पूजित उस शिलाकी गन्ध अक्षत पुष्प आदिसे पूजा की। बादमें लक्ष्मणने अपने शरीरके वस्त्रोंको कसकर सिद्धोंको नमस्कार करते हुए जयध्वनिके बीच कोटिशिलाको उठाया। राम तथा अन्य विद्याधर आदि सब खड़े देख रहे थे। लक्ष्मणने शिला जाँघोंतक उठाली। यह देखकर देव देवियोंने पंचाश्चर्यकी वृष्टि की। उस समय उन सभी विद्याधरोंको यह निश्चय हो गया कि सचमुच लक्ष्मण नारायण है। सुग्रीवादि राजा उसी रातको दोनों भाइयोंको विमानमें बैठाकर

गाजे बाजेसे चल दिए। ढाई द्वीपमें जितने सिद्ध क्षेत्र हैं उन सबकी वन्दना की। बादमें अपने घर आगए।

सुबह होनेपर रामचन्द्रजीने विद्याधरोंसे कहा कि आपलोग अब देर क्यों कर रहे हैं ? आज ही लंका चलकर रावणको मारना चाहिए और दुखी सती सीताको सुखी बनाना चाहिए। यह सुनकर विराधितने रामसे पूछा—हे देव ! आप युद्ध चाहते हैं या सीता ? रामने कहा—मुझे युद्ध नहीं चाहिए, किन्तु सीता चाहिए जो आपके वशकी बात है'। सभी विद्याधर डरते हुए आपसमें सोचने लगे कि रावणको समझानेके लिए किस मनुष्यको भेजा जाय, अगर वह कुपित हो गया तो हम सबको मार डालेगा। इसलिए जो नीतिकुशल हो उसीको वहाँ भेजना उचित है। हम सब राजाओंमें हनुमान समर्थ और नीति चतुर है उसीको बुलाकर रावणके पास भेजना चाहिए। वह वहाँ जाकर अनेक नीतिवाक्योंसे रावणको समझाएगा और सीताको ले आयेगा। इसमें सभीको आनन्द होगा'।

इस प्रकार सब विद्याधरोंने सलाहकर श्रीभूति नामके दूतको हनुमानके पास भेजा। दूत उड़कर आकाश मार्गसे शीघ्र हनुमानके नगर गया और वहाँ हनुमानसे सारा वृतान्त कह सुनाया कि किस प्रकार शम्बूक और खरदूषणकी मृत्यु हुई, सुग्रीवने सुताराको कैसे पाया और कैसे मायावी सुग्रीवका बध किया गया। दूतके मुखसे अपने पिता खरदूषणकी मृत्यु सुनकर हनुमानकी पत्नी अनंग कुसुमाको बड़ा दुःख हुआ। साथ ही भाई शम्बूकका मरण सुनकर वह जोर २ से विलाप करने लगी। उधर पद्मरागाने (हनुमानकी दूसरी पत्नी) अपने पिता सुग्रीवके कुशल समाचार सुनकर जिनालयमें नृत्य-गान आदि खूब महोत्सव किया। इस प्रकार हनुमानका घर रोना-पीटना और आनन्द उत्सव इन दो रसोंसे भर गया। हनुमानने अनंग कुसुमाको छातीसे लगाकर मधुर वचनोंसे शान्त किया तथा सुग्रीवकी पुत्री पद्मरागाको उसी प्रकार आलिंगन कर बधाई दी। बादमें चतुरंग सेना लेकर गाजे बाजेसे उत्सव सहित किष्किन्धापुर पहुँचा। सुग्रीव आदि राजाओंने वस्त्र आभूषण ताम्बूल आदिसे हनुमानका स्वागत किया। जब सब बैठ गये तो सुग्रीवने रामचन्द्रजी द्वारा हुई सुताराकी प्राप्ति आदि सारी घटनाएँ कहीं। हनुमान यह सुनकर बड़ा प्रसन्न हुआ और सबके साथ रामचन्द्रजीके निकट गया। जाकर उसने रामके चरणोंमें नमस्कार किया, दोनों परस्पर गले मिले और यथायोग्य स्थानपर बैठ गए। हनुमानको महान शक्तिशाली देखकर राम लक्ष्मणने मनमें कहा कि यह अवश्य हमारा कार्य करेगा। सुग्रीवके मुखसे राम लक्ष्मणके सम्पूर्ण गुणोंका परिचय पाकर हनुमान रामकी प्रशंसा करते हुए बोला:- 'हे देव ! विवेकी रावणको युक्तिपूर्वक समझाकर मैं आपकी पत्नी सीताको अवश्य लाऊँगा। आप यह सच समझिये कि शीघ्र ही आपको सुन्दरी सीताके दर्शन होंगे'।

चलते समय जाम्बूनदने हनुमानको समझाया कि वानर-वंशयोंको तुम्हारा ही एक बड़ा सहारा है अतः रावणसे रक्षित लंकामें सावधानीसे जाना, कहीं भी किसीके साथ विरोध मत करना। हनुमानने कहा—'ऐसा ही होगा ? इस प्रकार कहकर हनुमान जब चलनेको तय्यार हुआ तो रामचन्द्रजीको स्नेह उमड़ आया, हनूमानको छातीसे लगाकर बोले :—'वत्स तुम सीतासे जाकर कहना कि राम तुम्हारे वियोगमें न सोते हैं, न खाते हैं, न बैठते हैं, पागलोंकी तरह इधर-उधर घूमते हुए विलाप करते रहते हैं, तुम्हारे गुणोंमें ही अनुरक्त हैं। वे जानते हैं कि तुम निर्मल शीलवती हो और उन्हींमें तुम्हारा अनन्य प्रेम है उनके वियोगमें तुम प्राण त्याग कर देनेपर तुली हो। परन्तु यह मनुष्य जन्म अत्यन्त दुर्लभ है, उसमें भी गुण संपदाका मिलना और भी दुर्लभ है और फिर अगले जन्ममें तुम्हारा और रामचन्द्रजीका मिलन ही कहाँ संभव है ? अतः प्राणोंकी रक्षाके लिये अपने शरीरको सम्हालो, शीघ्र ही तुम्हारा

और उनका मिलाप होगा। राम अपनेको बड़ा धिक्कारते हैं और कहते हैं कि मेरे रहते हुए भी सीता पराये घरमें बन्द हैं। तुम उनकी आशा अपने मनमें रक्खो और भोजन करो।'

इस प्रकार हनुमानको समझाकर रामचन्द्रजीने उसे निशानीके लिये अपनी अँगूठी दी और कहा कि हे वीर! यह सीताको दे देना और तुम मेरी तरफसे ही भेजे गये हो यह विश्वास करानेके लिये सीतासे कहना कि रामचन्द्रजीने कहा है कि हम तुम हाथीपर बैठकर तालाबमें खेलते थे, हम दोनोंने चारण मुनिको दंडकवनमें आहारदान दिया था, वंशगिरि पर्वतपर हम लोगोंने मुनियोंका उपसर्ग दूर किया था और जब उस पापी ब्राह्मणने जल नहीं दिया तब मैंने तुम्हें रामपुरमें आकर जल पिलाया था। इस प्रकार हम दोनोंके बीच हुई घटनाओंकी याद दिलाना और जब लौटो तो सीताका चूड़ारत्न मेरे पास ले आना'।

हनुमानने कहा:—"जो कुछ आपने कहा है वह सब कह दूँगा।" इस प्रकार कहकर उसने रामके चरणोंमें प्रणाम किया और सभी विद्याधरोंसे कहा कि जबतक मैं लौटकर न आऊँ तबतक आपलोग यहीं रहना और इन दोनों महानुभावोंकी सेवा करना। :इस प्रकार कहकर चतुरंग सेना सहित हनुमान गाजे बाजेसे वहाँसे निकला।

जैसे ही वह लीला पूर्वक मार्गमें जा रहा था कि उसे सामने महेन्द्र नगर दिखाई दिया। मन्त्रियोंसे पूछा कि यह कौन-सा नगर है? मन्त्रियोंने कहा यह आपकी ननिहाल है, नगरका नाम महेन्द्रपुर है और महेन्द्र ही यहाँका राजा और आपका नाना है'। यह सुनकर हनुमानको क्रोध चढ़ आया, बोला :—जब मैं पेटमें था तब इसी पापीने मेरी माँको दुःख दिया था अतः सारे नगरको विध्वंसकर अभी समुद्रमें फेंकता हूँ। इस तरह कहकर उसने रण-भेरी बजाई और सारे नगरको घेर लिया। रणभेरी सुनकर महेन्द्र भी युद्धार्थ नगरसे निकला। दोनों पक्षकी असंख्य सेना कट मरी, बादमें हनुमानने लांगुल विद्यासे महेन्द्रको बाँध लिया और नगरका कुछ हिस्सा भी लूट लिया। आखिर मन्त्रियोंने राजा महेन्द्रको छुड़वा दिया। हनुमानने राजा महेन्द्रको प्रणाम किया और कहा, नाना! मेरा अपराध क्षमा करना। राजाओंने हनुमानको सिंहासनपर बैठाकर खूब सन्मान किया, इसके बाद उसके नाना महेन्द्रने कहा :— बेटा, मैं धन्य हूँ कि तेरे समान ज्ञानी, धर्मात्मा और पराक्रमी राजा मेरा धेवता हुआ। इस प्रकार कहकर वे और हनुमान आदि राजा परस्पर गले मिले। स्नान, भोजन ताम्बूल आदिसे सबका सत्कार किया गया। चलते समय हनुमानने महेन्द्रसे कहा कि आप पुत्रोंके साथ राम-चन्द्रजीसे भी जाकर भेंट करें। यह कहकर हनुमान वहाँसे विदा हो गया। इधर महेन्द्रके पुत्र अंजनाके पास गए, अंजनाने भी उनको बहुत माना, वस्त्रादिकोंसे उनका आदर सत्कार किया।

हनुमान जब त्रिकूटा चल (लंका) की ओर जा रहा था तो मार्गमें उसने उदधि नामा द्वीप देखा, उसी द्वीपके अन्दर एक दधिमुख नामा नगरके पास पशु पक्षियों सहित सूखा वन जल रहा था, उसी वनमें एक स्थानपर दो चारण मुनि तप कर रहे थे। वनकी आग उन तक पहुँची हुई देखकर हनुमान वात्सल्य और करुणा भावसे आकाशके नीचे उतरा। समुद्रसे जल खींचकर उसने मेघोंसे पानी बरसाया। उससे वनकी अग्नि क्षणभरमें शांत हो गई। हनुमानने मुनि-चरणोंकी पूजा की।

इतनेमें ही तीन सुन्दर कन्याएँ सुमेरुकी वन्दना कर वहाँ आईं। तीनोंने हनुमानके साथ मुनियोंकीपूजा की। हनुमान जब मुनियोंकी पूजा और भक्ति करके बैठ गया तो कन्याओंने सुन्दर वस्तुओंसे हनुमानका भी आदर-सत्कार किया और कहा:—हे देव, आप बड़े पुण्यात्मा हैं कि जो आपने मुनियोंका उपसर्ग दूर कर दिया, आपके ही प्रसादसे हमें विद्याएँ सिद्ध हो गईं। इतना कहकर कन्याएँ वहीं जमीनपर बैठ गईं। हनुमानने उनसे पूछा, आप किसकी पुत्रियाँ हैं और यहाँ इस निर्जन वनमें किस लिए ठहरी हुई हैं? कन्याओंमेंसे सबसे बड़ी बोली—इस

दधिमुख नगरके गन्धर्व राजा तथा रानी अमराकी हम तीन पुत्रियाँ हैं। मेरा नाम चन्द्ररेखा, मझलीका नाम विद्युत्प्रभा और छोटीका नाम हरंगमाला है। हम घरमें सभी लोगोंको प्यारी हैं, विजयार्द्ध आदि स्थानोंमें रहनेवाले अनेक कुलीन उच्च विद्याधरोंने हमारी माँग की है। एक दिन हमारे पिताने किन्हीं अष्टांग निमित्तज्ञानी मुनिराजसे पूछा था कि मेरी कन्याओंका पति कौन होगा ? उन्होंने बतलाया कि जो युद्धमें साहसगति विधाधरको मारेगा वही कुछ दिनोंमें इन कन्याओंका पति होगा। मुनिके ये अमोघ वचन सुनकर हमारे पिता कुछ मुस्कराते हुए सोचने लगे :—भला विजयार्द्धकी दोनों श्रेणीमें इन्द्रके समान ऐसा कौन बली होगा जो साहसगतिको मारे ? लेकिन मुनियोंके वचन कभी अन्यथा नहीं होते। इस प्रकार हमारे माता-पिता तथा अन्य मनुष्य सब आश्चर्य करने लगे। उधर एक अंगारकेतु विद्याधर भी हमें चाहता था। चिरकालतक याचना करनेके बाद भी जब वह हमें नहीं पा सका तो वह दुःख देनेका विचार करने लगा। किन्तु जबसे हमने मुनिकी भविष्यवाणी सुनी है, तबसे हमारी यही एक इच्छा है कि हम साहसगतिको मारनेवाले उस वीरको कब देखें ? अतः मनोनुगामिनी विद्या सिद्ध करनेके लिये श्वेतवस्त्र पहनकर हम रीछ, सिंह, व्याघ्र आदिसे भरे हुए भयानक सघन-वनमें आई हैं। यहाँ हमें आये बारह दिन हो गए हैं और चारण मुनियोंको वनमें आए आठ दिन हुए हैं। हमें देखते ही उस दुष्ट अंगारकेतुने उसी बैरसे क्रुद्ध हो हमें मारनेके लिए चारों ओरसे इस वनमें आग लगा दी। जो विद्या बड़े कष्टोंसे छः वर्षमें साधने योग्य थी, इस उपसर्गके होनेसे वह विद्या आज ही हमें सिद्ध हो गयी। हे महाभाग ! अगर इस आपत्तिके समय आप न होते तो मुनिराज और हम सब इसी वनमें जलकर खाक हो जाते।"

कन्याओंसे सारा वृत्तान्त सुनकर हनुमानने मुस्कराते हुए, उन्हें साधुवाद दिया और कहा कि आपका प्रयत्न प्रशंसनीय है और आप उसमें पूर्ण सफल हुई हैं, आपकी स्पष्ट सूझ, योग्य इच्छा और महान भाग्यकी क्या प्रशंसाकी जाय ? इस प्रकार कहकर हनुमानने रामचन्द्र-जीके आगमनसे लेकर अपने यहाँ आने तकका सारा वृत्तान्त क्रमसे उन्हें कह सुनाया। जब गन्धर्व राजाके कानतक यह समाचार पहुँचा तो वह भी रानी अमराके साथ अनेक नगर-निवासियोंको लेकर उक्त स्थानपर आया। देवोंके समान विद्याधरोंके आगमनसे वह वन क्षण भरमें नन्दनवन जैसा सुन्दर प्रतीत हुआ। हनुमानके मुखसे रामचन्द्रजीका किष्किंधापुरमें आना सुनकर राजा गंधर्व अपनी पुत्रियों सहित रामसे मिलने गया। बड़ी विभूतिसे पुत्रियोंके साथ किष्किंधा पहुँचकर उसने रामचन्द्रजीकी आज्ञा शिरोधार्य की और अपनी असीम सौभाग्यवती कन्याओंका बड़े समारोहके साथ विवाह कर दिया।

हनुमान लंकाको चला जा रहा था कि मार्गमें उसकी सेना एक मायामयी यन्त्र निर्मित परकोटेसे रुक गई। हनुमानने पूछा— यह मेरी सेना किसने रोकी है ? पृथुपति मन्त्रीने कहा—देव ! किसी दुष्टने यहाँ क्रूर यन्त्रोंसे मायामयी परकोट बना रक्खा है, डरावने सिंह, व्याघ्र, भेड़िये आदि इसमें मौजूद हैं। अनेक द्वीपोंको इसने घेर रक्खा है, बहुत ऊँचा है, चारों तरफसे आगकी लपटें निकल रही हैं, भूत-प्रेत इसमें चक्कर मार रहे हैं। वह देखिए, राक्षसोंके भक्षणके डरसे सेना इधर-उधर भाग रही है'। यह देखकर हनुमानने कहा—'रावणकी चेष्टाएँ देखो, परनारीका अपहरणकर मूढ़ अब राज्य करना चाहता है, मैं अभी इस मायामयी परकोटको विध्वंसकर राक्षसवंशियोंको मारता हूँ। परस्त्री चोरोंकी कभी जय नहीं हो सकती'। इस तरह कहकर हनुमानने गवाक्षमें प्रवेश किया और भुजाओंसे परकोटा इस प्रकार ढा दिया जैसे मुनि कर्मोंको नष्टकर देते हैं। तथा आग जैसे बाँसोंको चड़चड़ाती हुई जला देती है उसी प्रकार कड़कड़ाट करते हुये परकोटेको खण्ड-खण्ड कर दिया। पके हुये बिंबाफलके समान

शालिविद्याका हृदय हनुमानने भेद दिया। अतः वह डरसे फूत्कार करती हुई भाग गई। जब मायामयी कोट ध्वंस हो गया तो पृथ्वी आकाशकी तरह साफ हो गयी।

अनेक ध्वजाएँ और महान आडम्बरसे युक्त हनुमानजीने बाजेके साथ आगे प्रयाण किया। किन्तु वज्रमुख, जिसने रावणकी आज्ञासे यह कोट बनाया था और जो रातदिन इस कोटकी रक्षा करता था, हनुमान द्वारा कोटका विध्वंस सुनकर कुपित हो सेना सहित लड़ने आया। दोनों सेनाओंमें महान युद्ध हुआ, अन्तमें हनुमानने वज्रमुखका सिर धड़से अलग कर दिया। वज्रमुखका मरण सुनकर उसकी पुत्री लंकासुन्दरी पिताका वैर लेनेके लिये क्रोधसे लड़ने आई। दोनों पक्षकी वीर सेनाएँ पुनः युद्धमें प्रवृत्त हो गईं। कन्याके प्रहारसे हनुमानकी सेना भागने लगीं। यह देख हनुमान कन्याके साथ युद्ध करने लगा। किन्तु कन्याने अनेक भयंकर मायामयी शस्त्रोंसे हनुमानको भी व्याकुल कर दिया। हनुमान क्रुद्ध हो मनमें सोचने लगा 'देखो, इस स्त्रीने मेरी बहुतसी सेना नष्ट कर दी, अब मैं क्या करूँ? अगर मैं इसे मारता हूँ तो लोकमें तथा विद्याधरोंमें सर्वत्र मेरी अपकीर्ति होगी। अतः अब मैं अपना कामके समान रूप दिखाकर इसका चित्त वशमें करूँगा'। इस तरह सोचकर हनुमानने अपना कामदेवका रूप बनाकर उसे दिखाया। वह भी इसकी रूपसंपदा देखकर तत्काल मोहित हो गयी। दोनोंने परस्परमें एक दूसरेकी ओर कटाक्षसे देखा और सन्धि करली। युद्ध बन्दकर दोनों एक जगह मिले। लंकासुन्दरी अपने पिताके मरणका शोक करने लगी, किन्तु हनुमानने उसे समवेदना सूचक शब्दोंसे शान्त कर दिया। दोनोंका वहीं तोरणादिसे विभूषित विद्या निर्मित नगरमें विवाह हुआ। रातभर उस कन्याके साथ ठहरकर हनुमान दूसरे दिन लंकाको चला। चलते समय कन्याने कहा—नाथ! आप विवेकी हैं, मैं कहती हूँ वह सुनिये। रावण बड़ा दुष्ट शत्रु है, परस्त्री लोलुपी है, वह आपको देखते ही क्रोधसे मारडालेगा। अतः आप वहाँ न जाइये'। हनुमानने कहा—मैं कोई क्रोधका काम ही नहीं करूँगा। यह कहकर वह उस कन्याको वहीं छोड़ लंकामें गया और अपनी सेना उसने नगरके बाहर ठहरा दी।

सबसे पहले वह न्यायशील राजा विभीषणके घर गया। दोनों परस्पर गले मिले और बादमें कुशल क्षेम पूछकर एक सुन्दर स्थानपर बैठ गए। हनुमानने विभीषणसे कहा—राजन्! आपके भाईने परस्त्री समागम जैसा यह क्या उभयलोक विरुद्ध काम किया है। इससे तो बहुत जन धनकी हानि होगी। आप उन्हें सुबुद्धि दीजिए जिससे यह राज्य स्थिर रहे।' विभीषणने कहा—मैंने उसे बहुत समझाया, किन्तु वह मेरी एक नहीं सुनता। सीताको आज भोजन छोड़ हुये ग्यारह दिन हो गए हैं तो भी उसे दया नहीं आती। आप जाकर उसे समझा बुझाकर भोजन कराएँ, तबतक मैं आपके कहे अनुसार रावणको समझाता हूँ'। विभीषणकी बात सुनकर दयालु हनुमान वहाँसे उठा और जहाँ सीता ठहरी थीं उस वनमें गया। सीताको देखनेको उत्सुक हनुमानने जब अनेक वृक्ष और फल-फूलोंसे सुशोभित वनमें प्रवेश किया तो सीताको अशोक वृक्षके नीचे रत्नरचित शय्यापर रामको स्मरण करते हुए अति व्याकुल बैठे देखा। वह बायीं हथेलीपर अपना गाल टेके हुये थीं, बाल बिखरे हुये थे, शोकाग्निसे गरम उछ्वास निकल रहे थे, तो भी रूप और सौन्दर्यकी उसमें कमी नहीं हुई थी। अनेक विद्याधरियाँ उसकी सेवा कर रहीं थीं, आँखोंसे आँसू गिर रहे थे, उस समय सीता रोहिणी सी मालूम हो रही थी। हनुमानने मनमें कहा—सचमुच यह रामके गुणोंमें अनुरक्त है इसीलिए राम भी इसके गुणोंको यादकर व्याकुल हो रहे हैं। इसके बाद हनुमानने अपना रूप बदला और वृक्षपर बैठकर सीताकी गोदमें रामचन्द्रजीकी अँगूठी डाली। सहसा 'राम' नामसे अङ्कित अँगूठी देखकर सीताने उसे रामका दर्शन ही समझा। अतः चित्तमें बड़ी प्रसन्न हुई। उसे इस प्रकार प्रसन्न देखकर विद्याधरियोंने शीघ्र ही जा रावणको इसकी सूचना दी। रावणने

सीताको प्रसन्न मुख सुनकर अपने कार्यको सिद्ध हुआ समझा। अतः उन स्त्रियोंको बड़े हर्षसे वस्त्र-रत्नादिक ईनाममें दिये और मन्दोदरीसे जाकर कहा कि तुम अन्य रानियों सहित जाकर सीताको खुश करो। पतिके कहनेसे मन्दोदरी सब रणवासके साथ सीताके पास गई और चिरकालके बाद उसे प्रसन्नमुख देखकर कहने लगी :—'बाले! तूने प्रसन्न होकर हमपर बड़ा उपकार किया है, अब तू शोक छोड़ और इन्द्रको जैसे लक्ष्मी भजती है वैसे ही तू भी महान ऐश्वर्यवान रावणके साथ भोग विलास कर'। मन्दोदरीकी बात सुनकर सीता कुपित हो बोलीः—विद्याधरी, तुम जो कुछ कह रही हो यदि रामचन्द्रजीने सब सुन लिया तो तुम्हारा पति जिन्दा नहीं बचेगा। मुझे मेरे पतिकी कुशलताके समाचार मिल गए हैं, अतः मैं प्रसन्न हूँ'। रावणकी स्त्रियोंने सोचा कि भूखे रहनेके कारण इसे बाय दौड़ गई है। इसीलिए यह मुस्कराती हुई बक रही है। फिर सीताने अँगूठी लाने वालेसे कहा—यहाँ ऐसा मेरा कौन भाई है जिसने मुझे यह रामकी अँगूठी लाकर दी हैं'? यह सुनकर हनुमान उन सभी स्त्रियोंके सामने प्रकट होकर अपने स्वाभाविक रूपमें सीताके सामने आकर खड़ा हो गया और चरणोंमें प्रणामकर बोलाः—माता! यह रामचन्द्रजीकी अँगूठी मैं लाया हूँ। सीताने पूछा :—तू कौन है? कहाँसे आया है? तेरा कुल क्या है और तू रामचन्द्रजीको कैसे जानता है? हनुमानने अपने वंश आदि सबका परिचय दिया तथा सुग्रीवकी घटना और उसी प्रसङ्गमें अपना रामचन्द्रजीसे परिचय आदि बातें बतलाई। यह भी कहा कि रामचन्द्रजीको तुम्हारे बिना कहीं कुछ नहीं सुहाता, न रातको सोते हैं, न दिनको खाते हैं, केवल तुम्हारे मिलनेकी आशासे ही उनके प्राण टिके हुए हैं। तुम्हारी ही चर्चा करते रहते हैं और कुछ कहते ही नहीं'। हनुमानसे रामके कुशल समाचार सुनकर सीताको हर्ष हुआ। रोती हुई बोली—हाय! मैं दुष्ट पापिनी तुझे इस खुशीके समाचारोंके उपलक्षमें क्या दूँ। हनुमानने कहा—माता! आपके दर्शनसे ही मेरा पुण्यरूपी वृक्ष फलवान हो गया। अतः इसके प्रसादसे मेरे सब कुछ होगा। सीताने फिर पूछा—'हनुमान! सच कहना राम लक्ष्मण खूब अच्छी तरह हैं? लक्ष्मण खरदूषणसे युद्ध करने गए थे उनके वियोगमें कहीं रामचन्द्रजीने प्राणत्याग तो नहीं कर दिया? यह अँगूठी क्या उन्होंने ही दी है अथवा उनकी अँगुलीसे गिर जानेके कारण तुम्हें मिल गई है? इस समय वे विद्याधरोंके साथ कहाँ ठहरे हुए हैं? हनुमानने कहाः—देवि! सचमुच आपके पति किष्किंधामें ही हैं, बहुतसे विद्याधर उनके साथ हैं उन्होंने ही मुझे यहाँ भेजा है।

यह सुन मन्दोदरी हनुमानसे बोलीः—अपने प्रभू रावणको छोड़कर अब तूने भूमिगोचरियोंकी नौकरी करनेका नीच मार्ग अपनाया है? रे दुष्ट! रावणने तुझे इतने ऊँचे पदपर पहुँचाया अब तू उन्हींका द्रोही होकर मरनेकी इच्छा कर रहा है'। मन्दोदरीके यह वाक्य सुनकर हनुमानने कहा—तू सच कह रही है, तीर्थंकर आदि भूमिगोचरी ही हैं उनकी सेवा करना मेरे लिए भूषण है। किन्तु तू पट्टरानी होकर यहां दूतीका काम कर रही है अतः तू भी रावणके साथ मरकर नरक जायगी। अपना सीताके समान सुन्दर रूप न पाकर कहीं रावण तुझे न मार डाले। अतः जीनेकी इच्छासे ही तू यहाँ दूतीका कार्य करने आई है'। यह सुनकर मंदोदरी क्रुद्ध होकर बोलीः—'स्वामीद्रोही और कृतघ्न ही नरक जाते हैं, रावण यह सुनकर कि तू रामका दूत बनकर यहाँ आया है तेरा मस्तक छेद डालेंगे। खरदूषणके क्रोधसे रावण द्वारा तू सीताके राम लक्ष्मणको मरा हुआ ही समझ। तब सीता रावणकी वधू बनना स्वीकार करेगी और रावण क्रुद्ध होकर इसे दूरसे ही त्याग देगा।'

मंदोदरीके वचन सुनकर सीताने कहा,—राँड! तू क्यों गरज रही है? क्या तूने बलवान राम लक्ष्मणका नाम नहीं सुना जिनके धनुषकी टंकारसे सारी पृथ्वी कांप जाती है। उनके हाथों तू अपने पतिको मरा ही समझ, रावण बिना तू विधवा होकर रोती हुई घर-घरसे भीख

मांगेगी'। यह सुनकर रावणकी सभी स्त्रियाँ सीताको थप्पड़ोंसे मारने उठी, उसी समय वीर हनुमानकी हुंकार सुनकर सबकी सब भयसे पृथ्वीपर गिर पड़ीं। अपने गिरे हुए वस्त्र आभूषणोंको छोड़कर सब रावणके पास पहुँचीं और उससे सारा वृत्तान्त निवेदन किया।

हनुमानने प्रणामकर सीतासे कहाः—देवी, अगर रामचन्द्रजीको देखनेकी अभिलाषा है तो आप भोजन करें, इस प्रकारके बचनोंसे सीताको समझाया। विभीषणकी रानियोंने भी बहुत प्रयत्न किया। इसके बाद विभीषण आदि राजाओंने भी सीतासे भोजनका आग्रह किया। किन्तु रामके बिना सीताको भोजनमें रुचि नहीं हुई। आखिर हनुमानके अनुरोधसे सीताने विद्याधरियों द्वारा निर्मित सोनेके वर्तनोंमें भोजन किया। सीता जब भोजन कर चुकी तो हनुमानने कहा,—माता! आओ मेरे कंधेपर बैठ जाओ मैं अभी तुम्हें रामचन्द्रजीके पास पहुँचाए देता हूँ। सीताने आँखोंमें आँसू भर कहा—भाई! रामचन्द्रजीकी आज्ञाके बिना मेरा वहाँ जाना ठीक नहीं? दुनिया बड़ी मूर्ख है मेरा अपवाद करेगी। हे वीर! विश्वासके लिए मेरा यह चूड़ारत्न ले जा और मेरी तरफसे उनसे यह निवेदन करना कि सीता तुम्हारे दर्शनोंकी लालसासे ही प्राण धारण किए हुए है। तुम्हारे सिवा इस जगतमें जितने पुरुष हैं वे मेरे बन्धु हैं। उनके विश्वासको दृढ़ करनेके लिए मेरी यह घटना उन्हें याद दिलाना कि मैंने उनके साथ मुनियोंको दान दिया था"। इस प्रकार कहकर सीताने हनुमानसे शीघ्र चले जानेको कहा जिससे उसके साथ किसी प्रकारका उपद्रव न हो। आज्ञानुसार हनुमान सीताको प्रणाम कर प्रसन्न हो उस वनसे चला। पर्वतसे उतरते समय कामदेवके समान सुन्दर हनुमानको देखकर विद्याधर स्त्रियां कामसे व्याकुल हो गईं, हनुमान भी उनके साथ विनोद करने लगा। किसीकी उसने नाक छेद डाली, किसीका सिर मूड़ लिया, स्त्रियोंमें हाहाकार मच गया। किसी मनुष्यने रावणसे ये सब समाचार कहे। रावणने नौकरोंको आज्ञा दी—जाओ दौड़कर इस विद्याधरको पकड़कर लाओ। नौकर हथियार लेकर दौड़े और हनुमान जहाँ वृक्ष आदि उखाड़ रहा था वहाँ पहुँचे। लोगोंको आता हुआ देखकर हनुमानने बन्दरका रूप बना लिया और वृक्षके ऊपर शाखाओंके अन्दर छिप गया। हनुमानको न देखकर सब लोग 'कहाँ गया वह दुष्ट' चिल्लाते हुए वनके बीचमें पहुँचे। हनुमानने वृक्षादि उखाड़कर उन्हें मारना प्रारंभ किया। बहुतसे उनमें वहीं गिरकर मर गए। चंपक आम, जायफल, कैथ, दाडिम, केला, नारियल, नीम, अशोक, जामुन आदिके वृक्षोंको उखाड़ फेंका। गोपुर और तोरणादिसे सुसज्जित सप्त भूमिमय उस आवासको तहस-नहस कर दिया। बावड़ी तालाब आदिकी सीढ़ियोंको नष्टकर वहीं जलमें फेंक दिया। नगरके बाहर बनी हुई घुड़सालें नष्टकर दीं, गज शालाओंमें आग लगा दी, पहाड़की शिलाएँ उखाड़कर तथा वृक्षोंकी डालियाँ तोड़कर उसने आए हुए सभी लोगोंको मारा। उनमेंसे बहुतसे मर गए, बहुतसे बेहोश होगए, कोई घायल होकर रोने लगे। किसीने डरकर रावणसे जाकर पुकारकी, कि महाराज वहां तो कोई महाबलवान दैत्य आया है, उसने अनेक घर ढा दिए हैं, अनेक राक्षसोंको मार डाला है; फल फूलसे लदे हुए वृक्ष उखाड़ दिए हैं। यह सुनकर रावणने कहा—मेघवाहन! तू जा, देख यह कौन दुष्ट आया है। उस पापीको पकड़कर यहां ले आ। पिताके बचन सुनकर महायोद्धा मेघवाहन हाथीपर चढ़ राक्षसोंके साथ वहां आया। हनुमानने मेघवाहनको देखकर विद्यासे अपनी बन्दरोंकी सेना बनाली। दोनोंमें महान युद्ध हुआ। आखिर हनुमानने मेघवाहनको मार भगाया। मेघवाहनको पराजित सुनकर इन्द्रजीत लड़ने आया, दोनोंमें भयानक युद्ध हुआ, परस्पर अनेक सुभट मारे गए। आखिर इन्द्रजीतने क्रुद्ध हो हनूमानको नागपाशसे बांध लिया और चोरकी तरह उसके दोनों हाथ बांधकर राक्षसोंके अधिपति रावणके सामने उसे लाकर खड़ा कर दिया।

रावणने सिंहासनपर बैठे ही हनुमानसे कहा— रे दुष्ट, तैने मेरा उद्यान कैसे भग्न

किया ? महेन्द्र नगरको जलाकर राजा महेन्द्रको भी कैसे बांधा, मायामयी परकोटको कैसे विध्वंस किया, वज्रमुखको कैसे मारा, हुंकारसे मेरी स्त्रियोंको कैसे डराया तथा सप्तभूमिमय मेरा आवास कैसे ढाया ? रे दुष्ट ! मैंने अनेक मनुष्योंके रहते हुये जो तुझे प्रभुत्व पद दिया तू उसे भूल गया और रामकी शरणमें पहुँचा. जिसकी स्त्री मैं ले आया हूं। मूढ़ ! तू उसका दूत बनकर आया है'। इस प्रकार कहकर रावणने तलवार उठा हनुमानको मारना चाहा। किन्तु मन्त्रियोंने कहा, प्रभो ! इस द्रोहीको क्षमा कीजिये, आपके ही प्रसादसे यह संसारमें विख्यात हुआ है। इच्छानुसार ढाई द्वीपमें निडर होकर घूमता है, आपकी सेवा छोड़कर अब यह भूमिगोचरियोंका किंकर हो गया है। इसका फल नरकावास इस द्रोहीको अवश्य मिलेगा।

इसपर हनुमानने निडर होकर कहा—"मैंने तो क्या नाश किया है किन्तु क्रुद्ध राम शीघ्र ही इसका (रावणका) विनाश करेंगे। परस्त्री चोर पापी रावण तो नरक जायगा ही किन्तु आप लोग भी उसके साथ नरक जाएँगे। विनाश काल उपस्थित होने पर सबकी बुद्धि नष्ट हो जाती है। अतः सारभूत सदाचारको छोड़कर वे दुराचारका ही सेवन करते हैं ? न जाने रावणको बुढ़ापेमें यह दुर्बुद्धि कैसे सूझी ? इसीसे मैं समझता हूँ कि राक्षसोंका विनाश होगा"।

हनुमानके इस प्रकार कहनेपर रावणने कहा कि इस दुष्टको मारो और लंकाके बाहर ले जाकर इसे सूली चढ़ा दो। रावणकी आज्ञा सुनकर सुभटोंने हनुमानको लोहेकी सांकलोंसे बाँध लिया और उसे रथके स्तंभसे बांधकर नगरके मार्गसे ले चले। धूल और कीचड़में सने हुए हनुमानको देखकर पुरवासी लोग तमाशबीन बनकर नाना प्रकारकी गालियां देते हुये कहने लगे—रावणकी सेवा छोड़नेका ही यह फल है। देखो इसका अभी शिरच्छेद होता है। यह सुनकर हनूमानको क्रोध आ गया तुरन्त बन्धन तोड़कर सुभटोंको लातोंसे मारता हुआ आकाशमें उड़ गया। नगरका स्वर्णमयी कोट ढा दिया। फाटक तोड़ दिए, सड़कें गली आदि सब नष्ट कर दिये, सारी लंकामें आग लगा दी, रावणका घर ध्वजा तोरण आदि सब बरबाद कर दिये। इस प्रकार राक्षसोंको पीडितकर हनुमानने शीघ्र सेना सहित किष्किंधाको प्रस्थान किया।

सीता इधर हनूमानके पकड़े जानेके समाचारको सुनकर रोने लगी। तब वज्रमुखी दासीने सीताको रोनेसे मना किया और कहा—देवि, देख हनूमानने लंकाके कोट दरवाजे सब ढा दिये और अपनी सेना सहित अब किष्किंधाको जा रहा है। दासीसे ये समाचार सुनकर सीताको प्रसन्नता हुई और मनमें कहने लगी,—'अब यह जाकर मेरे समाचार रामचन्द्रजीसे कहेगा।

हनुमानने किष्किंधा पहुंचकर रामको प्रणाम किया और सामने खड़ा होगया। रामने हनूमानको छातीसे लगाकर पूछा :—सीता कुशलसे तो है ? तुमने उसे कहां बैठे हुए देखा ? हनूमानने सीताका चूड़ारत्न रामके सामने रखकर कहा :—देव, सीताको मैंने शोक करते हुये वनमें बैठे देखा। इसके बाद हनुमानने रामचन्द्रजीसे सीताका कहा हुआ सन्देश निवेदन किया। रामचन्द्र उसे सुनकर दुःखसे व्याकुल हो रोने लगे। रामको रोता हुआ देखकर लक्ष्मणने कहा—देव, रोनेसे क्या फल निकलेगा मैं आज ही उस रावणको मारकर सीताको लाऊँगा। इस पर रामचन्द्रजीको प्रसन्नता हुई। उन्होंने हर्षसे षोडषाभरण सहित अपने शरीरके संपूर्ण वस्त्र हनूमानको दे दिये। सच है—धर्मसे स्नेह होता है, धर्मसे निर्मल यश फैलता है, धर्मसे दीर्घजीवन मिलता है, धर्मसे नीरोगता रहती है, धर्मसे बहुतसे पुष्टिकर रस मिलते हैं। इसलिए हे भव्यप्राणी आत्म कल्याणको देने वाले धर्मका तू आराधन कर।

——:-❀-:——

२३. राक्षसवंशियों और वानरवंशियोंका युद्ध

लक्ष्मणने विद्याधरोंसे कहा कि आप लोग लंका चलनेके लिये देर क्यों कर रहे हैं ? यदि आपको देर हो तो हम दोनों भाई हां भुजाओंसे समुद्र तैरकर युद्ध करने जायँगे'। यह सुनकर सिंहनाद विद्याधरने कहा—'लक्ष्मण ! आप ऐसा न कहें। जो आपका होना होगा वही हमारा होगा। जब एक वीर हनुमानने ही लंका जला दी तब विद्याबल और पराक्रमसे युक्त हम लोग तो बहुत हैं। यह ठीक है कि रावणके क्रुद्ध होजानेसे हमारी मृत्यु आपहुंची है।

बीचमें ही बात काटते हुए चन्द्रमरीचिने कहा—तू डरता क्यों है हम नहीं, किन्तु वही परस्त्रीचोर मरेगा अतः हमें शीघ्र ही लंका चलना चाहिए। हमारे पक्षके जो योद्धा एकत्रित हुए हैं उनके तुझे मैं नाम सुनाता हूँ:—नल, नील, सुग्रीव, अंग, अंगद, हनुमान. बिराधित, महेन्द्र प्रश्नकीर्ति उसके पुत्र, घनगति, भूतनाद, गजस्वन, भामण्डल, वज्रमुख इत्यादि असंख्य सुभट हमारे पास हैं उनके सामने कामी चाण्डाल रावण क्या चीज है ?

चन्द्रमारीचके वचन सुनकर राजाओंने रणभेरी बजवाई, जिसे सुनकर सभी वानरवंशी राजा युद्ध करनेको तय्यार हो गये। सब लोग राम लक्ष्मणको आगेकर विमानमें बैठ चतुरंग सेना सहित लंका चले। जिस दिन दोनों भाइयोंने प्रयाण किया वह मार्ग शीर्ष (अगहन) कृष्ण पञ्चमीका प्रातःकाल था। चलते समय उन्हें बहुतसे शुभ शकुन हुये। विमानों द्वारा क्षण-मात्रमें(शीघ्र)वे बेलंधर द्वीप पहुँच गये। वहाँ बेलंधरपुरके राजा समुद्रका नलसे युद्ध हुआ। नलने उसके बहुतसे सैनिक मारे और उसे जीता ही पकड़ लिया। जब उसने रामचन्द्रजीका आधिपत्य स्वीकार कर लिया तो उसका राज्य उसे लौटा दिया। वहां एक रात ठहर कर दूसरे दिन सुबेल पर्वतपर पहुँचे, वहाँ भी युद्धमें सुबेलपुरके राजा सुबेलको लीलामात्रमें पराजित कर सब विद्याधर नन्दन वनमें देवोंकी तरह क्रीड़ा करने लगे। एक रात वहां सुखसे बिताकर दूसरे दिन लंकाको प्रयाण किया सोनेके मकान और सोनेके कोट तथा जिन मंदिरोंसे विभूषित लंकाको पासमें ही देखकर सब लोग हंस द्वीपमें उतर गए। वहां हंसपुरके राजाको युद्धमें पराजित कर उसे रामचन्द्रका अनुचर बनाया और भामंडलके आगमनकी प्रतीक्षा करने लगे।

भामंडल जब तक आवे तब तक उन्होंने लंकाको दूत भेजा। दूतके मुखसे रामका आगमन सुनकर भयसे लंकामें बड़ा कोलाहल मचा। रावणने रणभेरी बजवाई, भेरीका शब्द सुनकर रणोन्मत्त सुभट बड़े प्रसन्न हुए। हाथी, रथ, घोड़े आदि अनेक प्रकारकी सवारियोंपर चढ़कर स्वामिभक्तिसे सब लोग रावणके पास आ गए। रावणको युद्धके लिये उद्यत देखकर विभीषण उसे समझाने आया। रावणको प्रणामकर वह विनयपूवक सामने बैठ गया और कहने लगा—देव ! कृपाकर मेरी विनय सुनिये, आप लंकाके अधिपति और जगतके मालिक हैं। न्यायमार्गपर चलने वाले हैं। अतः आप रामको सीता सौंप दीजिए और यह दुष्ट दुराग्रह छोड़िये। रामके साथ हनुमान आदि विद्याधर आये हुए हैं। उन्होंने समुद्र, सुवेल और सुहंसको कैदकर लिया है और आपके इस परस्त्रीहरण पापसे वे लंकापर भी अपना अधिकार कर लेंगे। हमारे वंशका नाश हो जायगा और हम आप भी जीते नहीं बचेंगे'। विभीषणके ये वचन सुनकर इन्द्रजीतने पिताके हृदयको समझकर कहा—आपको यहाँ आकर समझानेका क्या अधिकार है ? अगर आपको डर लगता है तो अपनी संपदा बटोरकर और दीन बनकर अपने घरमें रहिये। स्त्रीरत्न सब रत्नोंमें श्रेष्ठ है। उसे प्राप्तकर कैसे छोड़ा जा सकता है ? रावणके आगे बेचारे वानरवंशी कितने हैं ? यह सुनकर बिभीषणने कहा—इन्द्रजीत ! ऐसा मत कहो, पुण्यसे रंक भी राजा बन जाते हैं और पापसे राजा भी रंक हो जाते हैं। इसलिये पापका और परस्त्रीका संग छोड़कर सारभूत चीज सदाचारका पालन करो। लक्ष्मण द्वारा

लंकापर अधिकार करनेके पहले ही तुम सीता रामको सौंप दो। तुम्हारे पिता लंकाको नष्ट करनेके लिये ही सीता नहीं लाये। किन्तु वंशका क्षय करनेके लिये वे एक विष औषधि ले आये हैं। हनुमान आदि अनेक राजा रामसे मिल गये हैं, सिंहके समान उन राजाओंसे तुम जैसे गीदड़ कैसे लड़ेंगे'।

विभीषणके ये वचन सुनकर रावण क्रोधसे तलवार उठाकर विभीषणको मारने दौड़ा। रावणको आते देखकर विभीषण भी लड़नेको तय्यार हुआ, किन्तु मन्त्रियोंने दोनोंको समझा बुझाकर रोक दिया। रावणने कहा—'रे दुष्ट विभीषण! तू शत्रुओंसे मिल गया, अतः मेरी लंकासे निकल जा'। विभीषणने कहा—'अच्छी बात है। अगर तेरी लंका ही नष्ट न की तो मैं रत्नश्रवाका पुत्र नहीं। जैसे तू राक्षसोंका अधिपति है वैसे मैं भी राजा हूँ। तुमसे आधे राक्षस द्वीपका राज्य लेकर रहूँगा'। इस प्रकार कहकर स्वाभिमानी विभीषण तीस अक्षौहिणी सेना लेकर रामसे मिलने चल दिया। विभीषणके साथ उसके पक्षके विद्युद्वेग, धनप्रभ, प्रचंड, चपल, अशनिसंघ, काल आदि बड़े २ बलवान सुभट भी अपनी चतुरंग सेना लेकर लंकासे बाहर चले गए।

विभीषणकी सेनाका भेरीनाद सुनकर वानरवंशियोंमें हड़कम्प मच गई। सब लोग युद्ध करनेको तैयार हो गए। रामने वज्रावर्त धनुषपर हाथ रक्खा और लक्ष्मणने सागरावर्त धनुष उठाया, दोनों नगरसे बाहर निकले। वानरवंशियोंने रणभेरी बजवाई और हाथी, घोड़े, रथ, नौकर आदि लेकर बड़ी विभूतिसे दोनों भाइयोंके पीछे २ चले। उधर विभीषणने रामचन्द्रजीके पास अपना दूत भेजा। उसने विभीषणके आगमनके समाचार कहे—'देव! भाईसे शत्रुताकर विभीषण आपकी शरण आया है, आप दयाकर उसकी रक्षा कीजिए'। रामने जांबूनद आदि मन्त्रियोंको बुलाकर सलाह ली कि क्या विभीषण छलसे यहाँ आया है अथवा सचमुच मुझसे मिलने आया है? तब बुद्धिमान समुद्रमति मन्त्रीने बतलाया कि विभीषण बड़ा सदाचारी और धर्मका पक्ष लेने वाला है, अवश्य उसका उसके भाईसे विरोध हो गया है, पुण्यसे भला क्या नहीं होता। इसी प्रसङ्गमें मैं आपको एक कथा सुनाता हूँः—सुकाँचनपुरमें राजा सूर्यदेव और उसकी रानी मतिप्रिया रहते थे। उसी नगरमें एक लता नामकी वैश्य विधवाके गिरि और भूत नामके दो पुत्र थे, दोनोंमें बड़ा स्नेह था। एकबार दोनोंने जहाजसे परदेश जाकर बहुत-सा धन कमाया और उसके बदले झगड़ेकी चीज एक रत्न खरीद लिया। उस रत्नको देखकर लालचसे गिरिके मनमें आया कि मैं भूतिको मार डालूँ और इस रत्नसे अपना मतलब निकालूँ। यह भाव आते ही रत्न गिरिकी आँखोंसे अदृश्य हो गया और भूतिके पास चला गया। निर्मल चित्त भूति भी उस रत्नको देखकर वैसे ही सोचने लगा। आखिर दोनोंने वह रत्न माताको दे दिया। माता भी रत्न पाकर दोनोंको मारनेकी सोचने लगी। तब उन दोनोंने सोचा, इस रत्नको हममेंसे कोई नहीं रख सकता। अतः परस्परका वैर मिटानेके लिये उन्होंने वह रत्न समुद्रमें डाल दिया। रत्नको डालते ही उसे मछली निगल गई। मछली धीवरके हाथ लगी। धीवरने उसे मारकर वह रत्न बाजारमें इन्हीं भाइयोंके हाथ बेच दिया। उस रत्नके देखनेसे उनमें फिर पहलेकी तरह वैर होने लगा। अतः इसबार उन्होंने उस रत्नको चूर्णकर समुद्रमें फेंक दिया। हे पद्म, रत्नके कारण जैसे उन भाईयोंमें वैर हुआ वैसे हीः रावण और विभीषणमें वैर हुआ है।

मन्त्रीका यह दृष्टान्त सुनकर रामने दूतसे विभीषणको भेज देनेको कहा। विभीषणने शीघ्र आकर रामको नमस्कार किया और कहा—'प्रभो! इस जन्ममें आप और दूसरे जन्ममें भगवान जिनेन्द्र ही मेरे शरण हैं'। रामचन्द्रजीने कहा—'विभीषण! राक्षस द्वीप सहित लङ्का मैं तुम्हें दूँगा। इस प्रकार विभीषणके आनेका उत्सव मनाया ही जा रहा था कि तब तक

अनेक विद्याओंका अधिपति भामण्डल भी आ पहुँचा। विजयार्द्ध पर्वतके अधिपति राजा-भामण्डलको देखकर सभी वानरवंशियोंको बड़ी प्रसन्नता हुई। आठ दिनतक हंसद्वीपमें पड़ाव-कर चतुरंग सेना सहित बड़े ठाट-बाटसे उन्होंने वहाँसे प्रयाण किया और शीघ्र ही लंकाकी रणभूमिमें पहुँचकर बीस योजन लम्बे-चौड़े स्थानको घेरकर ठहर गए। अनेक प्रकारके बाजे तथा हाथी-घोड़े आदिसे वानरोंकी सेना खूब सुसज्जित थी। उसीके सामने रावणकी सेना भी आ डटी। बहुत समयके बाद यह युद्ध आया था अतः खूब जोरसे रणभेरी बजवाई। रणके इच्छुक मारीच आदि राजागण अपनी सेना और मन्त्रियों सहित रावणकी सेनामें आ मिले। इस प्रकार चार हजार अक्षौहिणी दल रावणकी ओरसे युद्ध करनेको तैयार था और रामचन्द्रजीकी तरफ एक हजार अक्षौहिणी सेना वानरवंशियोंकी तथा एक हजार अक्षौहिणी सेना भामण्डलकी युद्धके लिये तय्यार थी।

श्रेणिकने गौतम गणधरसे पूछा—प्रभो! अक्षौहिणीका क्या प्रमाण है? गौतमने कहा:—सेनाके आठ भेद बताये हैं—१ पत्ति, २ सेना, ३ सेनामुख, ४ गुल्म, ५ बाहिनी, ६ पृतना, ७ चमू और ८ अनीकनी। जिसमें एक रथ, एक हाथी, पाँच पदाति और तीन घोड़े हों वह पत्ति कहलाती है। तीन पत्तियोंकी एक सेना होती है। तीन सेनाओंकी एक सेनामुख, तीन सेनामुखोंकी एक गुल्म, तीन गुल्मोंकी एक वाहिनी, तीन वाहिनियोंकी एक पृतना तीन पृतनाओंकी एक चमू, तीन चमुओंकी एक अनीकनी होती है। इस प्रकार दश अनीकिनी मिल जायँ, तब एक अक्षौहिणी सेना होती है। यह अक्षौहिणीका प्रमाण है। अब चतुरंग सेनाका पृथक् २ वर्णन करता हूँ:—प्रत्येक अक्षौहिणीमें २१८७० रथ तथा इतनेही हाथी होते हैं, १०९३५० पयादे होते हैं, ६५६१० घोड़े होते हैं।' इस प्रकार चार हजार अक्षौहिणी सेना सहित रावणको आया जानकर भी सुग्रीवकी सेनाको कोई भय नहीं हुआ। राक्षसवंशियोंने अपनी स्त्रियोंसे क्षमा माँगकर उन्हें सारा घर बार सौंपा और कुटुम्बियोंसे स्नेह-पूर्वक मिलकर युद्धको चले। चलते समय किसीकी स्त्रीने कहा—सुनिये नाथ! जब तक आप घर न लौटेंगे, तबतक जिनेन्द्र साक्षि पूर्वक मेरे सब सुखोंका त्याग है। किसी स्त्रीने कहा—अगर मेरे पति राजीखुशीसे घर लौट आयेंगे तो मैं मणि पुष्पोंसे भगवानकी पूजा करूँगी। एक बोली अगर युद्धमें मेरे पति मारे गए तो मैं आगमें जलकर प्राण दे दूँगी। किसी अन्यने कहा—अगर मेरे पति युद्धमें पीठ दिखाकर अपयशके साथ भाग आयेंगे तो मैं सुनते ही प्राण तज दूँगी क्योंकि उस समय वीर किंकरोंकी पत्नियाँ मुझे धिक्कारेंगी, उससे अधिक मुझे क्या कष्ट होगा। एक और स्त्रीने कहा—युद्धसे आनेपर जब मैं अपने पतिके वक्षस्थलपर घाव देखूँगी, उनका कवच टूटा-फूटा पाऊँगी और देखूँगी कि वे विजय पाकर आ रहे हैं किसी प्रकारकी आत्म-प्रशंसा नहीं कर रहे तो मैं अपनेको धन्य समझूँगी, उसी समय मैं यश और कीर्तिसे विभूषित होऊँगी। इस प्रकार अपनी स्त्रियों द्वारा अनेक प्रकारकी बातें सुनते हुये योद्धागण राजाज्ञानुसार युद्ध करने चले। स्त्रियाँ पतिके स्नेहवश उन्हें बार २ देखनेके लिये रोकनेपर भी उनके पीछे आने लगीं।

सबसे पहले स्वामिभक्तिमें तत्पर हस्त और प्रहस्त नामके सुभट रावणसे बिना पूछे ही लंकासे निकले। उनके पीछे सुमाली आदि ढाई करोड़ राजकुमार चले। चलते समय उन्हें धूँआ आदि देखनेका अपशकुन हुआ तो भी वे अपनेको शूरवीर मानकर युद्ध भूमिमें पहुँच गए। उनकी रणभेरीका शब्द सुनकर राम लक्ष्मण और नल नील भी अपनी चतुरंग सेना सहित आगे बढ़े। उनके पीछे अन्य सेना चली, सबको शुभ शकुन हुये। दोनों सेनाओंमें डटकर युद्ध हुआ। हाथियोंने घोड़े गिरा दिये, घोड़ोंने पयादे गिरा दिये। पयादोंकी चीत्कार होने लगी, हाथी चिंघाड़ने लगे, घोड़े हिनहिनाने लगे, रथोंकी खनखनाहट होने लगी। थोड़ी

ही देरमें नल नीलने भयंकर युद्धकर भिंडमालके प्रहारसे हस्त और प्रहस्तको निर्जीव कर दिया। उनके मर जानेपर दोनों ओरकी सेना विश्राम करनेके लिये अपने-अपने स्थान चली गई।

श्रेणिकने गौतम गणधरसे पूछा—महाराज ! इनका पूर्वभवका क्या वैर था जिससे नल नीलने हस्त प्रहस्तको मार दिया ? गौतमने कहा—सुनो, मैं तुम्हें इनकी पूर्व भवावली सुनाता हूँ जिससे इस लोकमें कोई किसीका शत्रु नहीं बने।

'राजगृह नगरमें बड़े धर्मात्मा और दानपूजामें तत्पर इंधक और पल्लव नामके दो ब्राह्मण पुत्र रहते थे। एक दिन दोनों कहीं जा रहे थे कि मार्गमें एक भयंकर वनके अन्दर कलि और कलिंद नामके पापी भीलोंने इन्हें मार डाला। पात्रदानके प्रभावसे दोनों मरकर हरिवर्ष क्षेत्रमें पैदा हुए और वहाँसे सौधर्म स्वर्गमें देव हुए। वहाँसे चयकर मनुष्य हो तपश्चरण कर पुनः स्वर्ग गए और बादमें नल नील हुये। वे दोनों भील बहुत सी योनियोंमें भ्रमणकर यमुना किनारे तापस हुए। वहाँसे कुतपके प्रभावसे मरकर ज्योतिष्क देव हुए। वहाँसे चयकर अरिंजयपुर नगरमें राजा वह्नि और रानी अश्विनीके हस्त प्रहस्त नामके दो बड़े गर्वीले और बलवान् पुत्र हुये। जिन्हें पहले कोई नहीं मार सका और जो रावणके परमभक्त थे, उन्हें पूर्व वैरके कारण नल नीलने मार दिया। पूर्वकारणके बिना न तो किसीसे वैर होता है और न प्रेम होता है।'

दूसरे दिन रावण पक्षके मारीच आदि राजा हस्त प्रहस्तका मरण सुनकर क्रोधसे युद्ध करने निकले। उन्होंने वानरोंकी सेनाका खूब ध्वंस किया, राक्षसोंके प्रहारसे वानरवंशी इधर-उधर भागने लगे। सुग्रीवकी सेनाका ध्वंस देखकर राक्षसोंका विनाश करनेवाला हनुमान युद्ध करनेके लिये उठा। उसे देखकर राक्षसोंके योद्धा प्राण लेकर भागे, तब राक्षसोंका सेनापति महान सुभट माली युद्ध करने उठा। हनुमान और मालीका भयंकर युद्ध हुआ—हाथी हाथियों-के साथ घोड़े-घोड़ोंके साथ, रथी रथियोंके साथ पदाति पदातियोंके साथ, मन्त्री मन्त्रियोंके साथ, राजा-राजाओंके साथ भिड़ गये। हनुमानने मालीके शक्तिका प्रहार किया, शक्तिके चोटसे माली मूर्छित हो पृथ्वीपर गिर पड़ा। मन्त्रीगण उसे उठाकर लंका ले गये।

मालीके युद्धसे हारते ही वज्रोदर युद्ध करने आया, हनुमानने उसके हृदयपर वज्रका प्रहार किया, वज्रोदर तत्काल मर गया। उसके मरते ही रावणकी सेना तितर बितर हो गई। यह देख रावणका पुत्र जंबूमाली युद्ध करने उठा। उसके उठते ही हनुमानकी सेना पीछे हटने लगी। तब हनुमान जंबूमालीके सामने हुआ। जंबूमालीने हनुमानके वक्षस्थलपर प्रहार किया। उससे थोड़ी देरके लिये मूर्छित हो हनुमान पुनः सचेत हो गया और साठ सिंहोंके रथपर सवार होकर युद्ध करने लगा। दोनोंमें महायुद्ध हुआ। हाथियोंने हाथियोंको मारा, रथियोंने रथियोंको मारा, घोड़ोंने घोड़ोंको मारा, पयादोंने पयादोंको मारा। योद्धाओंमेंसे कोई तो मर गये, कोई मूर्छित हो गया। युद्ध करते २ हनुमानने जंबूमालीके वक्षस्थलपर वज्रदण्डका प्रहार किया। जंबूमाली मूर्छित हो गिर पड़ा। उसकी सेना जंबूमालीको लेकर युद्धसे भाग गई। हनुमान उसके पीछे ही लग गया और दूरसे रावणको खड़ा हुआ देखकर निडर हो उधर ही युद्ध करने चला।

हनुमानको आता हुआ देखकर वीर रावण युद्धको तैयार हुआ। किन्तु अन्य सामंतगण रावणको रोककर स्वयं हनुमानके साथ युद्ध करने आये। चिरकाल तक युद्ध करते हुए उन्होंने हनुमानको चारो ओरसे घेर लिया। हनुमानको घिरा हुआ देखकर वानरवंशी लड़ने उठे। नल, नील, सुग्रीव, सुषेण, विराधित, प्रीतिंकर, महायोद्धा भामंडल, विभीषण, महेन्द्रके पुत्र, समुद्र, हंस आदि विद्याधर राजाओंने राक्षसोंपर मिलकर प्रहार किया। राक्षस व्याकुल हो डरसे भागने लगे। यह देखकर राक्षसोंमें प्रमुख कुम्भकर्ण लड़ने उठा। कुम्भकर्णसे वानरवंशी घबड़ाने लगे परन्तु खूनसे लथपथ होकर भी उन्होंने युद्ध करना नहीं छोड़ा। कुम्भकर्णको देखकर अग,

अंगद, भामंडल, शशी, इन्द्र आदि राजा उसके सन्मुख आए। उन्हें लड़ते हुये देखकर कुंभकर्णने क्रोधसे सबको माया द्वारा सुला दिया। उनके हाथसे शस्त्र गिर गए। यह देख सुग्रीवने प्रतिबोधिनी विद्या द्वारा सबको सचेत कर दिया। पुनः वे कुम्भकर्णके साथ युद्ध करने लगे। कुम्भकर्ण उनके प्रहारोंसे व्याकुल हो गया। यह देखकर रावण युद्ध करने उठा किन्तु इन्द्रजीतने कहा—तात! मेरे रहते हुए आपका युद्धमें जाना उचित नहीं। मेरी भी आज शक्ति देखिये कि मैं किस प्रकार वानरोंको मारता हूं। इस तरह कहकर इन्द्रजीत त्रैलोक्य डंबर हाथी-पर सवार होकर मन्त्रियोंके साथ युद्ध करने चला। उसके आनेसे ही वानरवंशी डरने लगे। तिसपर भी उससे भिड़ गये। सुग्रीवकी सेनामें ऐसा कोई वीर नहीं बचा जो इन्द्रजीतके बाणोंसे घायल न हुआ हो। इस तरह इन्द्रजीत द्वारा अपनी सेनाको भग्न देखकर भामण्डल सुग्रीव आदि राजा स्वयं युद्धके लिए आए। अपने २ मालिकके अनुरागसे लड़ते हुए दोनों पक्षके असंख्य वीर मारे गए। तमाम पृथ्वी रक्तस्रावित हो गई। साथ ही घोड़ोंके खुरोंसे खुदकर वहाँ कीचड़ भी हो गई।

इन्द्रजीतने सुग्रीवसे कहा—रे दुर्बुद्धि बन्दर! तू रावणको छोड़कर रामकी शरणमें पहुँचा है। अब तू कहाँ जाता है। मेरे हाथों अभी तेरी मृत्यु होती है'। यह सुनकर सुग्रीवने कहाः—रे मूढ़! क्यों व्यर्थ गरजता है। पिताके अन्यायसे तू भी अभी विनाशको प्राप्त होता है, अन्याय करने वालेको कहीं सफल होते नहीं देखा। इस प्रकार कहकर दोनों वीर अनेक शस्त्रोंसे परस्पर लड़ने लगे। आकाशमें देवता उनका तमाशा देखने लगे। भामण्डल मेघवाहनसे युद्ध करने लगा. विराधितने वज्रनक्रको ललकारा. हनुमानने कुम्भकर्णको रोका, महेन्द्र मारीचसे भिड़ गया, नल नील सुकके साथ लड़ने लगे। सभी वीर एक दूसरेपर क्रोधसे प्रहार करते थे। वज्रमयी हथियारोंसे घायल होकर उनके रक्तका झरना बह निकलता था। इन्द्रजीतने सुग्रीवको हथियारोंसे व्याकुल कर दिया तो भी सुग्रीव सन्मुख डटा रहा। इन्द्रजीतने अपनी सवारी बदली इधर सुग्रीव इन्द्रजीतपर बराबर बाण वर्षा करता रहा। इन्द्रजीतने मेघबाण छोड़ा। इससे सुग्रीवकी सेनामें पानी ही पानी होगया, सारा कटक समुद्रमें मछलीकी तरह तैरने लगा। तब सुग्रीवने पवन अस्त्रसे मेघबाणोंका निराकरण किया। इन्द्रजीतने पुनः अग्निबाण छोड़ा जिससे सुग्रीवकी सेना जलने लगी। यह देख सुग्रीवने मेघबाण छोड़कर अग्निबाणोंका निराकरण किया। अन्तमें इन्द्रजीतने सुग्रीवको मायामयी शस्त्रोंसे व्याकुल कर नाग पाशसे मृगको तरह बाँध लिया। और मेघवाहनने बन्दरकी तरह भामण्डलको उसी पाशसे बाँध लिया। इन्द्रजीत और मेघवाहनने जब तक इन दोनोंको बाँधा तब तक बानर पक्षके अन्य सुभट भाग गए।

यह देखकर विभीषणने राम-लक्ष्मणसे कहाः—प्रभो! देखिए, सुग्रीव और भामण्डल नाग-पाशमें जकड़े हुए पृथ्वीपर पड़े हैं और हनुमानको कुम्भकर्णने जर्जरित कर अपनी भुजाओंमें जकड़ लिया है। वह निश्चयसे मर जायगा। इनके मर जानेपर हमारा मरण भी निश्चित है। अतः आप सेनाकी रक्षा कीजिए। मैं युद्धमें जाकर इन्द्रजीत और मेघवाहनको रोकता हूँ'। इस प्रकार कहकर विभीषण युद्धके लिए गया। अपने चचाको युद्धमें आया हुआ देखकर इन्द्रजीत और मेघवाहन दोनों कुमार संकोचवश युद्धसे हट गए। उधर अंग और अंगदने कुम्भकर्णसे युद्धकर हनुमानको छुड़ा लिया। राक्षसगण सुग्रीव और भामण्डलको मरा हुआ समझकर अपने डेरोंमें चले गए। बादमें राम, लक्ष्मण, विराधित, विभीषण, अंग, अंगद, हनुमान, नल, नील, और महेन्द्रके पुत्र सब मिलकर जहाँ भामण्डल और सुग्रीव पड़े थे वहाँ गए। लक्ष्मणने रामसे कहा—'प्रभो' अगर भामण्डल और सुग्रीव मर गए तो हमलोग रावणको कैसे जीतेंगे? इसलिए आप इनके जिलानेका कुछ प्रयत्न करें। रामने कहा, वत्स! तुमने ठीक कहा। इतने

में ही रामको उस गरुडेन्द्रका स्मरण हो आया जिसने इन्हें वंशस्थल पर्वतपर आपत्तिके समय स्मरण करनेके लिए कहा था। स्मरण करते ही नागेन्द्र आया और विनय पूर्वक सामने बैठकर कहने लगा—'मैं आपकी प्रार्थनासे सन्तुष्ट हूँ आप इच्छित वर माँगिए'। रामने कहा, नागेन्द्र ! आप मेरे स्नेहवश इन दोनों मूर्छित विद्याधरोंको जिला दें'। यह सुनकर नागेन्द्रने उन्हें दो विद्याएँ दी। राम चन्द्रजीको हल, मूशल, छत्र और चमर सहित सिंहवाहिनी विद्या दी और लक्ष्मणको बड़े स्नेहसे गदा खड्ग सहित गरुड़वाहिनी विद्या दी। बादमें रामकी स्तुतिकर धर्मात्मा नागेन्द्र संतुष्ट हो अपने स्थान चला गया।

रामने सिंहवाहिनी विद्यासे सिंहोंका रथ बनाया और लक्ष्मणने गरुड़वाहिनी विद्यासे गारुड़ी रथ बनाया। दोनों अपने २ रथपर चढ़कर अनेक विद्याधरोंके साथ हथियारोंसे सुसज्जित हो सुग्रीव और भामण्डलके निकट पहुंचे, गरुडोंकी हवा लगनेसे सर्पोंका बंधन ढीला होगया। विष दूर होते ही बुद्धिमान दोनों विद्याधर तेजस्वी चन्द्र सूर्यकी तरह तत्काल मूर्च्छासे उठकर बैठ गये और रामके चरणोंको नमस्कार कर सामने खड़े होगए। दोनों विद्याधरोंको चैतन्य देखकर विभीषण आदि राजा बड़े प्रसन्न हुए। सुग्रीवने रामसे पूछा—'राजन् ! आपने विष दूर करनेका क्या उपाय किया और वह आपके कहाँ हाथ लगा ? रामचन्द्रजीने वंशस्थलपर मुनिके उपसर्ग आदिकी जो घटना हुई थी वह सब विस्तारसे कह सुनाई। देशभूषण और कुल भूषणका चरित्र सुनकर सब विद्याधरोंको परम आनन्द हुआ। बादमें सबलोग अपने अपने वाहनोंपर चढ़कर अपने स्थान आगए।

——:-※-:——
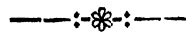
२४ लक्ष्मणके शक्तिका लगना और विशल्याके प्रतापसे उससे मुक्त होना

गरुडेन्द्रकी कृपासे सुग्रीव और भामण्डलको जीवित सुनकर राक्षस व्याकुल होगए। दूसरे दिन मारीच आदि राक्षसवंशी सुभट चतुरंग सेना सहित रणभेरी बजाते हुए युद्धभूमिमें आए। उनकी भेरीका शब्द सुनकर वानर सेना भी शीघ्र ही रणभूमिमें पहुंच गई। दोनों सेनाओंमें महान युद्ध हुआ। राक्षसोंने वानरोंकी सेनाको दबाया। अपनी सेनाको दबी हुई देखकर भामण्डल भी राक्षसोंसे युद्ध करने उठा। जाते ही उसने भी राक्षसोंकी सेनाको दबाया। यह देखकर रावण स्वयं युद्ध करने आया। हाथीपर बैठे हुए रावणने बाणोंसे वानरोंकी सेना घायलकर तितर बितर कर दी। यह देखकर विभीषण क्रुद्ध हो रावणसे युद्ध करने आया। सामने भाईको देखकर रावणने कहा—'तू बालक है साथ ही अशिक्षित भी है युद्ध करने क्यों आया है ? जा अपने घर बैठ, नहीं तो यहाँ मारा जायगा। मैं शत्रुओंको ही मारना चाहता हूँ इसलिए तू लौट जा।" रावणके ये बचन सुनकर विभीषणने कहा—रावण ! समय आनेपर तू ही मेरे हाथसे मरेगा। अतः तू ही अपने घर लौटजा। रावणने क्रोधसे कहा—"रे मूढ़ ! तेरे जीवनको धिक्कार है कि अपने वंशको छोड़कर तू रामका नोकर हो गया है। विभीषणने कहा—"भाई रावण ! तुमसे अधिक क्या कहूँ तुम सीता रामको सौंपदो और सुखसे रहो"। यह सुनकर रावण क्रुद्ध हो विभीषणके सन्मुख हुआ तथा उसके अन्य योद्धा भी विभीषणसे युद्ध करने लगे। रावणने विभीषणका छत्र उड़ा दिया बदलेमें विभीषणने रावणकी ध्वजा उड़ा दी। इस तरह उन दोनोंमें खूब भयंकर युद्ध हुआ। दोनों पक्षके अनेक योद्धा मारे गए। लक्ष्मणने रावणके पुत्र इन्द्रजीतको रोका और राम कुम्भकर्णसे युद्ध करने लगे। नील सिंहकटिसे भिड़ गया, नल युद्धशम्भूके सन्मुख जा डटा। इसी प्रकार स्वयम्भू दुर्मतिसे, दुमुख घटोदरसे, दुष्ट इन्द्रवज्रसे, काल चन्द्रनखसे, स्कंध भिन्नांजनसे, विराधित विघ्नसे, अंगद प्रसिद्ध दैत्य मयसे, भासुरांगद

कुम्भकर्णके पुत्रसे, हनुमान कुम्भसे, सुग्रीव सुमालीसे, भामण्डल केतुसे, दृढ़रथ कामसे, लुब्ध क्षोभणसे, सारण महेन्द्रसे, हनुमानका पुत्र सूकसे तथा और भी अनेक राजा आपसमें युद्ध करने लगे। दोनों पक्षोंके असंख्य सुभट मारे गए।

इन्द्रजीतने पहले लक्ष्मणपर बाण चलाए। बादमें लक्ष्मणने इन्द्रजीतपर बाण छोड़े। इन्द्रजीतने अन्धकार बाण छोड़कर लक्ष्मणकी सेनामें अंधकार कर दिया। लक्ष्मणने सूर्यबाणसे अंधकार दूर कर दिया। इन्द्रजीतने नागबाण छोड़ा, लक्ष्मणने उसे गरुड़बाण छोड़कर हतप्रभ कर दिया। इसके बाद लक्ष्मणने नागबाण छोड़कर इन्द्रजीतको बाँध लिया, इन्द्रजीत नागफासमें फँसकर पृथ्वीपर गिर पड़ा। रामने भी उधर कुम्भकर्णको नागपाशमें बाँध लिया अतः वह भी मूर्छित हो गया। राम लक्ष्मणका इशारा पाते ही भामण्डलने उन दोनोंको अपने रथमें डालकर अपनी निगरानीमें ले लिया। विराधितने उधर तब तक मेघवाहनको नाग पाशसे बाँध लिया। इधर रावण और विभीषणमें भयंकर युद्ध होने लगा। रावणने क्रोधसे भाईपर त्रिशूल छोड़ा, लक्ष्मणने आकर उसे बीचमें ही रोक दिया। रावणको इसपर और क्रोध आया। कैलाश उठाते समय धरणेन्द्र द्वारा भेंट की हुई शक्तिको हाथमें लेकर उसने लक्ष्मणसे बड़े गर्वमें आकर कहाः—रे दुष्ट ! दूर हट, क्यों मरने चला है ? बानरोंका सहारा लेकर तू पराक्रमी बना है ? खरदूषणको मारकर अब तू पुनः युद्ध करने आया है। कहाँ तू पशू समान राजा और कहाँ मैं देवोंके समान विद्याधर ? वज्र प्रहारसे अभी तू मेरे हाथों मरता है, यह सुनकर लक्ष्मणने कहाः—रे नष्टबुद्धि रावण ! रण छोड़कर अब तू कहाँ जाता है ? समझ ले तेरी मृत्यु आ गई है, तू परस्त्रीचोर, लंपट और कामी है, तेरी जीत कहाँ रक्खी है ? रे दुष्ट, तू देख अभी मरता है'। इस प्रकार कहकर लक्ष्मण रावणके सन्मुख हुआ। दोनोंमें भयानक युद्ध हुआ। रावणने वह प्रदत्त शक्ति फेंककर लक्ष्मणके वक्षस्थल पर मारी। लक्ष्मण उससे घायल हो पृथ्वीपर मूर्च्छित होकर गिर पड़ा। लक्ष्मणको घायल देखकर राम रावणसे युद्ध करने लगे। दोनोंमें बड़ा भयंकर युद्ध हुआ। रामने क्रुद्ध हो रावणको छः बार रथरहित कर दिया। उसपर भी उसे जीवित देखकर रामचन्द्रजीने मनमें कहा—"अभी इसका कुछ दिन और जीवन बाकी है इसीलिए यह नहीं मरा है"। रामने उसे पुनः बाणोंसे ढक दिया। रावण बाण वर्षासे व्याकुल हो युद्ध बन्दकर अपने स्थान चलागया।

'चलो आज एक तो महान सुभट मारा" इस प्रकार मनमें कुछ सन्तुष्ट होते हुए रावणने अपने महलमें प्रवेश किया और थककर वह अपनी रानियोंके बीचमें जाकर बैठ गया और अपने भाई और पुत्रोंके पकड़े जानेकी खबर सुनकर शोक करने लगा—"हा भाई, हा मेरे दोनों पुत्र, तुम किस प्रकार नागपाशमें फंस गये। तुम्हारे सहारेसे ही मैंने सदा युद्धमें विजय पाई थी अब तुम्हारे विना मेरा सब कुछ चौपट हो गया"। इस तरह रावणने वहां नाना प्रकार विलाप किया। उधर लक्ष्मणको युद्ध भूमिमें गिरा हुआ सुनकर सीता विलाप करने लगी।

राक्षसोंके चले जानेपर राम रथसे उतरकर लक्ष्मणके पास आए। मूर्च्छित लक्ष्मणको मरे हुएके समान देखकर राम भी मूर्च्छित होकर गिर पड़े। अनेक उपचारोंसे जब उन्हें चैतन्य किया गया तो वे नाना प्रकार शोक करने लगे—"हाय वत्स ! विदेशमें तुम मुझे अकेला छोड़कर कैसे मर गए ? अब सीता, माँ, भाई, राज्य मेरे किस कामके ? मेरे दुर्भाग्यसे तुम्हारे साथ वे सब भी विदा हो गए। अरे विद्याधरों ! जल्दी चिता तय्यार करो, मुझे उसमें जलाकर आपलोग अपने घर जाँय। मुझ पापीके कारण आप लोग भी दुखी हुए। अतः मुझ दुष्टने जो कुछ अपराध किया हो उसे आप सब क्षमा करें'। इस तरह विलाप करते हुए रामने लक्ष्मणका स्पर्श करना चाहा किन्तु जाम्बूनदने उन्हें रोक दिया और कहा, देव ! आप बुद्धिमान हैं। लक्ष्मण इस समय शक्ति बाणसे मूर्च्छित हैं छूनेपर ये मर

जाएँगे। इसलिए इस समय इन्हें छूना उचित नहीं। सूर्य उदय होने तक लक्ष्मण अवश्य ही जीवित हो जाएँगे। अतः आप शोक करना छोड़ें और इनके जिलानेका प्रयत्न करें'। इस तरह समझानेपर राम शोक छोड़कर बोले:—लक्ष्मणको जिलानेका तो आप लोग ही प्रयत्न करें।

यह सुनकर सब विद्याधर लक्ष्मणको जीवित करनेका उपाय सोचने लगे। सबने शीघ्र ही कटे हुए धड़ सिर आदि हटाकर जमीनको साफ किया और वहां डेरे तम्बू डालकर चारों ओर कनातके साथ परकोट बनाए। उसके सातों दरवाजोंपर कवच और धनुषसे सुसज्जित कड़ा पहरा बैठा दिया। पहले दरवाजेपर धनुष लेकर नील खड़ा हो गया, दूसरे दरवाजेपर नल गदा लेकर बैठ गया, तीसरे दरवाजेपर विभीषण त्रिशूल लेकर तैनात हो गया। उस समय वह माला और विचित्र रत्नोंका हार पहने हुए ईशान इन्द्रके समान लगता था। चौथे दरवाजेपर तरकस बाँधकर कुमुद बैठ गया। पाँचवे दरवाजेपर प्रतापी सुषेण भाला लेकर खड़ा हो गया। छठे दरवाजेपर इन्द्रके समान बलवान भुजाओं वाला सुग्रीव भिंडमाल लेकर स्वयं पहरेपर बैठ गया और सातवें दरवाजेपर, शत्रुओंका क्षय करनेवाला भामंडल नंगी तलवार लिए स्वयं पहरा देने लगा। पूर्व द्वारपर अष्टापदकी ध्वजावाले शरभको नियुक्त किया। पश्चिम द्वारपर जाम्बूनदको बैठा दिया गया और उत्तर द्वारपर मन्त्रियोंसहित बालीका पुत्र महाबली चन्द्रमारीचि खड़ा हो गया। इस तरह विद्याधरों द्वारा वहांकी पृथ्वी ऐसी सुशोभित हुई जैसे नक्षत्र मण्डलसे आकाश सुशोभित होता है।

इतनेमें ही आकाश मार्गसे एक मनुष्यने आकर भामंडलसे कहा:—प्रभो! मुझे रामका दर्शन करा दीजिए मैं वहीं चलकर लक्ष्मणके जीवनका उपाय बताऊँगा। भामंडल हाथ पकड़कर उसे रामके पास ले गया। रामको नमस्कारकर वह जमीनपर बैठ गया है। रामने पूछा:—तू कौन है? कहांसे और किस लिए आया है? वह बोला,—देव! विजयार्ध पर्वतपर देवगीत नगरके राजा शशिमंडल और रानी सुप्रभाका मैं शशिप्रभ नामका पुत्र हूँ। आपके दर्शनोंकी इच्छासे एक महीनेसे मैं घूम रहा हूँ। आज वह इच्छा मेरी पूरी हुई है। शक्तिसे मूर्च्छित आपके भाई लक्ष्मण अवश्य जीवित हो जाएँगे। आप प्रयत्न कीजिए मैं आपको उपाय बतलाता हूं:—एक बार मैं पृथ्वीपर भ्रमणकर रहा था कि मेघके पुत्र विनयने मुझपर शक्तिका प्रहार किया। शक्तिसे मूर्च्छित होकर मैं अयोध्याके निकट किसी वनमें जाकर पड़ा। उस शक्तिद्वारा मृतकी तरह मुझे देखकर वहांके राजा भरतने मुझपर गंधोदक छिड़का उस जलके प्रभावसे शक्ति भाग गई और मैं स्वस्थ होकर पहलेकी तरह ही उठकर खड़ा हो गया। रामने पूछा:—वह गन्धोदक कहाँ मिलता है? हम भी उसे जाकर ले आएँगे जिससे लक्ष्मणकी शक्ति दूर हो जाय। उसने कहा:—देव! अयोध्यामें एकबार दैवयोगसे बीमारी फैल गई। बहुतसे मनुष्य मर गए। तब राजा भरतने मन्त्रियोंको बुलाकर बीमारीकी शान्तिका उपाय पूछा। मन्त्रियोंने सलाह दी कि राजा द्रोणके राज्यमें किसी प्रकारकी कोई बीमारी नहीं है, अतः उससे इसकी तरकीब पूछिए। भरतने द्रोणको बुलाया और रोगकी शान्तिका उपाय पूछा। द्रोणने अपने यहाँसे जल लाकर सबके ऊपर छिड़कवा दिया जिसके प्रभावसे मनुष्य और पशु सब चंगे हो गए। भरतने फिर द्रोणसे पूछा कि यह किसका जल है और कहाँसे मँगवाया गया है? द्रोणने कहा—मेरे घरमें एक चन्द्रावती नामकी धाय है वह सब जानती है अतः उसे बुलाकर पूछिए। धायको बुलवाकर जल प्राप्त करनेकी विधि पूछी गई। धायने बताया:—इन्हीं राजा द्रोणके जब विशल्या नामकी पुत्री हुई तो वह मुझे पालनेको दी गई। एक दिन चौकीपर बैठाकर मैंने उसे स्नान कराया। स्नानका जल नदीके प्रवाहकी तरह बह निकला, उस समय एक दुखी व्याधिग्रस्त कुतिया, जो कीड़ोंसे सड़गई थी वहां आई और उस जलमें गिर गई। जलके प्रभावसे उसका शरीर स्वर्ण जैसा हो गया। उसी समय मुझे यह जलौषधि

हाथ लगी, तबसे मैं इस जल द्वारा रोगोंका निवारण करती हूँ। देव, सर्वव्याधियोंको दूर करने वाली उस कन्याके प्रसादसे मैं आज इस देशमें वैद्य नामसे प्रसिद्ध हूँ'। राजन्! उस कन्याके चरणोदकसे साँप और बिच्छुओंका विष तथा शाकिनी, ग्रह, रोगादिकका प्रभाव शीघ्र नष्ट हो जाता है'। यह सुनकर बड़े आश्चर्यसे राजा भरत द्रोणके साथ वनमें मुनियोंकी बन्दना करने गए और सर्वहित मुनिराजको नमस्कार कर वहीं जमीनपर बैठ गये। मुनिराजसे धर्मका उपदेश सुना, बादमें पूछा—स्वामिन् किस पुण्यसे द्रोणकी पुत्री विशल्याके प्रभावसे सब रोग दूर हो जाते हैं? मुनिराजने कहा :—

विदेहक्षेत्रके पुण्डरीकपुर नगरमें त्रिभुवनानन्द चक्रवर्तीकी रानी श्री रूपासे एक सुन्दर अनङ्गशरा नामकी पुत्री हुई। एक दिन वह मकानके ऊपर छतपर बैठी हुई थी कि कोई प्रतिष्ठित-पुरका अधिपति पुनवसु नामका दुष्ट सामंत कामसे पीड़ित हो उस कन्याको विमानमें बैठाकर हर लेगया। चक्रवर्तीने यह खबर सुनी तो बड़ा क्रुद्ध हुआ। उसकी आज्ञा पाकर किंकरोंने चिरकाल तक युद्धकर सामन्तका विमान चूर-चूर कर दिया। विमान टूट जानेसे व्याकुल हो विद्याधरने वह कन्या ऊपरसे छोड़ दी। अतः वह आकाशसे ऐसी गिरी जैसे शरत कालीन चन्द्रमासे चाँदनी आती है। पुनर्वसु द्वारा भेजी गई पर्णलघ्वी विद्याके सहारे वह कन्या श्वापद रौरव नामकी अटवीमें आकर पड़ी और सिंह, बाघ आदिसे भरे हुए भयानक वनको देखकर पिता आदिके विछोहमें रोने लगी—हा पिता! हा माता, हा भाई! तुमने अपनी प्राणोंसे प्यारी यह कन्या किस लिये इस भयानक वनमें छोड़ दी। इस तरह वह विलाप करती हुई नदी किनारे आकर शिलापर बैठ गई। उस दिन उपवास करनेके बाद, दूसरे दिन उसने नदी किनारे जंगलके फलोंसे पारणा की। जैनधर्मका मर्म समझनेवाली वह कन्या कर्मोंकी परिस्थिति समझ कर कुछ दुःख करती हुई वैराग्य भावना भाकर वहाँ रहने लगी। पहाड़ोंकी गुफाओंमें उसने घर बना लिया। कभी बेला कभी तेला तप करने लगी; मनुष्यकी आकृति उसे कभी दिखाई नहीं देती, सदा एकाशन और प्रासुक आहारकर सदाचारका पालन करती, सम्यक्त्व और व्रत सहित भावदीक्षासे विभूषित हो वर्षा, शीत और उष्णकालकी बाधाएँ सहती। इस प्रकार बिना वस्त्रके (वल्कल पहनकर) वैराग्यसे पूरित होकर उसने तप किया। आयुके अन्तमें सन्यास लेकर प्रासुक भूमिपर लेट गई और यहाँसे सौ हाथ भूमि छोड़कर मैं आगे नहीं जाऊँगी" इस प्रकार शास्त्रोंमें जैसे पहले सुना था तदनुसार नियम ले लिया। जब छः दिन बीत गए तब एक लब्धिदास नामका विद्याधर मेरुकी वन्दनाकर वहाँ आया और उस कन्यासे उसके पिताके घर चलनेको कहा—किन्तु सल्लेखनाके कारण उसने जानेसे इन्कार कर दिया। लब्धिदास शीघ्र ही उसके पिताके पास गया और सारा वृत्तान्त कहा। पिता लब्धिदासको लेकर कन्याके पास आया। आकर देखा तो एक बूढ़ा भयंकर अजगर कन्याको निगल रहा था। पिताको देखते ही कन्याने उन्हें अजगरपर रोष न करनेके लिये कहा। सल्लेखना धारण किये हुये अत्यन्त कृश अपनी कन्याको साक्षात् चरित्रकी मूर्त्ति देखकर पिताको वैराग्य होगया। भोगोंसे निस्पृह हो वह तीव्र वैराग्य संपन्न होकर अपने पुत्रोंसहित मुनि बन गया। वृद्ध भूखे अजगर द्वारा खाई गई वह कन्या मरकर तीसरे स्वर्गमें उत्पन्न हुई। कन्याने जान बूझकर अंजगरको पीड़ा न हो इस खयालसे दयाकर अजगरका बंधन नहीं होने दिया।

उधर वह पुनर्वसु विद्याधर युद्धमें सम्पूर्ण विद्याधरोंको हराकर अपनी प्यारी अनङ्गशरा-को खोजने लगा, जब नहीं मिली तो दुःखी हो द्रुमसेन मुनिके निकट मुनि बन गया और घोर तपश्चरण कर कन्याके लिये निदान पूर्वक मरा। मरकर स्वर्गमें देव हुआ और वहाँसे अब लक्ष्मण हुआ है और वह अनङ्गशरा स्वर्गसे चयकर द्रोणकी पुत्री विशल्या हुई है। पूर्व पुण्यके

उदयसे वह इस नगर, देश और भरत क्षेत्रमें महा उत्तम गुणवान है उसीके पैर धोनेके जलसे तुम्हारे नगरकी भयंकर व्याधि नष्ट हो गई और प्रजामें सुख शान्ति हो गई'।

भरतने पूछा—प्रभो ! किस पापसे मेरे नगरमें बीमारी फैली थी ? मुनिराजने कहा—हस्तिनापुरसे एक बार एक विन्ध्य नामका वैश्य भैंसोंको लेकर अयोध्या आया। उन भैंसोंमेंसे एक भैंसा अत्यन्त दुर्बल होनेके कारण क्षुधासे पीड़ित हो कीचड़में गिर गया। लोग उसके शिरपर पैर रखकर जाने आने लगे। दुःखसे अकाम निर्जरा पूर्वक मरकर वह देव हुआ और महिषासुरकी पर्याय प्राप्त की, उसीने यह बीमारी तेरे नगरमें फैलाई थी। कन्याके गंधोदकसे वह नष्ट हो गई और लोग नीरोग हो गए'। मुनिके यह वचन सुनकर सबको परम आनन्द हुआ और विशल्या लक्ष्मणको दे देना चाहिए यह कहकर सब अपने घर चले गए।

शशिप्रभके मुखसे सारा वृत्तान्त सुनकर रामने विद्याधरोंसे कहा कि आप लोग विशल्याका जल ले आइये। यह सुनकर हनुमान, भामंडल और अंगद शीघ्र ही अयोध्या आए। आधी रातको भरतके दरवाजेपर पहुँचकर रामचन्द्रका गुणानुवाद गाने लगे। संगीत सुनकर भरत उठकर आए और उनसे पूछा कि आप कौन हैं, कहाँसे आए हैं और राम लक्ष्मण कहाँ हैं ? हनुमानने सीताहरणका वृत्तान्त कहा। यह सुनकर शोक-संतप्त हो भरत रोने लगा तथा क्रुद्ध हो उसी समय रणभेरी बजवाई और चलनेको उद्यत हुआ। भेरीका शब्द सुनकर सारे नगरमें आतङ्क छा गया। सब लोग सोचने लगे— क्या अतिवीर्यके पुत्रने चढ़ाई कर दी अथवा पहलेके दुष्ट म्लेच्छ कौशल देशको बरबाद करने आए हैं'। मन्त्रियोंके साथ शत्रुघ्न भी शीघ्र वहाँ आया। साथ ही देव, अपराजित आदि शत्रुघ्नके सुभट भी आ पहुँचे। सीताहरण और लक्ष्मणके शक्ति-बाण लगनेकी खबर सुनकर सभी कुटुम्बीजन शोक-संतप्त होकर विलाप करने लगे। भरतने शत्रुघ्नसे लङ्का जाकर दुष्ट रावणका बध करनेके लिए सेना तय्यार करनेको कहा। यह सुनकर हनुमानने कहा—महाराज भरत ! सुनिए विद्याधरोंके साथ युद्धमें आपका काम नहीं है। अतः आप हमें विशल्याके चरणोंका जल दे दीजिए जिससे लक्ष्मणका शरीर स्वस्थ हो जाय'। भरतने कहा, जलसे तो थोड़ा ही लाभ होगा, आप लोग विशल्याको ही ले जाइए; क्योंकि उसके पिताने लक्ष्मणको देनेके लिए पहलेसे ही संकल्प कर लिया है। इस प्रकार कहकर भरत, भामंडल, हनुमान और अंगद तथा माता केकई सब विमानमें बैठकर कौतुकमंगल नगरमें राजा द्रोणके यहाँ आए और पहलेके ही अनुसार संगीत आदिसे द्रोणको उनका सारा वृत्तान्त कहा और विशल्याकी याचना की। राजा द्रोणने रूपवती और गुणवती अपनी पुत्री विशल्या उनके साथ कर दी। सब लोग विमानमें कन्याको बैठाकर भरतको प्रणामकर आकाश-मार्गसे चले। भरत अपनी माताके साथ अयोध्या आ गए। अयोध्याकी सारी प्रजा रामकी चिन्ता करने लगी।

हनुमान आदि शीघ्र ही रणभूमिमें पहुँचे, विद्याधरोंने विशल्याका खूब आदर-सन्मान किया। विशल्याके हाथसे जल लेकर ज्योंही लक्ष्मणपर छिड़का कि शक्ति लक्ष्मणके वक्षस्थलसे निकलकर भागी। स्त्री वेशमें उसे भागते हुए देखकर हनुमानने पकड़ लिया और मारनेके लिए घूँसे आदिका प्रहार किया। शक्तिने कहा—हे वीर, दया कर मुझे छोड़ दीजिए, गरुड़ेन्द्रने मुझे रावणको दिया था और रावणकी प्रेरी हुई मैं लक्ष्मणको आकर लगी हूँ। मैं दैवी शक्ति जिसके लगती हूँ उसीका विनाश करती हूँ। विशल्याके हाथके जलसे ही मैं व्याकुल होकर अपने स्थान जा रही हूँ, मेरी चेष्टाएँ आप क्षमा कीजिये। शक्तिके इस प्रकार कहनेपर हनुमानने उसे दयाकर छोड़ दिया।

शक्तिके निकल जानेपर वीर लक्ष्मण—"कहाँ गया रावण" कहता हुआ शीघ्र उठकर

खड़ा हो गया। रामने उसका आलिङ्गन किया तथा अन्य लोगोंने नमस्कार किया। लक्ष्मणने रामके चरणोंको नमस्कारकर अपने पासमें खड़ी हुई विशल्याको देखकर पूछा—"यह कौन है"? रामने विशल्याका सारा वृत्तान्त कि किस प्रकार उसके द्वारा शक्ति दूर हुई, लक्ष्मणको कह सुनाया। रामकी आज्ञासे विशल्याके हाथका जल कुंभकर्ण आदिपर छिड़का गया जिससे वे भी निर्विष हो गए। और भी जो-जो योद्धागण घायल हो गए थे वे सब विशल्याका जल छिड़कनेसे स्वस्थ हो गए। इतने में ही प्रातःकाल हो गया। मनुष्यों और विद्याधरोंने अनेक प्रकार वादित्रोंके नादसे जयघोष किया, वानरवंशियोंको बड़ी प्रसन्नता हुई, बहुतसे विद्याधर नृत्य करने लगे, कोई गीत गाने लगे, कोई क्रीड़ा करने लगे।

——:-ꕥ-:——
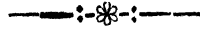
२५ रावणका बहुरूपिणी विद्या सिद्ध करना

मारिचि आदि राजाओंने जब लक्ष्मणको जीवित सुना तो अपनी निर्बलता देखकर वे रावणसे कहने लगे:—देव, लक्ष्मण शक्तिसे मरकर फिर जीवित हो उठा है तथा अन्य और अनेक सुभट भी उनके स्वस्थ होगए हैं। कुम्भकर्ण, इन्द्रजीत और मेघवाहन शत्रुके कारागारमें हैं तथा अपनी बहुत सी सेना मारी गई है। जब पुण्य नष्ट होता है तो सारा वैभव भी नष्ट हो जाता है। इधर उधर सब जगह हमारा ही विनाश हो रहा है। उधर अपने देवरको जीवित सुनकर सीता भी प्रसन्न है, रामके गुणोंकी अनुरागिणी वह तुम्हारे वशमें नहीं होगी। प्रभो, केवल उसके निमित्तसे क्षत्रियोंका विनाश कराना कहाँतक उचित होगा। परस्त्री संगके पापसे वंशनाश हो जाता है, इसलिए देव किसी उपायसे आप सीता रामको सौंप दें और उनके साथ सन्धि कर लें जिससे हमलोग सुखसे रहें। सुग्रीव, विभीषण और हनुमानको आश्वासन देकर उन्हें पहलेकी तरह ही राज्यमें स्थापित कर दें और कुछ घोड़े-हाथी भेंटमें देकर इन्द्रजीत, कुंभकर्ण आदिको छुड़ा लें। भामंडलका आदरकर उसे अपने देश भेज दें, और रामचन्द्रजी सीता मिल जानेसे अपने देश लौट ही जाएँगे तथा विद्याधरोंको मिष्ट वचनोंसे संतुष्ट कर देना चाहिए। ऐसा करनेमें कोई दोष नहीं है किन्तु गुण ही है। विश्वमें सब जगह यही कहा जायगा कि रावण मर्यादाका पालन कर रहा है'। इस प्रकार कहकर उन लोगोंने रावणके पैर पकड़ लिए। रावणने कहा "अच्छी बात है ऐसा ही किया जायगा"।

मन्त्रियोंने प्रसन्न होकर एक वृद्ध दूतको बुलाया और सारा वृत्तान्त कहकर उसे रामके पास भेजा। जब वह जाने लगा तो रावणने दूतको एकान्तमें बुलाकर कहा कि सीताके संबंधकी कोई बात वहाँ नहीं कहना बाकी सब ज्योंका त्यों निवेदन कर देना। दूत शीघ्र ही युद्धभूमिमें गया और द्वारपालकी आज्ञा लेकर रामके पास पहुँचा और नमस्कारकर करने लगा—हे देव! तीन खण्डके अधिपति विद्वान रावणने कहला भेजा है कि आप मेरे भाई और पुत्रोंको छोड़ दें तथा मेरे साथ संधि कर लें। सीताकी आप आशा त्याग दें। उसके बदलेमें आपको तीन सौ कन्याएँ और आधा राज्य दूँगा'। रामचन्द्रजीने कहा, भाई! मुझे अन्य स्त्री या संपदाओंसे प्रयोजन नहीं है। सीताके बिना मेरे लिए सब निरर्थक है अतः रावणसे कह दो कि वह मुझे मेरी सीता सौंप दें। मैं उसके भाई और पुत्रोंको छोड़ दूँगा और जंगलमें चला जाऊँगा। मतलब तो सुखसे रहनेका है। दूतने फिर कहा—'प्रभो त्रिखंडी राजा रावणके साथ आप दुराग्रह न कीजिए। उसके हाथसे आपके बहुतसे गर्वीले राजा मारे गए हैं और उसी प्रकार आप भी व्यर्थ मारे जाएँगे। इसलिए अपनी मूर्खता छोड़िये। यह सुनकर भामण्डलने क्रोधसे कहा—रे मूढ़ दूत! तू रावणके गुणोंका क्या बखान करता है। वह परस्त्री लंपट पशुके

समान है। इस प्रकार कहकर दूतको लातमारकर बाहर निकाल दिया। दूतने जाकर रावणसे निवेदन किया। मूढ़ बुद्धि रावणने क्रुद्ध होकर कहा—अगर मैं वानरोंको युद्धमें जीतकर पुत्रोंको लाता हूँ तो उसके पहले ही वे उन्हें मार डालेंगे और अगर रातमें उन सबके सो जानेपर बन्धन छेदकर चुपचाप उन्हें ले आता हूँ तो लोग मुझे चोर कहेंगे। इसलिये सब कुछ छोड़कर एक ही सर्वोत्तम उपाय है कि मैं बहुरूपिणी विद्या सिद्ध करूँ। वह सिद्ध हो जायगी तो सब काम सिद्ध हो जायँगे'। इस तरह सोचकर उसने अपने सुभटोंको बुलाया और कहा कि आप लोग शान्तिनाथ जिनालयको घंटा तोरण आदिसे विभूषित करें। तथा गंध, अक्षत, श्रेष्ठ, पुष्प, नैवेद्य, रत्न दीप, धूप, फल आदि सामग्री तैयार करें। भरत क्षेत्रमें जितने जिन मन्दिर हैं उन सबमें मेरे कार्यकी सिद्धिके लिये आपको पूजा करानी चाहिए। जब तक विद्या सिद्ध न हो जाय तब तक लंकामें सब जगह जीव हिंसा बन्द होना चाहिए। सर्वौषधि रस, घी, दूध, दही और जलके घड़ोंसे भगवानका अभिषेक होना चाहिये, तीनों समय वन्दना, स्तुति और सामायिक होना चाहिए। सुगन्धित पुष्प आदिसे लंकाको सजाइए, सब जगह धूप जलाइए, दान पूजा आदि कराइए, मन्दोदरी आदि देवियाँ मेरी परिचर्या करेंगी। इस प्रकार सबको यथायोग्य आज्ञा देकर रावण शांतिनाथ मन्दिर गया। वहाँ स्नानकर धुले हुए वस्त्र पहने, भुजाओंमें भुजबन्ध पहने और ईर्यापथ शुद्धिसे भूमि शोधकर शुद्ध मनसे जिनालयके अन्दर पहुँचा। फाल्गुन शुक्ला अष्टमीको शुभ दिनमें रावण मन्त्र सिद्ध करने बैठा और विद्या सिद्ध होनेतक उपवासकी प्रतिज्ञा लेकर ध्यानमें स्थित योगीकी तरह उसने मौन धारणकर लिया। रावण ध्यान-पूर्वक मन्त्रका जाप करने लगा और मन्दोदरी आदि देवियाँ उसकी सेवा करने लगीं। चतुर्निकाय-के देव भी भक्तियुत हो अष्टाह्निका महोत्सव मनाने नंदीश्वर द्वीप गए। राम भी नंदीश्वरका व्रत करनेवाले वानरवंशी विद्याधरोंके साथ आठ दिनके लिए भगवानकी पूजामें रत हो गए। तीन लोकके सभी जैन मनुष्य, पशु, देवता व्रत पूजा आदि करने लगे।

जब अष्टाह्निक व्रत समाप्त हो गए तो विद्याधरोंने रामचन्द्रजीसे कहा—प्रभो, रावण शांतिनाथके चैत्यालयमें विद्या सिद्ध कर रहा है। विद्या सिद्ध होनेपर उसके सामने कौन ठहर सकेगा? इसलिए उसकी विद्या सिद्धिमें विघ्न करना चाहिए। इस समय हमें लंकापर कब्जा कर लेना चाहिए, नहीं तो विद्या सिद्धकर यह हम सबको मार डालेगा। रामने कहा—ब्राह्मण हो, ब्रह्मचारी हो, योगी हो अथवा ध्यानी हो, उससे वीरतापूर्वक पकड़ना चाहिए। यह सुनकर विभीषणने कहा—देव! आप ठीक कहते हैं। तौभी शत्रु बलवान है। छलसे ही उसे पकड़ना चाहिए। इसलिएहे विद्याधर कुमारो! जाओ रावणको तंग करो, जिससे उसकी अमोघ विद्या सिद्ध न हो।

विभीषणके इस प्रकार कहनेपर विद्याधर कुमार अनेक सवारियोंपर चढ़कर लंकामें उपद्रव करने चले। नल, नील, महेन्द्र, अंग, अंगद, चन्द्रमा, इत्यादि बहुतसे वीर लंका पहुंचे। अनेक प्रकारके चित्रोंसे सुसज्जित लंकाका रत्नमयी ऊँचा कोट देखकर वानर बड़े प्रसन्न हुए। फाटकके दोनों किवाड़ तोड़कर भीतर घुस गए। प्रजामें चारो ओर भय फैल गया। बहुतसी स्त्रियाँ डरसे रोने लगीं, कोई आभूषण छोड़कर भागने लगी, कोई अपने पुत्रोंको छोड़ प्राण लेकर भागी। वानर वंशियोंने धनधान्यसे भरा हुआ सारा नगर लूट लिया, स्त्रियाँ पकड़ लीं, प्रजाको खूब तकलीफ दी, घर ढा दिए, अनेक राक्षसोंको मार गिराया, बहुतसे दुराचारी दुष्ट विद्याधरोंने अनेक स्त्रियोंका सतीत्व नष्ट किया। इस प्रकार प्रजाको शोक संतप्त तथा व्याकुल देखकर वानरोंका क्षय करनेवाला मय नामका दैत्य विद्याधर क्रुद्ध होकर चतुरंग सेना सहित युद्धके लिए निकला। किन्तु उसकी पुत्री मन्दोदरीने उसे शांत कर दिया और कहा कि रावणका युद्ध करनेके लिए आदेश नहीं है। इस समय लंकामें प्राणियोंकी रक्षा

करना चाहिए। यह सुनकर मय दैत्य चुप होकर बैठ गया। तब वानरोंने और भी नगरको बरबाद किया। यह देखकर शांतिनाथ चैत्यालयके रक्षक देवता वानरवंशी कुमारोंको मारने लगे। कुमारोंने भी उन्हें हथियारोंसे मारना प्रारंभ किया। भयसे डर कर वे भूतोंके अधिपति मणिभद्रके पास गए। मणिभद्रने क्रुद्ध हो कुमारोंको मारना शुरू किया। कुमार भयभीत हो शीघ्र रामके पास भागे। मणिभद्रने क्रोधसे उनका पीछा किया और जाकर रामसे बोला—देव, आप बलभद्र हैं, देखिये ये कुमार वहाँ जाकर प्रजाको पीड़ा देते हैं इसलिए आप इन्हें प्रजाकी भलाईके लिए रोकिए। यह सुनकर लक्ष्मण बोले— यक्षेश! सुनो, जो पापी रामकी पत्नी सीताको हरकर ले गया उसका आप पक्ष किस लिए लेते हैं? यह परस्त्रीचोर, पापी और अन्यायी रावण मेरे सामने देखूँ कैसे मन्त्र सिद्ध करता है? उसको मैं अवश्य विघ्न करूँगा और मन्त्र सिद्ध न होने दूँगा। मन्त्र सिद्धकर वह पापी अनेक जीवोंको मारेगा'।

लक्ष्मणकी बात सुनकर यक्षने कहा—हे वीर! आप ठीक कहते हैं। लेकिन जिसने सीता-हरणका पाप किया है उसे ही मारना चाहिए। वहाँकी प्रजा बिल्कुल न्यायप्रिय और श्रावकोंके आचार-विचारमें तत्पर है। आप न्याय-मार्गपर चलनेवाले हैं इसलिए प्रजाको कष्ट मत दीजिए। रावणने सीताको हरा है अतः उसे ही आप बाधा दीजिए जिन मंदिर या प्रजाको बाधा मत दीजिए। लक्ष्मणने 'तथास्तु' कहकर यक्षको विदा किया और वानरवंशी कुमार रथपर आरूढ़ होकर पुनः लंका गए। नील मणियोंसे बने हुए रावणके घर पहुँचे. देखा कि रावणका महल विचित्र प्रकारकी मणियोंसे कहीं श्याम है, कहीं श्वेत है, कहीं लाल है, कहीं पीला है, कहीं केशरिया है। कहीं उसमें रत्नखचित स्वर्णकी भूमि है, कहीं जलसे परिपूर्ण तालाब और बावड़ियाँ हैं, कहीं विचित्र प्रकारसे सजा हुआ है। आकाशके समान स्वच्छ स्फटिक खंभोंके न दीखनेके कारण इनके सहारे खड़े हुए मण्डपमें घुसते ही वानरवंशी कुमारोंके सिर फूट गए। रत्नोंके बने हुए हाथी, घोड़े और मनुष्योंको सचमुच जानकर वे एकाएक भयभीत हो गए। किसीके द्वारा मार्ग बतानेपर वे शांतिनाथके मंदिर पहुँचे। तीन प्रदक्षिणाएँ देकर भगवानको नमस्कार किया और पूजा की। बादमें रावणकी स्त्रियोंको वस्त्रोंसे बाँधकर वे मंदिरमें ही रावणके सामने ले आए। वानर कुमारोंने रावणको उद्वेग पैदा करनेके लिए उन स्त्रियोंके स्तन पकड़े, जिससे दुखी होकर वे रोने लगीं। शीलभंगके डरसे फूत्कार करने लगीं। वानर कुमारोंने अनेक काम-विकारोंसे रावणकी स्त्रियोंको पीड़ित किया, तो भी रावणने अपना ध्यान नहीं छोड़ा। उसी समय एकाग्र ध्यानके प्रभावसे उसे बहुरूपिणी विद्या सिद्ध हो गई। वानर कुमार भागकर रामके निकट चले गए।

विद्या सिद्धकर रावण शांतिनाथ भगवानको नमस्कारकर सिंहकी तरह उठा। मंदोदरी आदि स्त्रियाँ रावणको नमस्कारकर हाथ जोड़ उसके सामने खड़ी हो गईं और कहने लगीं—'देव, यहाँ वानर कुमारोंने हम सब स्त्रियोंको बड़ी पीड़ा पहुँचाई है। पूर्व पुण्यके उदयसे बस हमारा शील ही भंग नहीं हुआ है'। उनके बचन सुनकर रावणने कहा—मेरे हाथों निश्चयसे सभी वानर मारे जाएँगे। तुम निश्चिंत रहो। इत्यादि वचनोंसे उन्हें सन्तोष दिलाकर रावण घर आया। शुद्ध प्रासुक जलसे स्नान किया और पुनः शांतिनाथ चैत्यालयमें जाकर भगवानका अभिषेक और पूजन किया, बादमें घर आकर स्वर्ण पात्रोंमें भोजन किया। मुँहमें पान खा, शृङ्गार कर वस्त्र पहने और मंडपमें आकर बैठ गया।

रावणने अपनी सिद्ध की हुई विद्याकी परीक्षा करना प्रारम्भ किया। चारों ओर उसने तलवार घुमाई, उसी समय उसने अपने एक रूप, दो रूप, तीन रूप, आठ रूप, सोलह, बत्तीस यहाँ तक कि असंख्यात रूप बना लिए। विभिन्न पात्रोंमें जैसे सूर्यके अनेक प्रतिबिम्ब दिखाई देते हैं वैसे ही रावणके अनेक रूप दिखाई देने लगे। यह देखकर मन्त्रियोंने रावणसे

कहा:—शत्रुओंका मान मर्दन करने वाला अब तुम्हारे सिवा कोई नहीं है। तुम्हारे हाथसे राम सहित सब बानरवंशी मारे जायेंगे। मन्त्रियोंके इस प्रकार कहने पर रावण प्रसन्न हो सीताको अपना रूप दिखाने बनमें गया। पुष्पक विमानमें बैठ कर गाजे बाजेके साथ चतुरंग सेना लेकर वह सीताके पास पहुँचा।

उस समय वहाँ एक दासी सीतासे कह रही थी - देवि! रावणको देख, जिसने बहु-रूपिणि विद्या सिद्ध करली है। अब यह संग्राममें शत्रुओंका विनाश करेगा। सीताने निष्पाप दृष्टिसे उधर देखकर मनमें कहा:—इसके आगे राम लक्ष्मण संग्राममें कैसे ठहर सकेंगे? उसी समय रावणने आकर सीतासे कहा:—देवि! अनेक रूप बना लेनेकी मेरी सामर्थ्य देख। मैं दुष्टबुद्धि तुझे हरकर यहाँ ले आया परन्तु तैने अपना शील नहीं छोड़ा। मैंने भी गुरूके समक्ष पहले व्रत लिया था कि मैं परस्त्रीपर बलात्कार नहीं करूँगा। वह व्रत मेरा सफल हुआ। अब आजसे तू मेरी पुत्रीके समान है। सीताने कहा—तू युद्धमें मेरे पति और देवरको मत मारना। रावण सीताकी यह माँग स्वीकारकर अपने घर आगया। मनमें उसने सोचा कि युद्धमें राम लक्ष्मणको जीवित पकड़कर सीता रामको सौपूँगा तो मेरी कीर्ति होगी। अन्य भामण्डल आदिको मौतके घाट पहुँचाकर दीक्षा ग्रहणकर मैं तप करूँगा। मनमें इस प्रकार विचार करता हुआ वह जलमें भिन्न कमलकी तरह घरमें रहने लगा।

दूसरे दिन प्रातःकाल स्नान आदिसे निवृत्त होकर रावण मन्त्रियोंके साथ दरबारमें बैठा। कुम्भकर्णादिके बिना सभाको सूनी देखकर वह शोकसे दुख करने लगा और सोचने लगा कि किस प्रकार शत्रुओंको मारकर मैं भाई और पुत्रोंको उनके बन्धनसे छुड़ाऊँ। रावण इस प्रकार सोच ही रहा था कि उसके घरमें मृत्युके सूचक अनेक उत्पात होने लगे, हाथी पैरोंसे पृथ्वी खोदने लगे, घोड़े भयंकर रूपसे हिनहिनाने लगे, हवाके विना ही उद्यानके वृक्ष गिरने लगे, तो-रण टूट गए, शिखर सहित दरवाजे गिर पड़े, भूकम्प होने लगा. भूत दीनताके शब्द कहने लगे। बिना किसी विघ्नके छत्रभंग होगया, सिंहासन काँपने लगा, सड़कें उखड़ गई, कौए बुरा शब्द करने लगे, गीदड़ चिल्लाने लगे। इस प्रकार उपद्रव देखकर लोग यह कुवचन कहते कि रावण अब थोड़ी ही दिनोंमें अवश्य मारा जायगा, अगर यह रामको सीता सौंपकर उनसे सन्धि करले तो यह बच सकता है अन्यथा इसकी कुशल नहीं है। किन्तु श्रेणिक! रावणका इससे प्रतिकूल ही विचार था, वह सोचता कि पृथ्वीपरके इन सभी भूमि गोचरियोंको पराजितकर उनकी जगह विद्याधरोंको यथास्थान बसाऊँगा। रावणने उसी समय दिक्पाल लोकपाल और ग्रहोंको बुलाकर कहा कि जाओ वायुके समान शीघ्रगामी घोड़े, पर्वतके समान विशालकाय हाथी और सुमेरुके समान ऊँचे रथ शीघ्र तय्यार कराओ। इस तरह मन्त्री आदि सबको यथायोग्य आदेश देकर वह अपने शस्त्रालयमें गया और वहाँ हथियार पैने करने लगा।

रावणको बड़े क्रोधसे संग्राममें तत्पर देखकर मन्दोदरीने विद्वान मंत्रियोंसे कहा-रावणको आपलोग युक्ति पूर्वक क्यों नहीं समझाते जिससे यह युद्ध बन्द हो और राक्षसवंशी शान्तिसे रह सकें। मन्त्रियोंने कहा:—देवि! वे हमारी बात नहीं सुनते, इसलिए आप ही जाकर उन्हें समझावें। मन्त्रियोंके कथनानुसार मन्दोदरी सखियोंके साथ रावणके पास गई और विनय पूर्वक चरणोंको नमस्कार कर बोली—देव, यह दुराचार छोड़िए और सीता रामको दे दीजिए। हम दोनोंने प्रसवके समय जिस कन्याको जंगलमें छोड़ दिया था यह सीता वही कन्या है। अतः तुम्हारे योग्य नहीं है, सीतासे अधिक तो मैं ही सुन्दर हूँ। फिर भी अगर तुम्हें इन्द्राणीके रूपकी इच्छा है तो मैं वैसा रूप बनाए लेती हूँ। आप कहें तो बारह वर्षकी या सोलह वर्षकी लड़कीका रूप बनालूँ। यह सब मेरे हाथकी बात है। परस्त्री संगके दोषसे यहाँ आपकी सदाको अपकीर्ति होगी और परभवमें नरक मिलेगा। युद्धमें जानेके लिए आपको अनेक अपशकुन हो रहे हैं

इसलिए मुझे सन्देह है कि जाने दोनोंमेंसे कौन जीतेगा ? राम लक्ष्मण इस समय बलभद्र और नारायणके रूपमें पैदा हुए हैं और आप प्रति नारायण हैं। अतः यह युद्धका अभिमान छोड़ दीजिए। आपके पहले सात प्रतिनारायण इसी प्रकार मर चुके हैं और आप बुद्धिमान शूरवीर आठवें नारायण हैं। इन्द्रजीत मेघवाहन और कुम्भ कर्णादिको जो आज बन्धनमें पड़े हैं वहाँसे छुड़ाइये'। मन्दोदरीकी बातें सुनकर रावणको क्रोध आगया, बोलाः—तुम्हारे विचार कौन पूछता है जो इस प्रकार बक रही हो। कहाँके वे बलभद्र नारायण हैं जिनसे तुम्हें ऐसा भय है ? यों क्यों नहीं कहती कि वे दोनों कोई भिखारी हैं जो पेटके लिए फिर रहे हैं'। इसके बाद रावणने हँसते हुए कहा—तुम कैसी क्षत्रिय कन्या हो अथवा शूरवीरकी पत्नी हो, जो मरनेसे डरती हो ? यों मन्दोदरीको पुनः समझा बुझाकर रावण शामको उसका दिल बहलानेके लिए उसे घर लेगया। सारे अन्तः पुरमें उस रात खूब गाना बजाना हुआ, किसीको भोग विलाससे तृप्त किया किसीको आलिङ्गन कर नखक्षत और दंतक्षतसे चिह्नित किया। किसीको बड़े स्नेहसे पानका बीड़ा खिलाकर अनुराग प्रदर्शित किया।

——:-※-:——

२६. रावणकी मृत्यु

जब प्रभात हुआ तो रावणने युद्धमें जानेसे पहले अपने कुटुम्बीजनोंसे क्षमा माँगी। बादमें स्त्रियोंको समझा बुझाकर उन्हें छातीसे लगाया और प्रेमभरे गद्गद शब्दोंमें कहा—देवियों ! कौन जाने फिर आपके दर्शन होंगे या नहीं। इसलिए आप लोग यहाँ कुशलता पूर्वक स्नेहसे रहना। भोग, विनोद, संगीत, हास्यादिकमें मैंने जो कुछ कहा है वह सब मेरा प्रेमोपहार समझना और मेरे आनेकी आशा छोड़ देना'। स्त्रियोंने कहा—नाथ ! आप ऐसा न कहिए, भगवानकी कृपासे सब कुशल क्षेम होगा। रावणने पुनः सबका बार बार आलिंगन किया और युद्धके लिये रणभेरी बजवाई। रणभेरीका शब्द सुनकर सब सामन्त अपने कुटुम्बियोंसे बिदा होकर रावणके यहाँ इकट्ठे हो गए। रावणने बहुरूपिणी विद्या द्वारा इक्कीस खण्डका एक सुन्दर रथ बनाया, जिसमें एक हजार हाथी जुड़े हुये थे। मय, मारीच, सार और सुक आदि योद्धाओंके मन्त्रिमण्डलके साथ वह उस रथमें बैठकर युद्ध करने चला। उसके पीछे २ विशाल-काय हाथी और चंचल घोड़ोंपर सवार होकर दूसरे सुभट चले, उन सुभटोंके पीछे भेड़िये, सिंह, मयूर, सेही, सारस, बैल, भैंसे, हाथी आदि आकृतिके विमानोंमें बैठकर अन्य सुभट चले। मन्त्र-तन्त्र औषध, रसायन, कवच आदिसे सुभटोंने अपनी रक्षाका प्रबन्ध किया। चलते समय सधूम अग्नि, कीचड़में सना हुआ तैलका बर्तन, बिखरे हुए बालों वाले मनुष्य इत्यादि अनेक शोक सूचक अपशकुन हुए, इन्हें देखते हुए भी रावण शूरवीरताके अभिमानसे नहीं लौटा।

शत्रुकी सेनाको आते हुए देखकर राम भी सिंह-रथपर आरूढ़ होकर शस्त्र लेकर तैयार हो गये। उनके बाद लक्ष्मण, भामंडल, नल, नील, सुग्रीव, हनुमान आदि भी तैयार हुए। दोनों सेनाओंने परस्पर एक दूसरेको देखा। सुग्रीवने लक्ष्मणसे कहा—यह देखो, रावण विद्यासे बनाए हुए हजार हाथियोंवाले रथपर चढ़कर युद्धभूमिकी ओर आ रहा है। रावणको आता हुआ देख लक्ष्मण भी विशाल गारुड़ी रथपर चढ़कर हथियारोंसे सुसज्जित हो रावणके सम्मुख हुआ। दोनों सेनाओंमें भयंकर युद्ध हुआ, उभय पक्षके बहुतसे सैनिक मारे गए, बहुतसे मूर्छित हो गए। मारीचादि राक्षसों द्वारा जब वानरोंकी सेना भागने लगी तो हनुमान और नील राक्षसोंकी सेनापर झपटे। यह देख जम्बूमालीने वानरोंकी सेनाको दबाया किन्तु हनुमानके

सामने होते ही वह भाग खड़ा हुआ। जम्बूमालीको भागते देख मय दैत्य क्रोधसे युद्ध करने आया। हनुमानने उसे छः बार रथरहित किया, तब रावणने मयको बहुरूपणी विद्या द्वारा निर्मित रथ दिया। मयने उसमें बैठकर हनुमानको रथरहित किया। यह देख भामण्डल मयपर झपटा, किन्तु मयने उसे भी रथसे गिरा दिया। भामण्डलके गिरते ही सुग्रीवने मयका सामना किया। किन्तु मयने सुग्रीवको भी रथ रहित कर दिया। यह देख विभीषण मयसे लड़ने लगा। विभीषण भी मयके बाणोंसे जर्जरित होकर व्याकुल हो उठा। इस तरह जब वानरोंकी सेना छिन्न-भिन्न होने लगी तो राम हाथियोंमें सिंहकी तरह युद्धभूमिमें कूदे। दोनोंमें घोर युद्ध हुआ, अनेक हाथी, घोड़े और मनुष्य मारे गए। हाथियोंने हाथियोंको मारकर जमीनपर गिरा दिया उनके दाँत टूट गए, गिरते समय उन्होंने बड़े जोरसे चीत्कार किया, सूड़ें कट गई, पूछ और कान कटकर अलग जा पड़े, बाणोंसे घायल होकर बहुतसे हाथी मूर्छित होकर गिर पड़े, रत्नोंसे सजे सजाये अनेक चंचल घोड़े वहीं ढेर हो गए। हाथी घोड़े जुत हुए अनेक ध्वजाओं वाले, शत्रु और सारथी सहित असंख्य रथ चूर २ हो गए। योद्धाओंमेंसे किसीके कान कट गए, किसीकी नाक कट गई, किसी की भुजाएँ टूट गई, किसीका पेट फट गया, कोई लँगड़ा हो गया, किसीके सिर और होठ जाते रहे। हाथी, घोड़े और मनुष्योंके खूनसे रण-भूमि समुद्रकी तरह हो गई और उसमें थोड़ी साँस बाकी रहनेके कारण छटपटाते हुए सुभट मछलीकी तरह जान पड़े। शरीरसे निकलती हुई रक्तकी धारा, हाथी-घोडोंका चिंघाड़ना और हिनहिनाना तथा शस्त्रोंकी चमकसे ऐसा जान पड़ा मानों विजली सहित गरजते हुए बादल ही बरस रहे हैं। गजरूपी तट, भटरूपी मछली और रथरूपी जहाजसे रक्तपूर्ण युद्धभूमि नदीकी तरह जान पड़ी। कटे हुए शिरवाले हथियार बन्द धड़ युद्धमें लड़ते हुए ऐसे मालूम पड़ते मानों सोए हुए भूत भूमिमेंसे उठकर आये हैं। मांस, रक्त, हड्डी और चूर्णित गजमुक्ताओंसे युद्धभूमि चित्र विचित्र रंगभूमिसी मालूम हुई। स्वामिभक्त योद्धागण अस्तव्यस्त वस्त्रोंको पुनः पुनः मजबूतीसे बाँधकर शत्रुसे लड़ने लगे। कोई बिना हाथके ही लड़ रहा था तो कोई भट बिना पैरके लड़ रहा था, बहुतसे टोंटे, लँगड़े और बिना सिरके भी लड़ रहे थे। कोई घोड़ेसे उतरकर हाथीपर सवार होकर शत्रुको मारता था, कोई हाथीसे भूमिपर उतरकर शत्रुको मारता था, कोई एक रथसे दूसरे रथपर सवार होकर ही अपने प्रतिपक्षीको मारता था। कोई स्वामिभक्तिसे लड़ रहा था, कोई स्वर्गकी इच्छासे लड़ रहा था, कोई केवल संकोचवश ही लड़ रहा था, और कोई धनकी लालसासे लड़ रहा था।

हाथी और घोड़ों आदिकी लाशोंका पर्वतके समान ढेर लग गया, गड्ढे रक्तकी नदीमें बदल गए। घोड़ोंकी टापोंसे घाटियाँ समतल हो गईं, नदियोंका पानी सूख गया, वृक्ष और शिलाएँ चूर-चूर हो गईं, चारों ओर आग और धूआँ-सा छा गया। युद्धमें मय और रामकी हुंकारें सुनकर पातालमें शेषनाग और स्वर्गमें इन्द्र और देवता चकित हो गए, आठो दिशाएँ भयभीत हो उठीं, लोकपाल छिप गए, व्यंतर भाग गए। ज्योतिष्क देव आकाशमें चले गए, रणभेरीका नाद सुनकर वीरोंको दूना जोश चढ़ गया, कायर मरकर दुर्गतिको प्राप्त हुए। अपने पक्षके मरे हुए योद्धाओंको देखकर स्वामिभक्त वीर दूने हर्ष और उत्साहसे लड़ते थे। वंदीजन विरुद गाते थे कि वे वीर पुरुष धन्य हैं जो युद्धमें प्राण त्यागकर स्वर्गकी लक्ष्मीको प्राप्त करते हैं। इस तरह इस अत्यन्त घोर और खूँखार युद्धमें राम और रावण पक्षके अनेक सुभट मारे गए। मयने अनेक मायामयी बाण रामपर चलाए, रामने उन सबको निष्फलकर मयको बाणोंसे जर्जरित कर दिया। मयकी यह दशा देखकर रावण युद्ध करने उठा। लेकिन लक्ष्मणने उसे बीचमें ही ललकारकर कहा, रे पापी! अब तू प्राण लेकर मेरे आगेसे कहाँ जाता है? धर्मबुद्धि रामचन्द्रजीने आज मुझे आज्ञा दी है कि तुझ परस्त्री चोरका आज मैं शिरच्छेद

करूँ। रावणने कहा—अरे ! क्यों व्यर्थ बकवाद कर रहा है? सिंहके आगे कुत्तेका इतना बल प्रदर्शन !! आश्चर्य है। रे मूर्ख! लोकमें जो उत्तम वस्तु है वह मेरी है। इस प्रकार कहकर रावणने बाणोंसे लक्ष्मणको ढ़क दिया। बदलेमें लक्ष्मणने भी रावणको बाणोंसे व्याकुल कर दिया। जब सामान्य शस्त्रोंसे रावणका वश नहीं चला तो मायमयी शस्त्रोंसे वह युद्ध करने लगा। जल बाण छोड़कर उसने लक्ष्मणकी सेनामें जल ही जल कर दिया। लक्ष्मणने उसे पवन बाणसे दूर किया और अग्निबाण छोड़कर रावणके कटकमें आग लगा दी। रावणने मेघबाणसे अग्नि बाणका निराकरण किया और नागपाशसे लक्ष्मण और उसकी सेनाको बांध लिया। लक्ष्मणने गरुड़ बाणसे नाग पाशका प्रभाव नष्टकर रावणपर पाप बाण छोड़ा। रावणने उसका धर्म बाणसे निराकरण किया और लक्ष्मणपर अंधकार बाण छोड़कर सारी सेनामें अंधेरा कर दिया। लक्ष्मणने उसे प्रकाश बाणसे दूरकर दिया और जवाबमें निद्रा बाण छोड़कर रावणकी सेनाको सुला दिया। रावणने प्रबोध बाणसे पुनः सबको चैतन्य कर लिया। इस तरह मायामयी बाणोंसे दोनोंमें घनघोर युद्ध हुआ। उभय पक्षके सैनिकोंमें प्यासेको पानी पिलाया जाता, भूखेको सीझा हुआ अन्न दिया जाता, थकान दूर करनेके लिए चंदनादि शीतलोपचार किया जाता, पंखेकी हवा की जाती, मरते समय किसीको नमस्कार मन्त्र सुनाया जाता जिससे उसे शुभध्यानके प्रभावसे स्वर्गादि सद्गति प्राप्त होती। जिन्हें इस प्रकार सुयोग नहीं मिलता वे आर्तरौद्र ध्यानके प्रभावसे तिर्यंच नरक आदि गतियोंको प्राप्त होते। सेवा आदिका सारा काम उभयके पक्षके नौकरोंके सुपुर्द था। दोनों वीरोंका युद्ध आकाशमें देवता देख रहे थे, मृतकोंका ढ़ेर देखकर उन्हे आश्चर्य होता था। किन्नर, गंधर्व और नारद आदि उनका युद्ध देखकर आकाशमें खड़े हुए जयजयकार कर रहे थे। वहीं आकाशमें कोई आठ विद्याधर कुमारियाँ भी लड़ते हुए लक्ष्मणकी मंगल-कामना कर रही थीं। देवताओंने उन कुमारियोंसे पूँछा कि आप कौन हैं कहांसे आई हैं ?

कुमारियोंने कहा यदि आप सुनना चाहते हैं तो सुनिए:—विजयार्द्ध पर्वतके राजा चन्द्र-वर्द्धनकी हम आठ पुत्रियाँ हैं। सीताके स्वयंवरके समय हमारा पिता हमें लेकर मिथिलामें तमाशा देखने आया। वहां लक्ष्मणको देखकर उसी समय हमारे पिताने हमें इन्हें देनेका संकल्प कर लिया था। तबसे इन्हीं लक्ष्मणकी ओर हमारा चित्त है। इन दिनों रावणके साथ इनका युद्ध सुनकर हम बड़े दुःख और चिंतामें यहाँ आई हैं। उनके ये मनोहर बचन सुनकर लक्ष्मणने आँख उठाकर ऊपर देखा, कन्याओंको इससे अत्यधिक आनन्द हुआ उन्होंने कार्य सिद्धिके लिए सिद्धार्थ नामकी महाविद्या लक्ष्मणको दी। लक्ष्मणने इससे रावणकी संपूर्ण विद्याओंका प्रभाव नष्ट कर दिया। रावणने तब क्रुद्ध होकर बहुरूपिणी विद्या द्वारा अपना भयंकर रूप बनाकर युद्ध करना प्रारंभ किया। लक्ष्मणने रावणका ज्योंही मस्तक छेदा कि उसकी जगह दो मस्तक हो गए, उन दोनोंको छेदा तो चार हो गए। रावणकी दो भुजाएँ काटी तो चार हो गईं, इस तरह आठ, सोलह, बत्तीस आदि दुगुनी भुजाएँ और सिर होते गए। रावण ज्यों ज्यों अधिकाधिक रूप बनाता गया लक्ष्मण त्यों त्यों उन्हें छेदता गया। यहाँ तक कि रावणने असंख्यात भुजाएँ और असंख्यात शिर बनाए, लक्ष्मणने उन सबको काट गिराया। ग्यारह दिनतक दोनोंमें अत्यंत भयंकर युद्ध युआ। लक्ष्मणके बाणोंसे विद्या भी (बहुरूपिणी) जर्जरित हो गई उसका सारा शरीर छिन्न-भिन्न हो गया। अनेक आघातोंसे पीड़ित होकर वह रावणके शरीरसे निकलकर भाग गई। विद्या निकल जानेपर रावण पुनः अपने स्वरूपमें आ गया। अत्यंन्त क्रुद्ध हो उसने हजारों आरेवाले मध्याह्नकालीन सूर्यके समान प्रचण्ड चक्र रत्नको याद किया। स्मरण करते ही सुदर्शन चक्र हाथमें आगया। रावणने लक्ष्मणसे कहा, अब भी आकर तू मुझे प्रणाम कर अन्यथा मारा जायगा। लक्ष्मणने कहा, क्यों निरर्थक गरज रहा है कुम्हारका चाक लेकर तू फूला नहीं समाता ? यह सुनकर क्रुद्ध हो रावणने चक्रकी पूजाकर उसे लक्ष्मणपर फेंका,

इसी बीचमें राम मयको पकड़ रथमें डालकर शीघ्र ही लक्ष्मणके निकट आए। आगकी ज्वालाओंके समान चक्रको आते हुए देखकर युद्धका तमाशा देखने वाले देवता गण छिप गए। लक्ष्मण वज्रमयी बाणोंसे चक्रको रोकने लगा, राम वज्रावर्त धनुष और हल लेकर चक्रको रोकने आए, सुग्रीवने गदासे रोकना चाहा, भामंडल तलवारसे रोकनेको उद्यत हुआ, विभीषणने त्रिशूल सम्भाला, हनुमान मुद्गर लेकर खड़ा हो गया, नल नील वज्रदण्ड लेकर अड़ गए और अंग अंगद कुठार लेकर खड़े हो गए। इस तरह विद्याधरोंने अपने अपने विशिष्ट हथियारोंसे चक्रको रोकना चाहा। परन्तु वह देवाधिष्टित रत्न सबको उल्लङ्घन करता हुआ चलता चला आया। आकर उसने लक्ष्मणकी तीन प्रदक्षिणाएँ दी और आकर हाथपर ठहर गया।

चक्रसहित लक्ष्मणको देखकर विद्याधर प्रसन्न होकर नाचने लगे, कहने लगे सचमुच ही ये दोनों बलभद्र और नारायण पैदा हुए हैं। रावण चक्रको लक्ष्मणके पास देखकर मनमें कहने लगा, क्षणस्थायी इस लक्ष्मीको धिक्कार है, वेश्याकी तरह यह एकको छोड़कर दूसरेपर जाती रहती है, वे भरतादि महापुरुष धन्य हैं जो राजपाट छोड़कर मोक्षको प्राप्त हुए, मैं विषयोंमें आसक्त होकर पापोंमें डूब गया, जिनेन्द्र प्रतिपादित तत्त्वको नहीं समझा। रावण इस तरह सोच ही रहा था कि लक्ष्मणने विभीषणादिको पासमें खड़ा हुआ देखकर रावणसे गरजकर कहा—रावण, तू समझदार है अब भी चेत जा और सीता रामको सौंप दे, अभिमान करना ठीक नहीं है। सीता रामको देकर प्रणामकर और पूर्ववत् अपना शासन चला। यह सुनकर बड़े क्रोधसे रावणने लक्ष्मणसे कहा—यह चाकके समान चक्र चला गया तो क्या हुआ ? मेरी शक्ति अभी सुरक्षित है, तू देखता क्या है शौकसे चक्र चला। रावणकी गर्वोक्ति सुनकर लक्ष्मणने क्रुद्ध हो चक्रको घुमाकर मारा। रावण अनेक शस्त्रोंसे उसे रोकने लगा परन्तु रावणका पुण्य अब क्षीण हो चला था, चक्रने आकर रावणके पुष्प समान कोमल और वज्रके समान कठोर वक्षस्थलको भेद डाला। हृदयके भिदते ही रावण पृथ्वीपर गिरकर ऐसा मालूम दिया मानो रति कामका ही आलिंगन कर रही है। सुवर्ण पुरुषके आकारकी तरह मृत रावणको देखकर उसके पक्षके योद्धा भाग खड़े हुए। उन्हें भागते देखकर हनुमान आदिने अभय घोषणा की और वस्त्र हिलाते हुए सबको सूचना दी कि आप लोग डरें नहीं, रामकी आज्ञा शिरोधार्यकर सुखसे रहें।

भाईको मरा हुआ देखकर विभीषणने शोकसे आत्महत्या करनेके लिए छुरी निकाली। रामने आकर शीघ्र ही विभीषणका हाथ पकड़ लिया। विभीषण मूर्छित हो पृथ्वीपर गिर पड़ा। शीतलोपचारसे किसी प्रकार होशमें आकर रावणकी लाशके पास विलाप करने लगा। उधर रावणकी मृत्यके समाचार सुनकर सारा अन्तःपुर रोता हुआ रणभूमिमें आया। रावणको पड़ा हुआ देखकर मंदोदरी आदि रानियां मूर्छित होकर मृतककी तरह गिर पड़ी, होश आनेपर नाना तरहसे विलाप करने लगीं:—हे देव, आप तीन खण्डके राजा होकर जमीनपर कैसे सो रहे हैं ? पहले अनेक विद्याधरोंको आपने मारा था आज भूमिगोचरियोंके हाथसे आप कैसे मारे गए ? ऐशो-आराममें जो शरीर पला था हाय आज चक्रसे कैसे भिद गया ? जो वानरवंशी सेवक थे वे द्रोही कैसे बन गए ? हे नाथ, उठिए हमसे मधुर बचनालाप कीजिए. मौन लेकर इस तरह क्यों पड़े हैं ? हमने आपका कभी चित्त नहीं दुखाया फिर आप हमसे क्यों रूठ गए हैं, हे नाथ, हमें आलिङ्गन कीजिए, कुछ हितकी बात कीजिए हंसी मजाक कीजिए. हम अठारह हजार रानियाँ अब तुम्हारे बिना कहां जायँगी ? हे नाथ इन घोड़े, रथ और हाथियोंकी ओर देखिए और इन विद्याधर राजाओंकी तरफ दृष्टिपात कीजिए जो आपके दर्शनोंकी लालसासे खड़े हैं। हे देव, आपके बिना यह लंका श्मशानकी तरह मालूम दे रही है। आप सबके भूषण थे अतः आपके बिना यह सारा लश्कर बेकार है, हमारा शौक शृंगार आदि भी सब निरर्थक है'। इस तरह विलाप करती हुई रावणकी स्त्रियां अपना मस्तक धुनने लगीं, कोई छाती कूटने लगी ,कोई

पुनः २ मूर्छित होकर गिर गई। रावणका शिर उन्होंने गोदमें रख लिया और उसकी लाशके चारों ओर बैठकर मंदोदरी, रंभा, चन्द्रानना, उर्वशी, श्रीमाला, सुन्दरी, सूक्ष्मा, पद्मा, पद्मावती, प्रभा, सुभद्रा, यशोभद्रा, लक्ष्मी, कनकावती, रत्नमाला, श्रीकान्ता, कमला, वसुधरा इन अठारह पटरानियों सहित अठारह हजार रानियोंने खूब विलाप किया। इनके अतिरिक्त कुटुंबकी अन्य असंख्य स्त्रियोंने भी शोकसे अत्यन्त रुदन किया। उनका विलाप सुनकर राम, लक्ष्मण तथा विद्याधरों सहित वहाँ आए। विभीषणादिकको देखकर कहने लगेः—हे वीर, रोना बन्द करो रोनेका कारण क्या है ? वीर रावण धन्य है जो युद्धमें वीरतासे मर गया लेकिन झुका नहीं। इस संसारमें स्वाभिमानी पुरुषोंका अभिमान ही धन है। वे धन्य हैं जो युद्धमें अपना अभिमान नहीं छोड़ते। इस लोक और परलोकमें लक्ष्मी उनकी स्वयं दासी हो जाती है। संसारमें सबका मरण निश्चित है, कोई मर गए, कोई मर रहे हैं, कोई मरेंगे। सबको दूसरोंका मरण तो मालूम देता है किन्तु अपना मरण कोई नहीं देखता। इसलिए जो उत्पन्न हुआ है वह अवश्य नष्ट होगा अतः ज्ञानी पुरुषोंको शोक नहीं करना चाहिए। इसके बाद भामण्डलने विभीषणको समझायाः—राजन् ! जो जीव जहाँ पैदा हुआ है वह वहीं सुख मान लेता है, इस सम्बन्धमें तुम्हें मैं एक कथा सुनाता हूँ—अक्षपुर नगरमें राजा सिंहध्वज और रानी लक्ष्मीके अरिदम्भ नामका पुत्र था। उसकी स्त्रीका नाम कमला था। एक बार बहुत दूर युद्धमें विजय प्राप्तकर अरिदम्भ एकाकी अपने घर लौटा और नगरको तोरणादिकसे खूब सजा हुआ पाया। रातको उसने अपनी स्त्रीसे नगरकी सजावटका कारण पूछा। स्त्रीने कहा, एक मुनिराज चर्याके लिए मेरे यहाँ आए थे, मेरे पूछनेपर उन्होंने मुझे आज तुम्हारा आगमन बतलाया था। इसीलिए आपके स्वागतमें मैंने यह नगर सजवाया था। अरिदम्भ सुबह होते ही उन मुनिराजके पास गया और नमस्कारकर बोला—प्रभो ! आप ज्ञानी हैं तो बतलाइए मेरी मृत्यु कब होगी और मुझे कौन-सी गति मिलेगी। मुनिराजने कहा, आजसे सातवें दिन तू मरेगा और मरकर चितकबरा शूकर होगा। अरिदम्भ घर आया और अपने पुत्रसे बोला कि मैं सातवें दिन मरकर गाँवमें शूकर होऊँगा तू मुझे तत्काल मार डालना। अरिदम्भ उसी प्रकार गाँवका शूकर हुआ प्रीतिकर ज्यों ही उसे मारने गया कि वह मृत्युके भयसे भाग गया। प्रीतिकरने मुनिराजसे इसका कारण पूछा। मुनिने बतलाया कि जो प्राणी जिस योनिमें जाता है वह वहीं सुख मानता है। संसारकी यह अत्यन्त दुखदायी स्थिति देखकर प्रीतिकर साधु हो गया'।

विभीषण ! संसारकी यह विचित्र स्थितिका अनुभवकर तुम पापका कारण शोक करना छोड़ दो। इस तरह विभीषणको समझाकर मन्दोदरी आदि रानियोंको रामने समझाया। बादमें वानरवंशी और राक्षसवंशियोंने मिलकर पद्म सरोवरके किनारे चन्दन, कपूर आदिसे रावणकी दाह-क्रिया की और सरोवरके जलमें स्नानकर वहीं बैठ गए। रामने विद्याधरोंको इन्द्रजीत आदिको बन्धनसे मुक्त कर ले आनेकी आज्ञा दी। यह सुनकर कुछ विद्याधरोंने कहा—प्रभो उनको बन्धनसे मुक्त करना ठीक नहीं है कुपित होकर वे फिर युद्ध करनेको तय्यार हो सकते हैं और उन्हें देखकर भाईका स्मरणकर विभीषण भी यदि उनमें मिल जाय तो कोई आश्चर्य नहीं है। यह सुन रामने कहा, अब ये बेचारे ग़रीब क्या कर सकते हैं इसलिए दयाकर इन्हें छोड़ ही देना चाहिए। रामकी आज्ञा पाकर शस्त्रधारी सुभट कुम्भकर्ण, इन्द्रजीत, मेघवाहन और मय आदिको हथकड़ी बेड़ी पहने हुए रामके पास ले आए। रामने तत्काल उनके बन्धन खोल दिए और सबसे कहा कि आपलोग आनन्दसे अपना राज्य सम्भालें और मैं सीता सहित अपने देशको जाता हूँ। इस द्वीपपर अब भी आपका ही अधिकार रहेगा। रामके वचनोंसे प्रसन्न होकर राक्षसोंने कहा—'पापकार्यरूप' इस राज्यके संचालनसे अब हमें कुछ भी मतलब नहीं है। यह सुनकर रामने कहा, आपलोग धन्य हैं जो कर्मबन्धनसे मुक्ति पानेके लिए घोर

तपश्चरणकी इच्छा कर रहे हैं। बादमें इन्द्रजीत आदि सब सरोवरमें स्नानकर मन्दोदरी आदिके साथ लंका चले गये। नगर निवासियोंने रावणका अत्यन्त शोक मनाया। रामचन्द्रजी वानर कुमारोंके साथ अपने डेरेपर आगए। उसी दिन लंकामें छप्पन हजार चारण मुनियोंके साथ सुबल नामके मुनिराज पधारे। वहीं कुसुम नामके वनमें स्वच्छ शिलाके ऊपर शुक्ल ध्यानसे बैठे हुए मुनिराजको केवलज्ञान पैदा हुआ। देवोंने आकर रात्रिमें ही समवसरण (गन्धकुटी) की रचना की, आठ प्रातिहार्य बनाए, दुंदुभिका शब्द होने लगा, देव भक्तिपूर्वक जय जयकार करने लगे। यह सुनकर कुम्भकर्ण आदि राक्षसगण तथा वानर कुमारोंके साथ रामचन्द्रजी शीघ्र समवसरणमें आए तथा भगवानकी स्तुति वन्दना और पूजाकर अपने-अपने स्थानपर बैठ गए। मुनिराजने सात तत्त्व, छः द्रव्य, और पंचास्तिकायका उपदेश दिया।

उपदेश सुनकर इन्द्रजीतने कहा, स्वामिन्! हमलोगोंके पूर्वभव कहिए। भगवान् इस प्रकार कहने लगे—कौशाम्बी नगरीमें पूर्व पश्चिम नामके दो दरिद्र ब्राह्मण रहते थे। एक दिन श्रीधर मुनिके पास धर्मका उपदेश सुनकर वे क्षुल्लक बन गए। पूर्वने किसी समय उस नगरके राजा शुक्रद्युतिकी विभूति देखकर निदान किया कि यदि तपमें सामर्थ्य है तो मैं राजाका ही पुत्र बनूँ। निदानके बलसे मरकर वह नन्दादेवीकी कोखसे रतिवर्द्धन नामका पुत्र हुआ और पश्चिम तपकर पहले स्वर्गमें यशोधर नामका सम्यग्दृष्टि देव हुआ। उसने पूर्वभवके स्नेहसे कौशाम्बी आकर रतिवर्द्धनको सम्बोधित किया। अतः रतिवर्द्धन भी तपश्चरण कर उसी स्वर्गमें ललित नामका देव हुआ। वहाँसे चयकर वे दोनों विजयपुर नगरमें जय विजय नामके सहोदर राजपुत्र हुए। वहाँ भी उन्होंने तपश्चरण किया और मरकर महेन्द्र स्वर्गमें देव हुए। वहाँसे आकर तुम इन्द्रजीत और मेघवाहन हुए और रतिवर्द्धनकी नन्दा माता पूर्वस्नेहसे मन्दोदरी हुई'।

अपने पूर्वभव सुनकर इन्द्रजीत और मेघवाहनने दीक्षा ले ली। उनके साथ ही कुम्भकर्ण, मारीच और मय आदि बारह हजार राजाओंने भी दिगम्बर दीक्षा स्वीकार की और मन्दोदरी आदि रानियाँ विरक्त हो संयम धारणकर आर्यिका बन गयीं। उस समय राक्षसवंशकी अड़तालीस हजार रानियोंने दीक्षा ली। इन्द्रजीत और मेघवाहन केवलज्ञान प्राप्तकर चूलगिरि (बड़वानी) से मुक्त हुए। रेवा नदीके किनारे विन्ध्य पर्वतपर मेघतीर्थमें इन्द्रजीतके साथ मेघबाहन मुनिने तपश्चर्या की थी इसीसे मेघतीर्थके नामसे प्रसिद्ध हुआ। उग्र तपस्वी कुम्भकर्ण रेवाके किनारे सिद्ध हुआ और मारीच कल्पवासी देव हुआ। वकगिरिपर्वतपर मरकर जम्बूमाली इन्द्र हुआ, वहाँसे चयकर ऐरावतक्षेत्रमें मनुष्य हो तपकर मोक्ष जायगा। तपस्वी मय विहार करते हुए सम्मेद- शिखर आए और किसी स्वच्छ शिलापर बैठकर एकाग्र ध्यान करने लगे।

बनारस नगरमें एक नोदन नामका ब्राह्मण अपनी पत्नी अभिमानीके साथ रहता था। उसके वह्नि नामकी पुत्री हुई। एक बार देशमें अकाल पड़ा। ब्राह्मण अन्नकी तलाशमें पत्नी-पुत्री सहित बाहर घूमने निकला और अन्न न मिलनेके कारण गज नामके गहन वनमें क्षुधासे पीड़ित होकर मर गया। उसके वियोगमें उसकी पत्नी और पुत्री रोने लगी। अकस्मात् वहाँ पाटलीपुत्र-का राजा पुष्प आया और उन दोनोंको अपने यहाँ ले गया। राजाने ब्राह्मण पुत्रीके साथ विवाह कर लिया। एक दिन रति क्रीड़ाके समय वह्निने राजाके मस्तकपर लात मारी। प्रभात होनेपर जब राजा दरबारमें गया तो पण्डितोंसे पूछा कि अगर कोई राजाके मस्तकपर पाद प्रहार करे तो उसका क्या होना चाहिए? अपनेको पण्डित मानने वाले बहुतसे सभ्योंने कहा कि उसका पैर काट डालना चाहिए अथवा उसे फाँसीपर चढ़ा देना चाहिए। उसी समय एक हेमांक नामका ब्राह्मण राजाका अभिप्राय समझ कर बोला—'उसके चरणोंकी पूजा करना चाहिए'। राजाने हेमांकसे पूछा—ब्राह्मण! तुमने यह बात कैसे कही? ब्राह्मणने कहा—'महाराज! इसलिए कही कि आपके होठोंपर स्त्रीके काटनेका निशान बना है'। ब्राह्मणको बुद्धिमान देखकर

राजाने उसे बहुत-सी सम्पत्ति दी और अपना अंतरंग मित्र बना लिया। हेमाङ्कके घरमें एक अमोघ ब्राह्मणकी विधवा पत्नी मित्रयशा रहती थी, वह दुःखिनी एक बार अपने पुत्रको पतिके गुणोंका स्मरण कराती हुई इस प्रकार पढ़ा रही थी—हे पुत्र देख, बाल्यकालमें अच्छी तरह विद्याभ्यास कर। हेमाङ्कने अपनी किस तरह उन्नति कर ली है। तेरा पिता भी बाणविद्यामें बड़ा निपुण था। अतः इस समय अच्छी तरह विद्याभ्यास करके तू भी पिताके अनुरूप ही बनना'। रोती हुई माताके वचन सुनकर स्वाभिमानी बालक मन लगाकर विद्या सीखने लगा। व्याघ्रपुर नगरमें जाकर उसने गुरुके पास सारी कलाएँ सीखीं और लौटते समय नगरके राजा सुकान्तकी पुत्री शीलाको ले भागा। यह सुनकर शीलाका भाई सिंहचन्द्र उससे युद्ध करने चला। ब्राह्मणीके पुत्र श्रीवर्द्धितने अकेले ही सेना सहित सिंहचन्द्रको युद्धमें परास्त किया और माता सहित बड़ा प्रसन्न हुआ। सब जगह इसका यश फैल गया। शस्त्र विद्यामें अत्यन्त निपुण श्रीवर्द्धितने राजा पुष्पसे पोदनापुरका राज्य छीन लिया। समयानुसार शीलाके 'पिता सुकान्तकी मृत्यु हुई। शत्रुओंने सिंहचन्द्रपर चढ़ाई की। सिंहचन्द्र डरसे सुरङ्गके रास्ते अपनी स्त्री सहित भाग गया और तम्बोलियोंके साथ पानोंकी टोकरी सिरपर रक्खे हुए बहिनकी शरणमें पोदनापुर चला। चलते २ शाम हो गई, साथी लोग सिंहचन्द्रको पोदनापुरके निकट ही जङ्गलमें छोड़कर अपने रास्ते चले गये। वहाँ सिंहचन्द्रको साँपने काट खाया। रानी दुःखसे विलाप करती हुई पतिको कन्धेपर रखकर जहाँ मय मुनि ध्यान कर रहे थे, वहाँ जा निकली। वज्रस्तम्भ समान निश्चल प्रतिमायोगसे बैठे हुए ऋद्धिप्राप्त उन महात्माके चरणोंमें उसने अपने पतिको रख दिया और मुनियोंके चरण छूकर पतिके शरीरका स्पर्श किया। छूते ही सिंहचन्द्र जीवित हो उठा। मुनिराजके दर्शनकर सिंहचन्द्रने स्त्री सहित मुनिराजको बार-बार प्रणाम किया। सुबह होते ही मय मुनि जब ध्यानसे निवृत्त हुए तो एक विनयदत्त नामका श्रावक उनकी वन्दनाके लिए आया। उसने जाकर श्रीवर्द्धितको सिंहचन्द्रके आनेका समाचार दिया। श्रीवर्द्धित युद्धके लिए तैयार हुआ। लेकिन जब यह मालूम हुआ कि वह उसकी शरणमें आया है तो बड़े स्नेहसे वह अपने सालेसे मिलने गया। मिलकर दोनों बड़े प्रसन्न हुए और वहीं बैठ गए। श्रीवर्द्धितने मुनिराजसे पूछा—

भगवन्! मैं अपने और अपने कुटुम्बियोंके पूर्वभव सुनना चाहता हूँ। मुनिराजने कहा—शोभापुर नगरमें एकबार दिगम्बराचार्य श्रीभद्र मुनिका विहार हुआ। नगरका राजा अमल प्रतिदिन उनकी परिचर्याके लिए जाता था। एक दिन उसकी स्त्रीने उसे वहाँ जानेको मना किया। इस पापके उदयसे वह कोढ़िन हो गई, शरीरमें बदबू आने लगी। यह देख पतिने उसे घरसे निकाल दिया। निर्जन वनमें घूमते हुए उसने एक मन्दिरमें पहुँचकर विश्राम किया। वहाँसे चलकर वह भद्राचार्यके पास आई। उनसे अणुव्रत धारण कर उसने पर्याय पूर्ण की और स्वर्गमें देवी हुई। वहाँसे चयकर यह शीला नामकी तेरी स्त्री हुई है। वह अमल राजा पुत्रको राज्य दे केवल आठ गाँवोंकी आजीविका रखकर श्रावकके व्रत पालने लगा। आयुके अन्तमें मरकर देव हुआ और वहाँसे चयकर तू यह श्रीवर्द्धित हुआ है। अब तेरी माताके पूर्वभव बतलाता हूँ। एक बार कोई एक भूखा विदेशी भोजनकी तलाशमें किसी गाँवमें आया। नगरकी भोजन शालामें जब उसे भोजन नहीं मिला तो क्रोधसे यह कहता हुआ कि इस नगरमें आग लगा दूँगा वह बस्तीसे बाहर चला गया। संयोगसे नगरमें किसी प्रकार आग लग गई। गांववालोंने क्रुद्ध हो उस भिखारीको पकड़कर आगमें झोंक दिया। दुःखसे प्राण छोड़कर वह राजाके यहाँ रसोइन हुई, वहांसे भी मरी तो नरकमें जाकर उसने घोर वेदनाएँ सही, वहाँसे आकर अब यह तेरी मित्रयशा नामकी मा हुई है। पोदनापुरका एक बनिया और उसकी स्त्री भुजपत्री क्रमसे सिंहचन्द्र और उसकी स्त्री रतिवर्द्धना हुए। पूर्वभवमें गधे आदिपर अधिक बोझा लादकर पीड़ा देनेके फलसे इस भवमें

भी उन्होंने भार ढोया'। इस प्रकार अपने पूर्वभव सुनकर श्री वर्द्धनको बड़ा आनन्द हुआ और वह कुटुंब सहित पोदनापुर लौट आया।

मयके वचन सुनकर पोदनापुरको बहुतसे लोग स्वर्ग मोक्षकी अभिलाषासे जैन हो गए। मुनिराज मय घोर तपश्चरणकर ऐशान स्वर्गमें मदन नामके महर्द्धिक देव हुए। इस प्रकार जो इंद्रजीत आदि मुनिराजोंका पावन चरित्र सुनता है वह स्वर्ग संपदाओंका भोगकर मोक्ष प्राप्त करता है।

——:-※-:——

रामका लंकामें प्रवेश तथा सीता सहित अयोध्यामें आगमन

रामचन्द्रजीने त्रैलोक्य अंबर हाथीपर सवार होकर विद्याधरोंके साथ बड़े हर्षसे गाजे बाजे सहित लंकामें प्रवेश किया। उस समय खिड़कियोंमें बैठी हुई स्त्रियां उन्हें देखकर इस प्रकार आपसमें चर्चा करने लगीं—सखि! देख, ये हाथीपर बैठे हुए सीताके पति रामचन्द्र हैं, ये वीर लक्ष्मण है जिन्होने रावणको मारा है और यह सबसे आगे भामंडल विद्याधर है। देख सखि, वह हनुमान है जो विशल्याको लाया था और वह विभीषण जा रहे हैं जो अपने भाई रावणको छोड़कर उधर जा मिले थे। यह देख, यह विशल्याकी पालकी आई जिसने लक्ष्मणकी मूर्च्छा दूरकर दी थी, और वह विमानमें बैठा हुआ बानर वंशियोंका अधिपति सुग्रीव जा रहा है। ये इधर हाथीपर चढ़े हुए नल और नील हैं और उनके पासका हाथी अंग और अंगदका है। वह देख, वह रामका मित्र विराधित आ रहा है। इस प्रकार स्त्रियोंकी चर्चाके बीच रामचन्द्रजी सेना सहित राजमार्गसे होकर गुजरे।

अशोक वनमें सखियोंके बीच बैठी हुई सीता रामचन्द्रजीको देखकर उनसे मिलनेके लिए आगे बढ़ी। धूल धूसरित सीताको आती हुई देखकर रामचन्द्रजी मिलनेकी उत्कंठासे शीघ्र ही हाथीसे उतर पड़े। सीताने रामचन्द्रजीके पैर छूए; रामचन्द्रजीने सीताको उठाकर हृदयसे लगा लिया। सीता हाथ जोड़कर रामचन्द्रजीके सन्मुख खड़ी हो गई। उसी समय लक्ष्मणने आकर सीताको प्रणाम किया। सीताने उसे आशीर्वाद दिया। भामंडल आदिने भी सीताको बारी-बारीसे प्रणाम किया और विनय पूर्वक सब वहीं खड़े हो गए। इसके बाद भामंडलने सब विद्याधरोंका परिचय देते हुए सीतासे कहाः—बहिन देख, ये रावणके भाई विभीषण हैं और ये किष्किंधाके राजा सुग्रीव हैं, ये दोनों वीर विद्याधर नल और नील हैं, यह सुग्रीवके पुत्र अंगद हैं और ये हनुमान हैं, ये जांबूवान हैं, ये हनुमानके नाना महेद्र हैं और ये विराधित हैं। इन्ही वीर पराक्रमी विद्याधरोंने रामचन्द्रजीकी इस युद्धमें सहायता की है'। यह सुनकर सीताने सबको आशीर्वाद दिया और कहा आप लोगोंने मेरे लिए बड़ा कष्ट सहा है और इस युद्धमें भाईके समान हमारी सहायता की है'। विद्याधरोंने कहा—माता हमें प्रसन्नता है कि आपके दर्शनसे हमारे सारे कष्ट दूर हो गए। इसके बाद रामचन्द्रजी सीता सहित हाथीपर सवार होकर तथा अन्य विद्याधर भी अपनी अपनी सवारियोंपर आरूढ़ होकर वहांसे विदा हुए और रावणके स्वर्ण निर्मित महलमें आए। वहाँ रत्नमयी शिलाओंसे पटे हुए तथा हजारों स्वर्णमयी खम्भोंके सहारे खड़े हुए शांतिनाथ चैत्यालयको देखकर रामचन्द्रजी तुरन्त हाथी परसे उतर पड़े। स्नानकर और पवित्र धुले हुए वस्त्र पहनकर सीता सहित उन्होंने जिन मन्दिरमें प्रवेश किया। उनके पीछे लक्ष्मण आदि अन्य वीर भी स्नान आदिसे पवित्र होकर मंदिरमें घुसे। आभरण आदिसे रहित तथा करोड़ों सूर्योंके समान प्रभावाले शांतिनाथ प्रतिबिम्बके दर्शनकर सबको बड़ा हर्ष हुआ। रामचन्द्रजी सहित सबने मिलकर

भगवानकी पूजा की, पंचामृत अभिषेक किया। रामचन्द्रजीने वीणा बजाई, सीताने नृत्य आदि किए। बादमें गंधोदक पुष्प आदि मस्तकपर चढ़ाकर सब लोग बाहर सभा मण्डपमें बैठ गए। विभीषण रावणके महलमें गया और सुमाली, माल्यवान, रत्नश्रवा आदि अपने दुखी भाइयोंको सम्बोधितकर रामचन्द्रजीके पास ले आया। रामने उन सबका खूब आदर किया, उनसे गले मिले और रत्नकंबलपर बराबरसे बैठाकर अनेक सुन्दर वचनोंसे उन्हें सान्त्वना दी। वे सब परस्पर बातें कर ही रहे थे कि विभीषणने आकर भोजनके लिए रामसे अपने घरपर चलनेको कहा। सब लोग गाजे बाजेके साथ विभीषणके घर जीमने गए। भाटजन रामचन्द्रजीका विरुद गाते हुए चले। घर पहुंचकर रामचन्द्रजीने सीताको हाथका सहारा देकर हाथीसे उतारा। वहाँ भी पद्मप्रभस्वामीके मन्दिरमें जाकर सबने पहलेकी तरह ही भगवानकी पूजा स्तुति की और यथा स्थान बैठ गए। विद्याधर स्त्रियोंने रामचन्द्रजीको तथा बहुत दिनों बाद सीताको तैलादिका मर्दनकर स्नान कराया। धुले हुए वस्त्र और अनेक सुन्दर आभूषण धारण कराए। इसके बाद सब लोग भोजनके लिए गए। रत्न निर्मित भूमिपर स्वर्ण पात्रोंमें सबने अनेक प्रकारका सुस्वादु भोजन किया। भोजनके बाद ताम्बूल आदि खिलाकर वस्त्राभूषणोंसे विभीषणने सबका आदर किया और सबको यथायोग्य स्थानपर ठहरा दिया। रामचन्द्रजीको एक सतखने महलमें ठहरा दिया वहाँ वे सीताके साथ सुखसे रहने लगे और लक्ष्मण दूसरे महलमें विशल्याके साथ आनन्दसे समय बिताने लगे।

एक दिन विद्याधरोंने तीनखण्डके राजसिंहासनपर राम लक्ष्मणका अभिषेक करनेकी इच्छा प्रकट की। रामने कहा—हमारे पिताने राजसिंहासन हमारे भाई भरतको दिया है अतः हम स्वयं गद्दीपर न बैठकर उन्हींकी आज्ञाका पालन करेंगे। वे ही हमारे और आप सबके मालिक हैं। इस प्रकार निषेध करते हुए भी विद्याधरोंने "त्रिखण्डाधिपति बलभद्र और नारायण की जय" कहकर उनके ऊपर छत्र लगा दिया। राम लक्ष्मण दोनों भाई छः वर्षतक सुखसे लंकामें रहे।

इधर अयोध्यामें एक दिन दशरथके यहाँ जटा भस्म आदिसे विभूषित नारद आए। रामकी माँ अपराजिताने उन्हें देखकर प्रणाम किया और बड़े आदरसे उन्हें सिंहासनपर बैठाकर उनके सामने खड़ी हो गई। नारदने रानीसे कुशल वार्ता पूछी। रानीने रोते हुए कहा—महाराज! मुझ पुत्र वियोगिनीके कुशल कहाँ? नारदने पूछा, तुम्हारे पुत्र कहाँ गए? मैं तेतीस वर्षसे धातकी खण्डमें भ्रमण करता हुआ तीर्थोंकी वन्दना कर रहा हूँ। अनेक तीर्थंकरोंके कल्याणकोंमें सम्मिलित होनेका मुझे सौभाग्य मिला है, इसलिए मुझे याद नहीं है कि तुम्हारे पुत्र किसलिए कहाँ चले गये'। रानीने कहा—हमारे पति दशरथ भरतको राज्य देकर मुनि हो गए और राम, सीता तथा लक्ष्मण परदेश चले गए। वहाँ सुना कि सीताको रावण हर ले गया। इसके बाद राम लक्ष्मणका रावणसे युद्ध हुआ। लक्ष्मण रावणकी शक्ति लगनेसे मूर्च्छित हो गया। उस मूर्च्छाको दूर करनेके लिए हनूमान वगैरह यहाँसे विशल्याको लेगए हैं। इसके बाद पता नहीं क्या हुआ। इतने दूर देशमें कौन मरा और कौन जीवित है इसका पता कैसे लग सकता है'। इस तरह कहकर रानी फूट-फूटकर नारदके सामने रोने लगी। नारद रानीको इस तरह शोकाकुलित देखकर बड़े दुःखी हुए। कहने लगे, माता! शोक मत करो, मैं जाकर रामके कुशल समाचार लाता हूं। इस तरह कहकर नारद आकाश मार्गसे लंकाकी तरफ उड़ गए, और राक्षसद्वीपमें लंकाके बाहर एक तालाबके किनारे उतरे जहाँ बहुतसे बानरवंशी कुमार क्रीड़ा कर रहे थे। नारदने उनसे पूछा, कुमारो! रावण कुशलसे तो है। यह सुनकर कुमारोंने नारदसे कहा, तू कौन है जो रावणकी पाप भरी बातें करता है। इस तरह कहते हुए उन्होंने नारदको मुक्कोंसे मारा और हाथ बाँधकर रामचन्द्रजीके पास ले गए। रामचन्द्रजीने नारदको

बन्धन मुक्तकर उन्हें नमस्कार किया और आदरसे सिंहासन पर बैठाया। नारदने रामचन्द्रजीसे कहा, आपलोगोंकी माता आपके वियोगसे बड़ी दुखी हैं आप यहाँ सुखमें ऐसे मग्न हैं कि आपने उनकी बाततक भुला दी है। निःसन्देह वे आप लोगोंके दुःखसे प्राण छोड़ देंगी'। यह सुनकर रामचन्द्रजी बड़े व्याकुल हुए और विभीषणको बुलाकर कहा. तुम्हारे यहाँ अब तक हम-लोग बड़े आनन्दसे रहे, अब मेरी इच्छा अयोध्या जानेकी है। इसलिए हमारी सवारियोंका प्रबन्ध कर दो। विभीषणने कहा—देव! अभी आप सोलह दिन और कृपा कीजिए। रामने विभीषणका आग्रह स्वीकार कर लिया। विभीषणने शीघ्र ही एक दूत अयोध्या भेजा। दूतने जाकर भरतसे निवेदन किया कि रामचन्द्रजी १६ दिन बाद लंकासे अयोध्याको प्रस्थान करेंगे। यह सुनकर भरत आदिको बड़ी प्रसन्नता हुई। सब लोग वार्ता कर ही रहे थे कि पञ्चवर्ण रत्नोंको लेकर बहुतसे राक्षस विद्याधर नगर सजाने अयोध्या आए। उन्होंने नगर निवासियोंके घरोंमें रत्नोंकी वृष्टि की, ध्वजा तोरण आदिसे नगरको सुसज्जित किया, शिल्पी विद्याधरोंने जगह २ जिन मन्दिरोंका निर्माण किया। इस तरह लंकासे भी अधिक शोभा अयोध्याकी की।

सोलह दिन बीत जानेपर राम लक्ष्मणने अनेक विद्याधरोंके साथ गाजे बाजेसे लंकासे प्रस्थान किया। राम सीताके साथ पुष्पक विमानमें बैठे तथा लक्ष्मण हनुमान आदि अपनी रुचिके अनुसार अन्य सवारियोंपर बैठे। आकाशमें जाते हुए रामने सीतासे कहा, देवि! देखो वह दण्डकवन आगया जहाँ पापी रावण तुम्हें उठा ले गया था। यह देखो, वही नदी बह रही है जहाँ हम तुमने मुनियोंको दान दिया था। यह वन्शगिरि पर्वत है जहाँ देशभूषण और कुलभूषण मुनिका हम लोगोंने उपसर्ग दूर किया था। यह देखो, यह क्षेमनगर निकल गया, यह विजयपुर आगया, यह आगे वालखिल्यका नगर है और अब यह प्रसिद्ध नगरी उज्जयनी आगई। यह देखो पास ही दशपुर नगर आगया और वह चित्रकूट पर्वत दीख रहा है। इस तरह सीताको अपने प्रवासके स्थान दिखाते हुए रामचन्द्रजी विद्याधरोंके साथ अयोध्याकी बहिर्भूमिमें आ पहुँचे। भरत भी शत्रुघ्नके साथ चतुरङ्ग सेना लेकर रामकी आगवानीको पहुँचा। भरतको आते हुए देखकर रामचन्द्र प्रसन्न होकर विद्याधरोंके साथ आकाशसे उतरे। सबलोग परस्पर गले मिले कुशलक्षेम पूछी। भरत, शत्रुघ्न, राम, सीता और लक्ष्मण एक विमानमें बैठकर राजमार्गसे होकर बड़ी धूम धामसे अयोध्यामें घुसे। सड़कों, छज्जों, छतों और खिड़कियोंपर दर्शनार्थियोंकी अपार भीड़ लग गई, वन्दीजन जोर २ से विरुद गाने लगे, हाथी, घोड़े, रथ और पयादोंसे मार्ग रुँध गया। स्थान २ पर रत्न और फूलोंकी वर्षा होने लगी, चारों ओर जय और नन्दकी हर्षध्वनि होने लगी, नर्तकियोंके नाच होने लगे, सिंह और हाथी चिंघाड़ने लगे, घोड़े हिनहिनाने लगे, सुभटोंने पृथ्वी तलको कँपा दिया। इस तरह बड़े समारोहके साथ दोनों भाई राजद्वार पहुँचे। माताएँ बाहर दरवाजेपर आ गईं। दोनों भाइयोंने उतरकर माताओंके चरण छूए। माताओंने पुत्रोंको छातीसे लगाया। सीता भी सासुओंके पैर छूकर एक ओर खड़ी हो गई। विशल्या आदिने भी बारी-बारीसे सासुओंके विनयपूर्वक चरण छूए। माताओंने सबको आशीर्वाद दिया, कुशलक्षेम पूछी। सबलोग भीतर गए, स्नान भोजनादि किए और राजदरबारमें आकर बैठ गये। पुण्यसे सब भाइयोंका परस्पर मिलाप हो गया।

इतना कहकर गणधर बोले—श्रेणिक! अब तुम्हें रामके पुण्योदयसे प्राप्त उनकी विभूतिका वर्णन सुनाता हूँ। नन्द्यावर्त नामका उनका राजप्रसाद था, चन्द्रमणि नामका चतुर्मुख परकोट था उसमें सुन्दर फाटक थे, बड़ा ही मनोहर प्रेक्षाघर था, मुकुट, दो कुंडल, कवच, सुन्दर खड्ग और कैलाशके समान ऊँचा मनोहर सिंहासन था, पाँच हजार करोड़ हल थे, एक करोड़ गाएँ थीं, सत्तर करोड़ प्रजा थी, विद्याधर और भूमि गोचरि-

योंकी असंख्य चतुरङ्ग सेना थी, बहुत बड़ा खजाना और अनेक रत्न थे, इन्द्रके समान सेनापति और पुरोहित थे, अनेक देश ग्राम, पुर पर्वत, दुर्ग और वनोंपर अधिकार था, वायुके समान चंचल नौ करोड़ घोड़े थे, पर्वतके समान बयालिस लाख हाथी थे और बयालिस लाख ही विमानके समान रथ थे, भूमिको कँपा देने वाले बयालिस करोड़ पयादे थे, आठ हजार रानियां रामके थीं और सतरह हजार लक्ष्मणके थीं। चारों भाई त्रिलोक मण्डपके चार खम्भे ही थे। राम लक्ष्मण तीन खण्डका राज्य करते थे, हजार यक्षोंसे सेवित चक्ररत्नके अधिपति थे, सोलह हजार मुकुट-बद्ध राजा उनके चरणोंकी सेवा करते थे, सोलह हजार देश उनके साम्राज्यके अन्तर्गत थे। इस प्रकार अपार वैभवके साथ राम लक्ष्मण शासन कार्य करने लगे। इतनी बड़ी विभूति पाकर भी रामचन्द्रजी प्रतिदिन जिन मन्दिरोंमें भगवानकी पूजा करते मुनियोंको दान देते। उधर भरत भोगोंमें निस्पृह होकर विरक्त चित्तसे घरमें रहने लगे।

एक दिन सीता, विशल्या, उर्वशी, कल्याणमाला, जितपद्मा, वसुन्धरा, आदि दोनों भाइयोंकी स्त्रियाँ भरतसे बोलीं—देवर! आओ हम सब मिलकर आज जलक्रीड़ा करें। भरत और शत्रुघ्नकी स्त्रियाँ भी इस आग्रहमें शामिल थीं। भरत उन सबका प्यार भरा आग्रह टाल न सकें। अतः सब मिलकर सरोवरपर जलक्रीड़ा करने गए। सब स्त्रियाँ सरोवरके सुगन्धित जलमें बड़ी प्रसन्नतासे भरतके साथ क्रीड़ा करने जलमें घुस गईं। परस्पर हँसी मजाक करते हुए सबने सरोवरमें स्नान किया और वस्त्रोंको जलसे धोकर वहीं किनारेपर बैठ गईं। भरत उठकर पास ही चैत्यालयमें भगवानकी पूजा करने लगे और स्त्रियोंमेंसे कोई भगवानके सामने वीणा बजाने लगी, कोई नृत्य करने लगी। इसी बीचमें त्रैलोक्य मण्डन हाथी बन्धन छुड़ाकर अयोध्यामें इधर-उधर भागने लगा। अनेक बाग बगीचे उजाड़ दिए, घर गिरा दिए, चिंघाड़ २ कर मनुष्योंको भयभीत कर दिया। उसका चिंघाड़ना सुनकर अन्य हाथी भी बन्धन तुड़ाकर भाग गए। घुड़सालमें घोड़े डरसे पैर फटफटाने लगे। हाथीका बिगड़ना सुनकर हनुमान आदि सब विद्याधर इकट्ठे हो गये। राम लक्ष्मण शत्रुघ्न अनेक सुभटोंके साथ हाथीको पकड़ने आए। हाथी जहाँ-तहाँ मनुष्योंको मारने लगा परन्तु पकड़ा नहीं जा सका। वह कालके समान सीधा उस तालाबकी ओर भागा जहाँ राजबधुएँ भरतके साथ जलक्रीड़ा कर रही थीं। हाथीको आता हुआ देखकर स्त्रियाँ डर गईं और भरतके पीछे जा खड़ी हुईं। हाथीको भरतकी तरफ जाते हुए देखकर राम विद्याधर आदि हाहाकार करने लगे। भरतको पूजा करते हुए देखकर हाथीको पूर्वजन्मका स्मरण हो आया अतः शान्त होकर सूँड़ नीचे लटकाकर वहीं खड़ा हो गया। भरतने पूछा—गजेन्द्र! तुम इस प्रकार क्रुद्ध कैसे हो गए? भरतका प्रश्न सुनकर हाथी अत्यन्त शान्त हो चिन्तातुर होकर रोने लगा। राम आदि सारे विद्याधर हाथीको इस प्रकार शान्त देखकर बड़े कौतुकसे वहाँ आए। सीताने बड़ी उत्सुकतासे जानना चाहा कि जिस लक्ष्मणने राक्षसोंके अधिपति रावणको मारडाला वह इस हाथीको क्यों नहीं पकड़ सका।

सीता और विशल्याके साथ हाथीपर बैठकर भरत घर आया और स्नान भोजन आदिसे निवृत्त होकर शत्रुघ्न, राम, लक्ष्मण तथा अन्य विद्याधरोंके साथ सभामें बैठा। सब लोगोंमें हाथीकी ही चर्चा थी कि किस प्रकार वह क्रुद्ध हुआ और कैसे शान्त हो गया? बहुत खुशामद करनेपर भी वह आहार क्यों नहीं लेता। आज उसे बिना कुछ खाए चार दिन हो गए हैं।

उसी समय अयोध्याके बाहर उद्यानमें देशभूषण कुलभूषण केवलीका पदार्पण हुआ। समवशरणकी रचना देखकर बनमालीने उनके आगमनका समाचार रामको दिया। समाचार सुनकर रामचन्द्रजीने शरीरके वस्त्राभूषण उतारकर मालीको दे दिए और नगरमें ढोंढ़ी पिटवाकर बड़े वैभवके साथ लक्ष्मण आदिको लेकर केवलियोंकी बन्दनाको चले। नल, नील, हनुमान, सुग्रीव और अंगद आदि वानरवंशी राजा भी अपने-अपने विभवके साथ बन्दनाको

गए। विरक्त चित्त भरत त्रैलोक्य मण्डन हाथीपर सवार होकर केवलीके दर्शनको नगरसे निकला। अपराजिता, सुमित्रा, सुप्रजा और केकयी, चारों राजमाताएँ भी पालकियोंमें बैठकर बंदना करने निकलीं। सीता, पद्मा, विशल्या आदि राज रानियाँ भी शृंगारकर हाथीपर सवार होकर भगवानकी बन्दनाके लिए गईं। इन्द्रके परिवारकी तरह सब लोगोंने मुनि सभामें पहुंचकर उनकी पूजा, बंदना और स्तुति की, मुनि और गृहस्थ धर्मका उपदेश सुना, सात तत्व छः द्रव्य और पञ्चास्तिकायका व्याख्यान सुना। उपदेश हो चुकनेके बाद लक्ष्मणने पूछा—स्वामिन्! यह हाथी कई दिनोंसे आहार नहीं करता इसकी इस उदासीका क्या कारण है? देशभूषण केवलीने कहाः—

अयोध्यामें जिन दिनों भगवान् ऋषभ राज्य कर रहे थे उन्हीं दिनों वहाँ सुप्रजा नामका राजा (सामन्त) रहता था। उसके सूर्य चन्द्र नामके दो पुत्र थे। भगवान जब दीक्षा ले गए तो वे दोनों भी देखादेखी साधु हो गए। किन्तु शीघ्र ही क्षुधासे पीड़ित होकर दोनों वेष छोड़ कुलिङ्गी साधु बन गए। मिथ्या तपका आचरणकर चिरकालतक दोनोंने संसार परिभ्रमण किया। किसी समय कर्म योगसे चन्द्र हस्तनागपुरके राजा सिंहपतिकी रानी मनोलुताकी कोखसे कुलंकर नामका पुत्र हुआ और सूर्य भी उसी नगरमें विश्वपुरोहितकी पत्नी अग्निकुंडाके उदरसे श्रुतरति नामका पुत्र हुआ। एक दिन कुलंकर अपनी कुल परम्पराके अनुसार तापसियोंकी सेवा करने वनमें जा रहा था कि मार्गमें मुनिराजके दर्शन हुए। नमस्कारकर वह वहीं खड़ा हो गया। मुनिराजने अवधिज्ञानसे विचारकर कहा कि तू जहाँ जा रहा है वहीं तेरा बाबा तपसी तापसियोंके जलानेकी लकड़ीमें सर्प हुआ है। पंचाग्नि तप करनेवाले वे तापसी उसी लकड़ीको जला रहे हैं। कुलंकरने जाकर वह लकड़ी आगसे निकलवाई और सर्पकी रक्षा की। कुलंकरने देखा कि ये तापसी अब भी अपने मिथ्या आचरणसे बाज नहीं आ रहे हैं तो वह उनसे उदासीन होकर मुनि होनेकी इच्छा करने लगा। यज्ञ आदि करनेवाला मूढ़ श्रुतरति कुलंकरकी यह दशा देखकर उसे फुसलाने लगाः—राजन्! कुल परम्परासे चला आया तुम्हारा धर्म वैदिक है अतः यदि तुम सिंहपतिके पुत्र हो तो तुम्हें उसीका आचरण करना चाहिये। वैदिक विधिसे ही तुम्हें अपने पुत्रको राज्य देकर तापसी दीक्षा लेना उचित है'। कुलंकर तो इधर इस प्रकार दीक्षित होनेकी बात सोच रहा था उधर उसकी रानी श्रीदामाने समझा कि मेरे परपुरुषप्रेमकी बात इन्हें ज्ञात हो जानेसे ही ये दीक्षा ले रहे हैं। न जाने ये दीक्षा लेंगे भी या, नहीं अतः इसके पहलेही इन्हें विष देकर मार डालना चाहिये। इस तरह सोचकर उसने पति और पुरोहित दोनोंको विष खिलाकर मार डाला। पशुहिंसाके (यज्ञादिमें) फलसे दोनों मरकर सघन वनमें खरगोश हुए। वहाँसे कर्मोंके प्रेरे हुए क्रमशः मेढक, मूस, मोर, मणिधर (सर्प) और मृग हुए। इसके बाद श्रुतरतिका जीव हाथी हुआ और कुलंकर मेढक हुआ। मेढक हाथीके पैरके नीचे दबकर पुनः एक सूखे तालाबमें मेढक हुआ। वहाँ उसे कौवोंने चोंथ खाया, वह मरकर मुर्गा हुआ। श्रुतरतिका जीव हाथी मरकर बिलाव हुआ। बिलावने मुर्गा खा लिया। कुलंकरका जीव इस तरह तीन बार मुर्गा हुआ और तीनों बार ही श्रुतरतिके जीव बिलावने उसका भक्षण किया। इसके बाद कुलंकरका जीव शिशुमार (पानीका जन्तु विशेष) और श्रुतरतिका जीव मछली हुआ। दोनोंको धीवरने पकड़कर कुठारसे मार डाला। दोनों मरकर राजगृह नगरमें वह्वाश ब्राह्मण और उल्का ब्राह्मणीके क्रमशः विनोद और रमण नामके पुत्र हुए। रमण यह सोचकर कि धन और विद्याके बिना मनुष्य दो पैरका पशु है, वेदाध्ययनके लिये देशान्तर चला गया। बहुत दिनों तक बाहर रहकर षडांग वेदका अध्ययनकर वह भाईसे मिलने पुनः घर लौटा। राजगृह आते-आते सूर्य छिप गया, आकाश भी बादलसे घिर गया। अतः वह नगरके बाहर ही किसी पुराने बागके यक्ष मन्दिरमें ठहर गया। उधर विनोदकी स्त्री समिधा किसी अशोकदत्त नामक पुरुषसे आसक्त थी। दोनोंने उसी यक्षमन्दिरमें परस्पर मिलनेका संकेत किया हुआ था। अशोकदत्तको बीचमें ही

कोतवालने पकड़ लिया और विनोद तलवार लेकर अपनी स्त्रीके पीछे चुपके २ चला। मन्दिरमें जाकर अन्धेरेमें रमणको ही समिधाका जार समझकर विनोदने उसका खून कर दिया। समयानुसार विनोद भी मरा और मरकर शालवनमें भैंसा हुआ तथा रमण भी उसी वनमें अंधा रीछ हुआ। दोनों दावानलमें जलकर मरे और मरकर गिरवनमें भील हुए। वहाँसे मरे तो हरिण हुए। व्याधोंके भयसे भागते हुए झुंडसे ये दोनों बिछुड़ गए। उधर राजा स्वयंभूतिरथ विमलनाथ स्वामीके दर्शनकर लौट रहा था। उसने दोनों सुन्दर मृग छौनोंको देखकर इन्हें जीता ही पकड़ लिया और जिनमन्दिरके पास रख छोड़ा। ये वहाँ नित्य मुनियोंके दर्शन करते और राजद्वारसे प्राप्त यथेच्छ अन्नका भक्षण करते। आयुके अन्तमें उनमेंसे रमणका जीव तो समाधि मरण कर स्वर्गमें देव हुआ, दूसरा विनोदका जीव तिर्यंचोंमें ही भ्रमण करता रहा। किसी प्रकार स्वप्नमें राज्य पानेकी तरह उसने मनुष्यका जन्म पाया और कांपिल्य नगरमें बत्तीस करोड़ दीनारका धनी धनद सेठ हुआ। रमणका जीव उसी सेठके यहाँ वारुणी सेठानीकी कोखसे भूषण नामका पुत्र हुआ। निमित्त ज्ञानीसे यह जानकर कि यह पुत्र अवश्य ही दीक्षा धारण करेगा, धनद बड़ा उदास रहने लगा। उसने पुत्रस्नेहसे भूषणके लिए सारे साधन घरमें ही जुटा दिए। भूषणने कभी यह नहीं जाना कि सूर्य चाँद कब उदय अस्त होते हैं। इकलौता पुत्र होनेके कारण धनद इसे खूब प्यार करता। श्रेणिक! प्राणियोंकी चेष्टाएँ भी नटके समान विचित्र हैं। यह धनद जो पहले भाई था अब भूषणका पिता हुआ है।

एकदिन प्रभात समय देव दुंदुभिका शब्द सुनकर और देवोंका आगमन देखकर भूषण प्रति-बुद्ध हुआ, और तुरन्त विनय पूर्वक हाथ जोड़ श्रीधर मुनिकी वन्दनाके लिए नीचे उतरने लगा। जीनेसे उतरते हुए उसे सर्पने डस लिया। मरकर चौथे स्वर्गमें देव हुआ। वहाँसे चयकर पुष्करवर द्वीपके चन्द्रादित्यपुरके राजा प्रकाशयशकी रानी माधवीके उदरसे जगद्युति नामका पुत्र हुआ। जवान होनेपर वह राजगद्दीपर बैठा परन्तु संसारसे उदासीन रहनेके कारण राज्यकार्योंमें इसका चित्त नहीं लगा।

जब वृद्ध मन्त्रियोंने इसे समझाया कि वत्स कुल परंपरासे चला आया हुआ यह राज्य तुम्हें सम्हालना चाहिए, राज्य संभालोगे तो प्रजा सुखी रहेगी, तो यह जैसे-तैसे राज्य चलाने लगा। राज्य करते हुए ही उसने मुनियोंको आहार देकर पात्रदानका पुण्य कमाया और मरकर दानके प्रभावसे देवकुरूमें भोगभूमिया मनुष्य हुआ। वहाँसे फिर दूसरे स्वर्गमें देव हुआ और पल्योपम समयतक अनेक भोग भोगे। बादमें वहाँसे मरकर जम्बूद्वीपके पश्चिम विदेहके रत्नसंचयपुर नगरमें अचल चक्रवर्तीकी रंभा रानीसे अभिराम नामका महागुणवान पुत्र हुआ। बाल्यकालसे ही उसे वैराग्य-संपन्न देखकर चक्रवर्तीने उसे अनेक भोगोपभोगके साधन जुटा दिए। तीन हजार स्त्रियोंके साथ उसका जबर्दस्ती विवाह कर दिया जो निरन्तर हावभाव कटाक्षोंसे उसका मन बहलाने लगीं। कुमार घरमें रहकर ही कांजिकाहार आदि व्रत करने लगा। इस तरह करीब साठ हजार वर्षतक उसने तपश्चरण किया, बादमें समाधिमरण करके ब्रह्मोत्तर स्वर्गमें ऋद्धि-सम्पन्न देव हुआ और धनदका जीव जो पहले विनोद ब्राह्मण और सबसे पहले श्रुतरति पुरोहित था, अनेक योनियोंमें भ्रमण कर जंबूद्वीपके भरतक्षेत्रके पोदनापुर नगरमें अग्निमुखकी पत्नी शकुनाब्राह्मणीके गर्भसे मृदुमति नामका पुत्र हुआ। नाम तो उसका मृदुमति था परन्तु वह अत्यन्त अविनयी कठोर जुआरी और अवारा था, अनेक अपराध करता। लोगोंके उलाहनोंसे खिन्न होकर माता-पिताने उसे घरसे निकाल दिया। पृथ्वीपर घूमता हुआ सयाना होकर फिर वह पोदनापुर आया और एक घरमें पीनेको जल माँगा। घरकी मालकिन ब्राह्मणीने रोते हुए जल दिया। शीतल और मीठे जलसे प्यास बुझाकर मृदुमतिने ब्राह्मणीसे रोनेका कारण पूछा। ब्राह्मणीने कहा—भद्र! तेरे ही रंगरूप जैसा मेरे भी एक बालक था। बचपनमें ही हमने

दयाहीन होकर उसे घरसे निकाल दिया। देश-विदेशमें घूमते हुए यदि तूने उसे कहीं देखा हो तो बता, तुम-जैसा ही उसका रंग है। तब रोते हुए इसने कहा—माँ! तू रो मत, मैं ही वह तेरा खोया हुआ पुत्र हूँ यह सुनकर माता-पिता दोनों प्रसन्न हुए और पुत्र-प्राप्तिकी बड़ी खुशी मनाई। पुत्रस्नेहसे शकुनाके स्तनोंसे दूध झरने लगा। मृदुमति जहाँ तेजस्वी रूपवान बुद्धिमान था वहाँ पहले सिरेका धूर्त भी था, स्त्रियोंको प्यारा था, जूएमें सदा जीतता, बड़ा चतुर और अनेक कलाओंमें पारंगत था तथा निरन्तर कामभोगमें आसक्त रहता था। दूसरी रतिके समान वसन्तअमरा नामकी एक रूपवती वेश्यासे वह प्रेम करता था। उसने छल-बलसे धन इकट्ठा कर घरकी सारी दरिद्रता दूर कर दी और मनवाञ्छित सुखकी सामग्री इकट्ठी कर राजाओं जैसी अवस्था कर दी।

एक दिन मृदुमति शशांक नगरमें राजा नन्दिवर्द्धनके यहाँ चोरी कर रहा था कि उसने नन्दिवर्द्धनको अपनी रानीसे यह कहते हुए सुना—"देवि, आज मैंने शशांकमुख स्वामीके चरणोंमें बैठकर मोक्ष सुखदायक बड़ा ही सुन्दर उपदेश सुना है। ये विषयभोग परिपाक कालमें विषके समान बड़े ही भयंकर होते हैं, इसलिए मैं प्रातःकाल ही दीक्षा लूँगा। तुम किसी प्रकारका शोक न करना"। रानीके प्रति नन्दिवर्द्धनका यह उपदेश सुनकर मृदुमति संसार-भोगोंसे विरक्त हो गया और चन्द्रमुख मुनिके पादमूलमें दिगम्बर मुनि बन गया।

उधर एक गुणनिधि नामक मुनिने दुर्गगिरि पर्वतपर चौमासा किया था। जब वर्षायोग समाप्त हो गया तो वह आकाशमार्गसे अन्यत्र चले गए। यह मृदुमति जब पारणा करने आलोक-नगर गया तो लोगोंने इसे दुर्गगिरि पर्वत वाले मुनि ही समझा। अतः इसे भक्तिभावसे विविध प्रकारका सुरुचि पूर्ण आहार दिया। यह भी जिह्वा इन्द्रियकी लंपटतावश मायाचार कर अपनेको छिपाता रहा। लोग पूछते कि महाराज आप वे ही मुनि हैं जिन्होंने दुर्गगिरिपर चौमासा किया था? तो यह सिर हिलाकर 'हाँ' का अभिप्राय प्रकट कर देता। इस तरह लोलुपताके कारण इसने अज्ञान और अभिमानसे आत्मवञ्चना कर दुःखका बीज पाप अर्जित किया और गुरुके आगे इस मायाशल्यका उद्घाटन न कर और भी अधिक अपने पापको गुरुतर कर लिया। आयुके अन्तमें मरणकर जहाँ अभिरामका जीव देव हुआ था वहाँ ब्रह्मोत्तर स्वर्गमें देव हुआ। पूर्व जन्मके स्नेहसे दोनों ऋद्धिधारी देवोंमें वहाँ भी अत्यन्त स्नेह रहा। अभिराम देव स्वर्गसे चयकर दशरथका पुत्र यह भरत हुआ है और इसी भवमें मोक्ष जायगा। तथा वह दूसरा देव मायाचार पूर्वक तप करनेके फलसे यह त्रैलोक्य डम्बर हाथी हुआ है। भरतको देखकर जातिस्मरण हो जानेसे यह शान्त होकर बैठ गया'। भरत अपने भवान्तर सुनकर बड़ा सन्तुष्ट हुआ। उठकर उसने केवलीके चरणोंको नमस्कार किया और दीक्षाके लिए प्रार्थना की। भरतको दीक्षाके लिये तत्पर देखकर रामचन्द्रजी उसे समझाने लगे:—भाई! तुम्हें ऐसा क्या कष्ट है? पिताने अत्यन्त स्नेहसे तुम्हें यह राज्यभार सौंपा था अब तुम उसे किसे दोगे? हमें तुम्हें पिताके वचनोंका ही पालन करना चाहिए। यह चक्र-रत्न भी तुम्हारा ही है इसकी तुम्हीं रक्षा करो, हमने तो केवल तुम्हारे लिए दिग्विजय की है और यहाँ हम तुम्हारे दर्शनोंकी अभिलाषासे ही आए हैं, अगर तुम हमसे उदासीन होते हो तो हम पुनः बाहर चले जानेको तय्यार हैं। यह पिताका दिया हुआ तीन खण्डका राज्य तुम सेवन करो, हम दो एक गाँव रखकर उसीसे अपनी आजीविका चला लेंगे। पिता गए और तुम भी जा रहे हो। पति और पुत्रके वियोगमें माता केकयी रो-रोकर मर जायगी। इस प्रकार रामचन्द्रजीने भरतको बहुत-कुछ समझाया। किन्तु भरतने कहा—भाई, अबतक तो मैंने पिताके वचनोंका निर्वाह किया अब आगे आपको करना है। इस तरह कहकर एक हजार राजाओंके साथ भरतने केवलीके निकट दीक्षा लेली और केकयी तीन सौ स्त्रियोंके साथ पृथ्वीमती आर्यका-

के पास आर्यिका बन गई। हाथीने श्रावकके व्रत धारण कर लिए और चार वर्षतक घोर तपश्चरणकर समाधिमरणपूर्वक छठे स्वर्गमें देव हुआ। भरत केवलज्ञान प्राप्तकर मोक्षको गए। अन्य मुनि भी तपश्चरणकर यथायोग्य गतियोंको गए।

इस प्रकार जो मनुष्य भरतकी कथा सुनते हैं वे निराकुल स्थान मोक्षको प्राप्त करते हैं। चतुर्थ कालके प्रारंभमें भगवान ऋषभनाथके समय जो चंद्र-सूर्य नामके राजकुमार थे और भगवानके साथ ही जिन्होंने विनोदसे दीक्षा ले ली थी किन्तु असमर्थ होकर जो संयमसे परिभ्रष्ट हो गए और चिरकालतक संसारमें घूमते रहे, बादमें चन्द्रका जीव हाथी और सूर्यका जीव भरत होकर क्रमशः स्वर्ग और मोक्षको गए, उनका यह अनुपम चरित्र जो भव्य प्राणी सुनते हैं वे क्रमशः नरेन्द्र और सुरेन्द्रके सुखभोगकर मोक्षको प्राप्त होते हैं।

---

२८. शत्रुघ्नका मथुराको जीतना

भरतके दीक्षित हो जानेपर राम कुछ शोकाकुलित हो कुटुंब-सहित घर लौटे। विद्याधरोंने सलाहकर लक्ष्मणके सम्राट्का पट्टबंध बाँधा। लक्ष्मण तीन खण्डके अधिपति नारायन हैं और राम बलभद्र हैं। इस प्रकार घोषणाकर सबने दोनों भाइयोंका स्वर्ण कलशोंसे अभिषेक किया और चन्द्रमाके समान निर्मल छत्र सिरपर लगा दिया। दोनों भाई स्वर्णमयी सिंहासनपर बैठे। विभीषणको राक्षस द्वीपका अधिपति बनाया। सुग्रीवको किष्किंधाका राज्य दिया। हनुमानको हनुरुह द्वीपका साम्राज्य दिया। विराधितको अलंकारपुरका राजा बनाया। नल नीलको किष्कुपुरका राज्य दिया। रत्नजटीको देवगीतपुरका राजा बनाया। शेष राजाओंको भी यथायोग्य प्रदेश सौंपे। सबसे निश्चिंत होकर रामने शत्रुघ्नसे कहा—भाई! तुझे जो प्रदेश चाहिए वह तू ले ले, चाहे तू आधी अयोध्या ले ले अथवा पोदनापुर, हस्तिनापुर, बनारस, कौशांबी, पाटलिपुत्र, शिवपुर इनमेंसे किसीको चुन ले। शत्रुघ्नने कहा, मुझे मथुराका राज्य चाहिए। रामने कहा, वहाँ हरिवंशी राजा मधु राज्य कर रहा है और वह हमारे शत्रु रावणका दामाद है। नागेंद्रका दिया हुआ उसके पास एक त्रिशूलरत्न है, उसके कारण उससे कोई युद्ध नहीं कर सकता। लक्ष्मण भी उसे जीतनेके लिए शंकित रहता है तब तेरी तो बात ही क्या है। शत्रुघ्नने कहा, आप तो मुझे मथुराका ही राज्य दीजिए, अगर उसका अभिमान दूर न कर दूँ तो मैं शत्रुघ्न नहीं। रामने उसकी इच्छानुसार उसे मथुराका राज्य सौंप दिया। माताओंको प्रणामकर शत्रुघ्न चतुरंग सेना लेकर मथुराकी ओर चला। लक्ष्मणने उसे अपना सागरावर्त धनुष दिया और कृतान्त वक्र सेनापतिको साथ कर दिया।

शत्रुघ्नने यमुनाके किनारे जाकर पड़ाव डाल दिया। एक गुप्तचर मथुरा गया और सारा पता लगाकर लौट आया। आकर शत्रुघ्नसे कहा, देव! आज छः दिन हुए राजा मधु मथुरासे पूर्वकी ओर नन्दन बनमें क्रीड़ा करने गया है। सारा कुटुंब परिवार और अनेक क्षत्रिय सामन्त भी उसके साथ गए हैं। मथुरासे वह बन तीन योजन दूर है। नगरी इस समय धन-जनसे परिपूर्ण बिना राजाके खाली है। यह सुनकर शत्रुघ्न रातको ही सेना-सहित मथुरा पहुंचा और उस जन-धनपूर्ण नगरपर चुपचाप कब्जा कर लिया। शस्त्रालय, खजाना और राजमहल आदिपर फौजी पहरा बैठा दिया। शासन-सूत्र अपने हाथमें ले लिया और मथुरामें रघुवंशियोंके शासनकी भेरी पिटवा दी। सुबह होते ही किसीने वनमें जाकर मधुसे सारा वृत्तान्त कहा। नगरीपर शत्रुघ्नका कब्जा सुनकर मधु क्रोधसे जलता हुआ शीघ्र ही मथुरा आया। शत्रुघ्नके जो सुभट नगर-द्वारकी रक्षा कर रहे थे युद्धके लिए

तय्यार हो गए। मधुके पास इस समय त्रिशूलरत्न नहीं था। तो भी उसने बाहरसे नगरको घेरकर युद्धकी घोषणा कर दी। शत्रुघ्नकी कुछ सेना नगरके बाहर निकली और दोनों ओरसे घोर संग्राम प्रारंभ हुआ। जब मधुकी सेना दबने लगी तो उसका पुत्र लवणार्णव क्रुद्ध हो स्वयं युद्धको आया और उसने शत्रुघ्नकी सेना छिन्न-भिन्न कर दी। यह देख कृतान्तवक्र सेनापति लवणार्णवके सम्मुख हुआ। दोनोंमें बड़ा भयंकर संग्राम हुआ। कृतान्तवक्रने लवणार्णवके वक्षस्थलपर गदाका प्रहार किया। लवणार्णव तत्काल मर गया। पुत्रको मृत देखकर मधु युद्ध करने उठा। मधुसे युद्ध करते हुए कृतान्तवक्र सेनापति कुछ पीछे हटने लगा। यह देख शत्रुघ्नने मधुको ललकारा। दोनोंमें घनघोर युद्ध हुआ। शत्रुघ्नके बाणोंसे जर्जरित होकर मधुने विरक्त हो भावदीक्षा ले ली और प्राण त्यागकर तीसरे सनत्कुमार स्वर्गमें देव हुआ। शत्रुघ्नने मधुकी पूजाकर उसका अग्निसंस्कार किया। उधर शस्त्रागारमें रक्खे हुए त्रिशूलरत्नको बिना स्वामीके देख उसके रक्षक देव उसे गरुड़के पास ले गये। गरुडेन्द्रने पूछा तुम मधुको छोड़ विश्वासघात कर कैसे यह रत्न यहाँ ले आए। पूर्वजन्ममें जिसने मुझे अपनी स्त्री दी थी तुम उसे शत्रुमुखमें छोड़कर रत्नको क्यों लौटा लाए? रत्नके रक्षक देवोंने कहा—राजा शत्रुघ्नने छलसे मधुका बध कर दिया। इसीलिए हम यह त्रिशूल यहाँ लौटा लाए हैं। यह सुनकर गरुडेन्द्र क्रुद्ध हो शत्रुघ्नको मारने चला। उसे इस तरह क्रोधसे जाते हुए देख उसके मित्र असुरने पूछा—देवराज, कहाँ चले? राजा मधुके मारनेवालेको तुम कैसे मार सकोगे? क्या राक्षसवंशियोंके युद्धमें तुमने विशल्याके समाचार नहीं सुने जिसने रावणकी शक्तिको भी व्यर्थ कर दिया। उस विशल्याके साथ जिसके भाईने विवाह किया है वह शत्रुघ्न तुम्हारे द्वारा कदापि नहीं मारा जा सकता। गरुडेन्द्र मित्रके कथनको अनसुनाकर क्रुद्ध हो मधुकी चिता देखने आया। वहाँ मधुके वियोगमें प्रजाको दुखी होनेके बजाय सुखी और आनन्दित देखकर क्रोधसे उसने सारे नगरमें बीमारी फैला दी। उस प्राणनाशक रोगसे प्रजाका विनाश होने लगा। शत्रुघ्न यह देख व्याकुल हो सेना लेकर अयोध्या गया। किन्तु मथुराकी चिन्तासे न वह सोता था न खाना खाता था।

श्रेणिकने भगवानसे पूछा, प्रभो! शत्रुघ्नने अनेक देश छोड़कर मथुराको ही क्यों माँगा? गौतम गणधरने कहा, श्रेणिक! मैं तुम्हें शत्रुघ्नके भवांतर सुनाता हूँ। एकबार एक आदमी पोदनापुरसे एक हाथीके बच्चेपर बहुत-सा बोझा लादकर मथुरा आया। बच्चा बोझके भारसे मर गया और मथुरामें ही नीचगोत्री मनुष्य हुआ। पाँच बार वह मरकर वहीं मथुरामें दरिद्र नीच मनुष्य होता रहा। छठे भवमें किसी प्रकार पुण्योदयसे मथुरामें ही कुलधर नामका हीनाचारी ब्राह्मण हुआ। उस समय मथुराका राजा चन्द्रमुख था। वह किसी कामसे बाहर गया हुआ था कि उसकी रानी ललिताने कुलधरको देख कामबाणसे पीड़ित होकर उसे महलोंमें बुला लिया। ये दोनों एकही आसनपर बैठे हुए थे कि अकस्मात् राजा आ पहुँचा। रानी मायाचारसे चिल्लाने लगी—देखो, देखो! यह कोई धूर्त मेरी खाटपर चढ़ आया। राजाकी आज्ञा पाते ही पहरेदारोंने उसकी मुश्कें बाँध लीं और उसे वनमें बध करने ले चले। वहाँ एक मुनिराजने इसे देखा। उन्होंने कहा—अगर तुम दीक्षा ले लो तो हम तुझे राजासे कहकर छुड़वा दें। इसने दीक्षा लेना स्वीकार कर लिया। मुनिकी आज्ञासे पहरेदारोंने उसे छोड़ दिया। कुलंधरने मुनि बनकर घोर तपश्चरण किया और मरकर पहले स्वर्गके ऋजु विमानमें देव हुआ। कुलंधरका जीव जब स्वर्गसे च्युत होनेको हुआ उस समय मथुरामें राजा चन्द्रभद्र राज्य करता था। उसकी धरा और कनकप्रभा नामकी दो पत्नियाँ थीं। धराके सूर्यदेव, समुद्रदेव और यमुनादेव तीन भाई थे तथा शक्रमुख, चन्द्रमुख, सूर्यमुख, श्रीमुख, प्रमुख, प्रभामुख, स्वर्णमुख और सुमुख ये आठ पुत्र थे। यह कुलंधरका जीव ऋजु विमानसे चयकर दूसरी रानी कनकप्रभाके उदरसे अचल नामका

पुत्र हुआ। उसी समय कोई अंक नामका मनुष्य धर्मका अनुमोदनाकर आयुके अन्तमें प्राण तज श्रावस्ती नगरीमें कंप नामक किसी बहँगी ढोनेवालेकी अंगिका पत्नीसे अप नामका पुत्र हुआ। कंपने उसे अविनयी देख घरसे निकाल दिया। वह पृथ्वीपर इधर-उधर घूमने लगा।

उधर अचलपर माता-पिताका अत्यन्त लाड़-चाव देखकर ईर्षासे धराके तीनों भाई और आठो पुत्रोंने उसे एकान्तमें मारना चाहा। माताने उनका अभिप्राय जानकर पुत्र अचलको घरसे बाहर भगा दिया। बाहर जाते हुए तिलक बनमें अचलके पैरमें जोरसे कांटा लग गया। पसीनेमें लथपथ होकर दर्दसे खड़ा-खड़ा कराहने लगा। सामनेसे लकड़ीका गट्ठर सिरपर रक्खे आते हुए अपने इसे देखा। तुरन्त लकड़ीका गट्ठर नीचे पटककर अपनी छुरीसे इसका काँटा निकाला और सामने रख दिया। अचलने कहा, तू मेरा अचल नाम ध्यानमें रखना और कभी मेरा राजा होना सुने तो निःसंकोच मेरे पास चले आना। यह कहकर अपको तो विदा किया और आप स्वयं दुखी होकर कोशाम्बीके निकट पहुंचा। शोरगुल सुनकर नगरमें पहुंचा और विषसे मूर्छित वहाँके राजा इन्द्रदत्तको निर्विष किया। और वहीं किन्हीं विशिखाचार्यको भी अपनी धनुर्विद्यासे परास्त किया। राजाने इसका बड़ा आदर किया और अपनी पुत्री इन्द्रदत्ताका इससे विवाह कर दिया। अनुक्रमसे पुण्यके प्रभावसे अचल राजा बन गया। अंगादि देशोंको जीतकर वह मथुरा गया और सेना-सहित बाहर उद्यानमें ठहरा। चन्द्रभद्रके सामन्त इसे चन्द्रभद्रका पुत्र अचल जानकर भेंटमें प्रचुर द्रव्य ले इससे आ मिले। चन्द्रभद्र अकेला रह गया अतः बड़े दुःखसे उसने अपने सालोंको संधि करनेको भेजा, किन्तु वे उसे देखते ही पहचान गए। उन्होंने धराके आठो पुत्रों सहित अचलकी सेवा स्वीकार की। माता-पिताने अचलके समागमका बड़ा उत्सव मनाया और उसे राज्यका अधिपति घोषित किया। एकबार अचल नटोंका तमाशा देख रहा था कि अप इसके राजा होनेकी खबर सुनकर इससे मिलने आया, लेकिन ड्योढ़ीवान इसे धक्का देने लगे। अचलने अपको पहचानकर भीतर बुला लिया और उसे उसकी जन्मभूमि श्रावस्तीका राज्य दिया तथा अपकी जगह उसका नाम अपरंग रक्खा। एक दिन वे दोनों उद्यानमें क्रीड़ा करने गए थे कि वहाँ यशसमुद्र आचार्यको देखकर दोनों दीक्षित हो गए और परम संयमकी आराधनाकर समाधि मरणपूर्वक कमलोत्तर विमान (सहस्रार स्वर्ग) में इन्द्र हुए। वहाँसे च्युत होकर अचलका जीव सुप्रजाका प्यारा पुत्र शत्रुघ्न हुआ और अपरंगका जीव प्रधान सेनापति कृतान्तवक्र हुआ। शत्रुघ्नके मथुरामें अनेक जन्म हुए थे अतः उसने मथुराकी याचना की थी।

राजन्! अब तुम्हें प्रकृत कथा सुनाता हूं—नागपुरके राजा श्री नन्दन और रानी श्रीधराके सुरमन्यु, श्रीमन्यु, श्रीनिलय, सर्वसुन्दर, जय, विनय लालस और जयमित्र ये सात पुत्र हुए। सातों ही पुत्र बड़े सुन्दर गुणवान और कलाविज्ञानमें पारंगत थे। एक बार प्रीतिंकर मुनिके पास धर्मोपदेश सुनकर पिता पुत्र सब मुनि बन गए। श्री नन्दन तो केवल ज्ञान उपार्जित कर मोक्षको प्राप्त हुए और ये सातों मुनिराज ऋद्धि सम्पन्न होकर पृथ्वीपर विहार करने लगे। विहार करते हुए वे क्रमशः मथुरा नगर आये। वहाँकी प्रजा बीमारीके कारण भाग चुकी थी। मथुरामें उन्होंने एक बड़के पेड़के नीचे ठहरकर चौमासा किया। चारण ऋद्धिके प्रभावसे चार अंगुल जमीनसे ऊपर चलकर वे पोदनापुर आदि नगरोंमें आहारकर शामको पुनः अपने स्थान-पर आ जाते। उनके तपके प्रभावसे मथुरामें फैली हुई बीमारी दूर हो गई। धीरे-धीरे लोग पुनः अपने घरोंको वापिस लौट आये। मेघोंकी वर्षा हुई सब जगह पृथ्वी हरी-भरी होकर धन-धान्यसे परिपूर्ण हो गई।

एक बार षष्ठोपवास करनेके बाद सातों चारण ऋद्धिधारी मुनि अयोध्यामें आहारके लिये गये। उन्होंने नगरमें प्रवेश किया। अर्हद्दत्त सेठ उन्हें देखकर सोचने लगा, यहाँ गुफा

जिन मन्दिर या वृक्षोंके नीचे ठहरे हुए मुनियोंको तो मैं जानता हूँ, उनमेंसे तो ये कोई हैं नहीं, फिर चतुर्मासके दिनोंमें ये विहार कैसे कर रहे हैं? ये मुनि चर्यासे हीन हैं और शास्त्रविरुद्ध आचरण कर रहे हैं। अज्ञानी होकर वर्षामें भी घूम रहे हैं इनको दान देनेसे क्या फल निकलेगा। इस तरह अर्हद्दत्त तो मुनियोंसे उदासीन हो गया किन्तु उसकी पुत्रबधूने भक्तिभावसे उन्हें पड़गाहकर आहार किया। आहारदानके प्रभावसे अर्हद्दासके घरमें रत्नवृष्टि और पंचाश्चर्य हुए। आहारके बाद सातों मुनिराज चन्द्रप्रभ जिनालय-में भगवानका दर्शन करने आये। जमीनपर चलकर ही उन्होंने मन्दिरमें प्रवेश किया और दर्शनकर आकाशमार्गसे पुनः मथुरा चले गये। जब अर्हद्दत्तने यह सब सुना तो बड़ा व्याकुल हुआ, कहने लगा—हाय! मुझ पापीने तपोधन मुनिराजोंकी निन्दा की, इस पापसे मुझे नरकके सिवा और कौन-सा स्थान मिलेगा। मुझ समान और कौन लोकमें पापी, निन्दक होगा। मुनियों-को देखकर भी जो पापी नमस्कार नहीं करते उन्हें नरक गति ही मिलती है। इस प्रकार अपनी निन्दा करते हुये अर्हद्दत्तने प्रतिज्ञा की कि जबतक उन मुनिराजोंके पुनः दर्शन न कर लूँगा। तबतक मेरे छहों रसोंका त्याग है।

इसके पश्चात् कार्तिककी अष्टाह्निकाके दिनोंमें अर्हद्दत्त शत्रुघ्नके साथ मथुरा आया वहाँ चतुर्विध संघ सहित सातों मुनिराजोंकी पूजा की। पूजाके उपरान्त शत्रुघ्नने कहा—'स्वामिन्! आप यहीं मेरे देशमें विराजिये, जिससे फिर कभी प्रजामें बीमारी न फैले। मुनिराजने कहा—राजन् तुम यहाँ जिनमंदिर बनवाओ, उनमें जिन प्रतिमाएँ स्थापित कराओ और बड़े समारोहसे उनकी प्रतिष्ठा कराओ। इससे फिर कभी तुम्हारे देशमें उपद्रव नहीं होंगे। इस प्रकारका शत्रुघ्नको उपदेश देकर सप्तर्षिगण आकाशमार्गसे विहार कर अयोध्या पहुंचे। राम सीताने उन्हें सुन्दर प्रासुक आहार देकर महान् पुण्योपार्जन किया। आहार लेकर मुनिगण तो अन्यत्र विहार कर गए और शत्रुघ्नने सप्तर्षियोंके आदेशानुसार मथुरामें अनेक जिन मंदिर बनवाये। तबसे मथुरामें खूब आनन्द मङ्गल होने लगे और प्रजा सुखसे रहने लगी। जो भव्य प्राणी इन सप्तर्षियोंकी पूजा करते हैं वे आरोग्य, धन, धान्य, यश, विस्तृत राज्य, सुख, उच्चगोत्र, विभव, ज्ञान आदि प्राप्त करते हैं तथा क्रमसे चक्रवर्ती इन्द्र आदि पदोंको प्राप्त कर मोक्ष जाते हैं। सप्तमहर्षियोंकी पूजाके फलसे अनेक ऋद्धि सिद्धियाँ होती हैं। जिन सप्त मुनिराजोंके चरणोंकी पूजा करने वाले मनुष्य पर सर्प विषका असर नहीं होता; डाकिनी, पिशाचिनी ग्रह आदिकी उसे पीड़ा नहीं होती, उनके चरण कमलोंको हम प्रणाम करते हैं।

——:-※-:——

२९. सीता परित्याग

विजयार्द्धकी दक्षिण श्रेणीमें रत्नपुर नगरका राजा रत्नरथ विद्याधर अपनी पूर्ण चन्द्रानना रानीके साथ रहता था। उनके मनोरमा नामकी सुन्दर पुत्री थी। एकबार नारद मुनि रत्नरथके दरबारमें आए। लोगोंने उनका विनय पूर्वक आदर किया। प्रसंग पाकर नारदने रत्नरथसे कहा कि तुम अपनी पुत्री मनोरमाको लक्ष्मणके साथ विवाह दो। नारदका यह प्रस्ताव सुनकर रत्नरथके पुत्रोंने क्रोधसे कहा—यह कौन भूमिगोचरी शक्तिहीन मूर्ख लक्ष्मण है। इन्द्र समान वैभववाले विद्याधरोंको छोड़कर हम उस भूमिगोचरीको अपनी सुन्दर कन्या कैसे देदें? नारद यह सुनकर क्रोधसे आकाशमाग द्वारा शीघ्र अयोध्या आये और लक्ष्मणसे सारा वृत्तान्त कहा। राम लक्ष्मण क्रुद्ध हो विभीषण हनूमान सुग्रीव आदि विद्याधरोंके साथ चतुरंग सेना

लेकर विमान द्वारा रत्नपुर पहुँचे। शत्रुका आक्रमण सुनकर रत्नरथ भी पुत्रों सहित युद्ध करने निकला। दोनों सेनाओंमें घोर संग्राम हुआ। नारदकी प्रेरणासे उभय पक्षके असंख्य योद्धा मारे गए। आखिर लक्ष्मणने रत्नरथको नागपाशसे बाँध लिया। तब मनोरमा सखियों सहित लक्ष्मणके पास आई और अपने पिताको बन्धन मुक्त कराया। बड़े धूम धामसे लक्ष्मण और मनोरमाका विवाह हुआ। विद्याधरोंने विवाहकी खुशीमें वर बधूका अनेक प्रकारसे सन्मान किया। लक्ष्मणने वहीं विजयार्द्धकी दोनों श्रेणियोंको विजय किया और उसके बाद दोनों म्लेच्छखंडोंको जीता, मागध आदि देवोंको वश किया। इस तरह तीन खण्डोंको अपने आधीनकर दोनों भाई अयोध्या लौट आए और विद्याधरोंसे सेवित होकर बड़े आनन्दसे तीन खण्डका राज्य करने लगे।

गौतमगणधर बोले, श्रेणिक! अब तुम्हें लव कुशकी कथा सुनाता हूँ। लक्ष्मणके १७००० हजार रानियाँ थी उनमें विशल्या, रूपिणी, बनमाला, कल्याणमाला, रतिमाला, जितपद्मा, भगवती और मनोरमा, ये आठ परम सुन्दरी पटरानियाँ थी तथा ढाईसौ २५० पुत्र थे। विशल्याका पुत्र श्रीधर अयोध्याका युवराज था। रूपवतीका पुत्र पृथ्वीधर पृथ्वीपुरका राजा था। कल्याणमालाका पुत्र मंगल मंगलपुरका राज्य करता था। पद्मावतीका सुन्दर पुत्र विमलपुरका अधिपति था। बनमालाका पुत्र अर्जुन अर्जुनपुरके राजसिंहासनका मालिक था। रतिमालाका पुत्र श्रीकेश केशवपुरका शासक था। भगवतीका पुत्र सत्यकीर्ति, कीर्तिपुरका मालिक था और मनोरमाका पुत्र सुपार्श्व शुभपुरका राजा था। इस प्रकार नारायणके आठों प्रधान पुत्र अपना २ अलग राज्य करते थे। रामके भी आठ हजार रानियाँ थी उनमें सीता, पटरानी थी। एकबार सीता अपने महलमें सुखसे सो रही थी कि उसने रात्रिके पिछले भागमें दो स्वप्न देखे। प्रभात कालीन वादित्रोंके नादसे जब सीता उठी तो दैनिक कार्योंसे निवृत्त होकर सखियोंके साथ वह रामके पास गई। रामने बड़े आदर और प्रेमसे सीताको अपने सिंहासनपर बैठाया। सीताने अपने स्वप्नोंका फल पूछते हुए कहा, नाथ! मैंने आज पिछले पहर दो स्वप्न देखे हैं। पहले तो आकाशमें दो पूर्णचन्द्र देखे उसके बाद दो सिंह अपने मुँहमें प्रवेश करते हुए देखे, इन दोनों स्वप्नोंका फल आप कहें। रामने कहा—देवि! निःसन्देह तुम्हारे सिंह समान पराक्रमी दो श्रेष्ठपुत्र होंगे और दोनों ही भोगी, त्यागी और मोक्षमार्गके प्रवर्तक होंगे तथा अन्तमें कर्मशत्रुओंको नष्टकर मोक्ष जाएँगे। सीता स्वप्नोंका फल सुनकर प्रसन्न हो अपने महलोंमें चली गई। स्वप्न प्रदर्शनके दिन पुष्पोत्तर विमानसे चयकर दो देव सीताके गर्भमें आए। गर्भ बढ़नेपर सीता कृश हो गई, मुँह पीला पड़ गया, स्तनोंका अग्रभाग काला पड़ गया। सीताकी ऐसी हालत देखकर रामने पूछा, देवि! इस समय तुम्हें जो दोहला हो कहो मैं उसे पूरा करूँगा। सीताने कहा—नाथ! मैं सब जगह जाकर भगवानकी प्रतिमाओंका पूजन करना चाहती हूँ। रामने तुरन्त नौकरोंको बुलवाया और महेन्द्र उद्यानमें मन्दिर बनाने और उन्हें सजानेकी आज्ञा दी। आज्ञानुसार जगह-जगह जिन मन्दिरकी रचनाकर उन्हें तोरण आदिसे सजाया गया। राम सीता दोनोंने उद्यानमें जाकर भगवानकी जगह-जगह पूजा की, याचकोंको दान दिया। बादमें बसन्त क्रीड़ाएँ कर प्रासाद मण्डपमें बैठ गए। पूजा करते समय सीताकी दाहिनी आँख फड़की थी। उसे यादकर सीता सोचने लगी, न जाने क्या अशुभ होनेवाला है। कहीं पतिका वियोग या गर्भपात न हो, अथवा कुटुम्बमें किसीकी मृत्यु न हो। यह सोचकर सीताने विघ्नोंका नाश करनेके लिए दानादि करनेकी सोची। भण्डारीको बुलाकर कहा कि याचकोंको इच्छानुसार दान दो, कहीं हिंसा मत होने दो, शिखर-सहित जिन मन्दिरोंका निर्माण कराओ, जिन प्रतिमाओंके दुग्ध अभिषेकके लिए मन्दिरोंको गायें दो। इस तरह भण्डारीको आज्ञा देकर सीता सखियोंके साथ राजमहलोंको

लौट आई। रामचन्द्रजी वहीं महेन्द्र उद्यानमें प्रासाद मण्डपके अन्दर अनेक लोगोंके साथ बैठे रहे। थोड़ी देर बाद द्वारपालने आकर निवेदन किया, महाराज! बहुत-सी प्रजा आपके दर्शनोंके लिए दरवाजेपर इकट्ठी है। रामने सबको अन्दर ले आनेकी आज्ञा दी। प्रजाजन आकर रामको नमस्कारकर यथायोग्य स्थानपर बैठ गए। रामने कहा, कहिये आप लोग कैसे आए ? मेरे राज्यमें आपको सब कुछ आराम तो है ? प्रजाजन यह सुनकर कुछ कह न सके बल्कि चुपचाप रह गए। रामने फिर कहा, आप लोग भय मत कीजिए जो कुछ मनमें हो निःसंकोच कहिए। राजसिंहासनसे अभय पाकर एक लोकचतुर विजय नामके प्रजाजनने हाथ जोड़कर कहा—प्रभो! निवेदन यह है कि देशमें आजकल बड़ा अनाचार फैल रहा है। एककी स्त्री दूसरा भगा ले जाता है और वह दो तीन महीने उसके घर रहकर पुनः आ जाती है। यदि कोई पूछता है कि उस व्यभिचारिणी स्त्रीको तुमने क्यों रख लिया तो जवाब मिलता है कि रामचन्द्रजी भी तो सीताको रावणके घर छः महीने रहनेके बाद ले आए हैं। जब यह बात आपतक पहुँचानेको कहा जाता है तो लोग कहते हैं कि रावणने सीताको उसकी सुन्दरता देखकर ही हरा था। यह कैसे हो सकता है कि सीता रावणसे अछूती रही हो। जब छः महीने रावणके सम्पर्कमें रहनेवाली सीताको राम जैसे धर्मधुरन्धर मर्यादा पुरुषोत्तम राजा भी पुनः अंगीकार कर सकते हैं तब वे किस मुँहसे हमें यह कह सकते हैं कि हम अपनी अपहृत स्त्रियोंको नहीं रक्खें। इस तरह दुष्ट लोग आपका उदाहरण देकर दिनदहाड़े अनाचार कर रहे हैं। संसारके सभी मतोंमें दो ही दोष व्यभिचार और चोरी प्रमुख माने गए हैं। रघुवंश कभी भी इन दोषोंसे कलंकित नहीं हुआ। किन्तु आज वह प्रसंग सीताके कारण उपस्थित है। इसलिए जिस प्रकारसे शान्ति हो वह उपाय आपको करना चाहिए'।

प्रजाजनके ये बचन सुनकर रामचन्द्रजी क्षणभरके लिए उदासीन हो गए। बादमें कुछ सोचकर लोगोंसे कहा, अच्छा आप लोग जाइए मैं इसका कुछ उचित उपाय करूँगा। प्रजाजन लौट आए। रामचन्द्रजी सोचने लगे, यह बड़ी विपत्ति सिरपर आई। जिसके विरह-दुःखसे मैं पहले बहुत दिनतक व्याकुल रहा, जिसके लिए रावणको मारने मैं समुद्रपार सेना लेकर गया उसके बिना तो मेरा जीना ही व्यर्थ हो जायगा। हाय सुन्दर सुशील और गुणवती सीता मुझसे कैसे छोड़ी जायगी, उसके बिना तो मैं एक घड़ी भी स्थिर नहीं रह सकता फिर जीवनभर उसका दुःख कैसे सहूँगा। अगर उसे न छोड़ा तो सदाके लिए मेरे वंशमें यह कलंक लग जायगा। इस प्रकार सोचकर लक्ष्मणको बुलाकर रामने कहाः—वत्स! सीताके बारेमें बड़ा लोकापवाद फैल रहा है अतः मैं उसे जंगलमें छोड़ देना चाहता हूँ। लक्ष्मण बोला—कौन दुष्ट सीताको लेकर अपवाद फैला रहा है मैं उसका अभी तलवारसे सिर उतारता हूँ। सीताके समान मुझे तो आज भी कोई पतिव्रता स्त्री नहीं दीखती। उसमें जो दोष बतलाता है मैं उसकी अभी जीभ काटता हूँ। सीता बिना तो आपका जीना ही मुश्किल हो जायगा। समझमें नहीं आता कि दुष्ट लोगोंके कहनेसे आप सीताको कैसे छोड़ रहे हैं। रामने कहा—लक्ष्मण! ऐसा मत करो। सीताको रखनेसे हमारे वंशमें हमेशाको दाग लग जायगा। दूसरे, स्त्रियाँ स्वभावतः चपल होती हैं उनके चरित्रको कौन जाने। सीताने वहाँ क्या किया, क्या नहीं किया इसका विश्वास कैसे किया जाय। रावणके रूपको देखकर सीताका भी उधर आकर्षण हो गया हो तो कौन कह सकता है। इसलिए लोग यदि अपवाद फैलाते हैं तो बेजा नहीं करते। अतः मैं सीताका अवश्य ही परित्याग करूँगा। तुम्हें अगर मुझसे स्नेह है तो इस विषयमें अब मौन ही रहना।

इतना कहकर रामने कृतान्तवक्र सेनापतिको बुलाया और कहा कि तुम तीर्थयात्राके बहाने सीताको रथमें बैठाकर किसी बियावान जंगलमें ले जाओ और वहाँ छोड़कर शीघ्र चले-आओ। 'जो आज्ञा' कहकर सेनापति रथ लेकर सीताके महलपर गया और कहा, माता उठो,

रामचन्द्रजीकी आज्ञानुसार तुम्हें सम्मेद शिखरकी यात्राको ले चलता हूँ। सीता बड़ी प्रसन्नतासे उठी, तय्यार हो सबसे मिल-मिलाकर यात्राको चली। विशल्या आदि रानियोंने आकर सीताके पैर छूए और विनयसे सामने खड़ी हो गईं। सीताने सासुओंके पैर छूए और विदा होते समय अपनी देवरानियोंसे कहा—सम्मेद शिखरकी यात्राकर मैं शीघ्र ही आकर सबसे मिलूँगी। वैसे तो इस हालतमें मैं न जाती परन्तु सौभाग्यसे मुझे दोहला ही ऐसा हुआ है कि मैं तीर्थोंकी बन्दना करूँ दानपूजादि धर्म करूँ। मार्गमें न जाने मुझे क्या-क्या कष्ट होंगे पर इसकी चिन्ता नहीं, सकुशल आयी तो फिर सबके दर्शन करूँगी। आप सब मेरे अपराधोंको क्षमा करना। इस तरह कहकर सीता रथमें बैठकर रामके पास गई और उनसे आज्ञा लेकर यात्राको विदा हुई।

चलते समय अपशकुन हुए। नदी पर्वतादिकोंको लाँघता हुआ रथ वायुवेगसे आगे बढ़ा और अल्प समयमें दो-तीन सौ योजन चला गया। गंगानदीको पारकर वह क्रमसे सिंहाटवीमें पहुंचा। सिंह व्याघ्रादि क्रूर जानवरोंसे भरे हुए उस बनमें सेनापतिने रथ रोक दिया। सेनापति कुछ कहना ही चाहता था कि उसकी आँखोंसे अश्रुधारा बह निकली। सीताने पूछा—भाई! हमलोग तीर्थयात्राको निकले हैं ऐसे हर्षपूर्ण प्रसंगमें तुम्हारे रोनेका अभिप्राय मैं नहीं समझी। सेनापतिने कहा, माता! बड़े पापके फलसे कुत्तेके समान यह नौकरका जीवन मिलता है। नौकर पराधीनतासे पाप कमाकर नरक जाता है वहाँसे पुनः चाण्डालादि योनियोंमें जन्म लेता है। सीताने पूछा—तुम इस प्रकार यह क्यों कह रहे हो? सेनापतिने कहा—माता! महाराज रामचन्द्रकी आज्ञा है कि मैं तुम्हें यहीं जंगलमें छोड़ दूँ। उनका कहना है कि सीता यद्यपि निर्दोष है फिर भी लोकापवादके भयसे मैं उसे रखनेको तय्यार नहीं हूँ। मैं सोच रहा हूँ कि तुम्हें एकाकी इस भयावने बनमें छोड़कर मैं कैसे चला जाऊँ? और अगर नहीं छोड़ता हूँ तो महाराज रामचन्द्रजी मुझसे नाराज होंगे। यही मेरे रोनेका कारण है। सेनापतिके बचन सुनते ही सीताको मूर्च्छा आ गई। शीतोपचारसे जब सचेत हुई तो रोती हुई बोली, हे वीर! मुझे एक बार तो अयोध्या ले चलो। रामचन्द्रजीके चरणोंके दर्शनकर और उनसे अपने मनकी बात कह मैं पुनः बनमें चली आऊँगी। सेनापतिने कहा, देवि! यहाँसे अयोध्या बहुत दूर है और रामचन्द्रजी इस समय क्रोध और कठोरताकी मूर्ति हो रहे हैं अतः उनके दर्शन करना भी बेकार है। सीताने कहा—भाई! तुमने मुझसे वहीं क्यों नहीं कहा कि मैं तुम्हें जंगलमें छोड़ने जा रहा हूँ। ऐसा जानती तो मैं उनके चरणोंको बार-बार छूकर वहाँसे विदा होती जिससे मरनेके बाद भी मुझे सद्गति मिलती। अब सिंह-व्याघ्र मुझे खा लेंगे और न जाने मैं मरकर कहाँ जाऊँगी। तुम लौटकर अयोध्या जा रहे हो, मेरी तरफसे रामचन्द्रजीसे निवेदन करना कि सीताने कहा है कि आपने सदा न्यायसे प्रजाका पालन किया है फिर मुझ गरीबनीको ही लोगोंके कहनेमें आकर क्यों निकाल दिया? अच्छा, मुझे निकाल दिया तो ठीक है परन्तु लोगोंके कहनेमें आकर जैनधर्म मत छोड़ देना। उनसे यह भी कहना कि अगर विनोद आदिमें मुझसे आपका कोई कभी अपराध बन गया हो तो आप उसे क्षमा करें। आप महाज्ञानवान हैं मैं अल्पबुद्धि हूँ। अतः आपने जो कुछ किया ठीक ही किया। अबतक तो लौटकर आपके दर्शनोंकी मुझे आशा थी किन्तु अब भाग्यसे वह भी जाती रही। मैं यहाँ शान्तिसे मृत्युका आलिंगन करूँगी, मेरी अन्तिम अभिलाषा है कि आपका जीवन अन्य रानियोंके साथ सदा सुखी और शान्तिमय हो।

इस प्रकार कहकर सीता पुनः मूर्च्छित हो रथसे गिर गई। सेनापति सीताको उसी प्रकार छोड़कर शोकसे रोता हुआ रथ लेकर अयोध्या लौटा। इधर सीता ठण्डी हवासे चेत पाकर विलाप करने लगी—आर्यपुरुष, आप सबकी रक्षा करते थे परन्तु मेरे लिए इस प्रकार कठोर कैसे बन गए? देवर लक्ष्मण! भाई भामण्डल! तुम मुझे कैसे भूल गए? पिता इस निर्जन बनमें आकर मेरी रक्षा करो। माता! मुझे आकर ढारस बँधा। भरत! शत्रुघ्न! पितातुल्य श्वसुर!

क्या तुम सबने भी मुझे छोड़ दिया ? साथी विद्याधर जो मेरी रक्षाके लिए लंका पहुंचे थे मेरी अब रक्षा क्यों नहीं करते। इस प्रकार विलाप करते हुए सीता अनेक बार मूर्छित हुई।

सीताका क्रन्दन सुनकर जंगलके पशु पक्षी भी स्तब्ध रह गए। सीताने मनमें कहा इसमें पति, पिता आदिका क्या दोष है। मैंने पहले जो कर्म किए थे वे मुझे भोगने ही पड़ेंगे। शायद मैंने अज्ञानतासे गुरुनिन्दा की हो या सतियोंको दोष लगाया हो या पति-पत्नीका वियोग किया हो या किसीका द्रव्य चुराया हो या किसीका बध किया हो या कन्दमूलका भक्षण किया हो या बिना छना जल पीया हो या रातमें खाया हो उसीका यह फल मुझे मिला है। इस तरह सीता कभी विलाप कर उठती, कभी मूर्छित होती कभी अपनी निन्दा करती। हिरणीकी तरह इधर-उधर फिरती हुई पुनः एक शिलापर बैठ इस प्रकार रुदन करने लगी, मेरे लिए जो रामचन्द्रजी समुद्र पारकर लंका पहुंचे थे हाय वे आज मेरे प्राणोंके ग्राहक कैसे बन गए? अथवा उनका क्या दोष है? लोकापवादके भयसे सज्जन पुरुष और कर भी क्या सकते हैं? सीता इस तरह विलाप कर रही थी कि पुण्डरीकपुरका हरिवंशी राजा बज्रजंघ सेना-सहित हाथी पकड़ने उधर बनमें आ निकला। हाथी पकड़कर लौटते हुए उसने सीताका विलाप सुना। वह सेना-सहित सीताके पास चला। सेना देखकर सीता डरसे काँपती हुई और भी अधिक विलाप करने लगी। बनदेवीकी तरह सीताको बैठी हुई देखकर सेना कौतुकसे और भी समीप आई। सीता डरकर उन्हें अपने गहने देने लगी। सेनाके लोगोंने कहा माता! तू डरती क्यों है। यह पुण्डरीकपुरका राजा धर्मात्मा वज्रजंघ आया है। सेना और सीतामें इस प्रकार बातें होही रही थीं कि वज्रजंघ भी हाथीपर सवार होकर वहाँ आ पहुंचा। सीताको देखकर हाथीसे उतर वह तुरन्त सीताके निकट पहुंचा और पास ही बैठकर बड़ी नम्रतासे पूछने लगा, पुत्री! तू इस बनमें अकेली क्यों है? तेरे पिता, पति और श्वसुर कौन है? सीताने रोते हुए कहा–भाई! मैं दशरथकी पुत्रवधू और जनककी पुत्री हूँ, रामचन्द्र मेरे पतिका नाम है और भामण्डल मेरा भाई है। अपने भाई भरतको राज्य सौंपकर मेरे पति देशान्तर गए थे उनके साथ मैं भी गई थी। दण्डक बनमें पहुंचकर पापी रावणने मुझे हर लिया। जब युद्ध हुआ तो रावण मेरे पति द्वारा मारा गया। हमलोग बड़े स्नेहसे अयोध्या आए। वहाँ समयानुसार मैं गर्भवती हुई मुझे जो-जो दोहला हुआ वह सब मेरे पति द्वारा पूरा किया गया। हम लोगोंने पुष्पक विमानमें बैठकर पञ्चमेरुकी बन्दना की, साथ ही वन पर्वत आदिपर जहाँ २ जिन मन्दिर थे वहाँ २ भी जाकर पूजा की कैलाशपर भगवान ऋषभकी बन्दना की, चम्पापुरीमें वासुपूज्य स्वामीके दर्शन किए, शेष तीर्थंकरोंकी बन्दना सम्मेद शिखरपर जाकर की, वहाँसे आकर महेन्द्र उद्यानमें विभिन्न स्थानोंपर प्रतिमाएँ विराजमानकर उनकी पूजा की। इसके बाद जनताने आकर मेरे अपवादके विषयमें रामचन्द्रजीसे चर्चा की। उन्होंने उस लोकापवादके कारण मेरा परित्याग कर दिया'। इस तरह अपना पिछला सारा वृतान्त कहकर सीता रोने लगी। सीताका क्रन्दन सुनकर वज्रजंघ और उसके सैनिकोंके भी आँसू निकल आए। वज्रजंघने कहा, तू मेरी बहिन और मैं तेरा भाई हूँ। चलो, हमलोग घर चलें। वहाँ रहनेसे फिर कभी रामचन्द्रजीके दर्शन होंगे। इस तरह सीताको समझा-बुझाकर वह पालकीमें बैठाकर अपने घर ले गया। मार्गमें सीताका परिचय पाकर जगह-जगह लोगोंने उसका आदर सन्मान किया। नगर प्रवेश करते ही प्रजाजनने बड़े समारोहसे सीताकी अगवानी की। राजद्वारपर आकर वज्रजंघकी रानियाँ बड़े आदर और सन्मानके साथ सीताको अन्दर ले गई। वज्रजंघने उन्हें आदेश कर दिया कि सीता मेरी बहिन है अतः सब काम उसकी आज्ञानुसार होना चाहिए। सब रानियोंने राजाज्ञा शिरोधार्य की। सीता वहाँ सब प्रकारकी सुविधाओंके साथ रहने लगी तो भी रामचन्द्रजीके बिना उसे सब सूना ही प्रतीत हुआ।

उधर कृतान्तवक्र रथ लेकर अयोध्या पहुंचा और रामचन्द्रजीको नमस्कारकर उदास हो सामने खड़ा हो गया। रामचन्द्रजीने पूछा सीताने कुछ कहा तो नहीं है? सेनापतिने जो कुछ सीताने कहा था, सब कह सुनाया। रामचन्द्रजी उसे सुनकर बेहोश हो गए। लक्ष्मण और शत्रुघ्न ने सैकड़ों उपचार कर उन्हें सचेत किया। कुटुम्बके सबलोग इकट्ठे होगए। राम सीताके लिए विलाप करने लगे। हाय सीता न जाने बनमें किस प्रकार अकेली होगी। जिसके लिए मैं समुद्र पारकर लंका गया, हाय उसे मुझ मूर्खने किस प्रकार छोड़ दिया। उसके बिना अब मैं किस प्रकार जीता रहूँगा। कौन जाने उसे व्याघ्र आदि खा गए हों, मैं बड़ा पापी हूँ जो गर्भभारसे पीड़ित उस बेचारीको मैंने इतना दुःख दिया। इस तरह विलाप करते हुए फिर मूर्छित होगए। लक्ष्मणने रामकी यह हालत देख तुरन्त सीताकी खोजमें सैनिकोंको सिंहाटवी भेजा। सैनिकोंने सारी अटवी खोज मारी। जब सीताका पता न लगा तो लौट आए। रामलक्ष्मण आदि सबने यही समझा सीताको व्याघ्रादिने खा लिया अतः वह अब इस लोकमें नहीं है। सबलोग पुनः दुखी हो रोने लगे। इतनेमें किसी निमित्त ज्ञानीने रामसे कहा कि आप चिन्ता न करिए शीघ्र ही आपका सीतासे मिलाप होगा। लक्ष्मणने भी रामको समझा बुझाकर बहुत कुछ शान्त किया। रामके आठ हजार रानियाँ थीं तो भी सीताके बिना उन्हें शान्ति नहीं मिलती थी।

---

३०. लव-कुशका जन्म और रामसे मिलाप

नौ मास बीतनेपर, श्रावण शुक्ला पूर्णिमा तिथिको मंगलवारके दिन श्रावण नक्षत्रमें सीताने दो पुत्रोंको जन्म दिया। दोनों पुत्र सूर्य और चन्द्रमाकी तरह कान्तिमान् थे। उनका मुख देखकर सीताके साथ ही साथ सब जनोंको परम सन्तोष हुआ। वज्रजंघने खूब उत्सव मनाया, जिनेन्द्र देवकी पूजा की और याचकोंको यथेच्छ दान दिया। बड़े पुत्रका नाम अनंग लवण और दूसरेका नाम मदनांकुश रखा गया। धीरे-धीरे दोनों बालक बढ़ने लगे। उनका मुख देखकर सीता अपना शोक भूल गई।

एक दिन दोनों बालक खेल रहे थे। उन्हें देखकर सीता इस विचारमें पड़ गई कि इनका गुरु किस बुद्धिमानको बनाया जाये। इतनेमें ही सिद्धार्थ नामक ब्रह्मचारी भिक्षाके लिये सीताके घर पधारे। वह ब्रह्मचारी जिन भगवानके भक्त थे, महाज्ञानी थे, शास्त्ररूपी समुद्रके पारगामी थे क्षमा और शीलसे सम्पन्न थे कला और विज्ञानसे भूषित थे। शरीरपर केवल एक वस्त्र रखते थे, केशोंको लोंच करते थे, अपने करपात्रमें ही भोजन करते थे बड़े दयालु थे और सदा ज्ञान ध्यानमें लीन रहते थे।

सीताने उन्हें आहारदान दिया। भोजन ग्रहण करके वह क्षुल्लक एक आसनपर बैठ गये। सीता भी उन्हें नमस्कार करके पासमें बैठ गई। इतनेमें दोनों कुमार भी आ गये। उन्हें देखकर ब्रह्मचारी क्षुल्लकने सीतासे पूछा—ये दोनों सुन्दर कुमार किसके हैं? क्षुल्लकके प्रश्नके उत्तरमें सीताने आँखोंमें आँसु भर कर अपना सब वृत्तान्त उनसे कह सुनाया। सुनकर क्षुल्लक बोले— 'पुत्री! दुःख मत करो। तुम्हारे दोनों पुत्र राजा होकर मुक्ति प्राप्त करेंगे। मैं इन्हें सर्व विद्याओं-में निपुण कर दूँगा।' इतना कहकर वे ब्रह्मचारी वहीं एकान्त स्थानमें रहने लगे और दोनों बालकोंको पढ़ाने लगे। थोड़े ही समयमें दोनों बालक शस्त्रविद्या और शास्त्रविद्यामें निपुण हो गये।

अब वे अपने रूपसे कामदेवको, विद्यासे सरस्वतीको, त्यागसे कल्पवृक्षको और स्वरसे कोयलको भी पराजित करते थे और सोलहों आभरण धारण करके हाथीपर सवार होकर

नगरमें क्रीड़ा करते घूमते थे। बड़े पुत्र अनंग लवणको युवा देखकर राजा वज्रजंघको उसके विवाहकी चिन्ता हुई और उसने अपनी कन्याके साथ उसका विवाह कर दिया। अपने पुत्रका विवाह देखकर देवी सीताको अत्यन्त सन्तोष हुआ।

अब राजा वज्रजंघको दूसरे पुत्र मदनांकुशके विवाहकी चिन्ता हुई और वह उसके लिये योग्य कन्या खोजने लगा। पृथ्वीपुरके राजा पृथुके रानी अमृतमतीसे कनकावली नामकी एक कन्या थी। राजा वज्रजंघने कुमार मदनांकुशके लिये उस कन्याकी माँग करनेके उद्देश्यसे जयपद्म नामके अपने मन्त्रीको राजा पृथुके पास भेजा। मन्त्रीने जाकर राजा पृथुसे कहा-तुम अपनी अमृतमती रानीसे उत्पन्न कनकावली पुत्रीका विवाह हमारे मदनांकुश पुत्रके साथ कर दो। पृथुने कहा जिसकी जातिका कोई पता नहीं ऐसे चलते-फिरते दरिद्रको मैं अपनी कन्या कैसे दे दूँ ? वज्रजंघ भी बड़ा मूर्ख है जो ऐसे कुलहीन पुत्रके लिए मेरी कन्या माँग रहा है। कुल, शील, धन, रूप, समानता, बल, आयु, देश और विद्या, वरके ये नौगुण हैं उनमें कुल आवश्यक हैं। तुम्हारे पुत्रमें जब वही नहीं है तब उसे मैं अपनी पुत्री नहीं दे सकता। इसलिए तुम यहाँसे शीघ्र चले जाओ अन्यथा मेरे आदमी तुम्हें मार डालेंगे। मंत्रीने लौटकर सारा वृत्तान्त वज्रजंघसे कहा। वज्रजंघ सेना लेकर पृथुका राज्य विध्वंस करने पृथ्वीपुर चला। मार्गमें वंशपुर नगरके राजा व्याघ्ररथको, जो पृथुके ही पक्षका था, पराजितकर वज्रजघने जाकर पृथ्वीपुर घेर लिया। वज्रजंघको आया देखकर राजा पृथुने पोदनापुरके राजाको बुलानेके लिए दूत भेजा। प्रगाढ़ मित्रताके कारण पोदनापुरका राजा शीघ्र रणभूमिमें पहुँचा। पहुंचते ही उसने वज्रजंघकी सेनाको तितर-बितर कर दिया। अपनी सेनाको भग्न होते देखकर वज्रजंघने सुमुख दूतको पुत्रोंको बुलानेके लिए पुण्डरीकपुर भेजा। पिताका पत्र पाकर सारे पुत्र भेरी और वादित्रोंकी ध्वनिके साथ पृथ्वीपुरसे लूटने चले। वादित्रोंकी ध्वनि सुनकर सीताके पुत्रोंने सीतासे पूछा कि ये बाजे किस लिए बज रहे हैं ? सीताने कहा तुम्हारा मामा वज्रजंघ पृथुसे युद्ध करने गया था किन्तु उसने मामाकी सेनाको तितर-बितर कर दिया है। उसकी खबर पाकर तुम्हारे ये सब ममेरे भाई वहाँ युद्ध करने जा रहे हैं। तुम्हारे मामाने तुम्हारे लिए पृथुसे उसकी लड़की माँगी थी। लड़की न देनेपर ही पृथुसे यह युद्ध हुआ है। अभीतक हमलोग हार रहे हैं आगे देखें क्या होता है'। यह सुनकर दोनों कुमार भी चलनेको तैय्यार हुए। किन्तु सीताने कहा तुम दोनों अभी बालक हो, तलवारके प्रहारकी आवाजसे ही जहाँ प्राणी प्राण छोड़ देते हैं वहाँ तुम्हारा जाना ठीक नहीं। बालकोंने माताके शब्द सुनकर कहा—माता तुम ऐसे बचन क्यों कहती हो। अग्निकी एक छोटी-सी चिनगारी ही ईंधनके ढेरको जला देती है। हमलोग उस अग्निकणके ही समान हैं और शत्रु ईंधनके ढेरके समान हैं। क्षणभरमें ही हम उस ढेरको जला देंगे। इस प्रकार कहकर दोनों भाई स्नान भोजनादि कर मातासे आज्ञा लेकर युद्धको चले। दोनों भाई हाथीपर सवार थे, सफेद छत्र उनके सिरपर लगा था। अपने भाइयोंके साथ चतुरङ्ग सेना लेकर वे भी युद्धमें मामासे जाकर मिले। वज्रजंघ उन्हें देखकर बड़ा प्रसन्न हुआ। उन्हें छातीसे लगाया और कुशलक्षेम पूछी।

दोनों कुमार राजा पृथुको पकड़ने आगे बढ़े और थोड़ी देर युद्ध करनेके बाद उन्होंने पृथुको अपने कब्जेमें कर लिया, साथ ही पोदनापुरके राजाको भी उसके रथमें ही पकड़ लिया। अपने स्वामियोंको शत्रुके कब्जेमें देखकर उनकी सेनाएँ भाग गई। अभिमानी राजा पृथु और पोदनापुरके राजा दोनों भाइयोंको प्रणामकर बोले – आप दोनों भाई बड़े ज्ञानवान और उच्च खानदानके हैं, आपको देखकर मैं बड़ा सन्तुष्ट हूँ, अज्ञानतासे मैंने जो कुछ आपका अपराध किया है उसे आप क्षमा करें। इस तरह विनयपूर्वक निवेदन करके उसने अपनी कनकमाला कन्या मदनांकुशको दी और स्वयं दास बनकर आगे खड़ा हो गया। दोनों भाइयोंने पृथु और उसके

साथीको बन्धन-मुक्त किया। बड़े समारोहसे मदनांकुश और कनकमालाका विवाह हुआ। एक महीने तक दोनों भाई राजा पृथुके यहाँ ठहरे। बादमें दोनों दिग्विजय करने निकले। उनके साथ राजा पृथु, पोदनापुरका राजा और वज्रजंघ भी चले। दोनों क्रमसे पोदनापुर पहुँचे। वहाँ पोदनापुरके राजाने इन्हें अपनी आठ पुत्रियाँ दीं। वहाँसे ये लोकाक्ष नगर गए। वहाँके राजा कुबेरकान्तको युद्धमें अपने आधीनकर उसकी तीन सौ कन्याएँ लवणांकुशने विवाही। वहाँ रहकर हजारों राजाओंको जीता। इसके बाद मालवा, अवन्ति, तिलिंग आदि दक्षिण देशोंको जीतते हुए गंगापार कर कैलाश पर्वतकी ओर पूर्व दिशामें गए। उधरके भी अनेक राजाओंको युद्धमें जीतकर उन्हें अपने आधीन किया। वहाँसे चलकर पश्चिमके राजाओंको जीता। इसके बाद विजयार्द्धके समीप सिन्धुनदीके किनारे गए। वहाँके भी अनेक राजाओंको अपने वशमें किया। इस तरह तमाम पृथ्वीको जीतकर, शत्रु-कन्याओंसे विवाह करते हुए दोनों कुमार अपने नगर लौट आए। प्रजाने वज्रजंघ और कुमारोंका नगरमें ध्वजा तोरण और फाटक आदि लगाकर बड़े समारोहसे स्वागत किया। जगह-जगह नर्तकियोंके नृत्य कराए। वज्रजंघके साथ दोनों कुमार राजद्वारपर पहुँचे। रणवासकी स्त्रियोंने आकर तीनोंकी आरती उतारी। सीता भाईसे मिली और कुमारोंने सीताके पैर छूए। सीताने दोनोंको आशीर्वाद देते हुए बड़े स्नेहसे उनका मुख चूमा। घरके सबलोग दोनों कुमारोंको देखकर बड़े प्रसन्न हुए।

एक दिन नारदमुनि अयोध्या गए। रामने उनका बड़ा आदर-सत्कार किया। अन्तःपुरमें जाकर विशल्या आदि रानियोंको देखकर नारदने रामसे पूछा—यहाँ सीता कहीं नहीं दिखाई देती? नारदके बचन सुनकर कृतान्तवक्रने कहा—'रामचन्द्रजीकी आज्ञानुसार सीताको सिंहाटवीमें छोड़ दिया गया है। यह सुनकर नारद दुखी हो 'सीताको खोजनेके लिए चल दिया। घूमता हुआ वह क्रमसे पुंडरीकपुर पहुँचा और वज्रजंघकी आज्ञा लेकर भीतर अन्तःपुरमें गया। वहाँ सीताको देखकर बड़ा प्रसन्न हुआ। सीताने नारदको देख बड़ी भक्तिसे उन्हें प्रणाम किया और बैठनेके लिए मणिमयी आसन दिया। नारदने सीतासे कुशल समाचार पूँछे। सीताने अपनी बीती हुई सारी कथा सुनाई। इतनेमें ही वहाँ दोनों कुमार आगए और नारदके पैर छूकर सामने खड़े हो गए। "राम-लक्ष्मणके समान तुम्हारे भी खूब विभूति हो" कहकर नारदने उन्हें आशीर्वाद दिया। कुमारोंने कुछ तेजीमें आकर नारदसे पूछा—'ये कौन राम-लक्ष्मण हैं जिनकी-सी विभूति बढ़नेका आशीर्वाद आप हमें दे रहे हैं'? नारदने कहा—"क्या तुमने नारायण बलभद्रका नाम नहीं सुना जिन्होंने सीताको हरनेवाले महा बलवान रावणको मारा है और जो तीन खण्डके सम्राट बनकर कोशलका राज्य कर रहे हैं! उन्हींमेंसे बलभद्रजीके तुम दोनों पुत्र हो। यह सुनकर कुमारोंने सीतासे पूछा कि नारदजी जो कुछ कह रहे हैं वह ठीक है? तब सीताने पुत्रोंसे सब आप बीती कह सुनाई और कहा कि लोगोंके कहनेसे ही तुम्हारे पिताने मुझे घरसे निकाल दिया। तबसे भाई वज्रजंघने ही मुझे अपने यहाँ बहनकी तरह रखकर मेरी रक्षाकी है और मैं तुम्हारा मुख देख सकी हूँ। माताका वृत्तान्त सुनकर दोनों पुत्र क्रुद्ध हो सेना लेकर राम-लक्ष्मणको मारनेके लिये तय्यार हुए। जब नारदने मना किया तो लवणांकुश बोला—'क्यों पिताने लोगोंके कहनेमें आकर हमारी मांको छोड़ दिया? क्या उस समय कोई अयोध्यामें न्यायकी बात कहनेवाला नहीं था कि एक स्त्रीको बिना सोचे विचारे इस तरह दूर भयानक बनमें क्यों छोड़ा जाता है? आप तो हमें यह बताइए कि यहांसे अयोध्या कितना दूर है। हम भी देखें कि हमारे पिता कितने गहरे पानीमें हैं। अगर मामाने मांको न रक्खा होता तो गर्भवती मांको तो अबतक शेर-चीते वगैरह कबके खा गए होते'। नारदने कहा 'अयोध्या यहाँसे एक सौ साठ योजन है। लवणांकुशने तुरंत अपने मामा वज्रजंघसे सेना सजानेको कहा और कहा कि हम राम लक्ष्मणपर चढ़ाई करेंगे। वज्रजंघने हाथी रथ आदि

युद्धके लिए तय्यार कराए। सीताने पुत्रोंसे कहा—'बेटा! तुम्हारे पिता और चाचा बड़े बलवान हैं। उनके साथ तुम लड़ाई मत ठानो; रावण जो तीन खण्डका अधिपति था और हजारों विद्याएँ जिसे सिद्ध थीं उस तकको उन्होंने मार डाला फिर तुम तो उन्हें जीत ही कैसे सकते हो?

लवणांकुशने कहा—'माँ! हमलोग रावणकी तरह परस्त्री लंपट नहीं हैं। हमलोग तुम्हारी साक्षिपूर्वक कहते हैं कि हम उन्हें पीठ दिखाकर नहीं आएँगे। इस तरह कहकर दोनों कुमार चतुरंग सेना लेकर युद्धके लिए चले। उनके साथ वज्रजंघके अतिरिक्त सिंधुदेश और पोदनापुरके राजा आदि पाँच हजार योद्धा और भी चले। अनेक देशोंको लाँघते हुए और अनेक राजाओंको जीतते हुए वे क्रमशः कोशल देश पहुंचे और अयोध्याके समीप डेरा डाला। परचक्रका आगमन सुनकर रामने लक्ष्मणसे कहा—'चलो सेना तय्यार करो, उन्हें मारने जाना चाहिए था परन्तु मौत स्वयं ही उन्हें ढकेलकर यहाँ ले आई है। पुंडरीकपुरका राज बेचारा वज्रजंघ है ही कितना? शृगाल भी यदि सिंह बनने लगे तो बस हो गया? लक्ष्मणने दूत भेजकर विराधित, हनुमान, विभीषण आदिको शीघ्र बुला भेजा। अनेक भूमिगोचरी राजा भी आज्ञा पाते ही चले आए। हाथी, रथ, घोड़े आदि सजाए गए। युद्धकी भेरी बजवाई गई। राम सिंह-रथपर सवार होकर सबसे पहले निकले, उसके बाद गरुड़-रथपर चक्र हाथमें लेकर लक्ष्मण चले। इन दोनोंके बाद सुग्रीव, विभीषण, हनुमान, भामण्डल, नल, नील, अंगद, विराधित आदि विद्याधर अपनी-अपनी सेनाओंके साथ अपनी-अपनी सवारियोंपर चढ़कर चले. इनके पीछे अग्निशिख, सुमेरु, बालखिल्य, शत्रुजित्, वज्रकर्ण, रौद्रभूति, हरिवाहन आदि भूमिगोचरी राजा तथा राम-लक्ष्मण और शत्रुघ्नके पुत्र भी सेना, शस्त्र और सवारियाँ लेकर चले। दोनों सेनाएँ एक दूसरेके सन्मुख हुईं।

सीता सिद्धार्थ क्षुल्लक और नारद मुनिके साथ ऊपर विमानमें बैठी हुई थीं। दोनों ओरसे युद्धकी पूर्ण तैयारी देखकर सीताने नारदसे कहा—यह तुमने क्या किया। दोनों कुमार बड़े कोमल और बालक हैं। इस भयंकर संग्राममें ये कैसे विजयी होंगे? नारायण और बलभद्र अनेक विद्याधरोंके साथ मेरे पुत्रोंको मार डालेंगे। नारदने कहा—'बेटी! डरो मत, तुम्हारे ये दोनों पुत्र मोक्षगामी और वज्रमयी शरीरके हैं। सीताको यों समझाकर नारदने भामंडलके पास जाकर दोनों कुमारोंका सारा वृत्तान्त कहा। भामंडल प्रसन्न हो हनुमानको साथ लेकर सीताके पास गया। जाते ही उसने बहिनके पैर छूए। सीताने आँखोंमें आँसू भर भाईको आशीर्वाद दिया। परस्पर कुशलक्षेम पूछी। इतनेमें ही दोनों पुत्र वहाँ आकर भामंडल और हनुमानसे मिले। वज्रजंघ यह देखकर संतुष्ट हुआ। युद्ध शुरू होनेके पहले ही भामंडल और हनुमान राम-लक्ष्मणका पक्ष छोड़कर लवणांकुशसे आ मिले। यह देखकर अन्य विद्याधर भी युद्धसे हटकर तटस्थ हो गए। बस रामकी तरफ भूमिगोचरियोंकी सेना ही रह गई। लवणके योद्धाओंने रामकी सेनाको छिन्न-भिन्न कर दिया। यह देख शत्रुघ्न युद्ध करने उठा, उसने जब कुमारोंकी सेनाओंको दबाया तो स्वयं लवण और कुश युद्ध करने उठे और शत्रुघ्नको बाणोंसे आच्छादित कर रथसे नीचे गिरा दिया। यह देखकर स्वयं राम-लक्ष्मण शत्रुपक्षका विनाश करते हुए इनके सम्मुख हुए। लवणांकुशके साथ राम और मदनांकुशके साथ लक्ष्मण युद्ध करने लगे तथा वज्रजंघ शत्रुघ्नसे भिड़ गया। बड़ा भयंकर खूंखार युद्ध हुआ। पहाड़ोंके समान मणियोंसे सुसज्जित हाथी जमीनपर गिर गए। विमानोंके समान सुन्दर रथ चकनाचूर हो गए। वायुके समान चंचल घोड़े वहीं जमीनपर लोट गए, रत्न कुण्डल पहरे हुए पयादे भी सदाको सो गए। खूनकी नदी बहने लगी। घोड़ोंके खुरोंसे चारों ओर कीचड़ हो गई, अनेक योद्धाओंके तो केवल धड़ ही लड़ रहे थे। रामने जितने बाण लवणपर चलाए वे सब उसने व्यर्थ कर दिए। तब रामने हल रत्न उठाकर मारा लेकिन लवणने इसे भी व्यर्थ कर

दिया। रामने दिव्य अस्त्र चलाया, पर लवणपर इसका भी कुछ असर नहीं हुआ। बादमें लवणने रामका रथ तोड़ दिया, तब राम दूसरे रथपर सवार हुए, लवणने वह भी रथ तोड़ा। तब राम तीसरे रथपर सवार हुए, लवणने उसे भी तोड़ा। इस तरह लवणने रामको व्याकुल कर दिया। राम सोचने लगे—देखो, दैवयोगसे मेरे सारे अस्त्र व्यर्थ चले गए; जो विद्याधर मेरे बड़े भक्त थे वे भी इस मौकेपर दगा कर गए। यहाँतक कि इन दिव्यास्त्रोंका भी शत्रुपर कोई असर नहीं हुआ। जो भूमिगोचरी राजा थे उन्हें इसने मार डाला। मुझे भी तीन बार रथ-रहित कर दिया। राम इस प्रकार सोच ही रहे थे कि लवणने उनके वक्षस्थलपर प्रहार किया। राम मूर्छित हो पृथ्वीपर गिर पड़े। राजाओंने उठाकर रामको जैसे-तैसे सचेत किया। उधर लक्ष्मण सागरावर्त धनुष लेकर क्रोधसे मदनांकुशपर झपटा। लक्ष्मणने असंख्य बाण मदनांकुश-पर चलाए परन्तु कुमारने उन सबको बीचमें ही काट दिया। लक्ष्मणने अपनी गदा उठाकर मारी लेकिन अंकुशने उसे धनुर्दंडसे रोक लिया। इस प्रकार घोर युद्ध होनेके बाद अंकुशने लक्ष्मणपर वज्रका प्रहार किया। लक्ष्मण वज्रकी चोटसे बेहोश हो गया। विराधित रथ लौटाने लगा। किन्तु लक्ष्मणने सचेत होकर कहा—'मूढ़ तू रथ क्यों लौटा रहा है? युद्धमें मर जाना अच्छा है किन्तु शत्रुको पीठ दिखाना उचित नहीं है। इस तरह कहकर लक्ष्मण पुनः अंकुशसे युद्ध करने लगा। अंकुशने अपने बाणोंसे लक्ष्मणको ढंक दिया और सात बार लक्ष्मणका रथ तोड़ा। तब लक्ष्मणने अत्यन्त क्रुद्ध हो अंकुशपर चक्र फेंककर मारा किन्तु चक्र अंकुशकी प्रदक्षिणा देकर पुनः लक्ष्मणके हाथपर आ गया। लक्ष्मणने फिर चक्र फेंका किन्तु वह उसी तरह फिर लौट आया। लक्ष्मणने इस तरह सात बार चक्र चलाया किन्तु वह सातों ही बार अंकुशकी प्रदक्षिणा देकर लक्ष्मणके हाथपर आ गया। गौतमने कहा—श्रेणिक, चक्ररत्न अमोघ है इसका वार कभी व्यर्थ नहीं जाता। किन्तु सगोत्री और मुक्तिगामी जीवपर उसका असर नहीं होता, सभी दिव्यास्त्रोंकी यही दशा है।

जब लक्ष्मणका चक्र व्यर्थ हो गया तो अंकुशने अपना धनुर्दंड घुमाया। यह देख राजगण बड़े आश्चर्यसे सोचने लगे कि यह कोई प्रतिनारायण पैदा हुआ है अथवा रावण ही फिरसे आ गया है, या कोई पूर्ण छः खण्डका अधिपति चक्रवर्ती उत्पन्न हुआ है। लक्ष्मणने भी यह समझा कि सचमुच यह कोई दूसरे ही नारायण बलभद्र भरतक्षेत्रमें पैदा हुए हैं। परन्तु भगवानके वचन तो कभी झूठे नहीं होते, न नारायणके ऊपर कोई नारायण ही पैदा होता है। ये दोनों बालक अवश्य कोई श्रेष्ठ पुरुष हैं। मेरा पुण्य ही क्षीण हो गया है जो मैं युद्धमें असफल रहा। लक्ष्मण इस तरह किंकर्तव्यविमूढ़ होकर ठूँठकी तरह खड़ा हो सोच करने लगा। यह देखकर नारद और सिद्धार्थ लक्ष्मणके पास आए और बोले—ये दोनों प्रतिद्वन्दी रामके दोनों पुत्र हैं। जिस गर्भिणी सीताको आप लोगोंने जंगलमें छोड़ दी थी उसे वज्रजंघ बहिन कहकर अपने घर ले गया था। उसीके ये दोनों पुत्र हैं। माताका उस समयका दुःख सुनकर क्रोधित हो, आप दोनोंसे लड़ने आये हैं। लक्ष्मण यह सुनकर रथसे उतर पश्चात्ताप करता हुआ रामके पास गया और जाकर दोनों पुत्रोंका वृत्तान्त कहा।

इसके बाद दोनों कुमारोंने आकर राम-लक्ष्मणके पैर छुए। उन दोनोंने कुमारोंको छातीसे लगा लिया। रामचन्द्रजी पूर्व वृत्तान्त यादकर विलाप करने लगे—'हाय! मैंने गर्भकालसे ही इन पुत्रोंको वनमें छोड़ दिया था। अपने पुण्य-प्रतापसे वज्रजंघके घरमें ये बड़े हुए। लोगोंके कहनेसे मैंने अपनी निर्दोष पत्नीको भी वनमें छोड़ दिया था। उसने भी पुण्योदयसे वज्रजंघके घरमें रक्षा पायी'। रामका यह विलाप सुनकर दूसरे लोगोंके भी आँसू निकल आए। विद्याधर और भूमिगोचरी सब राजा मिलकर रामके पास आए। युद्ध बन्द हुआ। दोनों सेनाओंके प्रमुख व्यक्ति आपसमें गले मिले। अपने पुत्रोंका माहात्म्य देखकर सीता पुण्डरीकपुर लौट

गई। भामंडलकी रानियाँ सीताके साथ गईं। युद्ध समाप्त हो जानेके बाद भामंडल, सुग्रीव, विभीषण, नील, नल, अंग, अंगद, हनुमान तथा अन्य विद्याधर सीताको देखने शीघ्र पुण्डरीकपुर पहुँचे। सीताको देखकर विद्याधरोंने प्रणाम किया। सीताने उन्हें आशीर्वाद दिया। अनेक सुख-दुखकी बातें हुईं। सब लोग वहाँ एक पहर ठहरकर अयोध्या वापिस आ गए। पुत्रोंके समागमकी खुशीमें बहुतसे लोग नाचने-कूदने लगे। घंटा तोरण पताका आदिसे अयोध्याको खूब सजाया गया। रामचन्द्रजीने दोनों कुमारोंके साथ हाथीपर बैठकर बड़ी धूमधामसे नगरमें प्रवेश किया। स्त्रियाँ राजपुत्रोंको देखनेके लिए छज्जों, छतों, खिड़कियों और झरोखोंमें आ बैठीं। जगह-जगह नृत्य, गान आदि होने लगे। रामचन्द्रजी पुत्रोंसहित धीरे-धीरे चलकर राजमहल पहुँचे। स्त्रियोंने आकर उनकी आरती उतारी। पिता पुत्र कुछ समयतक राजसभामें बैठे। बादमें उठकर भीतर चले गए। सबने स्नान, भोजन आदि किए। राम-लक्ष्मणने वज्रजंघका खूब आदर-सत्कार किया।

———

३१. सीताकी अग्निपरीक्षा

एक दिन विभीषण हनुमान आदि विद्याधरोंने हाथ जोड़कर रामचन्द्रजीसे कहा—प्रभो! सीता पुण्डरीकपुरमें न जाने कैसे समय व्यतीत करती होगी। आप आज्ञा दें तो हम उन्हें जाकर ले आवें'। यह सुनकर रामचन्द्रजीने आखोंमें आँसू लाकर कहा—'मैं जानता हूँ कि सीता निर्दोष है, परन्तु उसे ले आनेसे लोग फिर अपवाद करेंगे। अतः अगर सीता अग्निमें प्रवेशकर सारी प्रजाके सामने अपनी निर्दोषिता प्रमाणित करे तो मैं उसे रख सकता हूँ। 'अच्छा' कहकर विद्याधर गण पुण्डरीकपुर पहुँचे और सीतासे जनसमुदायके सामने निर्दोषिता प्रमाणित करनेकी प्रार्थना की। सीताने कहा—मैं अब फिर संसार सुखोंमें नहीं फँसना चाहती। अगर मेरे भाग्यमें सुख होता तो मुझे ये दुःख ही क्यों होते? क्यों मुझ गर्भिणीको चुपचाप घरसे निकाल दिया जाता? जब मुझे कलंक लग चुका तो क्या लेकर मैं उन्हें अपना मुह दिखाऊँ? विभीषणने कहा—देवी! दुःख करनेसे क्या लाभ? जो कुछ होता है वह सब भाग्यसे होता है। अतः आप ऐसा उपाय कीजिए जिससे सब लोगोंका आपपर विश्वास हो, ऐसा करनेसे संसारमें आपकी कीर्ति होगी। आप स्वभावसे शीलवती हैं, रामकी पत्नी हैं, रामका भी आपपर अगाध स्नेह है। आपके बिना सारी अयोध्या सूनी है। अतः रामने आपके लिये पुष्पक विमान भेजा है'। सीताने अपनी निर्दोषिताका प्रमाण देना स्वीकार कर लिया और प्रसन्नतासे विमानमें बैठ गई।

सीता अयोध्या आकर महेन्द्र उद्यानमें ठहराई गई। रामचन्द्रजीकी आज्ञासे विराधितने तोरण आदिसे सुसज्जित सभा मंडप तैयार कराया, उसके लिये बारह कोस तककी जमीन घेरी मणिमयी फर्श और रत्नोंके स्तम्भ खड़े किए, बहुत सी दानशालाएँ बनाई, जन समुदाय-की सुविधाके लिये बारह योजन तकका मैदान साफ कराया गया, देश विदेशमें सब जगहके लोगोंको बुलानेके लिये पत्रिकाएँ भेज दी गईं, साम्राज्यके कोने-कोनेसे क्या भूमिगोचरी, क्या विद्याधर सभी लोग परिवार सहित आकर इकट्ठे हो गए। रामचन्द्रजी मञ्चके पास चन्द्रप्रभ चैत्यालयके चबूतरेके ऊपर बैठ गये। तीन खंडके राजाओंके भी आसन रामचन्द्रजीके पास ही लगा दिए गए। विभीषण आदि राजाओंने सीताको लानेके लिये रामचन्द्रजीसे आज्ञा माँगी। आज्ञा पाकर विद्याधर सीताको हाथीपर बैठाकर सभा मंडपमें ले चले। सीताको आते देख सभाके लोग हर्षित होकर, धन्य है इनका रूप, धन्य है इनका धैर्य, धन्य है इनका

शील, धन्य है इनके गुण, इस प्रकार साधुवाद करने लगे। जब सीता और निकट आई तो सब राजा-गण खड़े हो गए। लक्ष्मण, शत्रुघ्न आदिने सीताके पैर छूए। सीता हाथीसे उतरकर रामके पास आने लगी। राम सोचने लगे—'मैंने इसे जंगलमें छोड़ दिया था फिर यहाँ क्यों आ गई ? इसकी निर्लज्जता तो देखो कि इसे अपने इस अपवादपर भी खेद नहीं है, लज्जाशील स्त्री तो एकबार निकाल देनेपर फिर कभी नहीं आती, परन्तु यह क्यों आ गई ?" रामचन्द्रजी-के इस औदासीन्य भावको समझकर सीता मनमें अत्यन्त व्याकुल हुई तो भी उनके पैर छू कर वह सामने खड़ी हो गई और नीची निगाहकर पैरके अँगूठेसे जमीन खुरचने लगी। सीताको उस समय ख्याल आया कि मैं यहाँ क्यों आई। अगर अभी आत्मघात कर लूँ तो इससे लोगों-का सन्देह सदाको विश्वासमें बदल जायगा और अगर पुण्डरीकपुर लौट जाऊँ तो इससे और भी लज्जा उठानी पड़ेगी। इतनेमें ही रामचन्द्रजीने कहा—'सीता ! सामनेसे दूर हो, निर्लज्ज होकर उद्धत भावसे तू यहाँ क्यों खड़ी है ? छः महीने तू रावणके यहाँ रही है अब किस मुँहसे मैं तुझे अपने यहाँ रक्खूँ ? मैं जानता हूँ कि तू निर्दोष है, परन्तु जबतक लोग तुम्हें निर्दोष न समझ लें तबतक मेरे यहाँ तुम्हारी गुंजायश नहीं है ! यह सुनकर सीताने कहा—नाथ ! आप बड़े निर्दयी हैं। मैं सदा आपके चरणोंका ध्यान करती हूँ, परन्तु मैंने कभी अपने साथ आपका सद्भाव नहीं पाया, अब जो कहें वह करनेको तैयार हूँ। दुःखी, दीन प्राणियोंके आप ही शरण हैं। इस तरह कहकर सीता रोने लगी। रामने कहा सीता ! तुम निर्दोष तो हो, परन्तु तुम्हें जनसमुदायके सामने अपनी निर्दोषिता प्रमाणित करनी चाहिए। सीताने कहा—मुझे स्वीकार है, आप कहें तो साँपके मुँहमें अपना हाथ दे दूँ, आप कहें तो हलाहल विष पीलूँ, आप कहें तो तपे हुए लोहेके गोले हाथोंमें ले लूँ, आप कहें तो जलमें या आगमें कूद पड़ूँ, आप जो कुछ कहें वही करनेको तैयार हूँ। रामने क्षणभर सोचकर कहा कि आगमें प्रवेशकर अपनी परीक्षा दो। यह सुनकर नारदने कहा—देव ! यह क्या कहते हैं, आगका क्या विश्वास ? सीता शीलवती होकर भी आगमें जल सकती है। माँका मरण निश्चित समझकर लवण और अंकुश रोने लगे। भामंडल भी रामकी आज्ञा सुनकर बड़ा व्याकुल हुआ। हनुमान आदिको आँखोंमें भी आँसू भर आए। तब सिद्धार्थ क्षुल्लक ने सभाके लोगोंसे उठकर कहा—भाइयो ! इसमें शोकका कारण कुछ नहीं है। सीता दृढ़ शीलवती है, वह अवश्य ही आगमें प्रवेशकर लौट आएगी और इन्द्र उसकी पूजा करेंगे। अगर ऐसा न हो तो मैं घोषणा करता हूँ कि अब तक जो मैंने तपश्चरण किया है और तीर्थ यात्राएँ की हैं वे सब व्यर्थ हो जायँ'। सिद्धार्थके ऐसा कहनेपर सब लोग शान्त हो गए। सबने सीताके अग्नि प्रवेशको मान लिया। रामकी आज्ञासे दो पुरुष गहरा और तीन सौ हाथ लम्बा चौड़ा समकोण अग्नि-कुंड खोदा गया। खैर ढाक आदिके ईंधनसे अग्नि प्रज्वलित की गई। आकाशमें विद्याधर और पृथ्वीपर भूमि-गोचरी सीताकी अग्निपरीक्षा देखनेको एकत्र हो गये। उसी रातको वहीं महेन्द्र उद्यानमें सकल भूषण मुनिराजको केवलज्ञान उत्पन्न हुआ। श्रेणिकने गौतमसे पूछा—महाराज ! मैं इन मुनिराजके केवल ज्ञानकी उत्पत्तिकी कथा सुनना चाहता हूँ। गौतम बोले—

श्रेणिक ! विजयार्द्धकी उत्तर श्रेणीके गुंजा नामक नगरमें राजा सिंह विक्रम और रानी श्रीके सकलभूषण नामका पुत्र हुआ। उसके आठ सौ रानियोंमें किरणमंडला नामकी पटरानी थी। एक दिन वह अपने फुफेरे भाईके चित्रको गौरसे देख रही थी कि उसकी सौतोंने राजाको उसका यह कार्य दिखाया। सकलभूषण यह देखकर कुपित हुआ। किन्तु रानियोंके समझाने बुझानेसे शांत हो गया। साध्वी किरणमण्डलाने एक दिन सोते हुए 'हेमशिख' इस प्रकार अपने उसी फुफेरे भाईका नाम लिया। राजा यह सुनकर पहले तो क्रुद्ध हुआ बादमें विरक्त हो गया।

किरणमंडला समयानुसार मरकर विद्युन्मुखी नामकी राक्षसी हुई। सकलभूषण मुनि जब आहारको जाते तो यह अपना पूर्व वैर स्मरणकर इनका अन्तराय कर देती। कभी वह हाथियोंके बन्धन तुड़ा देती, कभी घर जला देती, कभी आँधी चलाकर धूल मिट्टी बरसाती, कभी घोड़ा या बैल बनकर इनके आड़े आ जाती, कभी मार्गमें काँटे ही बखेर देती, कभी इन्हें ध्यान करते हुए उठा ले जाती और किसीके घरमें सेंध लगाकर आँगनमें बैठा देती। लोग इन्हें चोर चोर कहकर पकड़ लेते और शोर मचाते हुए तिरस्कार कर छोड़ देते। कभी जब ये आहार करके लौटते तो आहार देनेवाली स्त्रियोंका हार लाकर मार्गमें इनके गलेमें डाल देती और ये चोर कहकर पकड़ लिये जाते। इस तरह वह पापिनी इनपर अनेक उपसर्ग करती।

एक दिन सकलभूषण मुनि महेन्द्र उद्यानमें ध्यान कर रहे थे कि इस पापिनीने आकर उपसर्ग करना प्रारम्भ किया। कहीं वैताल व्यंतरोंके रूप दिखाए, कहीं हाथी सिंह व्याघ्र आदिका रूप दिखाया, कभी सुन्दर-सुन्दर स्त्रियोंके रूप दिखाए, परन्तु मुनिराज इससे विचलित नहीं हुए। उसी समय उन्हें केवलज्ञान हो गया। देवोंने समवसरण (गन्धकुटी) की रचना की। अपने-अपने विमानमें बैठकर देवतागण केवलीके दर्शन करने गए। श्रेणिक ! जब वे देवता वहाँसे लौट रहे थे तो उन्होंने यह जलता हुआ अग्निकुण्ड देखा। अवधिज्ञानसे सीताकी अग्नि परीक्षा जानकर तमाशा देखने खड़े हो गए। जब अग्निकुंडकी लपटें आकाशको छूने लगीं तो राम सोचने लगे— कैसे सीताको इस भयंकर आगमें कूदने दूँ ? सीता जैसी स्त्री इस लोकमें नहीं है इसके बिना मैं कैसे रहूँगा ? यदि मैं इसे अग्निप्रवेश करनेसे रोक लूँ तो जबतक सूर्य-चन्द्रका अस्तित्व है तबतकके लिये मेरे कुलमें कलङ्क लग जायगा। यदि सीता आगमें जलकर मर गई तो भामंडल आदि राजा मुझपर रोष करेंगे। अथवा सीताका मरण ही आगसे लिखा हो तो उसे कौन टाल सकता है"। रामचन्द्रजी इधर यह सोच रहे थे उधर सीता धीरे-धीरे अग्निकुंडके पास गई। नर-नारियाँ सीताको अग्निकुण्डके समीप जाते देखकर रोने और कहने लगीं ? हाय ! यह सती पुत्र आदि सबसे ममत्त्व छोड़कर इस आगमें कैसे प्रवेश करेगी ? सीताने एकाग्रचित्त होकर ऋषभ नाथसे लेकर मुनिसुव्रत पर्यन्त तीर्थंकरोंकी स्तुति की, उन्हें नमस्कार किया। बादमें बोली—हे अग्नि ! मनसे, वचनसे या कायसे यदि मैंने परपुरुषको चाहा हो तो तू मेरा शरीर तुरन्त भस्म कर देना, यदि मैं पापिनी होऊँ तो मेरी वही गति हो जो मिथ्यादृष्टियोंकी होती है, अगर स्वप्नमें मैंने रामके सिवा अन्य पुरुषकी इच्छा की हो तो तू मेरा शरीर अवश्य जला देना'। इस तरह कहकर सीता अग्नि-कुंडमें कूद पड़ी। सीताके कूदते ही बहुतसे लोग भयसे दूर भाग गए।

अचानक आग बुझ गई। कुण्डसे धूएँके गुब्बारे उठने लगे। सारे आकाशमें धुँआ ही धुँआ हो गया। सीता किसीको भी दिखाई नहीं दी। भामंडल, सुग्रीव, हनुमान, लवण, अंकुश, लक्ष्मण, शत्रुघ्न, नारद आदि शोक करने लगे। कहने लगे—'पूर्वजन्मके वैरसे रामने सीताको अग्निमें जला दिया'। यदि अग्निसे ही पुण्य-पापकी परीक्षा होती तो संजयत मुनि, जो सिद्धपदको प्राप्त हुए हैं, क्यों उपसर्गद्वारा समुद्रमें गिरकर मर गए। पर्वतों, वनों और गुफाओंमें रहकर भी जिस सीताने अपने पतिकी सेवा की थी, हाय उसे उसके पतिने आज आगमें जला दिया।

लोग इधर इस तरह शोक कर रहे थे उधर आकाशमें स्थित देवताओंने सीताके कुण्डमें गिरनेसे पहले ही यह सोच लिया था कि अगर आज शीलका माहात्म्य प्रकट नहीं किया जायगा तो लोग अनाचारपर उतर आयँगे। अतः सीताके गिरनेके थोड़ी देर बाद ही उन्होंने कुण्डमें जलही जल कर दिया। जल इतना बढ़ा कि वह कुण्डसे बाहर बह चला और थोड़ी देरमें घुटनोंतक हो गया, यहाँतक कि छातीतक और बादमें कण्ठतक हो गया। मञ्चपर बैठे हुए मनुष्य भी जलमें उतराने लगे, बालक व्याकुल होकर फूत्कार करने लगे, कोई माता, कोई पिता और कोई पुत्रोंको पुकारने लगे। आखिर जब राम तथा अन्य राजाओंने मिलकर हाथ जोड़ प्रार्थना की—देवि

सीते! रक्षा करो, प्रजाको बचाओ" तब कहीं जलका वेग घटा और वह कुंड पानीकी बावड़ी बन गया, उसमें कमल खिल गए. उनपर भौंरे मँड़राने लगे, हंस सारस और चकवा आदि पक्षी मधुर शब्द करने लगे। सोनेकी सीढ़ियाँ और रत्नोंके दरवाजे बन गए। बावडीके बिल्कुल बीचमें सहस्रदल कमलके ऊपर सोनेका सिंहासन और उसपर सीता बैठी हुई सबको दिखाई दी, आकाशसे पुष्पवर्षा होने लगी सुगन्धित जल बरसने लगा, नर्तकियाँ नांचने लगीं, लक्ष्मण आदिने मिलकर सीताका जय जयकार किया। देव और विद्याधर 'सीता सती है' सीता सती है. चिल्लाने लगे. विद्याधर आकाशमें ही नांचने लगे। लवण और अंकुश जल पारकर स्नेहसे माताके पास गए और आजू बाजू बैठ गए। राम भी विद्याधरोंको लेकर सीताके समीप गए और बड़े स्नेहसे कहने लगे 'देवि, उठो चलो घर चलें. मेरे अपराधको तुम क्षमा करो, सारे संसारमें तुम सती ही नहीं बल्कि सतियोंमें भी प्रधान हो. मेरे प्राणोंकी रक्षा तुम्हारे ही अधीन है. आठ हजार रानियोंमें प्रमुख बनकर तुम महलोंमें रहो'। सीताने उत्तर दिया—'मुझे अब भोगोंसे प्रयोजन नहीं है. अब तो ऐसा उपाय करूँगी जिससे मेरा नारीजन्म सफल हो। नाथ! आपकी कृपासे मैंने अनेक सुख भोगे अब उनसे मेरा जी ऊब गया है।" इस तरह कहकर सीताने वहीं अपने बाल अपने हाथोंसे उपाड़ डाले और रामके हाथपर रख दिए। राम भ्रमरके समान उन काले चिकने और सुगन्धित बालोंको देख मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर गिर गए।

लोग जबतक उन्हें होशमें लानेकी चेष्टा करने लगे तबतक सीताने पृथ्वीमती आर्यकाके पास दीक्षा लेली। सब परिग्रह छोड़कर मात्र एक वस्त्र रक्खा। महाव्रत धारण किये और महेन्द्र उद्यानमें सकलभूषण केवलीके निकट पहुंची। रामचन्द्रको जब चेत हुआ तो सीताको न देखकर बड़े निराश हुए। कुछ शोक और कुछ क्रोध करते हुए हाथीपर सवार होकर केवलीकी बन्दना करने चले। 'कौन दुष्ट मेरी सीताको यहाँसे लेगया मैं अभी उसको प्राणदण्ड दूँगा' इस तरह कहते हुए और सीताको चारों ओर देखते हुए वे सकलभूषण केवलीके निकट पहुँचे। भगवान केवली अशोक वृक्षके नीचे सिंहासनपर सुशोभित थे, दिव्यछत्र उनपर लगे हुए थे, चमर ढुर रहे थे, आठ प्रातिहार्योंसे सम्पन्न थे और चारों तरफ बारह सभा लगी हुई थीं। रामचन्द्रजीने गन्धकुटीमें पहुंचकर अष्ट द्रव्योंसे केवलीकी पूजा की और अनेक प्रकारसे स्तुतिकर मनुष्योंके कोठेमें जाकर बैठ गए। लक्ष्मण आदि अन्यलोग भी उसी प्रकार केवलीकी स्तुति पूजाकर रामके साथ ही बैठ गए। उसी समय मुनियोंमें प्रमुख अभयघोष नामके प्रधान शिष्यने सन्देह निवारणार्थ भगवानसे धर्मोपदेशकी प्रार्थना की। भगवान इस प्रकार धर्मोपदेश देने लगे :—

तत्त्व दो प्रकारका है जीव और अजीव। जीवके संसारी और मुक्त ये दो भेद हैं। संसारी जीव, नारकी, तिर्यञ्च, मनुष्य और देव इन चार भेदोंमें बँटे हुए हैं। नारकियोंको शूलादि छेदन भेदनके अनेक दुःख हैं। पशुओंमें पराधीनता भूख, प्यास आदिकी बाधा होती है। मनुष्योंमें धन पुत्र आदिके वियोगका दुःख होता है। देवोंको मरण समय अपार दुःख होता है, परस्पर एक दूसरेकी ऋद्धि आदि देखनेसे भी उन्हें मानसिक दुःख होता है। अनन्त आकाशके बीचमें तीन वातवलयोंसे वेष्टित यह लोकाकाश है इसके ऊर्ध्व, मध्य, और अधः इस प्रकार तीन भेद हैं। अधोभागमें रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुकाप्रभा, पङ्कप्रभा, धूमप्रभा, तमःप्रभा, और महातमप्रभा, ये सात नरकावास हैं। रत्नप्रभाके खरभागमें सात व्यन्तरों और नौ भवनवासियोंका आवास है। राक्षस और असुर कुमार इसी पृथ्वीके पंकभागमें रहते हैं। अधोलोकके ऊपर मध्यलोक है, इसमें अनेक द्वीप और सागर हैं। मनुष्यों-का आवास सिर्फ ढाईद्वीपमें है। शेष द्वीपोंमें व्यन्तर और तिर्यञ्च रहते हैं। इसी मध्यलोकमें ऊपर चलकर सूर्य चन्द्र आदि ज्योतिष्क देवोंके आवास हैं। ये ज्योतिष्क देव सदा सुमेरु पर्वतकी

प्रदक्षिणा दिया करते हैं और नित्य प्रकाश करते हैं। मध्यलोकके ऊपर ऊर्ध्वलोक है। इसमें सौधर्म, ऐशान, सानत्कुमार, माहेन्द्र, ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, लाँतव, कापिष्ट, शुक्र, महाशुक्र, शतार, सहस्रार, आनत, प्राणत, आरण, और अच्युत ये सोलह स्वर्ग हैं। इनमें कल्पवासी देव रहते हैं। इनके बाद नौ ग्रैवेयक, नौ अनुदिश तथा पाँच पंचोत्तर विमान हैं इनमें सब अहमिन्द्र हैं, ब्रह्मचर्य सुखसे परिपूर्ण हैं सब प्रकारकी चिन्ता आदिसे रहित महान सुखी हैं। इसके बाद अर्द्धचन्द्राकार मुक्ति स्थान है जहाँ जन्ममरण आदिसे रहित अनन्त सिद्ध विराजमान हैं। इस तरह यह विविध प्रकारका लोक जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल इन छः द्रव्योंसे परिपूर्ण है। इसमें जीव, अजीव, आश्रव, बन्ध, संवर, निर्जरा और मोक्ष ये सात तत्व हैं, इन्हींमें पुण्य और पाप जोड़ देनेसे नौ पदार्थ हो जाते हैं। संसार पाँच प्रकारका है:—द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव और भाव। सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यकचारित्रके धारण करनेसे इस संसारका छेदन होता है। पाँच महाव्रत, पाँच समिति और तीन गुप्ति यह तेरह प्रकारका सम्यक्चारित्र है। निःशंकित आदि आठ अंगोंसे संयुक्त सम्यग्दर्शन होता है। व्यञ्जन वर्जित आदि आठ प्रकारका सम्यग्ज्ञान होता है। श्रावकके चारित्रमें ग्यारह प्रतिमाओंका पालन होता है'। केवलीका उपदेश सुनकर मनुष्य, देव, तिर्यञ्च आदि सब प्रसन्न हुए। अनेकोंने मुनिदीक्षा लेली। बहुतोंने श्रावकोंके व्रत लिए, अनेकोंने सम्यग्दर्शन धारण किया।

उपदेशके बाद विभीषणने पूछा, प्रभो! रावण किस पुण्यसे इतना बलवान पुण्यवान हुआ कि इन्द्रादि जैसे महाबली विद्याधर भी उसके यहाँ पानी भरते थे? जिसे दुनियाँमें कोई नहीं मार सकता था वह अल्प शक्तिवाले भूमिगोचरियों द्वारा कैसे मारा गया? जो इन्द्राणी जैसी रूपवती परस्त्रियोंकी तरफ देखता तक नहीं था वह सीताको देखकर कैसे कामसे व्याकुल हो गया? किस पुण्यके उदयसे रामचन्द्रजीको इस प्रकार अपार वैभव प्राप्त हुआ और सीताको कौन पापके उदयसे कलंक लगा? उत्तरमें सकलभूषण केवलीने कहा, विभीषण! राम, लक्ष्मण और रावणमें अनेक जन्मका वैर चला आ रहा है। उनके पूर्वभवोंकी कथा इस प्रकार है:—इसी भरतक्षेत्रके क्षेमपुर नगरमें नयदत्त नामका एक वैश्य रहता था उसके सुनन्दा स्त्रीसे वसुदत्त तथा धनदत्त नामके दो पुत्र थे। धनदत्तका एक यज्ञबलि नामका ब्राह्मण मित्र था। उसी नगरमें सागरदत्त नामका एक दूसरा वैश्य भी रहता था। उसकी पत्नीका नाम रत्नप्रभा और पुत्री तथा छोटे पुत्रका नाम गुणवती एवं गुणवान था। पिताकी इच्छाके अनुसार गुणवानने अपनी बहिनकी सगाई धनदत्तके साथ कर दी। उसी नगरका एक धनवान वैश्य श्रीकान्त गुणवतीको चाहता था। उसने जब कन्याके भाईको धनका बहुतसा प्रलोभन दिया तो वह अपनी बहिनकी सगाई धनदत्तसे छोड़ श्रीकान्तसे करने लगा। यज्ञवल्लीने यह बात धनदत्तके भाई वसुदत्तसे कही। वसुदत्त श्रीकान्तको मारनेके लिये तैय्यार हुआ। रातको वह काले वस्त्र पहनकर तलवार हाथमें ले चुपचाप श्रीकान्तके घर गया और असावधान बैठे हुए श्रीकान्तपर तलवारका प्रहार किया। श्रीकान्तने भी तुरन्त सावधान हो तलवारका जबाब तलवारसे दिया। दोनों वहीं लोहू लुहान होकर मर गए और विंध्याटवीमें मृग हुए। नगरके दुर्जनोंने वसुदत्तको हत्यारा बताकर उसके छोटे भाई धनदत्तके साथ कन्याका विवाह नहीं होने दिया। दुर्जन स्वभावसे ही क्रूर होते हैं। अगर उन्हें कोई बहाना मिल जाये तो कहना ही क्या है। धनदत्त भाईकी इस कुमौतसे और कन्याके न मिलनेसे दुखी होकर परदेश निकल गया। वह कन्या भी धनदत्तके न मिलनेसे अविवाहित रहकर दुखी रहने लगी और अपने मिथ्याश्रद्धान तथा गुरुनिंदक स्वभावसे आर्तध्यानपूर्वक मरकर उसी वनमें मृगी हुई। पूर्व वैरके कारण वे दोनों मृग इस मृगीके लिए लड़कर मरे और शूकर हुए। इसके बाद हाथी, भैंसे, बैल, बन्दर, व्याघ्र, भेड़िए तथा हिरण आदिके अनेक भव धारण किए और वह कन्याका जीव हिरणी भी उसी जातिकी तिर्यञ्चनी होती रही। इसके लिए वे दोनों आपसमें लड़कर

मरते रहे। वह धनदत्त एक दिन भ्रमण करते हुए प्याससे व्याकुल होकर दिनछिपे मुनियोंके निवास-स्थानपर पहुँचा और पीनेके लिए पानी माँगा। वहाँ एक साधुने इसे समझाया कि वत्स! रात्रिमें पानी तो क्या अगर अमृत भी मिले तो न पीना चाहिए। सूर्य अस्त हो जानेपर अँधेरेमें असंख्य सूक्ष्म जन्तु दिखाई नहीं देते। अतः व्याकुल होनेपर भी रातमें खान-पान नहीं करना चाहिए। मुनिके वचनोंको मानकर इसने जल नहीं पीया और व्रती होकर रहने लगा। समयानुसार समाधिमरणपूर्वक प्राण छोड़कर सौधर्मस्वर्गमें ऋद्धिधारी देव हुआ। वहाँसे चयकर महापुर नगरमें सेठ मेरु और रानी धारिणीसे पद्मरुचि नामका पुत्र हुआ।

उसी नगरका छत्रछाया नामका राजा था और श्रीदत्ता नामकी उसकी गुणवती रानी थी। पद्मरुचि एक दिन घोड़ेपर सवार होकर अपनी गोशाला देखने जा रहा था कि रास्तेमें उसने एक बैल मरणासन्न देखा। घोड़ेसे उतरकर उसने तुरन्त उस बैलको नमस्कार-मन्त्र सुनाया। उस मन्त्रके प्रभावसे वह बैल रानी श्रीदत्ताके वृषभध्वज नामका पुत्र हुआ। छत्रछायके कोई पुत्र नहीं था अतः उसने इस पुत्रकी खुशीमें खूब दान, उत्सव किया, बाजोंकी ध्वनिसे दिशाएँ गूँज उठीं। दैवयोगसे वृषभध्वजको जातिस्मरण हो गया, बैलयोनिके वायु, शीत, उष्ण आदिसे होनेवाले दुःखोंको याद करते रहनेके कारण वह बाल्यावस्थामें ही विवेकी हो गया। एक दिन कुमार घूमता हुआ बैलके मरनेकी जगह पहुँचा। उसने पूर्वभवके अपने विचरण करनेके स्थानको तुरन्त पहचान लिया। हाथीसे उतरकर दुःख करता हुआ वह अपना स्थान देखने लगा और अपने उपकारी नमस्कार मन्त्रदाताकी खोज करने लगा। जब वह नहीं मिला तो कुमारने एक उपाय किया। उसने वहींपर ऊँचा और सुन्दर जिनमन्दिर बनवाया अनेक पुराण और चरित लिखवाकर पधराए तथा मन्दिरके द्वारपर अपने पूर्वभवका चित्रपट, जिसमें एक मनुष्य एक वृद्ध मरणासन्न बैलको नमस्कार मन्त्र सुना रहा था, लिखवाकर रखवा दिया और द्वारपालसे कह दिया कि जो मनुष्य इस चित्रपटको ध्यानसे देखे उसकी सूचना आकर हमें देना। एक दिन पद्मरुचि उस मन्दिरमें दर्शन करने आया और उस चित्रपटको देखकर बड़ा आश्चर्य करने लगा। द्वारपालने तुरत इसकी सूचना वृषभध्वजको दी। कुमार बड़ी विभूतिके साथ हाथीपर सवार होकर अपने उपकारीसे मिलने आया और बड़े आश्चर्यसे चित्रकी ओर देखते हुए पद्मरुचिके पैरोंपर गिर पड़ा। पद्मरुचिने वृषभध्वजको उठाकर बैलको नमस्कारमन्त्र सुनानेकी अपनी बात कही। वृषभध्वजने कहा—उस बैलका जीव मैं ही हूँ। इस तरह कहकर कुमारने शिष्यकी तरह पद्मरुचिको गुरू मानकर उसका खूब आदर-सत्कार किया और कहने लगा—जब मैं पशुपर्यायमें मृत्युसे जूझ रहा था उस समय प्रियबंधुकी तरह तुम्हींने आकर दयासे मुझे नमस्कारमन्त्र दिया था जिसके प्रभावसे मैं राजपुत्र हुआ। जो हित तुमने मेरा किया है वह माता-पिता, भाई-बन्धु या देवता आदि कोई नहीं कर सकते। अतः उस उपकारके बदलेमें आपको क्या दूँ। फिर भी मेरी आपमें अत्यधिक भक्ति है अतः आप मुझे जो आज्ञा दें वह मैं करनेको तय्यार हूँ। हे पुरुषोत्तम! आप मुझे आज्ञा देकर कृतार्थ करें, मेरा सारा राज्य ले लें और मुझे अपना दास बनाकर रक्खें तथा इस शरीरसे इच्छानुसार काम लें। वृषभध्वजके इस प्रकार कहनेपर उन दोनोंमें परस्पर प्रगाढ़ प्रेम हो गया। दोनों ही सम्यक्त्वी तथा एकसी ऋद्धिका उपभोग करने लगे, दोनोंने श्रावकके व्रत धारण किए, दोनोंने स्थान-स्थानपर जिन-मंदिरोंका निर्माण कराया तथा सैकड़ों स्तूप जहाँ-तहाँ बनवाए जिनपर सुन्दर प्रतिमाएँ विराजमान कीं। आयुके अन्तमें समाधिमरणकर वृषभध्वज और पद्मरुचि ईशान स्वर्गमें ही देव हुए। वहाँसे चयकर यह पद्मरुचिका जीव पश्चिम विदेहके विजयार्द्ध पर्वतपर नन्द्यावर्त नगरके राजा नन्दीश्वरकी रानीके गर्भसे नयनानन्द नामका पुत्र हुआ। वहाँ उसने मुनि बनकर घोर तपश्चरण किया और मरकर चौथे स्वर्गमें देव हुआ। वहाँसे चयकर पूर्व विदेहकी क्षेमा

नगरीमें राजा विपुलवाहन और रानी पद्मावतीके श्रीचंद नामका पुत्र हुआ और स्वर्गके समान खूब भोग भोगने लगा। उसके पुण्योदयसे राजसम्पत्ति और भोगोपभोग उत्तरोत्तर बढ़ते ही गए। हजारों वर्षोंतक हजारों स्त्रियोंके साथ सम्पूर्ण पृथ्वीका उसने उपभोग किया। एक दिन समाधिगुप्त मुनिराजके निकट धर्मोपदेश सुनकर धृतिकान्त पुत्रको राज्य दे वह मुनि हो गया और उग्र तपश्चरण कर पांचवें स्वर्गमें इन्द्र हुआ, वहाँ जिनपूजा, स्तुति, स्वाध्याय आदिमें समय बिताने लगा। इस तरह धनदत्तका जीव मनुष्यसे देव और देवसे मनुष्य होता रहा। श्रेणिक ! अब तुम्हें धनदत्तके बड़े भाई वसुदत्त आदिके संसार परिभ्रमणका वृत्तान्त सुनाता हूँ।

मृणालकुण्ड नगरमें विजयसेन नामका बड़ा प्रतापी और यशस्वी राजा रहता था। उसके रत्नचूला नामकी रानी और वज्रकंबु नामका पुत्र था, वज्रकंबुके हेमवती नामकी रानी थी। श्रीकांतका जीव जिसने धनदत्तकी भगनी गुणवतीसे विवाह कर लिया था, इन्हीं वज्रकंबु और हेमवतीके शंभु नामका पुत्र हुआ और वसुदत्तका जीव श्रीभूति नामका राजपुरोहित हुआ। उसके सरस्वती नामकी पुरोहिताइन थी। वह गुणवतीका जीव साधुकी निन्दासे अनेक तिर्यंच योनियों-में भ्रमण करता हुआ नदीके किनारे हथिनी हुआ। एक दिन अचानक यह हथिनी कीचड़में फँस गई। एक तरंगवेग विद्याधरने इसके कण्ठगत प्राण देखकर इसे नमस्कार मन्त्र सुनाया। कषायोंकी मंदतासे मरकर यह श्रीभूतिके वेदवती नामकी लड़की हुई। एक दिन अपने घरपर आहारके लिए आए हुए मुनिराजको देखकर यह हँसने लगी। पिताके समझानेपर इसने श्राविकाके व्रत ले लिए। कन्याको सुन्दर देख अनेक राजा इसके साथ विवाह करना चाहते थे, जिसमें वज्रकंबुका पुत्र शंभु तो अत्यन्त ही उत्सुक था। लेकिन पुरोहितने यह निश्चय कर लिया था कि कोई मिथ्यादृष्टि वर कुबेर समान भी धनिक होगा तो उसे मैं अपनी कन्या नहीं दूँगा। शंभुने पुरोहितके इस निश्चयसे चिढ़कर उसको रातमें धोखेसे मार डाला। पुरोहित मरकर चौथे स्वर्गमें देव हुआ। शंभुने राजसत्तासे कन्याके साथ विवाह करना चाहा। लेकिन जब कन्या राजी नहीं हुई तो शंभुने जबर्दस्ती उसे कहीं एकान्तमें पकड़ लिया और मुख चूमकर उसके साथ मैथुन किया। अपना शीलखण्डन देखकर और पिताकी मृत्यु याद कर कन्याने अग्निशिखाकी तरह कांपते हुए क्रोधसे आँखें लाल कर शंभुसे कहा—रे पापी नराधम ! तैंने मेरे पिताको मारा और मेरा शील बलात् दूषित किया। अतः मैं इसका बदला तेरी पुत्री बनकर ही लूँगी। भले ही मेरा पिता आज मर गया है परन्तु उसकी इच्छाको नहीं टालूँगी, मिथ्यादृष्टि दुष्टसे शादी करनेकी अपेक्षा तो मर जाना अच्छा है। इस तरह कहकर वेदवतीने हरिकान्ता आर्यकाके पास दीक्षा ले ली और आयु पर्यंत कठोर तपश्चरण पूर्वक समाधि मरणकर पाँचवें स्वर्गमें उत्पन्न हुई और अनेक प्रकारके स्वर्गीय सुख भोगने लगी। शंभु भी मरकर पापके फलसे अनेक तिर्यञ्च योनियों-में भ्रमण करता हुआ कषायकी मंदतासे कुशध्वज ब्राह्मणकी सावित्री नामकी स्त्रीसे प्रभास-कुन्द नामका पुत्र हुआ और दुर्लभ जिनधर्मका उपदेश पाकर विरक्त हो विचित्रसेन मुनिके पास दीक्षित होगया और सम्मेद शिखर पर्वतपर जाकर कठोर तपश्चरण करने लगा।

एक दिन उसने आकाशमें जाते हुए हेमप्रभ विद्याधरकी विभूति देखकर निदान किया कि तपके प्रभावसे मुझे भी इस प्रकारकी विभूति मिले। इस तरह उस अज्ञानीने अपना त्रैलोक्य दुर्लभ रत्न मुट्ठीभर शाकके बदले बेंच दिया। आयुके अन्तमें कठोर तपश्चरणके बाद भी वह निदानके प्रभावसे तीसरे स्वर्गमें देव हुआ। वहाँसे चयकर वह अवशिष्ट पुण्योदयसे रत्नश्रवा और रानी केकसीके रावण नामक पुत्र हुआ और धनदत्तका जीव श्रीचन्द्र पाँचवें स्वर्गमें दश सागरकी आयु भोगकर राजा दशरथके राम नामका पुत्र हुआ। श्रीभूति पुरोहितका जीव जो प्रारम्भमें धनदत्तका भाई वसुदत्त था, स्वर्गसे चयकर प्रतिष्ठानपुर नगरमें पुनर्वसु विद्याधर हुआ और तपश्चरणकर निदान पूर्वक मरणकर तीसरे स्वर्गमें देव हुआ। वहाँसे चयकर यह दशरथका पुत्र अर्द्धचक्रवर्ती लक्ष्मण

हुआ। गुणवतीका भाई गुणवान जिसने प्रारम्भमें गुणवतीकी सगाई धनदत्तसे छोड़कर श्रीकांतसे कर दी थी अनुक्रमसे जन्म मरण करता हुआ राम लक्ष्मणका स्नेही जनकका पुत्र भामण्डल हुआ और गुणवतीका जीव, जो श्रीभूतिकी पुत्री वेदवती हुई थी, ब्रह्म स्वर्गसे चयकर सीता नामकी जनककी पुत्री विख्यात हुई। वसुदत्तका मित्र यज्ञवल्ली बहुत समय तक संसारमें परिभ्रमण करता हुआ धर्मका आराधन कर सौधर्म स्वर्गमें देव हुआ और वहाँसे तू यह विभीषण हुआ है। और वह वृषभध्वजका जीव जिसे बैलके भवमें पद्मरुचिने नमस्कार मन्त्र सुनाया था—ईशान स्वर्गसे चयकर शुभपुर नगरमें राजा धर्म और रानी धर्मपुण्याके कनक नामका पुत्र हुआ। तपश्चरणकर वहाँसे सातवें स्वर्गमें देव हो यहाँ यह सुग्रीव हुआ है।

विभीषणने पुनः बालीके भव कहनेके लिए केवलीसे प्रार्थना की। केवली बोले—सुख दुःखसे परिपूर्ण इस चतुर्गतिरूप संसारमें परिभ्रमण करता हुआ एक जीव वृन्दावनमें कृष्णसार मृग हुआ। मरते समय साधुके स्वाध्यायका शब्द कानमें पड़ जानेके कारण वह ऐरावत क्षेत्रके दिति नगरमें पिता विहित और माता शिवमतीके मेघदत्त नामका पुत्र हुआ। वहाँ उसने अणुव्रतोंका पालन किया, सदा भगवानकी पूजाकी और यात्राओंमें समय व्यतीत किया, आयुके अन्तमें समाधिमरण कर दूसरे स्वर्गमें देव हुआ। वहाँसे चयकर जम्बूद्वीपके पूर्व विदेहमें विजयावती नगरीके समीप मत्तकोकिल गाँवमें राजा कांतिशोक और रानी रत्नाकिर्नाके सुप्रभ नामका सुन्दर पुत्र हुआ। धर्मका दुलभ उपदेश पाकर किन्हीं संयत महामुनिके निकट उसने दीक्षा ले ली और हजारों वर्षोंतक घोर तपश्चरणकर सर्वार्थसिद्धिमें अहमिन्द्र हुआ वहाँसे बाली हुआ।

विभीषणने पुनः हाथ जोड़कर पूछा, प्रभो! सीताका अपवाद क्यों हुआ? भगवान बोले:—एकबार मण्डलिक गाँवमें सुदर्शनमुनि आए हुए थे। लोग मुनिका आगमन सुनकर उनकी बन्दना करने आए और चले गए। मुनि एकबार अपनी बहिन आर्यिका सती सुदर्शनाको धर्मका उपदेश दे रहे थे कि वेदवतीने उन्हें देख लिया और सब जगह गाँवमें यह अपवाद फैला दिया कि मुनिको मैंने एकान्तमें एक स्त्रीके साथ देखा है। लोगोंमेंसे कुछने इसपर विश्वास किया और कुछने नहीं किया। विश्वास करने वालोंने मुनिका अनादर किया अतः देवताने वेदवतीके मुखसे यह कहलवा दिया कि मुझ पापिनीने व्यर्थ ही मुनिराजका अपवाद किया जो स्त्री मैंने देखी थी वह मुनिकी बहिन थी। इस तरह भाई बहिनकी निन्दासे सीताको भी अपने अपवादका फल भोगना पड़ा। दोष अगर सच भी हो तब भी निन्दाके लिहाजसे उसे नहीं कहना चाहिए। अगर कोई दूसरा कहता हो तो प्रयत्न-पूर्वक रोकदेना चाहिए। दूसरेका अपवाद करनेवाला चिरकालतक संसारमें घूमता है। इस तरह राम सीता आदिके भवान्तर सुनकर देव मनुष्य आदि सभीको बड़ी प्रसन्नता हुई।

———

३२. सीताका स्वर्गगमन

भगवानके मुखसे धर्मोपदेश सुनकर कृतान्तवक्र सेनापति रामकी आज्ञा लेकर विरक्त हो गया। अन्य लोगोंमें भी बहुतसे मुनि बन गए, बहुतसे श्रावक होगए, किन्हींने सम्यक्त्व धारण किया। बारहों सभाओंके प्राणी भगवानकी स्तुति बन्दना कर अपने २ स्थान चले गए। रामने भी विद्याधरोंके साथ बड़े भक्तिभावसे कुलभूषण केवलीको नमस्कार किया, बादमें अन्य मुनियोंको नमस्कार किया। इसके बाद उन्होंने आर्यकाओंके बीचमें बैठी हुई सीताको देखा जो केवल एक वस्त्र पहने हुई थी, शृङ्गारका नाम निशान तक न था, क्षमा आदि धर्म और पञ्च महाव्रत (उपचारसे) धारण किए हुए थी। रामचन्द्रजी सीताको देखकर रोने लगे।

सीताने कहा, राजन् दुःख मत कीजिए। इस संसारमें कौन किसकी पत्नी है, कौन किसका पति है, कौन किसकी माता है और कौन किसकी पुत्री है ? अज्ञानसे मोहित होकर ही यह जीव दूसरेको पति, पत्नी, पिता, पुत्री मानता है। सीतासे इस प्रकार संबोधित होकर राम विद्याधरोंके साथ आर्यका सीताको नमस्कार कर अयोध्याको चले। लव और अंकुश भी हाथीपर सवार होकर रामके साथ चले। झरोखोंमें बैठी हुई स्त्रियाँ रामको देखकर आपसमें कहने लगीं इन्होंने ही सीताको झूठे अपवादके कारण घरसे निकाल दिया था. सीता भी यहाँसे निकलकर फिर आर्यका ही हो गई। सच है पुण्यके बिना मनुष्यको सुख कहाँ है ? रामभी स्त्रियोंकी इस प्रकार चर्चा सुनते हुए अपने महलोंमें पहुँचे और दुखी रहने लगे।

श्रेणिकने पुनः हाथ जोड़कर गौतमसे पूछाः—स्वामिन् ! किस पुण्योदयसे लव और अंकुश जैसे रामके प्रतापी यशस्वी पुत्र हुए ? गणधर कहने लगे—काकन्दी नगरीमें राजा रतिवर्द्धन और रानी सुदर्शनाके प्रियकर और हितकर नामके दो पुत्र थे। राजाके मंत्रीका नाम सर्वगुप्त था जो सारा राजकार्य संभालता था किन्तु अन्तरङ्गमें राजासे प्रतिकूल रहकर राजाको मारना चाहता था। मन्त्रीकी पत्नी विजयावली राजाको चाहती थी अतः उसने पतिकी यह गुप्त बात राजासे जाकर कह दी। राजा परस्त्रियोंसे विरक्त रहता था अतः उसने विजयावलीसे कह दिया कि सर्वगुप्त मेरा अत्यंत भक्त है वह ऐसा नहीं कर सकता। इस तरह कहकर राजाने मन्त्रीकी पत्नीको उसके घर विदाकर दिया और आप सुखसे रहने लगा। मन्त्रीने धीरे-धीरे राजाके सब सामन्त फोड़ लिए और एक दिन मौका पाकर रातके समय राजमहलमें आग लगादी। राजा शत्रुके हमलेसे असावधान नहीं था। अतः आग लगते ही स्त्री-पुत्रोंको लेकर सुरंगके रास्तेसे बाहर निकल गया और काशी नगरीके उग्रवंशी राजा कशिपुके यहाँ पहुँचा तथा वहीं एक उद्यानमें गुप्तरूपसे ठहर गया। सर्वगुप्त स्वयं काकन्दीके राजसिंहासनपर बैठा और काशी नरेशके पास एक दूत भेजा कि वह आकर मुझे नमस्कार करे। काशीके राजाने कहला भेजा कि जिसने अपने मालिकका घात किया ऐसे पापीका तो नाम भी लेना उचित नहीं, प्रणाम करनेकी बात तो बहुत दूर है। जिसने स्त्री-पुत्रसहित रतिवर्द्धनको मार डाला ऐसे स्वामी घातक, स्त्री घातक और बाल घातकका नाम लेना भी बुरा है। सब लोगोंके सामने उस पापीका सिर काट कर मैं आज ही रतिवर्द्धनका बदला लूँगा'। इस तरह कहकर कशिपुने दूतको तो दुतकार दिया और स्वयं सोचने लगा कि क्या करना चाहिए ? बलवान राजा स्वामिभक्त कशिपुने सर्वगुप्त-पर चढ़ाई करनेका तुरंत निश्चय कर लिया। दूतने वहाँसे विदा होकर सारे समाचार सर्वगुप्तसे कहे। सर्वगुप्त बहुत बड़ी सेना लेकर चक्रवर्तीकी तरह कशिपुपर चढ़ आया और काशी नगरको चारों तरफसे घेर लिया। कशिपुने सन्धि न कर युद्ध करना ही तै किया। रातको रतिवर्द्धनका एक आदमी डण्डा हाथमें लिए हुए कशिपुके निकट आया और रतिवर्द्धनके आनेकी खबर दी। कशिपुने हर्षित होकर कहाँ है ? कहाँ है ? कहते हुए अपने स्वामीके लिए अपनी व्यग्रता प्रकट की। दूतने कहा—वे पास ही उद्यानमें ठहरे हुए हैं। कशिपु अपनी रानियों सहित अर्घपाद्य लेकर रतिवर्द्धनको लेने गया और उसने जय जयकार करते हुए अपने मालिकका स्वागत किया। रतिवर्द्धनको जीता हुआ सुनकर सब सामन्तगण सर्वगुप्तको छोड़ कशिपुसे आ मिले और सर्वगुप्तको जीता ही पकड़ लिया। काकन्दीका सिंहासन पुनः रतिवर्द्धनके हाथ आगया। राजाने राजाके पुनर्जन्मका महोत्सव किया और सर्वगुप्तको सबने खूब धिक्कारा और मरे हुएकी तरह उसका मुंह देखना तक बुरा समझा। कशिपु लोकपालकी तरह आनन्दसे काशीमें राज्य करने लगा। रतिवर्द्धन समयानुसार विषयभोगोंसे विरक्त हो गया और उसने सुभानु मुनिके पास दीक्षा ले ली। सर्वगुप्तको अपनी पत्नीका सारा षड्यन्त्र मालूम हो चुका था। अतः विजयावली राजा और मन्त्री दोनोंसे द्वेष करने लगी। न मैं पतिकी हुई और न राजाकी

हुई' इस तरह मनमें पश्चात्ताप करती हुई अकामनिर्जरासे मरकर वह राक्षसी हुई। अत्यन्त द्वेषके कारण रतिवर्द्धन मुनिराजपर उसने मनमाने उपसर्ग किए। मुनिराजको उन उपसर्गोंके बीचमें ही केवलज्ञान हो गया। प्रियंकर और हितंकर दोनों पुत्रोंने पिता रतिवर्द्धन केवलीसे अपने भवान्तर पूछे। केवलीने कहा; तुम दोनों इसी काकन्दी नगरमें वामदेव ब्राह्मणके वसुदेव और सुदेव नामके पुत्र थे। तुम्हारी माताका नाम शामली था और तुम दोनोंके क्रमसे विश्वा और प्रियंगू नामकी स्त्रियाँ थीं। तुम्हारा गृहस्थ-जीवन बड़ा प्रशंसनीय था। श्री तिलक मुनिको दान देकर तुम स्त्रियों-सहित उत्तरकुरु भोगभूमिमें तीन पल्यकी आयुवाले मनुष्य हुए। वहाँ साधुके सद्दानरूपी महाफलका उपभोगकर ईशान स्वर्गमें देव हुए। वहाँसे चयकर ज्ञान और लक्ष्मीसे युक्त प्रियंकर और हितंकर दोनों भाई हुए हो'। अपने भवान्तर सुनकर दोनों कुमार बड़े प्रसन्न हुए और पिताके निकट ही दीक्षित होकर मुनि हो गए। रतिवर्द्धन शुक्ल ध्यानरूपी आगसे चारों अघातिया कर्मोंको नष्टकर सिद्ध पदको प्राप्त हुए और वे दोनों भाई घोर तपश्चरणकर ग्रैवेयकोंमें अहमिन्द्र हुए तथा वहाँसे चयकर लवणांकुश भाई हुए हैं। इनकी माता सुदर्शना पति और पुत्र-वियोगसे दुखी होकर अनेक भवोंमें भ्रमण करती हुई किसी प्रकार स्त्रीलिंग छेदकर पुण्यके प्रभावसे सिद्धार्थ हुई। पूर्वस्नेहके संस्कारोंसे ही सिद्धार्थने इन्हें सब विद्याओंमें निपुणकर देवोंसे भी अजेय बना दिया है'।

सीताने बासठ वर्षतक घोर तपश्चरण किया और अन्तमें संन्यासपूर्वक मरणकर अच्युत स्वर्गमें इन्द्र हुई। सच है तपसे क्या सिद्ध नहीं होता, इन्द्र तो क्या मुक्ति सुख भी तपसे ही मिलते हैं। उस इन्द्रकी बाईस सागरकी आयु थी। अनेक देवियाँ सदा सेवामें तत्पर रहती थीं। उस समय मधु, कैटभके जीव जो श्रीकृष्णके समयमें उनके प्रद्युम्न और शुंभकुमार पुत्र हुए थे उसी अच्युत स्वर्गमें प्रतीन्द्र थे।

श्रेणिकने गौतम गणधरसे पूछा—प्रभो! प्रद्युम्न और शुंभकुमारके पूर्वभव सुनना चाहता हूँ। गणधर बोले—मगधदेशमें राजगृही नगरीके पास शालिग्राममें राजा नित्योदित राज्य करता था। उसी गाँवमें ब्राह्मण सोमदेव और उसकी पत्नी अग्निलासे अग्निभूति और वायुभूति दो पुत्र हुए। दोनों ही वेद-वेदाङ्गके विद्वान कर्मकाण्डके पारगामी और बड़े अभिमानी थे। इनके नगरके समीप एक बार नन्दिवर्द्धन आचार्य संघसहित आए। चूँकि आचार्य अवधिज्ञानी लोक-व्यवहारमें दक्ष थे अतः सब कुछ सोच-समझकर मौनसे ध्यान करने बैठ गए। श्रमणसंघका आगमन सुनकर शालिग्रामके सभी नर-नारी वन्दना करने चले। लोगोंकी भीड़ देखकर दोनों भाइयोंने उनसे पूछा कि वे कहाँ जा रहे हैं। किसीने कहा कि दिगम्बर मुनियोंका यहाँ पदार्पण हुआ है अतः उन्हींकी वन्दनाके लिए सब जा रहे हैं। यह सुनकर अग्निभूति क्रुद्ध हो वायुभूतिको साथ लेकर मुनियोंसे विवाद करने उधर चला। मार्गमें उन्हें एक मुनि ध्यान करते हुए मिले। किसी श्रावकने उन दोनों भाइयोंसे कहा कि यदि आपमें शक्ति है तो आप इन्हीं मुनिराजसे पहले शास्त्रार्थ कर लें। दोनों भाइयोंने इसे स्वीकार किया और मुनिराजके समीप जाकर बोले—'कहिए आप क्या जानते हैं?' मुनिराज अवधिज्ञानी थे। पूछने लगे, आप कहाँसे आए हैं? दोनों भाइयोंने कहा, क्या आप इतना भी नहीं देखते कि हम शालिग्रामसे आ रहे हैं। मुनिराजने कहा, यह तो मैं देख रहा हूँ कि आप दोनों शालिग्रामसे आ रहे हैं परन्तु मेरा मतलब यह है कि अनादि संसारमें भ्रमण करते हुए आप किस योनिसे यहाँ आ रहे हैं? दोनों भाइयोंने कहा कि यह तो हम क्या कोई भी नहीं जानता। मुनिराजने कहा, हम जानते हैं तुम इसी गाँवके पास वनमें विकृत मुँहवाले दोनों शृगाल थे. दोनोंमें परस्पर बड़ा स्नेह था। इसी गाँवमें एक प्रामरक नामका किसान रहता था। एक दिन वह कामसे अपने खेतपर गया और जब सूर्य अस्त होने लगा तो यह सोचकर कि अब फिर

आऊँगा अपने पुर वगैरह खेतीके उपकरण वहीं छोड़कर खाना खाने चला आया। दूसरे ही दिनसे पानी बरसने लगा और सात दिनतक बराबर झड़ी लगी रही। सातवें दिन वे दोनों शृगाल आहारकी खोजमें निकले और किसानके उन भींगे तथा कींचमें सने हुए उपकरणोंको खाकर उन्होंने अपनी क्षुधा शांत की। उन उपकरणोंके खानेसे उन दोनोंके उदरमें तीव्र शूल पैदा हुआ। उस शूलसे अकाम निर्जरापूर्वक मरणकर सोमदेवके तुम दोनों पुत्र हुए हो। वर्षा बन्द हो जानेके बाद वह किसान जब खेतपर आया तो उसने दोनों शृगाल मरे हुए देखे। उन दोनोंकी मशक बनाकर वह घर ले गया। समयानुसार वह किसान भी मरा और मरकर अपने पुत्रका पुत्र हुआ। जातिस्मरण हो जानेसे लज्जाके कारण वह चुपचाप रहता है, सोचता है कि पुत्र मेरा पिता है और पुत्रवधू मेरी माँ है। मैं उनसे क्या कहूँ अतः चुप रहना ही भला है। अगर विश्वास न हो तो देखो वह यहीं अपने घरवालोंके बीचमें बैठा हुआ है और मेरे दर्शन करने आया है। इस तरह कहकर मुनिराजने उस किसानको बुलाया और कहा—तू पहले प्रामरक किसान था और अब अपने पुत्रका पुत्र हुआ है. इसमें लज्जा या विषादकी बात कुछ नहीं है। संसारका यह स्वभाव ही है कि रंगभूमिमें नटके समान यह जीव राजासे रंक और रंकसे राजा होता है. इसी प्रकार पिता पुत्र और पुत्र पिता बन जाता है, माता पत्नी और पत्नी मा हो जाती है। घटी यन्त्र (रहट) के समान यह जीव इस संसारमें सदा ऊँचा नीचा होता रहता है। हे वत्स! इस तरह संसारका स्वरूप समझकर तू मौन छोड़, सबसे बातचीत कर। मुनिके ये वचन सुनकर किसान प्रसन्न हो भूताविष्टकी तरह मुनिकी प्रदक्षिणा देकर जड़से कटे हुए वृक्षकी तरह उनके पैरोंमें गिर पड़ा और बड़े आश्चर्यसे चिल्लाकर कहने लगा—'प्रभो आप सर्वज्ञ हैं, संसारकी सब चीजें देखते हैं। मैं घोर संसारसागरमें डूब रहा था कि आपने दयाकर उबार लिया, अपने दिव्यज्ञानसे आपने मेरे मनकी बात जान ली' इस तरह कहकर सब बन्धु-बान्धवोंसे नाता तोड़ वह विरक्त हो दीक्षित हो गया। उस प्राभरकका यह वृत्तान्त सुनकर बहुतसे लोगोंने मुनि श्रावक आदिके व्रत धारण किये। लोगोंने जाकर किसानके घर दोनों शृगालोंके खालकी मशक देखी। इससे सारे नगरमें आश्चर्य और कोलाहल फैल गया। श्रेणिक! उन दोनों ब्राह्मण पुत्रोंको देखकर सबलोग हँसने और कहने लगे ये ब्राह्मण पहले पशुका मांस खानेवाले गीदड़ थे। दोनों ब्राह्मण पुत्र इस तरह अपनी निन्दा सुनकर बड़े लज्जित हुये और अपने घर चले गए। जब रात हुई तो दोनों बदला लेनेके लिए मुनिको खोजने चले। अपरिग्रही मुनिराज अकेले ही एक भयानक वनमें श्मशानके अन्दर जहाँ हड्डियाँ बिखरी हुई थी, चिताएँ सुलग रही थी, मांसखोर जानवर चिल्ला रहे थे, भूत पिशाच हुँकार रहे थे, सर्प डोल रहे थे, प्रगाढ़ अन्धकार फैला हुआ था, सब ओर भयावना ही प्रतीत हो रहा था, स्वच्छ शिलापर प्रतिमायोगसे बैठे हुए ध्यान कर रहे थे। इन दोनों पापियोंने मुनिराजको देखकर क्रोधसे तलवार निकाल ली और बोले—श्रमण! वहाँ तो तुझे बचानेवाले लोग मौजूद थे. लेकिन अब बोल यहाँ तू कहाँ जायगा? संसारमें ब्राह्मण ही सर्वश्रेष्ठ जाति है उसके हम प्रत्यक्ष देवता हैं और तू हमें गीदड़ बताता है; इस तरह कहते हुए उन दोनों निर्दयी ब्राह्मणोंकी आँखें क्रोधसे लाल हो गई। वे मुनिको मारना ही चाहते थे कि यक्षने उन्हें देखा और सोचा कि देखो ऐसे निर्दोष ध्यानमें तत्पर, शरीरसे भी निस्पृही साधुको ये लोग मारना चाहते हैं। अतः यक्षने तुरन्त इन्हें कील दिया। मुनिके बाजू बाजू प्रहरीकी तरह दोनों रातभर निश्चल खड़े रहे। सुबह होते ही मुनिने ध्यान छोड़ा। नगरके लोग वन्दना करने आए। इन दोनोंको उस हालतमें खड़ा देखकर सब इन्हें धिक्कारने लगे। दोनों भाई भी मनमें सोचने लगे कि यह इन मुनिका ही प्रभाव है कि बलसे अभिमानी हम लोगोंको इस प्रकार कीलकर स्थावर बना दिया'। अगर इस अवस्थासे छूटकर किसी प्रकार जीवित बचे तो सम्यक्त्व

और व्रत ग्रहण करेंगे'। इतनेमें ही पुत्रोंको खोजते हुए उनके माता पिता भी वहाँ आ पहुँचे और बार-बार हाथ जोड़कर, पैर दाबकर, चाटुकारी वचन बोलकर मुनिकी खुशामद करने लगे। वे बोले—प्रभो! ये दोनों लड़के बड़े दुष्ट हैं, क्रोध छोड़िए और इन्हें जीवनदान दीजिए, हम लोग आपके सभी आज्ञाकारी दास हैं। मुनिराज बोले—भाई! ऐसा क्यों कहते हो? साधुओंको कभी गुस्सा नहीं होता, हमारा सभीके साथ क्षमाभाव है, शत्रु और मित्र सभी हमारे भाई हैं'। इतनेमें ही यक्ष लाल-लाल आँखें कर गरजते हुए बोला—मुनिराजका इसमें दोष नहीं है। साधुको देखकर जो घृणा करते हैं वे इसी प्रकार मुसीबत उठाते हैं। दर्पणमें अपना रूप देखनेवाला जैसा मुँह करता है वैसा ही उसमें देखता है। उसी प्रकार साधुको जो जिस भावसे देखता है वह वैसा फल पाता है। साधुकी हँसी करनेवाला रोता है, साधुको गाली देनेवाला क्लेश उठाता है, साधुका बध करनेवाला बुरी तरह मरता है, साधुसे द्वेष करनेवाला महापातक कमाता है, साधुकी निन्दा करनेवाला उसी प्रकार निन्दारूप फलको प्राप्त होता है। ब्राह्मण! अपने कर्मोंसे प्रेरित होकर इन दोनोंने जो पाप किया था उसीसे मैंने तेरे दोनों पुत्रोंको कील दिया है, साधुने इसमें कुछ नहीं किया। छिपकर साधुका घात करनेवाले इन आततायी भिखारियोंको अब मारे बिना नहीं छोड़ूँगा'। यक्षको इस प्रकार गुस्सा करते हुए देखकर ब्राह्मण यक्ष और मुनिकी हाथ जोड़कर स्तुति करने लगा। अपनी स्त्री अग्निला सहित ऊपर बाँह उठाकर चिल्लाता हुआ और छाती कूटता हुआ बड़ा दुखी होने लगा। उसको इस तरह तड़पते हुए देखकर दयालु मुनिराजने यक्षसे कहा—भाई यक्ष! इन अविवेकी प्राणियोंके अपराधको क्षमा करो। तुम धर्मात्मा हो जो इस प्रकार तुमने जिन धर्मकी प्रभावना की, अब मेरे कहनेसे तुम इनका वध मत करो।

'जो आज्ञा' कहकर यक्षने उन दोनोंको छोड़ दिया। दोनोंने मुनिके निकट आकर उनको तीन प्रदक्षिणाएँ दीं और चरणोंमें प्रणाम किया तथा मुनिव्रत गहण करनेमें अपनेको असमर्थ पाकर सम्यग्दर्शन सहित श्रावकके व्रत ग्रहण किए और गृहस्थ धर्मका पालन करने लगे। उनके माता-पिताओंने व्रत लेकर छोड़ दिए और धर्मभ्रष्ट होकर संसारमें परिभ्रमण करते हुए आयुके अन्तमें समाधि धारणकर सौधर्म स्वर्गमें देव हुए। वहाँसे चयकर अयोध्यामें सेठ समुद्रदत्त और उसकी सेठानी धारिणीके पूर्णभद्र और सुवर्णभद्र नामके सुन्दर पुत्र हुए। वहाँ भी श्रावक धर्मका आचरणकर पुनः सौधर्म स्वर्गमें देव हुए। वहाँसे अयोध्याके राजा हेमनाभ और उसकी रानी अमरावतीके जगद्विख्यात मधु कैटभ नामके बलवान पुत्र हुए। पृथ्वीके अनेक राजाओंको जीतकर उन्हें अपने आधीन किया। किन्तु भीम नामका एक राजा इनकी आज्ञा नहीं मानता था। पर्वतपर दुर्ग बना लेनेके कारण वह अपनी सुरक्षाके अभिमानमें ऐसा मस्त रहता था जैसे चमरेन्द्र नन्दन बनको पाकर प्रसन्न रहता है। एक दिन इनके सामन्त वीरसेनका इनके पास समाचार आया कि भीमसेनने मेरा सारा देश उजाड़ दिया है। राजा मधु क्रुद्ध हो सेना लेकर भीमपर चढ़ाई करने चला और क्रमसे वीरसेनके यहाँ न्यग्रोध नगर पहुँचा। वीरसेन और उसकी रानीने मधुका खूब आदर सत्कार किया। राजा मधु बीरसेनकी रानी चन्द्राभाको देखकर मोहित हो गया। वह सोचने लगा इसके साथ तो विन्ध्याचलके वनोंमें भी रहना अच्छा और इसके बिना संसारका साम्राज्य भी अच्छा नहीं। ऐसा सोचकर मधुने पहले तो भीम और उस जैसे अन्य शत्रुओंको जीतकर अपने आधीन किया। बादमें विजयोत्सव मनानेके लिये साम्राज्यके सभी राजाओंको अपने यहाँ निमन्त्रित किया। उसमें बीरसेन और उसकी रानी भी आए। मधुने सबको आदर सत्कारके साथ बिदा किया। वीरसेनको भी यथायोग्य सन्मान देकर विदा की किन्तु उसकी रानी चन्द्राभाको यह कहकर रोक लिया कि अभी उनकी इच्छा जानेकी नहीं है। वीरसेन तो उधर बिदा हुआ इधर चन्द्राभाको मधुने अपनी पटरानी बनाकर रख लिया। वह भी लक्ष्मीकी तरह उसके साथ आनन्दसे

रमण करने लगी और मधु कामांध होकर अपनेको इन्द्रके समान मानने लगा। वीरसेन अपनी पत्नीको हरी हुई जानकर दुःखसे पागल हो गया और अवारोंकी तरह फिरते हुए किसी माण्ड ऋषीका शिष्य होकर पञ्चाग्नि तप करने लगा। एक दिन राजा मधु न्यायके आसनपर बैठा हुआ था, मन्त्री, दरबारी सामन्त लोग सब पासमें बैठे हुए थे। स्त्री अपहरण बलात्कार आदिपर विचार हो रहा था। विचार करते-करते शाम हो गई। मधु भोजन करने अंतःपुर गया। रानी चन्द्राभाने पूछा—नाथ ! आज आपको देर कैसे हो गई ? हमलोग भूखसे व्याकुल होकर आपकी कबसे प्रतिक्षा कर रहे हैं। मधुने कहा—प्रिये ! आज अपहरण बलात्कारका मामला आ गया था उसीके विचार करनेमें इतनी देर हो गई। चन्द्राभाने हँसकर कहा—अपहरण और बलात्कारमें दोष क्या है ? जो परस्त्रीपर बलात्कार करता है उसकी तो पूजा करनी चाहिए। रानीके ये बचन सुनकर मधुने क्रुद्ध होकर कहा—परस्त्री लोलुपीका तो निग्रह ही करना चाहिए, बलात्कार तो दूर रहा, परस्त्रीसे छेड़छाड़ करनेवाले भी नराधमको मौतकी सजा देनी चाहिए अथवा उसका प्रजासे बहिष्कार करा देना चाहिए। कामान्ध होकर जिन्होंने परस्त्रीहरणसे अपना अधः पतन किया है वे पापी पूज्य कैसे हो सकते हैं ? राजाके ये धर्म वचन सुनकर रानीने ताना देते हुए कहा—अहो ! अब तो आप प्रजा-पालनमें बड़े धर्मात्मा हो गए हैं ? अगर परस्त्री प्रसङ्ग महापाप है तो महाराज पहले अपने आपका ही निग्रह क्यों नहीं करते ? पहले तो आपही अपहरण और बलात्कारके अपराधी हैं तब बादमें यदि कोई दूसरा करता है तो क्या दोष है ? यह नियम है कि राजाके अनुसार ही प्रजा होती है। जहाँ स्वयं राजा ही नृशंस और परस्त्री लोलुपी है वहाँ प्रजाके धर्मात्मा होनेकी आशा करना व्यर्थ है।

रानीके इस प्रकार ताना देनेपर राजाको कुछ होश आया। वह कहने लगा—देवी तुम ठीक कहती हो, सबसे पहले तो उस अपराधका दण्ड भागी मैं ही हूँ। तो भी मैं इस राज्य-संपदारूपी जालमें ऐसा जकड़ा हुआ हूँ कि इस संसाररूपी समुद्रके भोगरूपी भँवरसे मेरा छुटकारा नहीं होता। राजाको इस प्रकार प्रबुद्ध होकर रहते हुए बहुत दिन हो गए। एक दिन श्रीसिंहपाद मुनि बिहार करते हुए अयोध्याके सहसार बनमें आए। राजा मधु पत्नी सहित दर्शन करने गया। स्तुति पूजाकर धर्म श्रवण किया और विरक्त होकर कैटभ सहित उन्हींके पादमूलमें दीक्षा लेली। रानी चन्द्राभाने भी अर्जिकाके व्रत ले लिए। मधुकैटभ घोर तपश्चरणकर आरण और अच्युत स्वर्गमें प्रतीन्द्र हुए। वहांसे बाइस सागरकी आयु भोगकर कृष्णकी पटरानी रुक्मीणी और जाम्बवतीके क्रमशः प्रद्युम्न कुमार और शम्भु कुमार नामक पुत्र हुए और घोर तपश्चरणकर मोक्षको प्राप्त हुए। रामायण कालसे महाभारत कालका अन्तर सात लाख सात हजार वर्ष प्रमाण है।'

---

३३ रामका मोक्षगमन

कांचनपुर नगरमें हेमरथ नामका राजा अपनी रानी शतह्रदाके साथ रहता था। उसके मन्दाकिनी और मृगलोचना नामकी दो कन्याएँ थीं। उनके स्वयंवरके लिए उसने अनेक राजाओंको निमन्त्रित किया। निमन्त्रित कुमारोंमें राम लक्ष्मणके पुत्र सम्मिलित हुए। स्वयंवर मण्डपमें जब लोग अपने २ आसनोंपर जमें हुए थे, कन्याओंने उन सबको छोड़कर लव और अंकुशके गलेमें वरमाला डाल दी। यह देखकर सभी राजाओंको बड़ी प्रसन्नता हुई। राम और लक्ष्मणके पुत्र अपने नगरको लौट आए। किन्तु लवणांकुशका यह उत्कर्ष लक्ष्मणके पुत्रोंको सहन नहीं हुआ। अतः अन्य उपाय न देखकर उन्होंने दीक्षा लेना ही उचित समझा। राम आदिकने उन्हें बहुत

रोका तब भी वे नहीं माने। आखिर महाबल मुनिके निकट धर्मका श्रवणकर दीक्षित हो गए और घोर तपका आराधनकर मोक्ष पदको प्राप्त हुए।

एक दिन भामण्डल अपने महलकी छतपर बैठकर सोच रहा था 'यदि मैं विरक्त होकर अभी दीक्षा लूँ तो ठीक रहेगा।' भामण्डल इसी प्रकार सोच रहा था कि उसके सिरपर बिजली गिरी। मरकर थोड़े पुण्यसे भोगभूमिमें पैदा हुआ। सच है दीर्घसूत्री पुरुष कभी सुख नहीं प्राप्त करता। अतः संसारको अनित्य जानकर क्षमा, तप, दान आदिके द्वारा शीघ्र धर्माचरण करना चाहिए।

हनुमान भी अपनी पाँच हजार पत्नियों सहित मेरु आदि पर्वतों तथा वनों और उपवनोंमें नाना प्रकार क्रीड़ा करने लगा। सर्वत्र सिद्धक्षेत्रोंकी उसने यात्राएँ की। एक दिन पर्वतकी एक शिलापर मन्त्रियोंके साथ बैठा हुआ वह विनोद कर रहा था कि आकाशमें उसने रंगविरंगा हाथीके आकारका बादलका एक टुकड़ा देखा। हनुमानने उस अभ्रखण्डकी प्रशंसा करते हुए साथके लोगोंसे कहा—देखो यह कैसा सुन्दर बादल है। अगर कहीं मेरे पास ऐसा ही हाथी होता तो मेरी विभूति देखने योग्य ही बनती। हनूमान इस प्रकार कह ही रहा था कि वह अभ्रखण्ड शीघ्र ही विलीन हो गया। उसे देखकर हनूमानको वैराग्य हो गया। सोचने लगा—संसारमें किसके धन सम्पदा और यौवन स्थिर हैं अतः अब मैं सब कुछ छोड़कर मुक्तिका ही साधन करूँगा। इस तरह मनमें विचारकर मन्त्रियोंके साथ घर आया। पुत्रोंको यथायोग्य राज्य दिया और अपनी रानियोंको समझा बुझाकर धर्मरत्न मुनिके पास दीक्षित हो गया। सात सौ अन्य राजाओंने भी उसके साथ दीक्षा ले ली। हनूमानने घोर तपश्चरण किया और आठो कर्मोंका नाशकर तुङ्गीगिरसे सिद्ध पदको प्राप्त हुआ। वे हनुमान सिद्ध परमेष्ठी सबको शान्ति प्रदान करें।

अथानन्तर एक दिन सौधर्म स्वर्गका इन्द्र देवोंके साथ सत्कथा कर रहा था कि प्रसङ्गवश राम लक्ष्मणकी चर्चा छिड़ गई। इन्द्रने कहा भरतक्षेत्रमें आज राम लक्ष्मणमें जैसा भ्रातृस्नेह है वैसा और किसीमें नहीं है। दोनों भाई आज एक दूसरेका मुँह ताककर जी रहे हैं। मोहका बन्धन ही ऐसा है कि यह जीव अज्ञानसे संसारमेंही फँसा रहता है। रामका जीव जो यहाँ ब्रह्मस्वर्गमें इन्द्र था, अब मोहमें पड़कर संसार भोगोंमें ऐसा लीन है कि संयमका नाम नहीं लेता'। इन्द्र इस प्रकार चर्चा समाप्त कर अपने स्थानसे उठ गया, अन्य देवतागण भी अपने २ स्थान चले गए। किन्तु एक देव जिसे इन्द्रकी बातोंपर विश्वास नहीं हुआ, दोनों भाइयोंके स्नेहकी परीक्षा करने अयोध्या आया। लक्ष्मण उस समय अकेले ही बैठे हुए अपना मुँह धो रहे थे। देवने रामके महलमें मायासे आर्तनाद कर कुहराम मचा दिया और स्वयं लक्ष्मणका मन्त्री बनकर लक्ष्मणके सामने आया। लक्ष्मणने बड़ी व्यग्रतासे पूछा 'रामचन्द्रजीका यह रोना पीटना क्यों सुनाई दे रहा है'। वेषधारी मन्त्रीने कहा—देव! न जाने क्या बीमारी हुई रामचन्द्रजीका यकायक स्वर्गवास हो गया है। उसीका यह रोना पीटना सुनाई दे रहा है। अन्य मन्त्रीगण वहीं बैठे हैं और मैं आपसे निवेदन करने आया हूँ। इतना सुनते ही घबड़ाकर लक्ष्मणके मुखसे हाय निकला और वहीं प्राण-पखेरू उड़ गए। लक्ष्मणकी मृत्यु देखकर देव बड़ा घबड़ाया और कहने लगा, हाय! विनोद ही विनोदमें मुझ पापीने यह क्या किया? भला इन्द्रका कहना झूठ कैसे हो सकता था? लक्ष्मणकी हत्याका पाप अब मुझे ही लगेगा। देव इस तरह पश्चात्ताप करता हुआ अपने स्थान लौट गया। लक्ष्मणकी लाश जमीनपर गिर पड़ी। विशल्या आदि रानियाँ पतिका मरण सुनकर शोकसे विलाप करने लगी 'हा नाथ! हा प्राणेश!! बिना रोगके ही आपको यह क्या हुआ? हमें अनाथ छोड़कर आप कहाँ चले गए? तुम्हारे बिना यह सारा घर स्मशानके समान है। कोई स्त्री लक्ष्मणको मनानेके लिए उनके पैरोंपर गर पड़ी, कोई उनकी छातीसे लिपट गई, कोई उन्हें चूमने लगी, किसीने दूरसे ही अपने भूषण

फेंक दिए। रानियोंका रोना पीटना सुनकर रामने मन्त्रियोंसे पूछा कि लक्ष्मणके यहाँ यह रोना पीटना कैसा हो रहा है। मन्त्रीगण दौड़कर लक्ष्मणके निवास स्थानपर आए और लक्ष्मणकी लाशको पड़े हुए देखा। समाचार पाकर राम भी दौड़े आए और लक्ष्मणको मृत देखकर पछाड़ खाकर गिर गए। लक्ष्मणकी इस मृत्युसे लव अंकुशको वैराग्य हो गया। सोचने लगे कि जब ऐसे महापुरुषोंकी मृत्यु निश्चित है तब हम जैसोंकी तो कथा ही क्या है? इस प्रकार सोचकर विरक्त हो महेन्द्र बनमें अमृतस्वर मुनिके निकट दीक्षित हो गए और घोर तपश्चरण कर केवलज्ञान पाकर पावागिरिसे मुक्त हुए।

शीतोपचारसे रामचन्द्रजी जब सचेत हुए तो 'हा लक्ष्मण! हा वीर! हा भाई! तुम मेरे बिना कभी कहीं नहीं जाते थे आज कहाँ चले गए' इस प्रकार विलाप करने लगे। रामकी सभी रानियाँ वहाँ आकर हाहाकार करने लगीं। अयोध्याकी सारी प्रजामें शोक और दुःख छा गया। रामने लक्ष्मणके शवको अपनी गोदमें ले लिया और खूब विलाप करने लगे। इतनेमें ही समाचार पाकर सुग्रीवादि राजा भी वहाँ आ गए और दुःख प्रकट करने लगे। विभीषणने रामको समझाया—'देव! यह रोना छोड़िए। संसारका स्वभाव ही ऐसा है। दूसरेकी मृत्युपर हम रोते हैं किन्तु अपनी ही मृत्यु जो अपने पैरोंके नीचे खड़ी है, उसे नहीं देखते। विभीषणके इस तरह समझानेपर भी रामका शोक कम नहीं हुआ। तब अन्य विद्याधरोंने प्रार्थना की 'प्रभो! दाह संस्कार करनेके लिए शवको छोड़ दीजिए'। रामने क्रुद्ध होकर कहा, आपलोग अपने पिता पुत्र आदिका संस्कार कीजिए। मेरा भाई लक्ष्मण तो मुझसे रूठकर सो गया है, क्रोध कम होनेपर वह आपही उठेगा। इस तरह कहकर लक्ष्मणसे कहने लगे 'वीर लक्ष्मण! उठ, इन दुर्जनोंके बीचसे हम कहीं अन्यत्र चलेंगे। ये दुष्ट विद्याधर हमारा बुरा करनेपर उतारू हैं। इस तरह कहकर लक्ष्मणकी लाशको गोदमें लेकर रामचन्द्रजी वहाँसे चल दिए और इधर उधर घूमने लगे। उनकी रक्षाके लिये विद्याधर भी उनके पीछे-पीछे घूमने लगे।

दो-तीन दिन बाद रामने निकटके लोगोंसे कहा, लक्ष्मण भूखा है जाओ अच्छा सुन्दर खाना बनाकर लाओ। सुग्रीव आदिने अन्न तय्यार कराकर रामको दिया। राम उसे अज्ञानसे लक्ष्मणके मुँहमें देने लगे परन्तु शव भला अन्न कैसे खाने लगा। विद्याधर मायासे यह दिखाकर कि मानों लक्ष्मण खा रहा है रामचन्द्रजीको जैसे-तैसे खिलाते। इस तरह जब कुछ दिन बीत गये तो शत्रुओंको लक्ष्मणकी मृत्युके समाचार मिले। इन्द्रजीत, कुम्भकर्ण, खरदूषणके पुत्रोंने देखा कि इस समय लक्ष्मण तो है नहीं, राम भाईके शोकमें पागल हो रहे हैं, सुग्रीवादि विद्याधरोंको अब किसीका सहारा नहीं है। अतः पिताओंके मरण और साम्राज्य छिन जानेका बदला लेनेकी भावना उनमें प्रबल हो उठी। सेना लेकर उन्होंने अयोध्यापर चढ़ाई करदी। शत्रुका आक्रमण सुनकर लक्ष्मणको पीठ पीछे बाँध रामचन्द्रजी बेहोशीमें ही धनुष लेकर युद्ध करने लगे। शोक संतप्त राजा भी उनकी सहायता करने लगे। राक्षसोंने रघुवंशियोंकी सेनाको तितर बितर कर दिया। यह देख अयोध्याकी सारी प्रजा डरसे थर २ काँपने लगी। बलदेव (राम) पर चारों ओरसे आई हुई विपत्तिके कारण जटायु और कृतान्तवक्रके जीव जो स्वर्गमें देव हुए थे दोनोंके आसन कम्पायमान हुए। आसन कँपित होनेसे उनके विमानमें बड़ा कोलाहल मच गया, देव देवी 'क्या हुआ क्या हुआ' कहकर आपसमें पूछने लगे। कृतान्तवक्रके जीवने अवधिज्ञानसे रामचन्द्र-पर विपत्ति जानकर जटायुके जीवसे कहा—'हमारे पूर्वभवके मालिक रामचन्द्रजीपर इस समय बड़ा संकट छाया हुआ है, लक्ष्मणकी मृत्यु हो गई है, राम उनके वियोगमें पागल हो रहे हैं' और आज छः महीने बाद भी वे उसी दशामें हैं, शत्रु नगरमें लूटपाट कर रहे हैं। ऐसे समय हम दोनों चलकर उनकी सहायता न करें तो स्वामिद्रोहसे दुर्गतिके सिवाय और क्या हाथ आयगा।

तुम पक्षी थे और उन्हींके प्रासादसे देव हुए हो, मैं भी उनका सेनापति होनेके नाते उनकी कृपासे ही इस योनितक पहुंचा हूँ। इस तरह कहकर कृतान्तवक्रका जीव देव दैत्यका रूप धारणकर रामके शत्रुओंसे लड़ने लगा। पर्वतादि उखाड़कर ज्यों ही उसने राक्षसोंपर फेंकना शुरू किया कि शत्रुओंकी सेना डरकर भाग गई। इन्द्रजीतका पुत्र वज्रमाली मानभंगसे लज्जित होकर विरक्त हो गया और अनेक राक्षस कुमारोंके साथ रतिवेग मुनिके निकट दीक्षा लेकर मुनि हो गया।

राक्षसोंको परास्तकर कृतान्तवक्रका जीव रामके निकट गया और वृक्षका सूखा ठूँठ बनकर रामके सामने खड़ा हो गया, जटायुका जीव उसे पानीसे सींचने लगा। यह देखकर रामने कहा—'रे ब्राह्मण! इस सूखे ठूँठको तू क्यों सींच रहा है इससे क्या तुझे फल मिल जायँगे? उत्तरमें ब्राह्मणवेशी जटायुके जीवने कहा—जी हाँ, दूसरेको उपदेश देनेवाले तो बहुत हैं पर अपना दोष नहीं देखते। आप मुर्देको कंधेपर रक्खे हुए हैं भला आप ही बताइये कि क्या वह जी जायगा?' यह सुनकर रामने कहा—'मूर्ख और दुष्ट आदमियोंसे हितकी बात कहो तो वह भी उन्हें बुरी लगती है अतः चुप ही रह जाना ठीक है' इस तरह कहकर राम आगे बढ़े तो देखा कि एक आदमी पत्थरपर बीज बो रहा है और दूसरा आदमी घीके वास्ते जल और बालू मथ रहा है। रामने उन दोनोंसे कहा—पागलो! कहीं पत्थरसे अंकुर और जल या बालूसे घी निकलता है? व्यर्थ ही यहाँ क्यों मेहनत करते हो? बीज बोनेवाले कृतान्तवक्रके जीवने कहा—'तो आप क्यों मृतक शरीरको लिए हुए हैं क्या वह इससे जीवित हो जायगा'?

ये दोनों इधर बात कर ही रहे थे कि जटायुका जीव तबतक किसी लाशको अपने कंधेपर रक्खे उससे बातचीत करता हुआ रामके सामनेसे गुजरा। रामने उससे पूछा—'तू मुर्देको क्यों लादे हुए हैं और उससे सुख-दुखकी बात करनेमें तुझे क्या लाभ होगा?' जटायुके जीवने कहा—'तब आपने भी तो अपने भाईकी लाशको लाद रक्खा है आपको ही उसके साथ बातचीत करनेसे क्या मिल जायगा। रामने जब यह सुना तो उन्हें कुछ होश आया। वे बार-बार लक्ष्मणके मुँहकी ओर ताकने लगे। जब देखा कि लक्ष्मणका शरीर बिलकुल प्राणरहित है तो संसारकी अनित्यता समझकर रामको वैराग्य हो गया। सोचने लगे—संसारमें कौन किसकी माता और कौन किसका पिता है? धन यौवन आदि किसके हुए हैं? सब विनाशीक हैं अतः महात्माओंको इनसे अपना संबन्ध हटा लेना चाहिए'। रामको विरक्त जानकर दोनों देव प्रकट होकर रामके सामने खड़े हो गये। रामने उनका परिचय पूछा। कृतान्तवक्रके जीवने कहा—'मैं आपका सेनापति कृतान्तवक्र हूँ, आपके प्रसादसे तपश्चरणकर चौथे स्वर्गमें देव हुआ हूँ और यह आपका प्रियपक्षी दण्डकवनका साथी जटायु है यह भी उसी जगह देव हुआ है। अवधिज्ञानसे आपको दुखी देखकर हम यहाँ आपको समझाने आए हैं। रामने प्रबुद्ध होकर तब उन दोनों देवोंसे लक्ष्मणके शवका दाह संस्कार करनेको कहा—सुग्रीवादि राजाओंने चिता बनाई और चन्दनादिसे लक्ष्मणका दाह संस्कार किया। स्नानादिसे पवित्र होकर रामने शत्रुघ्नका राज्याभिषेक करनेको कहा—परन्तु शत्रुघ्नने इसे स्वीकार न कर दीक्षा लेनेकी ही इच्छा प्रकट की। तब रामने लवणांकुशके पुत्र अनंग लवणको राज्यका अधिपति बनाया और आप दीक्षा लेने वनको चल दिए।

विभीषणने अपने पुत्र सुभूषणको लंकाका राज्य दिया। सुग्रीवने भी किष्किधाका सिंहासन अंगदके पुत्रको सौंपा। इतनेमें ही अर्हद्दास सेठने रामसे ये समाचार कहे—'प्रभो! चारण ऋद्धिधारी अवधिज्ञानी मुनिराज सुव्रत संघसहित चन्दनवनमें पधारे हैं। मुनिराजका आगमन सुनकर बड़े आनन्दसे अनेक भूमिगोचरी और विद्याधरोंके साथ राम उनके निकट पहुँचे। उनके चरणोंकी पूजा स्तुति की, धर्म श्रवण किया और बादमें शत्रुघ्नके साथ दीक्षा ले ली, भूषण, वस्त्र और सिरके केश उपाटकर फेंक दिए। रामका यह हाल देखकर खड़े हुए लोगोंकी आँखोंसे आंसुओं-

की धारा यह निकली। रामके साथ विभीषण, सुग्रीव, नल, चन्द्रनखा नील, क्रव्य, विराधित आदि विद्याधर भी स्त्री, पुत्र और साम्राज्यसे मोह छोड़कर मुनि हो गए। इस तरह रामके साथ सोलह हजार राजा मुनि हुए और उनकी सत्ताईस हजार रानियाँ श्रीमती आर्यकाके पास आर्यका हो गईं।

मुनिराज राम गुरुकी आज्ञा लेकर एकाविहारी हो गये और पाँच दिनतक निराहार रहनेके बाद नन्दस्थली नगरीमें पारणाके लिए गए। नगरकी स्त्रियाँ मुनिका रूप देखकर कामसे व्याकुल हो घरका काम-काज और बच्चोंतकको भूल गईं। कोई-कोई तो कामसे व्याकुल हो मुनिके पैरोंपर गिर अपने घर चलने और खाना खानेके लिए खुशामद करने लगीं। स्त्रियोंकी मानसिक स्थितिको भांपकर मुनि राम, अन्तराय समझ वापिस लौट गए और यह प्रतिज्ञाकर ली कि 'अबसे कभी नगरमें भिक्षा लेने नहीं जाऊँगा, अगर वनमें ही कहीं प्रासुक आहार मिलेगा तो ग्रहण करूँगा अन्यथा नहीं'। एक दिन बारह उपवास करनेके बाद जंगलमें ही पारणाके लिए निकले। उसी दिन किसी प्रतिनन्दी राजाको एक दुष्ट घोड़ा पीठपर बैठाए ही उस जंगलमें ले भागा। राजाके पीछे बहुतसी प्रजा भी जंगलमें पहुँची, सबके लिए वहीं रसोई बनाई गई। मुनि राम जब चर्यार्थ उधर गए तो राजा और रानीने उन्हें बड़ी विनयसे पड़गाहा और नवधाभक्तिपूर्वक आहार दिया। आहारदानके प्रभावसे पञ्चाश्चर्यकी वृष्टि हुई। सबने मिलकर मुनिराज रामचन्द्रकी स्तुति पूजा की। मुनिराज आशीर्वाद देकर वनमें वापिस चले गए और ध्यानाध्ययनमें तत्पर रहने लगे। उन्होंने अनेक देशोंमें विहार किया। कहीं एक मास, कहीं एक वर्ष, कहीं एक पक्ष और कहीं एक दिन ही ठहरते। इस तरह क्रमसे विहार करते हुए वे कोटिशिला पहुँचे और वहाँ नासाग्र दृष्टिसे ध्यान करने बैठ गए।

स्वर्गमें सीताके जीव इन्द्रने अवधिज्ञानसे रामका मुनि होना जानकर सोचा कि रामको किस प्रकार तपस्यासे विचलितकर उन्हें अपने साथ रक्खूँ। संसारमें सुख-दुख जो कुछ हो वह हमलोग साथ-साथ भोगें। इस तरह सोचकर वह रामके पास आया और रामकी परीक्षा करनेके लिए सीताका रूप बनाकर उनके निकट गया तथा हाव-भाव दिखाकर अनेक प्रकारकी चेष्टा करने लगा। कामुकताके अनेक प्रदर्शन किए, किन्तु रामचन्द्रजी ध्यानसे तनिक भी विचलित नहीं हुए। उसी समय उनके घातिया कर्मोंका क्षय होकर लोकालोकका प्रकाशक केवलज्ञान पैदा हो गया।

इसके बाद सीताका जीव इन्द्र चौथे नरकमें लक्ष्मणके पास गया। वहाँ उसने देखा कि शंबूकका जीव नारकी लक्ष्मणके जीवको मार रहा है। अन्यायी नारकी भी परस्पर एक दूसरेको मार रहे हैं। कोई किसीको आगमें जला रहा है, कोई किसीको दाँतोंसे काट रहा है, कोई किसीको वैतरणीमें फेंक रहा है। कभी रावणका जीव लक्ष्मणको खा रहा है तो कभी लक्ष्मणका जीव रावणको खा रहा है। सीताके जीवने जाते ही लक्ष्मणको संबोधित करते हुए कहा कि 'लक्ष्मण तुम यह क्या कर रहे हो ? कहाँ तुम राजपुत्र थे और कहाँ ये नरकके दुख भोग रहे हो। पाँचों इन्द्रियोंके विषयोंसे प्रेरित होकर पहले तो यह जीव पाप कमाता है फिर नरकादिके महादुःख भोगता है, इसलिये संसार दुःखोंके कारण इन पापोंको नहीं करना चाहिए। 'आओ तुम्हें मैं यहाँसे अपने स्वर्गमें ले चलूँ'। इस तरह कहकर सीताके जीवने ज्योंही नारकी लक्ष्मणको उठाना चाहा कि उसका शरीर पिघलकर वहीं गिर पड़ा। आयुकर्म पूरा हुए बिना लक्ष्मणका वहाँसे निकलना न देखकर सीताके जीवने उसे सम्यक्त्व ग्रहण कराया। इसी प्रकार शंबूक और रावणके जीवको भी प्रतिबुद्ध किया। इस तरह उन सबको संतुष्टकर वह केवली रामके निकट आया। समवसरण निर्माणकर देवता भगवान रामकी स्तुति पूजा आदि कर रहे थे। सीतेन्द्रने उन सबके साथ सम्मिलित होकर स्तुति पूजा की और भगवानसे धर्मोपदेशके लिए प्रार्थना की।

केवली रामने षड्द्रव्य, सप्ततत्व, पुण्य-पाप आदिका व्याख्यान किया। उपदेश हो जानेके बाद सीताने पूछा – प्रभो ! राजा दशरथ जो मुनि हो गए थे और उनकी रानी अपराजिता आदि अर्जिका हो गई थी। आयु समाप्त होनेपर उन्होंने कहाँ जन्म लिया है ? केवलीने कहा— दशरथका जीव आनत स्वर्गमें देव हुआ है और जनक, कनक, सुप्रजा, अपराजिता, केकयी और कैकसी ये भी वहीं उत्तम देव हुए हैं। लव और अंकुश दोनों मोक्ष जाएँगे। अब भामंडल की जो गति हुई वह भी तुम्हें सुनाता हूँ।

अयोध्यामें सेठ वज्रांक और सेठानी मकरीके अशोक और तिलक नामके दो पुत्र थे। सीताका निष्कासन सुनकर सेठ वज्रांक द्युतिसंग मुनिके पास मुनि हो गया। पिताको मुनि देखकर दोनों पुत्र भी उनके पास दीक्षित हो गये। घोर तपश्चरणकर दोनों आयुके अन्तमें ग्रैवेयकोंमें अहमिन्द्र हुए। एक बार वे दोनों देव ताम्र चूड़नगरमें केवलीकी वन्दनाके लिए आए वहाँ उन्होंने पचास योजनके घेरमें सुन्दर बालूका ढेर लगा दिया। वर्षाकालमें वहाँ वटवृक्ष उग आया। भामंडल उसे देखकर बहुत प्रसन्न हुआ। उसने भी फूल पौधे लगाकर उसे वाटिकाका रूप दे दिया। वहाँ रहकर भामंडलने एक दिन वज्रांक मुनिको आहार दान दिया। प्रसन्न होकर वह घर लौटा तो छतपर बैठे हुए उसके सिरपर बिजली गिरी। वह मरकर देवकुरुमें पैदा हुआ है। वहाँसे ईशानमें स्वर्गमें जायगा। स्वर्गसे चयकर मनुष्य हो मोक्ष जायगा।

रावण और लक्ष्मण दोनों नरकसे निकलकर क्रमशः विजयावती नगरीमें सुनन्द और रोहिणीके यहाँ कुटुम्बी जातिके अर्हद्दास और ऋषिदास सम्यग्दृष्टि पुत्र होंगे। वहाँसे श्रावकके व्रत पालकर स्वर्गमें देव होंगे। स्वर्गसे चयकर उच्चकुलमें जन्म ले आहार दानके प्रभावसे हरिक्षेत्रमें भोगभूमियाँ होंगे। वहाँसे स्वर्ग जाकर मध्यलोकमें राजा कुमारकीर्ति और रानी लक्ष्मीके जयकांत और जयप्रभ नामके शूरवीर पुत्र होंगे और तपश्चरणकर सातवें स्वर्गमें ऋद्धिधारी देव होंगे। तू सोलहवें स्वर्गसे चयकर इसी भरतक्षेत्रके रत्नस्थल नगरमें चक्रवर्ती होगा और वे दोनों देव चयकर तेरे इन्द्ररथ और मेघरथ नामके पुत्र होंगे। इन्द्ररथ वही रावणका जीव होगा और कुछ श्रेष्ठ मनुष्य भवोंको प्राप्त होकर तीर्थंकर पुण्यका उपार्जन करेगा तथा तीन लोकसे पूजित होकर परम धाम पधारेगा।

तू चक्रवर्तीके भवमें ही राजपाट छोड़कर तपस्याकर वैजयन्त विमानमें अहमिन्द्र होगा और वहाँसे चयकर, जब रावणका जीव तीर्थंकर होगा तो उसका प्रथम गणधर बनकर मोक्ष जायगा। लक्ष्मणका जीव मेघरथ अनेक अच्छे भवोंको धारण करनेके बाद क्रमानुसार यहींसे मोक्ष जायगा। इस प्रकार भगवान रामसे धर्मोपदेश श्रवणकर अच्युतेन्द्रादि देव प्रसन्न हो अपने-अपने स्थान गए।

भगवान राम अनेक देशोंमें विहार करते हुए तुंगीगिर पर्वतपर पहुँचे और ध्यानबलसे शेष चार अघाति कर्मोंको भी नष्ट कर मोक्ष गए। जो धर्मात्मा रामका सुन्दर चरित सुनता है वह मोक्षको प्राप्त होता है।